तेतिरीय ब्राह्मणम्

Colophon

This document was typeset using X₁M_EX, and uses the Siddhanta font extensively. It also uses several M_EX macros designed by *H. L. Prasād*. Practically all the encoding was done with the help of Ajit Krishnan's mudgala IME (http://www.aupasana.com/).

Acknowledgements

The initial ITRANS encodings of some of these texts were obtained from http://sanskritdocuments.org/and https://sa.wikisource.org/. Thanks are also due to Ulrich Stiehl (http://sanskritweb.de/) for hosting a wonderful resource for Yajur Veda, and also generously sharing the original Kathaka texts edited by Subramania Sarma. See also http://stotrasamhita.github.io/about/

FOR PERSONAL USE ONLY
NOT FOR COMMERCIAL PRINTING/DISTRIBUTION

| अनुक्रमणिका | i |
|------------------|-----|
| अनुऋमणिका | |
| अष्टकम् १ | 1 |
| प्रथमः प्रश्नः | 1 |
| द्वितीयः प्रश्नः | 28 |
| तृतीयः प्रश्नः | 47 |
| चतुर्थः प्रश्नः | 70 |
| पञ्चमः प्रश्नः | 94 |
| षष्ठमः प्रश्नः | 116 |
| सप्तमः प्रश्नः | 142 |
| अष्टमः प्रश्नः | 166 |
| अष्टकम् २ | 180 |
| प्रथमः प्रश्नः | 180 |
| द्वितीयः प्रश्नः | 200 |
| तृतीयः प्रश्नः | 225 |
| चतुर्थः प्रश्नः | 245 |
| पञ्चमः प्रश्नः | 273 |
| षष्ठमः प्रश्नः | 291 |
| सप्तमः प्रश्नः | 327 |
| अष्टमः प्रश्नः | 352 |

| नुऋमणिका | | | | | | | | | | | | | | | | |
|---|------|---|-------|-------|------|------|---|---|-------|---|-------|---|---|---------|---|---|
| ष्टकम् ३ | | | | | | | | | | | | | | | | 382 |
| प्रथमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | 382 |
| द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | 407 |
| तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | 438 |
| चतुर्थः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | 46 |
| पञ्चमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | 47 |
| षष्टमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | 48 |
| सप्तमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | 50 |
| अष्टमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | 54 |
| नवमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | 58 |
| | | | | | | | | | | | | | | | | |
| त्तिरीय आरण्यकम | | | | | | | | | | | | | | | | 61 |
| त्तिरीय आरण्यकम् प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः | | | • | · | | | | | | | | | | | | |
| | | • | | • | | | | • | • | • | • | • | • | | • | 61 |
| प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | 61 66 |
| प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः द्वितीयः प्रश्नः तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | • | • | | | | | 61 66 68 |
| प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः द्वितीयः प्रश्नः तृतीयः प्रश्नः चतुर्थः प्रश्नः | | | • | | | | • | | | | • | | | | | 61 66 68 70 |
| प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः द्वितीयः प्रश्नः तृतीयः प्रश्नः चतुर्थः प्रश्नः पञ्चमः प्रश्नः | | | • | | | | • | | | | | | | • • | | 61 66 68 70 73 |
| प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः द्वितीयः प्रश्नः तृतीयः प्रश्नः चतुर्थः प्रश्नः पञ्चमः प्रश्नः | | | • | | | | • | | | | | | | | | 61 66 68 70 73 77 |
| प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः द्वितीयः प्रश्नः तृतीयः प्रश्नः चतुर्थः प्रश्नः पञ्चमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | 61° 66° 68° 70° 73° 77° 79° |

| – महानारायप | णोपनिषत् | | | | | | | | | | | | | | | | | 8 |
|-------------|--------------------|---------------------|-----------------------|-----------------------|-----------------------|-----------------------|-----------------------|-----------------------|-----------------------|-------------------------|-----------------------|-----------------------|-----------------------|-----------------------|-----------------------|-----------------------|-----------------------|--------------------|
| ग्तैत्तिरीय | -काठव | म ् | | | | | | | | | | | | | | | | 8 |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | 8 |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | 8 |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | 9 |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| | गतैत्तिरीय | गतैत्तिरीय-काठक | गतैत्तिरीय-काठकम् | प्रतैत्तिरीय-काठकम् | गतैत्तिरीय-काठकम् | - महानारायणोपनिषत् |

॥अष्टकम् १॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। क्षत्र सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। इष् सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। जर्ज् सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। एयि सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टि सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृजा सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृश्रून्थ्सन्धंत्तं तान्में जिन्वतम्। स्तुतोऽसि जर्नधाः। देवास्त्वां शुक्रपाः प्रणंयन्तु॥१॥

सुवीराः प्रजाः प्रंजनयन्परीहि। शुक्रः शुक्रशीचिषा। स्तुतींऽसि जर्नधाः। देवास्त्वां मन्थिपाः प्रणयन्तु। सुप्रजाः प्रजाः प्रंजनयन्परीहि। मन्थी मन्थिशीचिषा। सञ्जग्मानौ दिव आपृंथिव्यायुः। सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। प्राण सन्धंत्तं तं में जिन्वतम्। अपान सन्धंत्तं तं में जिन्वतम्॥ श्राण सन्धंत्तं तं में जिन्वतम्॥ सन्धंति सन

व्यान र सन्धंत्तं तं में जिन्वतम्। चक्षुः सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। श्रोत्र र सन्धंत्तं

तन्में जिन्वतम्। मनः सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। वाच् सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। आयुंः स्थ आयुंर्मे धत्तम्। आयुंर्य्ज्ञायं धत्तम्। आयुंर्य्ज्ञपंतये धत्तम्। प्राणः स्थः प्राणं में धत्तम्। प्राणं यज्ञायं धत्तम्॥३॥

प्राणं यज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुंः स्थश्चक्षुंर्मे धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञायं धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञपंतये धत्तम्। श्रोत्रं स्थः श्रोत्रं मे धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञायं धत्तम्। श्रोत्रं यज्ञपंतये धत्तम्। तो देवो शुक्रामन्थिनो। कल्पयंतं दैवीर्विशः। कल्पयंतं मानुंषीः॥४॥

इष्मूर्जम्समास् धत्तम्। प्राणान्पशुषुं। प्रजां मियं च यजंमाने च। निरंस्तः शण्डंः। निरंस्तो मर्कः। अपंनुत्तौ शण्डामकौ सहामुनौ। शुक्रस्यं समिदंसि। मन्थिनः समिदंसि। स प्रथमः सङ्कृतिर्विश्वकंमा। स प्रथमो मित्रो वरुणो अग्निः। स प्रथमो बृह्स्पतिश्चिकत्वान्। तस्मा इन्द्रांय सुतमा जुंहोमि॥५॥

न्युन्त्वपान॰ सन्धेत्तुं तं में जिन्वतं प्राणं युज्ञायं धत्तुं मानुंषीरुग्निर्द्धे चं॥ (ब्रह्मं क्षुत्रं तदिषुमूर्ज्जं रुपिं पृष्टिं प्रजां तां पृश्न्तान्थ्सन्धेत्तुं तत्प्राणमंपानं व्यानं तं

चक्षुः श्रोत्रुं मनुस्तद्वाचुं ताम्। इपादिपश्चेके वाचुं तां में पुशून्थ्यन्थेतुं तान्में प्राणादित्रितिये तं मेऽन्यत्र तन्में)॥

कृत्तिंकास्वग्निमादंधीत। एतद्वा अग्नेर्नक्षंत्रम्। यत्कृत्तिंकाः। स्वायांमैवैनं देवतायामाधायं। ब्रह्मवर्चसी भवति। मुखं वा एतन्नक्षंत्राणाम्। यत्कृत्तिंकाः। यः कृत्तिंकास्वग्निमांधृत्ते। मुख्यं एव भवति। अथो खलुं॥६॥

अग्निन्क्षत्रमित्यपंचायन्ति। गृहान् ह् दाहुंको भवति। प्रजापंती रोहिण्यामग्निमं-सृजत। तं देवा रोहिण्यामादंधत। ततो वै ते सर्वान्नोहांनरोहन्। तद्रोहिण्ये रोहिणित्वम्। यो रोहिण्यामग्निमांधृत्ते। ऋध्रोत्येव। सर्वान्नोहांन्नोहति। देवा वै भुद्राः सन्तोऽग्निमाधिंथ्सन्त॥७॥

तेषामनाहितोऽग्निरासींत्। अथैंभ्यो वामं वस्वपाँकामत्। ते पुनर्वस्वोरादंधत। ततो वै तान् वामं वसूपावंतित। यः पुराऽभुद्रः सन्पापीयान्थ्स्यात्। स पुनर्वस्वोर्ग्निमादंधीत। पुनर्वेवनं वामं वसूपावंतित। भुद्रो भंवति। यः कामयेत् दानकामा मे प्रजाः स्युरिति। स पूर्वयोः फल्गुन्योर्ग्निमादंधीत॥८॥

अर्यम्णो वा पृतन्नक्षंत्रम्। यत्पूर्वे फल्गुंनी। अर्यमेति तमांहुर्यो ददांति।

दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। यः कामयेत भगी स्यामिति। स उत्तरयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। भगस्य वा एतन्नक्षंत्रम्। यदुत्तरे फल्गुंनी। भृग्येव भंवति। कालकञ्जा वै नामासुरा आसन्॥९॥

ते सुंवर्गायं लोकायाग्निमंचिन्वत। पुरुष इष्टंकाम्पांदधात्पुरुष इष्टंकाम्। स इन्द्रौं ब्राह्मणो ब्रुवाण इष्टंकामुपांधत्त। एषा में चित्रा नामेति। ते सुंवर्गं लोकमा प्रारोहन्। स इन्द्र इष्टंकामावृंहत्। तेऽवांकीर्यन्त। येऽवाकींर्यन्त। त ऊर्णावभंयो-ऽभवन्। द्वावुदंपतताम्॥१०॥

तौ दिव्यौ श्वानांवभवताम्। यो भ्रातृंव्यवान्थस्यात्। स चित्रायांमग्निमादंधीत। अवकीर्येव भ्रातृंव्यान्। ओजो बलंमिन्द्रियं वीर्यमात्मन्धंत्ते। वसन्तौ ब्राह्मणौं-ऽग्निमादंधीत। वसन्तौ वै ब्राह्मणस्यर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधायं। ब्रह्मवर्चसी भंवति। मुखं वा एतदंतूनाम्॥११॥

यद्वंसुन्तः। यो वसन्ताऽग्निमांधृत्ते। मुख्यं एव भवति। अथो योनिमन्तमेवैनं

प्रजातमार्थत्ते। ग्रीष्मे राजन्यं आदंधीत। ग्रीष्मो वै राजन्यंस्युर्तुः। स्व एवेनंमृतावाधायं। इन्द्रियावी भंवति। श्ररिद वैश्य आदंधीत। श्ररिद्वे वैश्यंस्यर्तुः॥१२॥

स्व एवैनंमृतावाधायं। पृशुमान्भंवति। न पूर्वयोः फल्गुंन्योर्गि्ग्रमादंधीत। एषा वै जंघन्यां रात्रिः संवथ्सरस्यं। यत्पूर्वे फल्गुंनी। पृष्टित एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। पापीयान्भवति। उत्तरयोरा दंधीत। एषा वै प्रंथमा रात्रिः संवथ्सरस्यं। यदुत्तरे फल्गुंनी। मुख्त एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। वसीयान्भवति। अथो खलुं। यदैवैनं यज्ञ उपनमैत्। अथादंधीत। सैवास्यर्ष्दिः॥१३॥

उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। अपोऽवौक्षिति शान्त्यैं। सिकंता निवंपति। एतद्वा अग्नेवैश्वान्रस्यं रूपम्। रूपेणैव वैश्वान्रमवं रुन्धे। ऊषां निवंपति। पृष्टिवां पृषा प्रजननम्। यदूषाः॥१४॥

यद्वल्मीकंः॥१७॥

यज्ञियमिति। यद्मुष्यां यज्ञियमासीत्। तद्स्यामंदधात्। त ऊषां अभवन्॥१५॥ यद्स्या यज्ञियमासीत्। तद्मुष्यांमदधात्। तद्दश्चन्द्रमंसि कृष्णम्। ऊषांत्रिवपंत्रदो ध्यांयेत्। द्यावांपृथिव्योरेव यज्ञियेऽग्निमाधंत्ते। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। आखू रूपं कृत्वा। स पृथिवीं प्राविंशत्। स ऊतीः कुंर्वाणः पृथिवीमनु समंचरत्। तदांखुकरीषमंभवत्॥१६॥ यदांखुकरीष संम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्धे। ऊर्जं वा पृत र रसंं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति। यद्दल्मीकम्ं। यद्दल्मीकव्पा संम्भारो

पुष्ट्यमिव प्रजनेनेऽग्निमाधेत्ते। अथो संज्ञाने एव। संज्ञानः ह्येतत्पंशूनाम्।

यदूषाः। द्यावांपृथिवी सहास्तांम्। ते विंयती अंब्रूताम्। अस्त्वेव नौं सुह

अबंधिरो भवति। य एवं वेदं। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तासामन्रमुपाँक्षीयत।

भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवं रुन्धे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्रङ् ह्येतत्पृथिव्याः।

ताभ्यः सूदमुपुप्राभिनत्। ततो वै तासामन्नं नाक्षीयत। यस्य सूर्दः सम्भारो भवंति। नास्यं गृहेऽन्नं क्षीयते। आपो वा इदमग्रें सिल्लिमांसीत्। तेनं प्रजापंतिरश्राम्यत्॥१८॥

कथिमदि स्यादिति। सोऽपश्यत्पुष्करपूर्णं तिष्ठंत्। सोऽमन्यत। अस्ति वै तत्। यस्मिन्निदमिष् तिष्ठतीति। स वंराहो रूपं कृत्वोप न्यंमञ्जत्। स पृथिवीम्ध आँच्छंत्। तस्यां उपहत्योदंमञ्जत्। तत्पुष्करपूर्णेऽप्रथयत्। यदप्रथयत्॥१९॥ तत्पृथिव्यै पृथिवित्वम्। अभूद्वा इदिमिति। तद्भूम्यै भूमित्वम्। तां दिशोऽनु वातः

समंवहत्। ता शर्कराभिरद शहत्। शं वै नो ऽभूदिति। तच्छर्कराणा श्वर्कर्त्वम्। यद्वराहिवहत सम्भारो भवति। अस्यामेवाछंम्बद्धारमग्निमाधेत्ते। शर्करा भवन्ति धृत्यै॥२०॥

अथो शन्त्वायं। सरेता अग्निराधेय इत्यांहुः। आपो वर्रुणस्य पत्नंय आसन्। ता अग्निर्भ्यंध्यायत्। ताः समंभवत्। तस्य रेतः पराऽपतत्। तद्धिरंण्यमभवत्। यद्धिरंण्यमुपास्यंति। सरंतसमेवाग्निमाधंत्ते। पुरुष इन्ने स्वाद्रेतंसो बीभथ्सत इत्यांहः॥२१॥

उत्तरत उपाँस्यत्यबींभथ्सायै। अति प्रयंच्छति। आर्तिंमेवाति प्रयंच्छति। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवथ्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्याश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थः सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्धे॥२२॥

देवा वा ऊर्जुं व्यंभजन्त। ततं उदुम्बर् उदंतिष्ठत्। ऊर्ग्वा उदुम्बरंः। यदौदुंम्बरः सम्भारो भवंति। ऊर्जमेवावं रुन्धे। तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयत्र्याऽहंरत्। तस्यं पर्णमंच्छिद्यत। तत्पर्णोऽभवत्। तत्पर्णस्यं पर्णत्वम्॥२३॥ यस्यं पर्णमयः सम्भारो भवंति। सोमुपीथमेवावं रुन्धे। देवा वै ब्रह्मंन्नवदन्त। तत्पर्ण उपार्श्वणोत्। सुश्रवा वै नामं। यत्पर्णमयः सम्भारो भवंति। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। प्रजापंतिरग्निमंसृजत। सोंऽबिभेत्र मां धक्ष्यतीतिं। त॰ शम्यां-

ऽशमयत्॥२४॥

प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

तच्छुम्यै शमित्वम्। यच्छंमीमयः सम्भारो भवंति। शान्त्या अप्रंदाहाय। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कत्ं भा आँच्छंत्। यद्वैकंङ्कतः सम्भारो भवंति। भा एवावं रुन्थे। सहंदयोऽग्निराधेय इत्यांहुः। मुरुतोऽद्भिरग्निमंतमयन्। तस्यं तान्तस्य हृदंयमाच्छिन्दन्। साऽशनिरभवत्। यद्शनिहतस्य वृक्षस्यं सम्भारो भवंति। सहंदयमेवाग्निमा धंत्ते॥२५॥

वंदित। अनृंतं मनंसा ध्यायित॥२६॥ चक्षुर्वे सृत्यम्। अद्रा(३)गित्यांह। अदंर्श्वमितिं। तथ्सृत्यम्। यश्चक्षुंर्निमिते-ऽग्निमाधत्ते। सत्य एवैनमा धंत्ते। तस्मादाहिंताग्निर्नानृंतं वदेत्। नास्यं ब्राह्मणो- ऽनांश्वान्गृहे वंसेत्। सत्ये ह्यंस्याग्निराहितः। आग्नेयी वै रात्रिः॥२७॥

आग्नेयाः प्रावंः। ऐन्द्रमहंः। नक्तं गार्हंपत्यमा दंधाति। प्रशूनेवावं रुन्धे। दिवांऽऽहवनीयम्। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। अधींदिते सूर्यं आहवनीयमा दंधाति। एतस्मिन्वे लोके प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। अथीं भूतं चैव भविष्यचावं रुन्धे॥२८॥

इडा वै मांन्वी यंज्ञानूकाशिन्यांसीत्। साऽशृंणोत्। असुंरा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। त आहवनीयमग्र आदंधत। अथ् गार्हंपत्यम्। अथान्वाहार्यपचनम्। साऽब्रंवीत्। प्रतीच्येषा्ड् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा परां भविष्युन्तीतिं॥२९॥

यस्यैवम् ग्निरांधीयतें। प्रतीच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा परांभवति। साऽशृंणोत्। देवा अग्निमादंधत् इति। तदंगच्छत्। तेंऽन्वाहार्यपचंनुमग्र आदंधत। अथ् गार्हंपत्यम्। अथाऽऽहवनीयम्। साऽब्रंवीत्॥३०॥

प्राच्येषा् ॥ श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा सुंवुर्गं लोकमेष्यिन्ति। प्रजां तु न वेष्ट्यन्त्

इति। यस्यैवम्गिरांधीयतें। प्राच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा सुंवुगं लोकमंति। प्रजां तु न विन्दते। साऽब्रवीदिडा मनुम्। तथा वा अहं तवाग्निमाधांस्यामि। यथा प्रप्रजयां पशुभिर्मिथुनैर्जनिष्यसे॥३१॥

प्रत्यस्मिँ होके स्थास्यसिं। अभि सुंवर्गं लोकं जेष्यसीतिं। गार्हंपत्यमग्र आदंधात्। गार्हंपत्यं वा अनुं प्रजाः पृशवः प्रजांयन्ते। गार्हंपत्येनैवास्मैं प्रजां पृश्न्प्राजनयत्। अथान्वाहार्यपर्चनम्। तिर्यिङ्किंव वा अयं लोकः। अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रत्यंतिष्ठत्। अथांऽऽहवनीयम्। तेनैव सुंवर्गं लोकमभ्यंजयत्॥३२॥

यस्यैवम् ग्निरांधीयतें। प्र प्रजयां पृशुभिंमिंथुनैर्जायते। प्रत्यस्मिं ह्योके तिष्ठति। अभि सुंवर्गं लोकं जयित। यस्य वा अयथादेवतम् ग्निरांधीयतें। आदेवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यस्यं यथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति॥३३॥

भृगूंणां त्वाऽङ्गिरसां व्रतपते व्रतेनादंधामीतिं भृग्वङ्गिरसामादंध्यात्। आदित्यानां

त्वा देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीत्यन्यासां ब्राह्मणीनां प्रजानांम्। वर्रुणस्य त्वा राज्ञां व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञंः। इन्द्रंस्य त्वेन्द्रियेणं व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञन्यंस्य। मनोंस्त्वा ग्रामण्यों व्रतपते व्रतेनादंधामीति वैश्यंस्य। ऋभूणां त्वां देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीति रथकारस्यं। यथादेवतमग्रिराधीयते। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति॥३४॥

प्रजापंतिर्वाचः स्त्यमंपश्यत्। तेनाग्निमाधंत्त। तेन् वै स आँर्घ्रोत्। भूर्भुवः सुविरत्यांह। एतद्वै वाचः स्त्यम्। य एतेनाग्निमाध्ते। ऋधोत्येव। अथो स्त्यप्रांशूरेव भंवति। अथो य एवं विद्वानंभिचरंति। स्तृणुत एवैनम्॥३५॥

भूरित्यांह। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। भुव इत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। सुव्रित्यांह। सुव्रग एव लोके प्रतिं तिष्ठति। त्रिभिरक्षरैर्गार्हंपत्यमा दंधाति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेंवैनं लोकेषु प्रतिं- ष्ठितमार्थत्ते। सर्वैः पश्चभिराहवनीयम्॥३६॥

प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

सुवर्गाय वा एष लोकायाधीयते। यदांहवनीयः। सुवर्ग एवास्मै लोके वाचः सत्य सर्वमाप्रोति। त्रिभिर्गार्हंपत्यमा दंधाति। पश्चभिराहवनीयम्। अष्टौ

सम्पंद्यन्ते। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रौंऽग्निः। यावानेवाग्निः। तमाधंत्ते॥३७॥
प्रजापंतिः प्रजा असृजत। ता असमाध्सृष्टाः परांचीरायन्। ताभ्यो

ज्योतिरुदंगृह्णात्। तं ज्योतिः पश्यंन्तीः प्रजा अभि समावंर्तन्त। उपरीवाग्निमुद्गृह्णीयादुव ज्योतिरेव पश्यंन्तीः प्रजा यजंमानम्भि समावंर्तन्ते। प्रजापंतेरक्ष्यंश्वयत्। तत्परां-ऽपतत्। तदश्वोऽभवत्। तदश्वंस्याश्वत्वम्॥३८॥

पुष वै प्रजापंतिः। यद्ग्निः। प्राजापत्योऽर्श्वः। यदर्श्वं पुरस्तान्नयंति। स्वमेव चक्षुः पश्यंन्प्रजापंतिरनूदेति। वृज्जी वा एषः। यदर्श्वः। यदर्श्वं पुरस्तान्नयंति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। पुन्रा वर्तयति॥३९॥

जुनिष्यमांणानेव प्रतिनुदते। न्यांहवनीयो गार्हंपत्यमकामयत। निगार्हंपत्य

प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

नानांवीर्यावेवैनौं कुरुते॥४०॥

आहवनीयम्। तौ विभाजुं नाशंक्रोत्। सोऽश्वंः पूर्ववाङ्गृत्वा। प्राश्चं पूर्वमुदंवहत्। तत्पूर्ववाहं पूर्ववाद्मम्। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। विभेक्तिरेवैनयोः सा। अथो

यदुपर्युपरि शिरो हरैंत्। प्राणान् विच्छिन्द्यात्। अधीऽधः शिरो हरति। प्राणानां गोपीथायं। इयत्यग्रें हरति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठितमार्थत्ते। प्रजापंतिरग्निमंसृजत। सोऽबिभेत्प्र मां धक्ष्यतीतिं॥४१॥

तस्यं त्रेधा मंहिमानं व्यौहत्। शान्त्या अप्रदाहाय। यत्रेधाऽग्निरांधीयतें। महिमानमेवास्य तद्यूहिति। शान्त्या अप्रदाहाय। पुनरा वर्तयति। महिमानमेवास्य सन्देधाति। पशुर्वा एषः। यदर्श्वः। एष रुद्रः॥४२॥

यदग्निः। यदश्वंस्य पुदैंऽग्निमांद्ध्यात्। रुद्रायं पुशूनपिंदध्यात्। अपुशुर्यजंमानः स्यात्। यन्नाकुमर्यंत्। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। पार्श्वत आर्क्रमयेत्। यथाऽऽहितस्याग्नेरङ्गारा अभ्यववर्तेरन्। अवंरुद्धा अस्य पशवो भवंन्ति। न रुद्रायापिंदधाति॥४३॥

त्रीणि ह्वी १ षि निर्वपति। विराजं एव विक्रांन्तं यजंमानोऽनु विक्रंमते। अग्नये पर्वमानाय। अग्नये पावकायं। अग्नये शुचये। यद्ग्रये पर्वमानाय निर्वपति। पुनात्येवैनम्। यद्ग्रये पावकायं। पूत एवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। यद्ग्रये शुचये। ब्रह्मवर्च्समेवास्मिन्नुपरिष्टाद्दधाति॥४४॥

तद्देवा विजित्यं। पुन्रवारुरुथ्मन्त। तैंऽग्नये पर्वमानाय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपन्। पुशवो वा अग्निः पर्वमानः। यदेव पृशुष्वासींत्। तत्तेनावारुन्थत। तैंऽग्नये पावकायं। आपो वा अग्निः पांवकः। यदेवापस्वासींत्। तत्तेनावारुन्थत॥४६॥ तें उग्नये शुचंये। असौ वा आंदित्यों उग्निः शुचिः। यदेवा ऽऽदित्य आसींत्। तत्तेनावां रुन्धतः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। तुनुवो वावैता अंग्र्याधेयंस्य। आग्नेयो वा अष्टाकंपालो उग्र्याधेयमिति। यत्तं निर्वपेत्। नैतानि। यथा ऽऽत्मा स्यात्॥४७॥ नाङ्गंति। वाद्योव वत्। यदेवानि निर्वपेत। न तम्। यथा ऽङ्गंति स्यः। ना ऽत्मा।

नाङ्गांनि। ताहगेव तत्। यदेतानिं निर्वपंत्। न तम्। यथाऽङ्गांनि स्युः। नाऽऽत्मा। ताहगेव तत्। उभयांनि सह निरुप्यांणि। यज्ञस्यं सात्मत्वायं। उभयं वा एतस्येन्द्रियं वीर्यमाप्यते॥४८॥

यों ऽग्निमांधृत्ते। ऐन्द्राग्नमेकांदशकपालम् निर्वपेत्। आदित्यं चुरुम्। इन्द्राग्नी वै देवानामयातयामानौ। ये एव देवते अयातयाम्नी। ताभ्यांमेवास्मां इन्द्रियं वीर्यमवं रुन्थे। आदित्यो भंवति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। धेन्वै वा एतद्रेतः॥४९॥

यदाज्यम्। अनुडुहंस्तण्डुलाः। मिथुनमेवावं रुन्धे। घृते भंवति। यज्ञस्यालूँक्षान्तत्वाय। चृत्वारं आर्षेयाः प्राश्नंन्ति। दिशामेव ज्योतिंषि जुहोति। पुशवो वा पुतानि हवी १ षिं। पुष रुद्रः। यद्ग्निः॥५०॥

यथ्सद्य पृतानिं ह्वी १ षिं निर्वपेंत्। रुद्रायं पृश्निपं दध्यात्। अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यन्नानुंनिर्वपेंत्। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। द्वादृशसु रात्रीष्वनु निर्वपेत्। संवथ्सरप्रंतिमा वै द्वादंश रात्रंयः। संवथ्सरेणैवास्में रुद्र १ शंमियत्वा। पृश्नवं रुन्थे। यदेकंमेकमेतानिं ह्वी १ षिं निर्वपेंत्॥ ५ १॥

यथा त्रीण्यावपंनानि पूर्यंत्। तादक्तत्। न प्रजनंनुमुच्छि १ षेत्। एकं निरुप्यं। उत्तरे समस्येत्। तृतीयंमेवास्मै लोकमुच्छि १ षित प्रजनंनाय। तं प्रजयां पृशुभिरनु प्रजायते। अथो यज्ञस्यैवेषाऽभिक्रांन्तिः। रथ्चकं प्रवर्तयति। मृनुष्यर्थेनैव देवर्थं प्रत्यवंरोहति॥५२॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्राँ(३) न होत्व्या(३) मितिं। यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परां भवेत्। तूष्णीमेव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। अग्नीधे ददाति॥५३॥ अग्निम्ंखानेवर्त्न्प्रीणाति। उपबर्हणं ददाति। रूपाणामवंरुद्धै। अर्श्वं ब्रह्मणें। इन्द्रियमेवावं रुन्थे। धेनु १ होत्रें। आशिषं एवावं रुन्थे। अनुङ्गाहंमध्वर्यवें। विहुर्वा अनङ्गान्। विह्नेरध्वर्युः॥५४॥

विह्नं विह्नं यज्ञस्यावं रुन्धे। मिथुनौ गावौं ददाति। मिथुनस्यावंरुद्धे। वासों ददाति। सूर्वदेवृत्यंं वे वासंः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। आ द्वांद्शभ्यों ददाति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। स्वथ्सर एव प्रतिं तिष्ठति। काममूर्धं देयम्। अपंरिमितस्यावंरुद्धे॥५५॥

आदित्ये तृतींयमुपस्वासीत्तत्तेनावांरुन्यत् स्यादांप्यते रेतोऽग्निरेकंमेकमेतानिं हुवीशिषं निर्विपेत्प्रत्यवंरोहित ददात्यध्वर्धुर्देयुमेकं च॥————[६]

घर्मः शिर्स्तद्यम्गिः। सिम्प्रंयः पृश्भिभ्वत्। छुर्दिस्तोकाय् तनयाय यच्छ। वातः प्राणस्तद्यम्गिः। सिम्प्रंयः पृश्भिभ्वत्। स्वदितं तोकाय् तनयाय पितुं पंच। प्राचीमन् प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निभ्वेह। विश्वा आशा दीद्यांनो विभाहि। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे॥५६॥

अर्कश्चक्षुस्तद्सौ सूर्यस्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पृश्भिर्भवत्। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तृनः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिहि तेन् त्वाऽऽदंधे। अग्निनौऽग्रे ब्रह्मणा। आन्शे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे। ये ते अग्ने शिवे तृनुवौ। विरार्द्व स्वरार्द्व। ते माविंशतां ते मां जिन्वताम्॥५७॥

ड्मे वा एते लोका अग्नयंः। ते यदव्यांवृत्ता आधीयेरन्। शोचयेयुर्यजमानम्। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमा दंधाति। वातः प्राण इत्यंन्वाहार्यपचनम्। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। तेनैवैनान्व्यावंतियति। तथा न शोचयन्ति यजमानम्। रथन्तरमभिगायते गार्हंपत्य आधीयमाने। राथंन्तरो वा अयं लोकः॥५९॥

अस्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमा धंत्ते। वामदेव्यम्भिगांयत उद्धियमांणे। अन्तरिक्षं वै वामदेव्यम्। अन्तरिक्षं पृवैनं प्रतिष्ठितमाधंत्ते। अथो शान्तिर्वे वामदेव्यम्। शान्तमेवैनं पश्व्यंमुद्धंरते। बृहद्भिगांयत आहवनीयं आधीयमाने। बार्हतो वा असौ लोकः। अमुष्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमाधंत्ते। प्रजापंतिरिग्नमंमृजत॥६०॥

सोऽश्वोऽवारों भूत्वा परांङैत्। तं वांरवन्तीयंनावारयत। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयत्वम्। श्येतेनं श्येती अंकुरुत। तच्छौतस्यं श्येतत्वम्। यद्वांरवन्तीयंमभि गायंते। वार्यित्वैवनं प्रतिष्ठितमा धंत्ते। श्येतेनं श्येती कुंरुते। धर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमादंधाति। सशींर्षाणमेवैनमा धंत्ते॥६१॥

उपैन्मुत्तरो युज्ञो नंमित। रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। स आंधीयमान ईश्वरो यजंमानस्य पृशून् हि॰सितोः। सिम्प्रियः पृशुभिर्भुवदित्याह। पृशुभिरेवैन्॰ सिम्प्रियं करोति। पृशूनामहि॰सायै। छुर्दिस्तोकाय तनयाय युच्छेत्याह। आमेवैतामा शांस्ते। वातः प्राण इत्यंन्वाहार्यपचंनम्॥६२॥

सप्राणमेवेनमा धंत्ते। स्वदितं तोकाय तनयाय पितुं प्चेत्यांह। अन्नमेवास्मैं स्वदयित। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वानित्यांह। विभक्तिरेवेनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवेनौं कुरुते। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पद इत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। अर्को व देवानामन्नम्॥६३॥

अन्नमेवावं रुन्धे। तेनं मे दीदिहीत्यांह। सिमंन्ध एवैनम्ं। आनुशे व्यानश् इति त्रिरुदिङ्गयित। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेवेनं लोकेषु प्रतिष्ठितमा धंत्ते। तत्तथा न कार्यम्। वीङ्गित्तमप्रतिष्ठितमा दंधीत। उद्धृत्यैवाधायांभिमन्नियः। अवीङ्गितमेवेनं प्रतिष्ठितमाधंत्ते। विराई स्वराद्घ यास्ते अग्ने शिवास्तनुवस्ताभिस्त्वाऽऽदंध इत्यांह। एता वा अग्नेः शिवास्तनुवंः। ताभिरेवेन् समर्धयित। यास्ते अग्ने घोरास्तनुवस्ताभिरमुं गुच्छेति ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। ताभिरेवेन् पराभावयित॥६४॥

प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

शमीगर्भादग्निं मंन्थति। एषा वा अग्नेर्यज्ञियां तन्ः। तामेवास्में जनयति। अदितिः पुत्रकामा। साध्येभ्यो देवेभ्यो ब्रह्मौदनमंपचत्। तस्या उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञात्। सा रेतों ऽधत्त। तस्यैं धाता चौर्यमा चौजायेताम्। सा द्वितीयंमपचत्॥६५॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यैं मित्रश्च वर्रुणश्चाजायेताम्। सा तृतीयंमपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोऽधत्त। तस्या अ॰शेश्च भगेश्चाजायेताम्। सा चंतुर्थमंपचत्॥६६॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या इन्द्रेश्च विवंस्वाङ्श्वाजायेताम्। ब्रह्मौदनं पंचित। रेतं एव तद्दंधाति। प्राश्ञंन्ति ब्राह्मणा ओंदुनम्। यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तेनं समिधोऽभ्यज्या दंधाति। उच्छेषंणाद्वा अदिती रेतोऽधत्त॥६७॥

उच्छेषंणादेव तद्रेतों धत्ते। अस्थि वा एतत्। यथ्समिधंः। एतद्रेतंः। यदाज्यम्। यदाज्येन समिधोऽभ्यज्यादधांति। अस्थ्येव तद्रेतंसि दधाति। तिस्र आदंधाति मिथुन्त्वायं। इयंतीर्भवन्ति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मिताः॥६८॥

इयंतीर्भवन्ति। युज्ञपुरुषा सिम्मिताः। इयंतीर्भवन्ति। पुतावृद्वै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मिताः। आर्द्रा भवन्ति। आर्द्रमिव हि रेतः सिच्यते। चित्रियस्याश्वत्थस्यादंधाति। चित्रमेव भवति। घृतवंतीभिरा दंधाति॥६९॥

पुतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यद्घृतम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। अथो तेर्जसा। गायत्रीभिन्नीह्मणस्यादेध्यात्। गायत्रछंन्दा वै न्नौह्मणः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनस्त्वायं। त्रिष्टुग्भी राजन्यंस्य। त्रिष्टुप्छंन्दा वै राजन्यः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनस्त्वायं॥७०॥

जगंतीभिर्वेश्यंस्य। जगंतीछन्दा वै वैश्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। तश्संवथ्सरं गोपायेत्। संवथ्सरश हि रेतों हितं वर्धते। यद्येनश्संवथ्सरे नोपनमैत्। स्मिधः पुन्रादंध्यात्। रेतं एव तिद्धितं वर्धमानमेति। न माश्समंश्ञीयात्। निस्त्रियमुपंयात्॥७१॥

यन्मा १ समंश्जीयात्। यथ्स्रियंमुपेयात्। निर्वीर्यः स्यात्। नैनंमुग्निरुपंनमेत्। श्व आंधास्यमानो ब्रह्मौद्नं पंचिति। आदित्या वा इत उत्तमाः सुंवृर्गं लोकमायन्। ते वा इतो यन्तं प्रतिनुदन्ते। एते खलु वावाऽऽदित्याः। यद्ग्रौह्मणाः। तैरेव सन्त्वं गंच्छति॥७२॥

नैनं प्रतिनुदन्ते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। क्वां सः। अग्निः कार्यः। योंऽस्मै प्रजां पृश्वन्प्रंजनयतीति। शल्कैस्ता १ रात्रिमृग्निमिन्धीत। तस्मिन्नुपव्युषम्रणी निष्टंपेत्। यथंर्ष्मायं वाशिता न्यांविच्छायति। तादृगेव तत्। अपोदूह्य भस्माग्निं मंन्थति॥ ७३॥

सैव साऽग्नेः सन्तितिः। तं मिथित्वा प्राश्चमुद्धेरित। संवथ्सरमेव तद्रेती हितं प्रजनयित। अनाहित्स्तस्याग्निरित्याहुः। यः समिधोऽनाधायाग्निमाधत्त इति। ताः संवथ्सरे पुरस्तादादिध्यात्। संवथ्सरादेवैनमव्रध्याधित। यदि संवथ्सरेऽनाद्ध्यात्। द्वाद्श्यां पुरस्तादादिध्यात्। संवथ्सरप्रितिमा वै द्वादिश्

रात्रयः। संवथ्सरमेवास्याऽऽहिंता भवन्ति। यदिं द्वादृश्यां नाद्ध्यात्। त्र्यहे पुरस्तादादंध्यात्। आहिंता पुवास्यं भवन्ति॥७४॥

द्वितीयंमपचचतुर्थमंपच्दितेते रेतोंऽधत् सम्मिता घृतवंतीभि्रादंधाति राजुन्यः स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनुस्त्वायंयाद्गच्छति मन्थित् रात्रंयश्चत्वारिं च॥————[९]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। स रिंरिचानों ऽमन्यत। स तपों ऽतप्यत। स आत्मन्वीर्यमपश्यत्। तदंवर्धत। तदंस्माथ्सहंसोर्ध्वमंसृज्यत। सा विराडंभवत्। तां देवासुरा व्यंगृह्णत। सों ऽब्रवीत्प्रजापंतिः। मम वा एषा॥७५॥

दोहां एव युष्माक्मितिं। सा ततः प्राच्युदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अथंवं पितुं में गोपायेतिं। सा द्वितीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। नर्यं प्रजां में गोपायेतिं। सा तृतीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। शङ्स्यं पृशून्में गोपायेतिं॥७६॥

सा चंतुर्थमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। सप्रंथ सुभां में गोपायितिं। सा

पंश्चममुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यंगृह्णात्। अहं बुध्निय मन्नं मे गोपायेतिं। अग्नीन् वाव सा तान्व्यंक्रमत। तान्प्रजापंतिः पर्यंगृह्णात्। अथों पृङ्किमेव। पृङ्किर्वा एषा ब्राह्मणे प्रविष्टा॥७७॥

तामात्मनोऽधि निर्मिमीते। यद्ग्निराधीयतें। तस्मादेतावंन्तोऽग्नय आधीयन्ते। पाङ्कं वा इद॰ सर्वम्। पाङ्कंनैव पाङ्कः स्पृणोति। अथर्व पितुं में गोपायेत्यांह। अन्नमेवैतेनं स्पृणोति। नर्यं प्रजां में गोपायेत्यांह। प्रजामेवैतेनं स्पृणोति। शङ्स्यं पश्नमें गोपायेत्यांह॥७८॥

पृश्नृवैतेनं स्पृणोति। सप्रंथ स्मां में गोपायेत्यांह। स्मामेवैतेनंन्द्रियः स्पृणोति। अहं बुध्निय मन्नं मे गोपायेत्यांह। मन्नमेवैतेन श्रियः स्पृणोति। यदंन्वाहार्यपर्चनेऽन्वाहार्यं पर्चन्ति। तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यदार्हंपत्य आज्यंमिधश्रयंन्ति सम्पत्नीयांजयंन्ति। तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यदांहवनीये जुह्वंति॥७९॥

तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यथ्सभायां विजयंन्ते। तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यदांवस्थेऽन्न् हरंन्ति। तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। तथांऽस्य सर्वे प्रीता अभीष्टा आधीयन्ते। प्रवस्थमेष्यन्नेवसृपंतिष्ठेतैकमेकम्। यथां ब्राह्मणायं गृहेवासिनं परिदायं गृहानेतिं। ताहगेव तत्। पुनंरागत्योपंतिष्ठते। सा भांगेयमेवेषां तत्। सा ततं ऊर्ध्वारोहत्। सा रोहिण्यंभवत्। तद्रोहिण्ये रोहिणित्वम्। रोहिण्याम्ग्निमादंधीत। स्व पुवैनं योनौ प्रतिष्ठितमाधंत्ते। ऋभ्रोत्येनेन॥८०॥

पुषा पुशून्में गोपायेति प्रविष्टा पुशून्में गोपायेत्यांह जुह्वंति तिष्ठते सप्त चं॥————[१०]

ब्रह्म सन्धेत्तं कृत्तिंकासूर्द्धन्ति द्वादुशसुं प्रजापंतिर्वाचो देवासुरास्तद्ग्निर्नोद्धर्मः शिरं हुमे वै शंमीगुर्भात्प्रजापंतिः स रिरिचानः स तपः स आृत्सन्वीर्यं दर्श॥१०॥

ब्रह्म सन्धंतुं तौ दिव्यावर्थो शन्त्वाय प्राच्येषां यदुपर्युपरि यथ्सद्यः सोऽश्वोऽवारी भूत्वा जर्गतीभिरशीतिः॥८०॥

ब्रह्म सन्धंत्तमृध्नोत्येंनेन॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

उद्धन्यमनिम्स्या अमेध्यम्। अपं पाप्मानं यर्जमानस्य हन्तु। शिवा नेः सन्तु प्रदिशृश्चतंस्रः। शं नों माता पृथिवी तोकसाता। शं नों देवीर्भिष्टंये। आपों भवन्तु पीतयें। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। वैश्वान्रस्यं रूपम्। पृथिव्यां परिस्रसां। स्योनमा विशन्तु नः॥१॥

यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। सञ्जज्ञाने रोदंसी सम्बभूवर्तुः। ऊषाँन्कृष्णमंवतु कृष्णमूषाँः। इहोभयौर्यज्ञियमागंमिष्ठाः। ऊतीः कुर्वाणो यत्पृथिवीमचरः। गुहाकारंमाखुरूपं प्रतीत्यं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जं पृथिव्या रसंमाभरंन्तः। शतं जीवेम श्ररदः पुरूचीः॥२॥

वम्रीभिरन्वित्तं गुहांसु। श्रोत्रं त उर्व्यबंधिरा भवामः। प्रजापंतिसृष्टानां प्रजानांम्। क्षुधोऽपंहत्यै सुवितं नों अस्तु। उप प्रभिन्निमिष्मूर्जं प्रजाभ्यंः। सूदं गृहेभ्यो रसमाभेरामि। यस्यं रूपं बिभ्नंदिमामविंन्दत्। गुह्य प्रविष्टाः सिर्रस्य मध्यैं। तस्येदं विहंतमाभरंन्तः। अछंम्बद्धारम्स्यां विधेम॥३॥

यत्पर्यपंश्यथ्मिर्रस्य मध्यै। उर्वीमपंश्यञ्जगंतः प्रतिष्ठाम्। तत्पुष्कंरस्याऽऽयतंनाि जातम्। पणं पृथिव्याः प्रथंन १ हरािम। यािभरद्द १ हुञ्जगंतः प्रतिष्ठाम्। उर्वीिममां विश्वजनस्यं भूत्रीम्। ता नंः शिवाः शर्कराः सन्तु सर्वाः। अग्ने रेतेश्चन्द्र १

हिरंण्यम्। अद्भः सम्भूतम्मृतं प्रजासुं। तथ्सम्भरंत्रुत्तर्तो निधायं॥४॥

अतिप्रयच्छं दुरितिं तरेयम्। अश्वीं रूपं कृत्वा यदेश्वत्थेऽतिष्ठः। संवृथ्सरं देवेभ्यो निलाय। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शतं जीवेम शरदः सवीराः। ऊर्जः पृथिव्या अध्युत्थितोऽसि। वनस्पते शतवंलशो विरोह। त्वयां व्यमिष्मूर्जं मदेन्तः। रायस्पोषेण समिषा मंदेम। गायत्रिया हियमाणस्य यत्तै॥५॥

पूर्णमपंतत्तृतीयंस्यै दिवोऽधि। सोंऽयं पूर्णः सोंमपूर्णाद्धि जातः। ततों हरामि सोमपीथस्यावंरुद्धै। देवानां ब्रह्मवादं वदंतां यत्। उपार्श्वणोः सुश्रवा वै श्रुतोंऽसि। ततो मामाविशत् ब्रह्मवर्चसम्। तथ्सम्भर इस्तदवं रुन्धीय साक्षात्। ययां ते सृष्टस्याग्नेः। हेतिमशंमयत्प्रजापंतिः। तामिमामप्रंदाहाय॥६॥

शमी १ शान्त्यै हराम्यहम्। यत्ते सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आंच्छिञ्जातवेदः। तयां भासा सम्मितः। उरुं नों लोकमन् प्रभाहि। यत्ते तान्तस्य हृदयमाच्छिन्दञ्जातवेदः। मरुतोऽद्भिस्तंमयित्वा। एतत्ते तदेशनेः सम्भंरामि। सात्मां अग्ने सहंदयो भवेह।

चित्रियादश्वत्थाथ्मम्भृता बृहत्यः॥७॥

शरींरमभि सङ्स्कृंताः स्थ। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिंताः। तिस्रस्रिवृद्धिर्मिथुना प्रजांत्यै। अश्वत्थाद्धंव्यवाहाद्धि जाताम्। अग्नेस्तनूं यज्ञियाः सम्भंरामि।

शान्तयोनि । शमीगर्भम्। अग्नये प्रजनियतवै। यो अश्वत्थः शमीगर्भः। आरुरोह त्वे सर्चा। तं ते हरामि ब्रह्मणा॥८॥

यज्ञियैंः केतुभिः सह। यं त्वां समभंरञ्जातवेदः। यथाशरीरं भूतेषु न्यंक्तम्। स सम्भृतः सीद शिवः प्रजाभ्यः। उरुं नों लोकमनुनिषि विद्वान्। प्रवेधसे कवये मेध्याय। वचो वन्दारु वृषभाय वृष्णै। यतो भयमभयं तन्नो अस्तु। अवं देवान् यंजे हेड्यान्। समिधाऽग्निं दुंवस्यत॥९॥

॥ घृत-सूक्तम्॥

घृतैर्बोधयुतातिंथिम्। आऽस्मिन् हव्या जुंहोतन। उपं त्वाऽग्ने हविष्मंतीः। घृताचीर्यन्तु हर्यत। जुषस्वं समिधो ममं। तं त्वां समिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामसि। बृहच्छोंचा यविष्ठ्य। समिध्यमांनः प्रथमो नु धर्मः। समक्तुभिरज्यते विश्ववारः॥१०॥

शोचिष्केंशो घृतनिर्णिक्पाव्कः। सुयुज्ञो अग्निर्युज्ञथांय देवान्। घृतप्रंतीको घृतयोनिरग्निः। घृतैः समिद्धो घृतमस्यान्नम्। घृतप्रुषंस्त्वा सरितो वहन्ति। घृतं पिबंन्थ्सुयजां यक्षि देवान्। आयुर्दा अंग्ने हिवषों जुषाणः। घृतप्रतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यम्। पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्॥११॥

त्वामंग्ने सिमधानं यंविष्ठ। देवा दूतं चिक्रिरे हव्यवाहम्। उरुज्रयंसं घृतयोनिमाहुंतम्। त्वेषं चक्षुंदिधिरे चोद्यन्वंति। त्वामंग्ने प्रदिव आहुंतं घृतेनं। सुम्नायवंः सुष्मिधा समीधिरे। स वांवृधान ओषंधीभिरुक्षितः। उरु ज्रयार्सस् पार्थिवा वितिष्ठसे। घृतप्रंतीकं व ऋतस्यं धूर्षदम्। अग्निं मित्रं न संमिधान ऋत्रते॥१२॥

इन्धांनो अक्रो विदर्थेषु दीद्यंत्। शुक्रवंणांमुद्धं नो यश्सते धियम्। प्रजा अंग्रे संवांसय। आशांश्च पशुभिः सह। राष्ट्राण्यंस्मा आधेहि। यान्यासँन्थ्सिवृतुः स्वे। मही विश्पत्नी सदंने ऋतस्यं। अर्वाची एतं धरुणे रयीणाम्। अन्तर्वत्नी जन्यं जातवेदसम्। अध्वराणां जनयथः पुरोगाम्॥१३॥

आरोहतं दुशत् शक्वरीर्ममं। ऋतेनाम् आयुषा वर्चसा सह। ज्योग्जीवंन्त उत्तरामुत्तरा समाम्। दर्शमहं पूर्णमासं यज्ञं यथा यजै। ऋत्वियवती स्थो अग्निरेतसौ। गर्भं दधाथां ते वामहं देदे। तथ्सत्यं यद्वीरं बिभृथः। वीरं जनियुष्यर्थः। प्रजयां पश्मिर्ब्रह्मवर्चसेनं सुवर्गे लोके। अनृताथ्सत्यमुपैमि। मानुषाद्दैव्यमुपैमि। देवीं वाचं यच्छामि। शल्कैर्ग्निमिन्धानः। उभौ लोकौ संनेमहम्। उभयौर्लोकयोर् ऋध्वा। अति मृत्युं तराम्यहम्। जातंवदो भुवनस्य रेतः। इह सिश्च तपंसो यज्ञीनिष्यते॥१५॥

अग्निमश्वत्थादिषे हव्यवाहम्। श्रमीगर्भाञ्चनयन् यो मयोभूः। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया रियम्। अपेत् वीत् वि च सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अदांदिदं यमोऽवसानं पृथिव्याः। अन्नेन्निमं पितरो लोकमंस्मै॥१६॥

अग्नेर्भस्मांस्यग्नेः पुरीषमसि। संज्ञानंमिस काम्धरंणम्। मियं ते काम्धरंणं भूयात्। संवंः सृजािम् हृदंयािन। स॰सृष्टं मनो अस्तु वः। स॰सृष्टः प्राणो अस्तु वः। सं या वंः प्रियास्तुन्वंः। सं प्रिया हृदंयािन वः। आत्मा वो अस्तु सिप्प्रियः।

सम्प्रियास्तनुवो ममं॥१७॥

द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् १)

कल्पंतां द्यावांपृथिवी। कल्पंन्तामाप् ओषंधीः। कल्पंन्ताम्ग्रयः पृथंक्। मम् ज्यैष्ठ्यांय सन्नंताः। येंऽग्रयः समंनसः। अन्तरा द्यावांपृथिवी। वासंन्तिकावृत् अभि कल्पंमानाः। इन्द्रंमिव देवा अभि सं विंशन्तु। दिवस्त्वां वीर्येण। पृथिव्ये महिम्रा॥१८॥

अन्तरिक्षस्य पोषेण। सर्वपंशुमादेधे। अजीजनन्नमृतं मर्त्यांसः। अस्रेमाणं तरणिं वीडुजंम्भम्। दश् स्वसारो अग्रुवंः समीचीः। पुमार्श्सं जातम्भि सर्श्यन्ताम्। प्रजापंतेस्त्वा प्राणेनाभि प्राणिमि। पूष्णः पोषेण् मह्यम्। दीर्घायुत्वायं श्तशांरदाय। शतर शरद्ध आयुंषे वर्चसे॥१९॥

जीवात्वै पुण्यांय। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव् योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोककृञ्जांतवेदः। प्राणे त्वाऽमृत्मादंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गुप्त्यै। सुगार्हपत्यो विदहन्नरांतीः। द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् १)

अग्ने स्पतारं अप बार्धमानः। रायस्पोष्मिष्मूर्जम्स्मासं धेहि। इमा उ मामुपंतिष्ठन्तु रायः। आभिः प्रजाभिरिह संवंसेय। इहो इडां तिष्ठतु विश्वरूपी। मध्ये वसौदीदिहि जातवेदः। ओजंसे बलांय त्वोद्यंच्छे। वृषंणे शुष्मायायुंषे वर्चसे। स्पत्नतूरंसि वृत्रतूः। यस्ते देवेषं महिमा स्वर्गः॥२१॥

यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। पृष्टिर्या ते मनुष्येषु पप्रथे। तयां नो अग्ने जुषमांण एहिं। दिवः पृथिव्याः पर्यन्तिरक्षात्। वातांत्पशुभ्यो अध्योषंधीभ्यः। यत्रं यत्र जातवेदः सम्ब्भूथं। ततों नो अग्ने जुषमांण एहिं। प्राचीमनुं प्रदिश्ं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अंग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो वि भाहि॥२२॥

ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अन्वग्निरुषसामग्रंमख्यत्। अन्वहांनि प्रथमो जातवंदाः। अनु सूर्यस्य पुरुत्रा चं रुश्मीन्। अनु द्यावांपृथिवी आतंतान। विक्रंमस्व महा असि। वेदिषन्मानुषेभ्यः। त्रिषु लोकेषुं जागृहि। यदिदं दिवो यददः पृंथिव्याः। संविदाने रोदंसी सं बभूवतुंः॥२३॥

तयोः पृष्ठे सीदतु जातवेदाः। शम्भूः प्रजाभ्यंस्तुनवे स्योनः। प्राणं त्वाऽमृत् आ दंधामि। अन्नादमन्नाद्याय। गोप्तारं गुप्त्यै। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तुन्। शुक्रं ज्योतिरजंस्नम्। तेनं मे दीदिह् तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनौऽग्ने ब्रह्मणा। आनुशे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे॥२४॥

नर्यं प्रजां में गोपाय। अमृत्त्वायं जीवसें। जातां जिन्ष्यमाणां च। अमृतें सत्ये प्रतिष्ठिताम्। अर्थर्व पितुं में गोपाय। रसमन्निमहायुंषे। अदंब्यायोऽशींततनो। अविषन्नः पितुं कृण्। शङ्स्यं पृशून्में गोपाय। द्विपादो ये चतुंष्पदः॥२५॥

अष्टाशंफाश्च य इहाग्नें। ये चैकंशफा आशुगाः। सप्रंथ स्मां में गोपाय। ये च् सभ्याः सभासदः। तानिन्द्रियावंतः कुरु। सर्वमायुरुपांसताम्। अहे बुध्निय मन्नं मे गोपाय। यमृषंयस्त्रैविदा विदुः। ऋचः सामांनि यजूर्षेष। सा हि श्रीर्मृतां स्ताम्॥२६॥ चतुंः शिखण्डा युव्तिः सुपेशांः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यें। मुर्मृज्यमांना मह्ते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। इहैव सन्तत्रं स्तो वों अग्नयः। प्राणेनं वाचा मनंसा बिभिम। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्। ज्योतिषा वो वैश्वानरेणोपितिष्ठे। पृश्चधाऽग्नीन्व्यंक्रामत्। विराद्थ्सृष्टा प्रजापेतेः। कुर्ध्वाऽऽरोहद्रोहिणी। योनिर्ग्नेः प्रतिष्ठितिः॥२७॥

विश-तु नः पुरूचीर्विधेम निधाय यत्तेऽप्रदाहाय बृहत्यौँ ब्रह्मणा दुवस्यत विश्ववार इममृंश्वते पुरोगां प्रजनिययर्थो जिन्यतेंऽस्मै ममं महिम्रा वर्चसे दर्धथसुवर्गी

भौहि सम्बभ्वतुरायुर्व्यानशे चतुंष्पदः सतां प्रजापेतेर्द्वे चं॥**—**

नवैतान्यहांनि भवन्ति। नव वै सुंवर्गा लोकाः। यदेतान्यहांन्युपयन्तिं। नवस्वेव तथ्सुंवर्गेषुं लोकेषुं स्त्रिणः प्रतितिष्ठंन्तो यन्ति। अग्निष्टोमाः परंः सामानः कार्या इत्यांहुः। अग्निष्टोमसंम्मितः सुवर्गो लोक इतिं। द्वादंशाग्निष्टोमस्यं स्तोत्राणि। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। तत्तन्न सूर्क्यम्। उक्थ्यां एव संप्तद्शाः परंः सामानः कार्याः॥२८॥

प्शवो वा उक्थानिं। प्रशूनामवंरुद्धौ। विश्वजिद्भिजितांवग्निष्टोमौ। उक्थ्याः सप्तद्शाः परंः सामानः। ते सङ्स्तुंता विराजम्भि सम्पद्यन्ते। द्वे चर्चावतिंरिच्येते। एकंया गौरतिंरिक्तः। एक्याऽऽयुंरूनः। सुवर्गो वै लोको ज्योतिंः। ऊर्ग्विराट्॥२९॥

सुवर्गमेव तेनं लोकम्भि जंयन्ति। यत्पर् राथंन्तरम्। तत्प्रंथमेऽहंन्कार्यम्। बृहद्वितीये। वैरूपं तृतीये। वैराजं चंतुर्थे। शाक्करं पंश्रमे। रैवत एष्ठे। तद्ं पृष्ठेभ्यो नयंन्ति। सन्तनय एते ग्रहां गृह्यन्ते॥३०॥

अतिग्राह्याः परंः सामस्। इमानेवैतैर्लोकान्थ्यन्तंन्वन्ति। मिथुना एते ग्रहां गृह्यन्ते। अतिग्राह्याः परंः सामस्। मिथुनमेव तैर्यजमाना अवंरुन्थते। बृहत्पृष्ठं भंवति। बृहद्दे सुंवर्गो लोकः। बृह्तैव सुंवर्गं लोकं यन्ति। त्रयस्त्रिष्ट्शि नाम् साम। माध्यं दिने पर्वमाने भवति॥३१॥

त्रयंस्त्रि श्वाद्वे देवताः। देवतां एवावंरुन्धते। ये वा इतः परांश्व संवथ्सरमुंप्यन्ति। न हैनं ते स्वस्ति समंश्जुवते। अथ् येऽमुतोऽर्वाश्चमुप्यन्ति।

द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् १)

ते हैंन इ स्वस्ति समंश्जुवते। एतद्वा अमुतोऽर्वाश्चमुपंयन्ति। यदेवम्। यो ह खलु वाव प्रजापंतिः। स उववेन्द्रः। तद् देवेभ्यो नयंन्ति॥३२॥

कार्या विराङ्गंह्यन्ते पर्वमाने भवतीन्द्र एकं च॥

सन्तंतिर्वा एते ग्रहाः। यत्परंः सामानः। विषूवान्दिवाकीर्त्यम्। यथा शालांयै पक्षंसी। पुवर संवथ्सरस्य पक्षंसी। यदेतेन गृह्येरन्। विषूची संवथ्सरस्य पक्षंसी

व्यवंस्र १ सेयाताम्। आर्तिमार्च्छेयुः। यदेते गृह्यन्तैं। यथा शालांयै पक्षंसी मध्यमं वश्शमभि संमायच्छंति॥३३॥

एव र संवथ्सरस्य पक्षंसी दिवाकीर्त्यंमिभ सं तंन्वन्ति। नार्तिमार्च्छन्ति। पुक्वि १ शमहं भविति। शुक्राग्रा ग्रहां गृह्यन्ते। प्रत्युत्तं ब्ये सयत्वायं। सौर्यं एतदहंः पश्रालंभ्यते। सौर्योऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं पुवैष बलिर्ह्रियते। सप्तैतदहंरतिग्राह्यां गृह्यन्ते॥३४॥

सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। असावादित्यः शिरः प्रजानाम्। शीर्षन्नेव प्रजानां

प्राणान्दंधाति। तस्माँथ्मप्त शीर्षन्प्राणाः। इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। स इमाँ श्लोकानुभ्यं जयत्। तस्यासौ लोकोऽनंभिजित आसीत्। तं विश्वकंमां भूत्वा-ऽभ्यं जयत्। यद्वैश्वकर्मणो गृह्यते॥३५॥

पुक्रविष्ट्रश पुष भंवति। पृतेन् वै देवा एंकविष्ट्रश्चेनं। आदित्यमित उत्तमर सुंवर्गं लोकमारोहयन्। स वा पुष इत एंकविष्ट्रशः। तस्य दशावस्तादहांनि। दशं पुरस्तांत्। स वा पुष विराज्युभ्यतः प्रतिष्ठितः। विराज्ञि हि वा पुष उभ्यतः प्रतिष्ठितः। तस्मादन्त्रेमौ लोकौ यन्। सर्वेषु सुवर्गेषुं लोकेष्वंभितपंन्नेति॥३७॥ देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। परांचोऽतिपादादंबिभयुः। तं

द्वा वा आदित्यस्य सुवृगस्य लाकस्या पराचाऽतिपादादावमयुः। त छन्दोभिरदृश्ह्ं धृत्यै। देवा वा आंदित्यस्यं सुवृगस्यं लोकस्यं। अवांचो-ऽवपादादंबिभयुः। तं पृश्रभी रृष्टिमभि्रु देवयन्। तस्मादेकविश्रे अहृन्पश्चं दिवाकीत्यांनि क्रियन्ते। रृष्ट्मयो वै दिवाकीत्यांनि। ये गांयत्रे। ते गांयत्रीषूत्तंरयोः पर्वमानयोः॥३८॥

महादिवाकीर्त्यक् होतुंः पृष्ठम्। विकर्णं ब्रह्मसामम्। भासौंऽग्निष्टोमः। अथैतानि पर्राणि। परै्वे देवा आदित्यक् सुंवर्गं लोकमंपारयन्। यदपारयन्। तत्पराणां पर्त्वम्। पारयन्त्येनं पर्राणि। य एवं वेदं। अथैतानि स्पराणि। स्परै्वे देवा आदित्यक् सुंवर्गं लोकमंस्पारयन्। यदस्पारयन्। तथ्स्पराणाः स्पर्त्वम्। स्पारयन्त्येन् स्पराणि। य एवं वेदं॥३९॥

पृति पर्वमानयोः स्पराणि पर्श्व च॥

-[8]

अप्रतिष्ठां वा एते गंच्छन्ति। येषा १ संवथ्सरेऽनाप्तेऽथं। एकाद्शिन्याप्यते॥ वैष्णवं वामनमालभन्ते। युज्ञो वै विष्णुः। युज्ञमेवाल्भन्ते प्रतिष्ठित्यै।

ऐन्द्राग्नमालंभन्ते। इन्द्राग्नी वै देवानामयातयामानौ। ये एव देवते अयातयाम्नी। ते एवाऽऽलंभन्ते॥४०॥

वैश्वदेवमालंभन्ते। देवतां एवावंरुन्धते। द्यावापृथिव्यां धेनुमालंभन्ते। द्यावापृथिव्योरेव प्रति तिष्ठन्ति। वायव्यं वृथ्समालंभन्ते। वायुरेवैभ्यो यथा-ऽऽयत्नाद्देवता अवं रुन्धे। आदित्यामविं वृशामालंभन्ते। इ्यं वा अदितिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति। मैत्रावरुणीमालंभन्ते॥४१॥

मित्रेणैव यज्ञस्य स्विष्टश् शमयन्ति। वर्रुणेन् दुरिष्टम्। प्राजापत्यं तूपरं महाव्रत आर्लभन्ते। प्राजापत्योऽतिग्राह्यो गृह्यते। अहंरेव रूपेण् समर्धयन्ति। अथो अहं एवैष बुलिर्ह्हियते। आग्नेयमा लभन्ते प्रति प्रज्ञांत्यै। अजुपेत्वान् वा एते पूर्वेर्मासैरवं रुन्थते। यदेते गुळ्याः पृशवं आलुभ्यन्ते। उभयेषां पशूनामवंरुद्धौ॥४२॥ यदतिरिक्तामेकाद्शिनीमालभेरन्। अप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यतिरिच्येत। यद्दौ द्वौ पृशू समस्येयुः। कनीय आयुः कुर्वीरन्। यद्ते ब्राह्मणवन्तः पृशवं आलुभ्यन्तै। नाप्नियं भ्रातृंव्यम्भ्यतिरिच्यते। न कनीय आयुः कुर्वते॥४३॥

प्रजापितः प्रजाः सृष्ट्वा वृत्तोऽशयत्। तं देवा भूताना् रस्ं तेजः सम्भृत्यं।

तेनैनमभिषज्यन्। महानंववृतीतिं। तन्मंहावृतस्यं महावृत्त्वम्। मृहद्भृतमितिं। तन्मंहावृतस्यं महावृत्त्वम्। मृहद्भृतमितिं। तन्मंहावृतस्यं महावृत्त्वम्। मृह्तो वृतिमितिं। तन्मंहावृतस्यं महावृत्त्वम्। पश्चविश्शः स्तोमों भवति॥४४॥

चतुंर्वि शत्यर्धमासः संवथ्सरः। यद्वा एतस्मिन्थ्संवथ्सरेऽधि प्राजांयत। तदन्नं पश्चिवि श्वमंभवत्। मध्यतः क्रियते। मध्यतो ह्यन्नंमिश्ततं धिनोतिं। अथो मध्यत एव प्रजानामूर्थीयते। अथ् यद्वा इदमंन्त्तः क्रियतें। तस्मांदुदन्ते प्रजाः समेधन्ते। अन्ततः क्रियते प्रजनंनायैव। त्रिवृच्छिरो भवति॥४५॥

त्रेधाविहित १ हि शिरंः। लोमं छ्वीरिस्थं। परांचा स्तुवन्ति। तस्मात्तथ्सहग्व। न मेद्यतोऽनुं मेद्यति। न कृश्यतोऽनुं कृश्यति। पृश्चदृशौंऽन्यः पृक्षो भंवति। स्प्तदृशौंऽन्यः। तस्माद्वया १ स्यन्यत्रम्धम्भि पूर्यावर्तन्ते। अन्यत्रत्तो हि तद्गरीयः क्रियतै॥४६॥

पश्चवि श आत्मा भेवति। तस्मौन्मध्यतः पशवो वरिष्ठाः। एकवि श पुच्छम्।

द्विपदांसु स्तुवन्ति प्रतिष्ठित्यै। सर्वेण सह स्तुवन्ति। सर्वेण ह्यांत्मनांऽऽत्मन्वी।

सहोत्पतंन्ति। एकैकामुच्छि १षिन्ति। आत्मन्न ह्यङ्गांनि बद्धानि। न वा एतेन् सर्वः पुरुषः॥४७॥

यदित इंतो लोमांनि दतो नखान्। परिमादंः क्रियन्ते। तान्येव तेन् प्रत्युंप्यन्ते। औदुंम्बर्स्तल्पो भवति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। यस्यं तल्पसद्यमनंभिजित् स्यात्। स देवाना समर्यक्षे। तल्पसद्यमिनिजंयानीति तल्पमारुद्योद्गीयत्। तल्पसद्यमेवाभि जंयति॥४८॥

यस्यं तल्प्सद्यंम्भिजित्रुं स्यात्। स देवाना्रुं साम्यंक्षे। तृल्प्सद्यं मा परांजेषीति तल्पंमा्रुह्योद्गायेत्। न तल्प्सद्यं परांजयते। प्रेङ्के शर्मति। महो व प्रेङ्कः। महंस एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। देवासुराः संयंत्ता आसन्। त आंदित्ये व्यायंच्छन्त। तं देवाः समंजयन्॥४९॥

ब्राह्मणश्चे शूद्रश्चं चर्मकृते व्यायंच्छेते। दैव्यो वै वर्णो ब्राह्मणः। असुर्यः शूद्रः। इमें ऽराथ्सुरिमे सुभूतमंकृत्रित्यंन्यत्रो ब्रूयात्। इम उद्वासीकारिणं इमे दुर्भूतमंकृत्रित्यंन्यत्रः। यदेवैषा स् सुकृतं या राद्धिः। तदंन्यत्रोऽभि श्रीणाति। यदेवेषां दुष्कृतं याऽराद्धिः। तदंन्यत्रोऽपं हन्ति। ब्राह्मणः सं जंयित। अमुमेवाऽऽदित्यं भ्रातृंव्यस्य संविन्दन्ते॥५०॥

उद्धन्यमानुं नवैतानि सन्तंतिरेकविर्ण एषोऽप्रंतिष्ठां प्रजापंतिर्वृत्तः षट्॥६॥

उन्नन्त्रनान् नन्तान् सन्तातरकाय्द्रस युपाठप्रातवा प्रजापातपृतः पद्मादा

उद्धन्यमानः शोचिष्केशोऽग्नें सपन्नानितग्राह्यां वैश्वदेवमालंभन्ते पश्चाशत्॥५०॥

भवति भवति क्रियते पुरुषो जयत्यजयश्चयत्येकं च।

उद्धन्यमानुर संविन्दन्ते॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुंप्यन्तः। अग्नीषोमंयोस्तेज्ञस्विनींस्तृन्ः सन्त्रंदधत। इदमुं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीतिं। तेनाग्नीषोमावपांकामताम्। ते देवा विजित्यं। अग्नीषोमावन्वैंच्छन्। तेंऽग्निमन्वंविन्दन्नृतुषूथ्संन्नम्। तस्य विभंक्तीभिस्तेजस्विनींस्तनूरवांरुन्धत॥१॥

ते सोम्मन्वंविन्दन्। तमंघ्नन्। तस्यं यथाऽभिज्ञायं तुनूर्व्यगृह्णतः। ते ग्रहां अभवन्। तद्गहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वेव गृहीताः। नानांऽऽग्नेयं पुनर्धियं कुर्यात्। यदनांग्नेयं पुनर्धियं कुर्यात्। व्यृद्धमेव तत्॥२॥

अनाँग्नेयं वा एतत्क्रियते। यथ्समिधस्तनूनपांतिम्डो बुर्हिर्यजिति। उभावाँग्नेयावाज्यंभागौ स्याताम्। अनाँज्यभागौ भवत् इत्यांहुः। यदुभावाँग्नेयाव्न्वश्चारि अग्नये पर्वमानायोत्तंरः स्यात्। यत्पर्वमानाय। तेनाऽऽज्यंभागः। तेर्न सौम्यः। बुधंन्वत्याग्नेयस्याऽऽज्यंभागस्य पुरोऽनुवाक्यां भवति॥३॥

यथां सुप्तं बोधयंति। ताहगेव तत्। अग्निन्यंक्ताः पत्नीसंयाजानामृचंः स्युः। तेनांऽऽग्नेय सर्वं भवति। एक्धा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। प्रजनंनं वा अग्निः। प्रजनंनमेवोपैतीतिं। कृतयंजुः सम्भृतसम्भार इत्यांहुः॥४॥

न सम्भृत्याः सम्भाराः। न यजुः कार्यमिति। अथो खलुं। सम्भृत्यां एव सम्भाराः। कार्यं यजुः। पुनराधेयंस्य समृद्धौ। तेनोपा १ श्रु प्रचरित। एष्यं इव वा एषः। यत्पुनराधेयः। यथोपा १ शु नृष्टमिच्छिति॥ ५॥

ताहगेव तत्। उचैः स्विष्ट्कृतम्थ्यंजिति। यथां नृष्टं वित्त्वा प्राहायमिति। ताहगेव तत्। एक्धा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। तत्तथा नोपैति। प्रयाजानूयाजेष्वेव विभक्तीः कुर्यात्। यथापूर्वमाज्यंभागौ स्यातांम्। एवं पंत्रीसंयाजाः॥६॥ तद्वैश्वान् रवंत्प्रजनंनवत्तर्मुपैतीति। तदांहुः। व्यृद्धं वा एतत्। अनाँग्नेयं वा एतित्र्रियत् इति। नेति ब्रूयात्। अग्निं प्रंथमं विभक्तीनां यजित। अग्निम्त्तमं पंत्रीसंयाजानांम्। तेनां ऽऽग्नेयम्। तेन समृद्धं क्रियत इति॥७॥

देवा वै यथादर्शं यज्ञानाहंरन्त। योंऽग्निष्टोमम्। य उक्थ्यम्ं। योंऽतिरात्रम्। ते सुहैव सर्वे वाज्येयंमपश्यन्। ते। अन्योंऽन्यस्मै नातिष्ठन्त। अहम्नेनं यजा इतिं। तेंऽब्रुवन्। आजिमस्य धांवामेति॥८॥

तस्मिन्नाजिमेधावन्। तं बृह्स्पित्रिर्दंजयत्। तेनायजतः। स स्वाराँज्यमगच्छत्। तिमन्द्रौंऽब्रवीत्। मामनेनं याज्येतिं। तेनेन्द्रमयाजयत्। सोऽग्रं देवतानां पर्यैत्। अगच्छ्थस्वाराँज्यम्। अतिष्ठन्तास्मै ज्यैष्ठ्याय॥९॥

य एवं विद्वान् वांजिपेयेंन् यजंते। गच्छंति स्वारांज्यम्। अग्रर्श् समानानां पर्येति। तिष्ठंन्तेऽस्मै ज्यैष्ठ्यांय। स वा एष ब्रांह्मणस्यं चैव रांजन्यंस्य च युज्ञः। तं वा एतं वांज्पेय इत्यांहुः। वाजाप्यो वा एषः। वाज् कुं ह्येतेनं देवा ऐफ्सन्। सोमो वै वांजपेयः। यो वै सोमं वाजपेयं वेदं॥१०॥

वाज्येवैनं पीत्वा भविति। आऽस्यं वाजी जायते। अन्नं वै वांज्पेयः। य एवं वेदं। अत्यन्नम्। आऽस्यानादो जायते। ब्रह्म वै वांज्पेयः। य एवं वेदं। अत्ति ब्रह्मणाऽन्नम्। आऽस्यं ब्रह्मा जायते॥११॥

वाग्वै वाजंस्य प्रस्वः। य एवं वेदं। क्रोतिं वाचा वीर्यम्ं। ऐनं वाचा गंच्छति। अपिवतीं वाचं वदति। प्रजापंतिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिंशत्। स आत्मन्वांजपेयंमधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यद्वांजपेयंः॥१२॥

अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं एता उन्नितीः प्रायंच्छत्। ता वा एता उन्नितयो व्याख्यायन्ते। यज्ञस्यं सर्वृत्वायं। देवतांनामिनिर्मागाय। देवा वै ब्रह्मण्श्वान्नंस्य च् शमंलुमपांघ्रन्। यद्वह्मणः शमंलुमासीत्। सा गाथां नाराशुङ्स्यंभवत्। यदन्नंस्य। सा सुरां॥१३॥ तस्माद्गायंतश्च मृत्तस्यं च न प्रंतिगृह्यम्। यत्प्रंतिगृह्णीयात्। शर्मलं प्रतिगृह्णीयात्। सर्वा वा एतस्य वाचोऽवंरुद्धाः। यो वांजपेययाजी। या पृंथिव्यां याऽग्रौ या रंथन्तरे। याऽन्तरिक्षे या वायौ या वांमदेव्ये। या दिवि याऽऽदित्ये या बृंहति। याऽपस् यौषंधीषु या वनस्पतिंषु। तस्माँद्वाजपेययाज्यार्त्वंजीनः। सर्वा ह्यंस्य वाचोऽवंरुद्धाः॥१४॥

तदातभाह्याणामातभाह्यत्वम्। यदातभाह्या गृह्यन्ता यद्वान्यभ्रह्यज्ञस्य नाव रुन्धे। तदेव तैरितिगृह्यावं रुन्धे। पश्च गृह्यन्ते। पाङ्को यज्ञः। यावानेव यज्ञः। तमाह्वाऽवं रुन्धे॥१५॥

सर्व ऐन्द्रा भवन्ति। एक्धेव यर्जमान इन्द्रियं दंधति। सप्तदंश प्राजापत्या ग्रहां गृह्यन्ते। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यै। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धेव यर्जमाने वीर्यं दधाति। सोम्ग्रहा ॥ स्रोम्ग्रहा ॥ स्रोम्ग्रहा ॥ स्रोम्प्रहा ॥ स्र

पुतन्मंनुष्यांणाम्। यथ्सुराँ। पुरमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंरमृन्नाद्यमवं रुन्थे। सोमुग्रहान्गृंह्णाति। ब्रह्मणो वा पुतत्तेजंः। यथ्सोमंः। ब्रह्मण पुव तेजंसा तेजो यजमाने दधाति। सुराग्रहान्गृंह्णाति। अन्नस्य वा पुतच्छमंलम्। यथ्सुराँ॥१७॥

अन्नस्यैव शमंलेन शमंलं यजंमानादपंहन्ति। सोम्ग्रहा ॥ सुराग्रहा ॥ श्रं गृह्णाति। पुमान् वे सोमंः। स्त्री सुरा। तिन्मंथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे करोति प्रजनंनाय। आत्मानंमेव सोमग्रहेः स्पृणोति। जाया ॥ सुराग्रहेः। तस्माद्वाजपेययाज्यं मुष्मं होके स्त्रिय ॥ सम्भवति। वाजपेयां भिजित ॥ हां स्या १८॥

पूर्वे सोमग्रहा गृंह्यन्ते। अपंरे सुराग्रहाः। पुरोऽक्षर सोमग्रहान्थ्सांदयति। पश्चादक्षर सुराग्रहान्। पापवस्यसस्य विधृंत्यै। एष वै यजमानः। यथ्सोमेः। अन्नर् सुरा। सोमग्रहार्श्वं सुराग्रहार्श्च व्यतिषजित। अन्नाद्येनैवेनं व्यतिषजित॥१९॥ सम्पृचंः स्थ सं मां भृद्रेणं पृङ्केत्यांह। अत्रुं वै भृद्रम्। अन्नाद्येनेवैन् स् सर्मुजित। अन्नस्य वा एतच्छमंलम्। यथ्सुरां। पाप्मेव खलु वे शमंलम्। पाप्मना वा एनमेतच्छमंलेन व्यतिषजित। यथ्सोमग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं व्यतिषजित। विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्केत्यांह। पाप्मनेवैन स् शमंलेन व्यावंतियति॥२०॥

तस्मौद्वाजपेययाजी पूतो मेध्यों दक्षिण्यः। प्राङ्द्रंबित सोमग्रहैः। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रतिष्ठन्ति सोमग्रहैः। यावंदेव सत्यम्। तेनं सूयते। वाजसृद्धाः सुराग्रहान् हंरन्ति। अनृतेनेव विशु स् स्रमृंजित। हिर्ण्यपात्रं मधौः पूर्णं दंदाति। मुध्व्योऽसानीति। एकधा ब्रह्मण् उपं हरित। एकधेव यजमान् आयुस्तेजों दधाति॥२१॥

आवार्ष रुथे सोमः शर्मेल् पथ्युण् इस्मृं व्यतिपजित व्यतिमित स्वति वृत्वारि वा ————[3]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। नाग्निष्टोमो नोक्थ्यः। न षोंड्शी नातिंरात्रः। अथ् कस्मौद्वाज्ञपेये सर्वे यज्ञऋतवोऽवंरुध्यन्त इतिं। पृशुभिरितिं ब्रूयात्। आग्नेयं पृशुमालंभते। अग्निष्टोममेव तेनावं रुन्धे। ऐन्द्राग्नेनोक्थ्यम्। ऐन्द्रेणं षोड्शिनंः स्तोत्रम्। सारुस्वत्याऽतिरात्रम्॥२२॥

मारुत्या बृह्तः स्तोत्रम्। एतावन्तो वै यंज्ञऋतवंः। तान्पशुभिरेवावं रुन्धे। आत्मानमेव स्पृणोत्यग्निष्टोमेनं। प्राणापानावुक्थ्येन। वीर्यर् षोड्शिनंः स्तोत्रेणं। वाचमितिरात्रेणं। प्रजां बृह्तः स्तोत्रेणं। इममेव लोकम्भिजंयत्यग्निष्टोमेनं। अन्तरिक्षमुक्थ्येन॥२३॥

सुवर्गं लोक १ षोंडशिनंः स्तोत्रेणं। देवयानांनेव पृथ आरोहत्यतिरात्रेणं। नाक १ रोहति बृह्तः स्तोत्रेणं। तेजं पृवाऽऽत्मन्धंत्त आग्नेयेनं पृश्चनां। ओजो बलंमैन्द्राग्नेनं। इन्द्रियमैन्द्रेणं। वाच १ सारस्वत्या। उभावेव देवलोकं च मनुष्यलोकं चाभिजंयित मारुत्या वृशयां। सप्तदंश प्राजापत्यान्पृश्चनालंभते। सप्तदृशः प्रजापंतिः॥२४॥

प्रजापंतेरार्थै। श्यामा एकंरूपा भवन्ति। एवमिव हि प्रजापंतिः समृद्धै। तान्पर्यग्निकृतानुथ्मृंजति। मुरुतों युज्ञमंजिघा सम्प्रजापंतेः। तेभ्यं एतां मारुतीं वृशामालंभता तयैवैनानशमयत्। मा्रुत्या प्रचर्यः। एतान्थ्संज्ञंपयेत्। मुरुतं एव शंमयित्वा॥२५॥

पृतेः प्रचंरित। यज्ञस्याघाताय। पृक्धा व्पा जुंहोति। पृक्देवृत्यां हि। पृते। अथों पृक्धेव यजमाने वीर्यं दधाति। नैवारेणं सप्तदंशशरावेणैतर्हि प्रचंरित। पृतत्पुरोडाशा ह्यंते। अथों पशूनामेव छिद्रमपिदधाति। सार्स्वत्योत्तमया प्रचंरित। वाग्वै सर्रस्वती। तस्मात्प्राणानां वागुत्तमा। अथौं प्रजापंतावेव यृज्ञं प्रतिष्ठापयित। प्रजापंतिर्हि वाक्। अपंत्रदती भवति। तस्मान्मनुष्याः सर्वां वाचं वदन्ति॥२६॥ अत्रिग्रम्नतिरक्षमुक्थंन प्रजापंतिः शमिवत्योत्तमया प्रचंरित पर वं॥——[४]

सावित्रं जुंहोति कर्मणः कर्मणः पुरस्तात्। कस्तद्वेदेत्यांहुः। यद्वांजिपयंस्य पूर्वं यदपंरिमितिं। सवितृप्रंसूत एव यथापूर्वं कर्माणि करोति। सविनेसवने जुहोति। आक्रमणमेव तथ्सेतुं यज्ञमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्यै। वाचस्पतिर्वाचमद्य स्वंदाति न इत्यांह। वाग्वै देवानां पुराऽन्नंमासीत्। वाचमेवास्मा तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् १)

अन्न ईं स्वदयति॥२७॥

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरित विजित्यै। वार्जस्य नु प्रंस्वे मातरं महीमित्यांह। यचैवयम्। यचास्यामिधं। तदेवावं रुन्धे। अथो तस्मिन्नेवोभये-ऽभिषिंच्यते। अपस्वंन्तर्मृतंमपस् भेषजमित्यश्वांन्यल्पूलयित। अपस् वा अश्वंस्य तृतीयं प्रविष्टम्। तदंनुवेनन्ववंप्लवते। यदपस् पंल्पूलयंति॥२८॥

यदेवास्यापस् प्रविष्टम्। तदेवावं रुन्धे। बहु वा अश्वोऽमेध्यमुपंगच्छति। यदपस् पंलपूलयंति। मेध्यांनेवैनांन्करोति। वायुर्वां त्वा मनुंर्वा त्वेत्यांह। एता वा एतं देवता अग्रे अश्वमयुअन्। ताभिरेवैनान् युनक्ति। स्वस्योज्ञित्यै। यजुंषा युनक्ति व्यावृंत्यै॥२९॥

अपौन्नपादाशुहेम्निति सम्मौष्टिं। मेध्यांनेवैनौन्करोति। अथो स्तौत्येवैनांनाजि र संरिष्यतः। विष्णुक्रमान्क्रमते। विष्णुंरेव भूत्वेमाँ श्लोकान्भिजयिति। वैश्वदेवो वै रथः। अङ्कौ न्यङ्कावभितो रथं यावित्यांह। या एव देवता रथे प्रविष्टाः। ताभ्यं एव नर्मस्करोति। आत्मनोऽनाँत्यै। अशंमरथं भावुकोऽस्य रथों भवति। य एवं वेदं॥३०॥

देवस्याहर संवितः प्रंसवे बृह्स्पतिना वाज्जिता वाजं जेषमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वाज्मुज्जंयित। देवस्याहर संवितः प्रंसवे बृह्स्पतिना वाज्जिता वर्षिष्ठं नाकरं रुह्यमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वर्षिष्ठं नाकरं रोहित। चात्वांले रथच्कं निर्मितर रोहित। अतो वा अङ्गिरस उत्तमाः सुवर्गं लोकमायन्। साक्षादेव यजंमानः सुवर्गं लोकमीति। आवेष्टयित। वज्रो वे रथः। वज्रेणैव दिशोऽभिजंयित॥३१॥

वाजिना समामं गायते। अत्रं वै वाजंः। अत्रंमेवावं रुन्धे। वाचो वर्षमं देवेभ्योऽपाँकामत्। तद्वनस्पतीन्प्राविंशत्। सैषा वाग्वनस्पतिषु वदति। या दुन्दुभौ। तस्माँ दुन्दुभिः सर्वा वाचोऽतिंवदति। दुन्दुभीन्थ्समाघ्नंन्ति। पुरमा वा एषा

तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् १)

वाक्॥३२॥

या दुन्दुभौ। प्रमयैव वाचाऽवरां वाचमंव रुन्धे। अथों वाच एव वर्ष्म् यजमानो-ऽवं रुन्धे। इन्द्रांय वाचं वद्तेन्द्रं वाजं जापयतेन्द्रो वाजंमजियदित्यांह। एष वा एतर्हीन्द्रं। यो यजते। यजमान एव वाज्मुश्चयित। सप्तदंश प्रव्याधानाजिं धांवन्ति। सप्तदशक्ष् स्तोत्रं भंवति। सप्तदंशसप्तदश दीयन्ते॥३३॥

स्प्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापतेराप्त्यै। अर्वाऽस् सित्तरिस वाज्यंसीत्यांह। अग्निर्वा अर्वा। वायुः सितः। आदित्यो वाजी। एताभिरेवास्मै देवतांभिर्देवर्थं युनिक्त। प्रष्टिवाहिनं युनिक्त। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनिक्त॥३४॥ वाजिनो वाजं धावत काष्ठां गच्छतेत्यांह। सुवर्गो वै लोकः काष्ठां। सुवर्गमेव

वाजिनो वाजें धावत काष्ठां गच्छतेत्यांह। सुवर्गो वै लोकः काष्ठां। सुवर्गमेव लोकं यन्ति। सुवर्गं वा एते लोकं यन्ति। य आजिं धावन्ति। प्राश्चों धावन्ति। प्राङिव् हि सुवर्गो लोकः। चत्रसृभिरन् मन्नयते। चत्वारि छन्दा रेसि। छन्दोभिरेवैनांन्थ्सुवर्गं लोकं गमयति॥३५॥ प्रवा पृतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। य आजिं धावंन्ति। उदं च आवंर्तन्ते। अस्मादेव तेनं लोकान्नयंन्ति। रथविमोचनीयं जुहोति प्रतिष्ठित्यै। आ मा वार्जस्य प्रस्वो जंगम्यादित्यांह। अन्नं वै वार्जः। अन्नमेवावं रुन्धे। यथालोकं वा एत उन्नयन्ति। य आजिं धावंन्ति॥३६॥

कृष्णलं कृष्णलं वाज्यसृद्धः प्रयंच्छति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तं पंरिकीयावं रुन्धे। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता बृह्स्पित्रदंजयत्। स नीवारान्निरंवृणीत। तन्नीवाराणां नीवारत्वम्। नैवारश्चरुर्भविति॥३७॥

पृतद्वै देवानां पर्ममन्नम्। यन्नीवाराः। प्रमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंरम्नाद्यमवं रुन्थे। सप्तदंशशरावो भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्ये। क्षीरे भवति। रुचंमेवास्मिन्दधाति। सपिष्वान्भवति मध्यत्वायं। बार्हस्पत्यो वा एष देवतंया॥३८॥

यो वांजिपेयेन यजिते। बार्ह्स्पत्य एष चरुः। अश्वांन्थ्सरिष्यतः सम्भुषश्चावं प्रापयति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तमेवावं रुन्धे। अजींजिपत वनस्पतय् इन्द्रं वाजं विमुच्यध्वमितिं दुन्दुभीन् विमुश्चति। यमेव ते वाजं लोकमिन्द्रियं दुन्दुभयं उञ्जयंन्ति। तमेवावं रुन्धे॥३९॥

প্রশির্ভাযतি वा एषा वार्ग्दीयन्तेऽस्मै युनक्ति गमयति य आजिं धार्वन्ति भवति देवतंयाऽष्टौ चं॥—————[६]

तार्प्यं यजंमानं परिधापयित। यज्ञो वै तार्प्यम्। यज्ञेनैवैन् समर्धयित। दर्भमयं परिधापयित। पिवत्रं वै दर्भाः। पुनात्येवैनम्। वाजं वा एषोऽवंरुरुथ्सते। यो वांजपेयेन यजंते। ओषंधयः खलु वै वाजः। यहंर्भमयं परिधापयंति॥४०॥ वाज्स्यावंरुद्धे। जाय एिह् सुवो रोहावेत्यांह। पिन्नया एवेष यज्ञस्यांन्वारम्भो-ऽनंविच्छित्त्ये। सप्तदंशारिन्यूपों भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। तूप्रश्चतुंरिश्रभवित। गौधूमं चृषालम्। न वा एते ब्रीहयो न यवाः। यद्गोधूमाः॥४१॥

पुवर्मिव हि प्रजापंतिः समृद्धौ। अथों अमुमेवास्मैं लोकमन्नंवन्तं करोति।

वासोभिर्वेष्टयति। एष वै यजंमानः। यद्यूपंः। सूर्वेदेवृत्यं वासंः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिः समर्थयति। अथो आक्रमणमेव तथ्सेतुं यजंमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य समण्ट्ये। द्वादंश वाजप्रसवीयांनि जुहोति॥४२॥

द्वादंश मार्साः संवथ्सरः। संवथ्सरमेव प्रीणाति। अथो संवथ्सरमेवास्मा उपद्याति। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्ये। दशिमः कल्पै रोहति। नव व पुरुषे प्राणाः। नाभिदंशमी। प्राणानेव यथास्थानं कल्पयित्वा। सुवर्गं लोकमेति। पृतावद्वै पुरुषस्य स्वम्॥४३॥

यावंत्र्याणाः। यावंदेवास्यास्ति। तेनं सह सुंवर्गं लोकमेति। सुवंदेवार अंगुन्मेत्याह। सुवर्गमेव लोकमेति। अमृतां अभूमेत्यांह। अमृतंमिव हि सुंवर्गो लोकः। प्रजापंतेः प्रजा अभूमेत्यांह। प्राजापत्यो वा अयं लोकः। अस्मादेव तेनं लोकान्नैति॥४४॥

सम्हं प्रजया सं मया प्रजेत्यांह। आमेवैतामा शास्ते। आसपुटैर्घ्नन्ति। अत्रं

ल्तीयः प्रश्नः (अष्टकम् १) वा इयम। अन्नाद्येनैवैन १ समर्थयन्ति। ऊषैर्घन्ति। एते हि साक्षादन्नमै। उ

वा इयम्। अन्नाद्येनेवन् समर्थयन्ति। ऊषैर्घन्ति। एते हि साक्षादन्नम्। यदूषाः। साक्षादेवनंमुन्नाद्येन् समर्थयन्ति। पुरस्तात्प्रत्यश्चें घ्रन्ति॥४५॥

पुरस्ताद्धि प्रतीचीनमन्नम् यते। शीर्षतो प्रनित। शीर्षतो ह्यन्नम् यते। दिग्भ्यो प्रनित। दिग्भ्य पुवास्मां अन्नाद्यमवंरुन्धते। ईश्वरो वा एष पराङ्क्षदर्यः। यो यूप्ररेरोहित। हिर्रण्यमध्यवरोहित। अमृतं वै हिर्रण्यम्। अमृतर्र सुवर्गो लोकः॥४६॥

अमृतं एव सुंवर्गे लोके प्रतिं तिष्ठति। श्तमांनं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। पुष्ट्ये वा एतद्रूपम्। यद्जा। त्रिः संवथ्सरस्यान्यान्पशून्परि प्रजायते। बस्ताजिनमध्यवं रोहति। पुष्ट्यांमेव प्रजनेने प्रतिं तिष्ठति॥४७॥

प्रियापयीत ग्रेपूमां ज्रहोति स्व नेति प्रत्यश्च प्रत्नि लोको नवं चाः सप्तान्नहोमाञ्जहोति। सप्त वा अन्नानि। यावन्त्येवान्नानि। तान्येवावं रुन्धे। सप्त ग्राम्या ओषंधयः। सप्तारण्याः। उभयीषामवंरुख्ये। अन्नस्यान्नस्य जुहोति। अन्नस्यानस्यावंरुद्धै। यद्वांजपेययाज्यनंवरुद्धस्याश्जीयात्॥४८॥

अवंरुद्धेन व्यृंद्धेत। सर्वस्य समव्दायं जुहोति। अनंवरुद्धस्यावंरुद्धे। औदुंम्बरेण सुवेणं जुहोति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्व इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एवैनं ब्रह्मंणा देवतांभिर्भिषिश्चित। अन्नंस्यान्नस्यावंरुद्धे॥४९॥

पुरस्ताँत्प्रत्यश्चंम्भिषिश्चिति। पुरस्ताद्धि प्रंतीचीन्मन्नंम्द्यतें। शीर्ष्वतोंऽभिषिश्चिति। शीर्ष्वतो ह्यन्नंम्द्यतें। आ मुखांद्न्ववंस्नावयित। मुख्त एवास्मां अन्नाद्यं दधाित। अग्नेस्त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। एष वा अग्नेः स्वः। तेनैवैनंम्भिषिश्चिति। इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह॥५०॥

इन्द्रियमेवास्मिन्नेतेनं दधाति। बृह्स्पतें स्त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनंमभिषिश्चिति। सोमग्रहा श्चांवदानीयानिं चर्त्विग्भ्य उपहरन्ति। अमुमेव तैर्लोकमन्नवन्तं करोति। सुराग्रहा श्चांनवदानीयानिं च वाज्मृद्धाः। इममेव तैर्लोकमन्नवन्तं करोति। अथो उभर्यौष्वेवाभिषिच्यते। विमाथं कुंवते वाज्मृतः॥५१॥

ड्रन्द्रियस्यावंरुद्धै। अनिंरुक्ताभिः प्रातः सवने स्तुंवते। अनिंरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। वाजंवतीभिर्माध्यं दिने। अन्नं वै वाजंः। अन्नंमेवावं रुन्धे। शिपिविष्ट-वंतीभिस्तृतीयसवने। युज्ञो वै विष्णुंः। पृशवः शिपिः। युज्ञ एव पृशुषु प्रति तिष्ठति। बृहदन्त्यं भवति। अन्तंमेवैन ई श्रियै गंमयति॥५२॥

भूष्योयादत्रंस्यात्रस्यावंकव्या इन्द्रंस्य त्वा साम्राज्येनाभिषिश्यमीत्याह वाज्यतः शिष्क्षिणि चा--------------[८]
नृषदं त्वेत्याह। प्रजा वै नॄन्। प्रजानांमेवैतेनं सूयते। द्रुषद्मित्याह। वन्स्पतंयो
वै ता कार्याकी प्रावेतेनं सम्बद्धाः अत्याद्याद्याद्याद्याः स्व

वै द्रु। वनस्पतीनामेवेतेनं सूयते। भुवनसद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। भुवनमग्निति वै तमांहुः। भुवनमेवेतेनं गच्छति॥५३॥

अपसुषदं त्वा घृत्सद्मित्यांह। अपामेवैतेनं घृतस्यं सूयते। व्योम्सद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। व्योमागन्निति वै तमांहुः। व्योमैवैतेनं गच्छति। पृथिविषदं तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् १)

त्वाऽन्तरिक्षसदमित्याह। एषामेवैतेनं लोकाना ५ सूयते। तस्माँद्वाजपेययाजी न कश्चन प्रत्यवंरोहति। अपीव हि देवतांना स्यतें॥५४॥

नाकसदिमत्यांह। यदा वै वसींया-भवंति। नाकंमगन्निति वै तमांहः। नाकंमेवैतेन गच्छति। ये ग्रहाः पश्चजनीना इत्याहा पश्चजनानांमेवैतेन सूयते। अपार रसमुद्वंयसमित्यांह। अपामेवैतेन रसंस्य सूयते। सूर्यरिशमर समाभृतिमित्यांह सशुऋत्वायं॥५५॥

इन्द्रों वृत्र १ हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। सोंऽमावास्यां प्रत्यागंच्छत्। ते पितरंः पूर्वेद्युरागंच्छन्। पितृन् यज्ञोंऽगच्छत्। तं देवाः पुनरयाचन्त। तमेंभ्यो न पुनरददुः।

तें ऽब्रुवन्वरं वृणामहै। अर्थ वः पुनर्दास्यामः। अस्मभ्यंमेव पूर्वेद्युः क्रियाता इति॥५६॥

तमें भ्यः पुनंरददुः। तस्मां त्पितृभ्यः पूर्वेद्युः क्रियते। यत्पितृभ्यः पूर्वेद्युः करोति।

पितृभ्यं एव तद्यज्ञं निष्क्रीय यजंमानः प्रतंनुते। सोमांय पितृपींताय स्वधा नम इत्यांह। पितुरेवाधिं सोमपीथमवं रुन्धे। न हि पिता प्रमीयंमाण आहेष सोमपीथ इतिं। इन्द्रियं वै सोमपीथः। इन्द्रियमेव सोमपीथमवं रुन्धे। तेनेन्द्रियेणं द्वितीयां जायामभ्यंश्जुते॥५७॥

एतद्वै ब्राह्मणं पुरा वाजवश्रवसा विदामंत्रन्। तस्मात्ते द्वेद्वे जाये अभ्याक्षित। य एवं वेदं। अभि द्वितीयां जायामंश्जुते। अग्नयं कव्यवाहंनाय स्वधा नम इत्यांह। य एव पिंतृणामग्निः। तं प्रीणाति। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋत्नेव प्रीणाति। तूष्णीं मेक्षंणमादंधाति। अस्तिं वा हि षष्ठ ऋतुर्न वां। देवान् वै पितृन्प्रीतान्। मुनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥५९॥

ऋतवः खलु वै देवाः पितरंः। ऋतूनेव देवान्पितृन्त्रींणाति। तान्त्रीतान्। मनुष्याः

पितरोऽनु प्रपिपते। सुकृदाच्छिन्नं बुर्हिर्भवति। सुकृदिंव हि पितरंः। त्रिर्निदंधाति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रींणाति। पराङावंर्तते॥६०॥

ह्रीका हि पितरंः। ओष्मणौं व्यावृत उपाँस्ते। ऊष्मभांगा हि पितरंः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्राश्या (३) न्न प्राश्या (३) मितिं। यत्प्रांश्नीयात्। जन्यमन्नमद्यात्। प्रमायुंकः स्यात्। यन्न प्रांश्ञीयात्। अहंविः स्यात्॥६१॥

पितृभ्य आवृंश्चेत। अवघ्रेयंमेव। तन्नेव प्राशितं नेवाप्रांशितम्। वीरं वा वै पितरंः प्रयन्तो हर्रन्ति। वीरं वा ददति। दशां छिनत्ति। हर्रणभागा हि पितरंः। पितृनेव निरवंदयते। उत्तर आयुंषि लोमं छिन्दीत। पितृणाङ् ह्येंतर्हि नेदीयः॥६२॥

नमंस्करोति। नमस्कारो हि पिंतृणाम्। नमों वः पितरो रसांय। नमों वः पितरः शुष्माय। नमों वः पितरो जीवायं। नमों वः पितरः स्वधायै। नमों वः पितरो मन्यवैं। नमों वः पितरो घोरायं। पितंरो नमों वः। य एतस्मिं ल्लोके स्थ॥६३॥

युष्मा इस्ते उन्। यें उस्मिँ ह्लोके। मां ते उन्। य पुतस्मिँ ह्लोके स्थ। यूयं तेषां वसिष्ठा

भूयास्त। यैंऽस्मिँ ह्योके। अहं तेषां विसेष्ठो भूयासमित्यांह। विसेष्ठः समानानौं भवति। य एवं विद्वान्यितृभ्यः कुरोतिं। एष वै मनुष्यांणां युज्ञः॥६४॥

देवानां वा इतेरे युज्ञाः। तेन् वा एतित्पितृलोके चरित। यित्पृतृभ्यः करोतिं। स ईंश्वरः प्रमेतोः। प्राजापत्ययूर्चा पुन्रैतिं। युज्ञो वै प्रजापितः। युज्ञेनैव सह पुन्रैतिं। न प्रमायुंको भवति। पितृलोके वा एतद्यजमानश्चरित। यित्पृतृभ्यः करोतिं। स ईंश्वर आर्तिमार्तोः। प्रजापित्स्त्वावेनं तत् उन्नेतुमर्ह्तीत्यांहुः। यत्प्रांजापत्ययूर्चा पुन्रैतिं। प्रजापितिरेवेनं तत् उन्नयित। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥६५॥

इत्यंष्ञ्ते पद्यन्ते पद्मन्ते पद्म ऋतवों वर्ततेऽहंविः स्यान्नेदीयः स्थ युज्ञो यर्जमानश्चरित् यित्पृतृभ्यः क्रोति पश्चं च॥—————[१०]

देवासुरा अग्नीषोमंयोर्देवा वै यथादर्शं देवा वै यदन्यैर्ग्रहैंब्रह्मवादिनो नाग्निष्टोमो न सांवित्रं देवस्याहं तार्प्यर सप्तात्रहोमान्नृषदं त्वेन्द्रीं वृत्रर हत्वा दर्श॥१०॥

देवासुरा वाज्येवेनुं तस्माद्वाजपेययाजी देवस्याहं वाजुस्यावंरुद्धा इन्द्रियमेवास्मिन् ह्लीका हि पितरः पश्चेषष्टिः॥६५॥

देवासुरा यर्जमानः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

उभये वा एते प्रजापंतेरध्यंसृज्यन्त। देवाश्चासुंराश्च। तान्न व्यंजानात्। इमें उन्य इमें उन्य इति। स देवान् १ शूनंकरोत्। तान्भ्यंषुणोत्। तान्पवित्रंणापुनात्। तान्परस्तात्पवित्रंस्य व्यंगृह्णात्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रहत्वम्॥१॥

देवता वा पृता यर्जमानस्य गृहे गृह्यन्ते। यद्ग्रहाः। विदुरेनं देवाः। यस्यैवं विदुषं पृते ग्रहां गृह्यन्तें। एषा वै सोम्स्याऽऽहुंतिः। यदुंपा्रशः। सोमेन देवाश्स्तंपयाणीति खलु वै सोमेन यजते। यदुंपा्रशुं जुहोतिं। सोमेनैव तद्देवाश्स्तंपयिति। यद्गहां जुहोतिं॥२॥

देवा एव तद्देवान्गंच्छन्ति। यर्चम्सां जुहोतिं। तेनैवानुंरूपेण यर्जमानः सुवृगंं लोकमेति। किं न्वेतदग्रं आसीदित्यांहुः। यत्पात्राणीतिं। इयं वा एतदग्रं आसीत्। मृन्मयांनि वा एतान्यांसन्। तैर्देवा न व्यावृतंमगच्छन्। त एतानिं दारुमयांणि पात्रौण्यपश्यन्। तान्यंकुर्वत॥३॥

तैर्वे ते व्यावृतंमगच्छन्। यद्दांरुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। व्यावृतंमेव तैर्यजंमानो गच्छति। यानि दारुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयति। यानि मृन्मयांनि। इममेव तैर्लोकम्भिजंयति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। काश्चतंस्रः स्थालीर्वायव्याः सोमग्रहंणीरिति। देवा वै पृश्चिमदुह्नन्॥४॥

तस्यां पृते स्तनां आसन्। इयं वै पृश्जिः। तामांदित्या आंदित्यस्थाल्या चतुंष्पदः पृश्निद्दह्नन्। यदांदित्यस्थाली भवंति। चतुंष्पद एव तयां पृशून् यजमान इमां दुहे। तामिन्द्रं उक्थ्यस्थाल्येन्द्रियमंदहत्। यदुंक्थ्यस्थाली भवंति। इन्द्रियमेव तया यजमान इमां दुहे। तां विश्वं देवा आंग्रयणस्थाल्योर्जमदुहन्। यदांग्रयणस्थाली भवंति॥५॥

ऊर्जमेव तया यर्जमान इमां देहे। तां मेनुष्यौ ध्रवस्थाल्याऽऽयुंरदुह्नन्। यद्धुंवस्थाली भवति। आयुंरेव तया यर्जमान इमां देहे। स्थाल्या गृह्णातिं। चत्र्थः प्रश्नः (अष्टकम् १)

वायव्येन जुहोति। तस्मांदन्येन पात्रेण पशून्दुहन्तिं। अन्येन प्रतिंगृह्णन्ति। अथौं व्यावृतंमेव तद्यजंमानो गच्छति॥६॥

ग्रहत्वं ग्रहाँ जुहोत्यंकुर्वतादुहृन्नाग्रयणस्थाली भवंति नवं च॥

युव स्रामंमिश्वना। नम्चावासुरे सर्चा। विपिपाना शुंभस्पती। इन्द्रं कर्म स्वावतम्। पुत्रमिव पितराविश्वनोभा। इन्द्रावतं कर्मणा दुरसनाभिः। यथ्सुरामं व्यपिंबः शचींभिः। सरंस्वती त्वा मघवन्नभीष्णात्। अहाँव्यग्ने हिवरास्येते। सुचीवं घृतं चम् इंव सोमं:॥७॥

वाजसिन रियमस्मे सुवीरम्। प्रशस्तं धेहि यशसं बृहन्तम्। यस्मिन्नश्वांस ऋषुभासं उक्षणंः। वृशा मेषा अवसृष्टास आहुंताः। कीलालपे सोमंपृष्टाय वेधसें। हृदा मृतिं जनय चारुम्ययें। नाना हि वां देवहिंतु सदों मितम्। मा स॰सृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हि॰सीः स्वां योनिमाविशन्॥८॥

चतुर्थः प्रश्नः (अष्टकम् १)

यदत्रं शिष्ट रसिनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचींभिः। अहं तदंस्य मनसा शिवनं। सोम् र राजानिम्ह भक्षयामि। द्वे स्रुती अश्रणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यानाम्। ताभ्यांमिदं विश्वं भुवनि समेति। अन्तरा पूर्वमपेरं च केतुम्। यस्ते देव वरुण गायत्रछ्नेन्दाः पार्शः। तं तं एतेनावं यजे॥९॥

यस्ते देव वरुण त्रिष्ट्रप्छंन्दाः पार्शः। तं तं एतेनावं यजे। यस्ते देव वरुण जगंतीछन्दाः पार्शः। तंं तं एतेनावं यजे। सोमो वा एतस्यं राज्यमादंत्ते। यो राजा सत्राज्यो वा सोमेन यजंते। देवसुवामेतानि हवी १ षि भवन्ति। एतावंन्तो वै देवानार् सुवाः। त एवास्मै सुवान्प्रयंच्छन्ति। त एनं पुनः सुवन्ते राज्यायं। देवसू राजां भवति॥१०॥ सोमं आविशन् यंजे राज्यायैकं च।

उदंस्थाद्देव्यदितिर्विश्वरूपी। आयुर्यज्ञपंतावधात्। इन्द्रांय कृण्वती भागम्। मित्राय वर्रुणाय च। इयं वा अंग्रिहोत्री। इयं वा एतस्य निषींदति। यस्यांग्रिहोत्री निषीदंति। तामुत्थापयेत्। उदंस्थाद्देव्यदितिरिति। इयं वै देव्यदितिः॥११॥

इमामेवास्मा उत्थापयति। आयुर्यज्ञपंतावधादित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। इन्द्रांय कृण्वती भागं मित्राय वर्रुणाय चेत्याह। यथायजुरेवैतत्। अवंर्तिं वा एषैतस्यं पाप्मानं प्रतिख्याय निषींदति। यस्यांग्निहोत्र्युपंसृष्टा निषीदंति। तां दुग्ध्वा ब्रौह्मणायं दद्यात्। यस्यात्रं नाद्यात्। अवंर्तिमेवास्मिन्पाप्मानं प्रतिमुश्चति॥१२॥ दुग्ध्वा दंदाति। न ह्यदंष्टा दक्षिणा दीयतें। पृथिवीं वा एतस्य पयः प्रविशति। यस्यामिहोत्रं दुह्यमानु स्कन्दति। यद्द्यं दुग्धं पृथिवीमसंक। यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापंः। पयो गृहेषु पयो अघ्नियासुं। पयो वृथ्सेषु पयो अस्तु तन्मयीत्यांह। पयं एवाऽऽत्मन्गृहेषुं पृशुषुं धत्ते। अप उपंसृजति॥१३॥

अद्भिरेवेनंदाप्रोति। यो वै यज्ञस्यार्ते नानांति सरमुजति। उभे वै ते तह्यार्च्छतः। आर्च्छति खलु वा एतदंग्निहोत्रम्। यदुद्यमांनु स्कन्दंति। यदंभिदुद्यात्। आर्ते नानांति यज्ञस्य सरमुजेत्। तदेव यादकीदक्रं होतव्यम्।

अथान्यां दुग्ध्वा पुनंर्होतव्यम्। अनाँर्तेनैवार्तं यज्ञस्य निष्कंरोति॥१४॥

यद्युद्गुंतस्य स्कन्दैंत्। यत्ततोऽह्तंत्वा पुनेरेयात्। यज्ञं विच्छिन्द्यात्। यत्र स्कन्दैंत्। तन्निषद्यं पुनर्गृह्णीयात्। यत्रैव स्कन्दिति। ततं एवैन्त्पुनर्गृह्णाति। तदेव यादक्षीदक्रं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनंर्होत्व्यम्। अनार्तेनैवार्तं यज्ञस्य निष्कंरोति॥१५॥ वि वा एतस्यं यज्ञशिछंद्यते। यस्यांग्निहोत्रंऽधिश्रिंते श्वाऽन्तरा धावंति। रुद्रः खलु वा एषः। यद्ग्निः। यद्गमंन्वत्या वर्तयेत्। रुद्रायं पश्नपिं दध्यात्। अपशुर्यजंमानः स्यात्। यदपौँ उन्वतिषिश्चेत्। अनाद्यमग्नेरापंः। अनाद्यमाभ्यामपि दध्यात्। गार्हंपत्याद्भरमादायं। इदं विष्णुर्विचंक्रम् इति वैष्णव्यर्चाऽऽहंवनीयांद्ध्वरसयनुद्रंवेत्। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञेनैव यज्ञर

वे व्यदितिर्मुश्चित स्वति करोति करोत्याभ्यामपि दथ्यात् पश्च च॥———[३]
नि वा पुतस्या ऽऽहवनीयो गार्हपत्यं कामयते। निगार्हपत्य आहवनीयम्॥

सन्तंनोति। भस्मंना पदमपिं वपति शान्त्यै॥१६॥

यस्याग्निमनुंद्धृत्र सूर्योऽभि निम्नोचंति। दुर्भेण हिरंण्यं प्रबद्धं पुरस्तांद्धरेत्।

चतुर्थः प्रश्नः (अष्टकम् १) अथाग्निम्। अथाँग्निहोत्रम्। यद्धिरंण्यं पुरस्ताद्धरंति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्।

ज्योतिरवैनं पश्यनुद्धरित। यदिशं पूर्व हरत्यथां भिहोत्रम्॥१७॥

भागधेयेनैवैनं प्रणयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धंरति। अग्निहोत्रम्ंपसाद्यातमिंतोरासीत। व्रतमेव हतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनों गच्छति। यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धत सूर्योऽभि निम्रोचंति॥१८॥

पुनः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। वरुणो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत सूर्योऽभि निम्रोचंति। वारुणं चरुं निर्वपेत्। तेनैव यज्ञं निष्क्रींणीते। नि वा एतस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। नि गार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत सूर्योऽभ्युंदेतिं। चतुर्गृहीतमाज्यं पुरस्ताँद्धरेत्॥१९॥

अथाग्निम्। अथांग्निहोत्रम्। यदाज्यं पुरस्ताृद्धरंति। पुतद्वा अग्नेः प्रियं धामं।

यदाज्यम्। प्रियेणैवेनं धाम्ना समर्धयति। यद्ग्निं पूर्वे हर्त्यथाँग्निहोत्रम्। भागधेयेनैवेनं प्रणंयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः॥२०॥

सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धंरित। परांची वा एतस्मैं व्युच्छन्ती व्यंच्छित। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्यंदेतिं। उषाः केतुनां जुषताम्। यज्ञं देवेभिरिन्वितम्। देवेभ्यो मधुंमत्तम् स्वाहेतिं प्रत्यिङ्गषद्याज्येन जुहुयात्। प्रतीचींमेवास्मै विवासयित। अग्निहोत्रमुंप्साद्यातिमितोरासीत। व्रतमेव हृतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनों गच्छिति॥२१॥

यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेतिं। पुनः समन्यं जुहोति। अन्तंनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। मित्रो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेतिं। मैत्रं चुरुं निर्वपत्। तेनैव यज्ञं निष्क्रींणीते। यस्याऽऽहवनीयेऽनुंद्धाते गार्हंपत्य उद्घायेत्॥२२॥

यदांहवनीयमनुंद्वाप्य गार्हंपत्यं मन्थैंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्।

यद्वै युज्ञस्यं वास्त्व्यं क्रियतें। तदनुं रुद्रोऽवंचरित। यत्पूर्वमन्ववस्येत्। वास्त्व्यमग्निमुपांसीत। रुद्रोंऽस्य पृशून्यातुंकः स्यात्। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्ह्नपत्यं मन्थेत्॥२३॥

इतः प्रथमं जंज्ञे अग्निः। स्वाद्योनेरधि जातवेदाः। स गांयत्रिया त्रिष्टुभा जगंत्या। देवेभ्यो ह्व्यं वहत् प्रजानित्रिति। छन्दोभिरेवैन्ड् स्वाद्योनेः प्रजनयित। गार्हंपत्यं मन्थित। गार्हंपत्यं वा अन्वाहिताग्नेः पृशव उपं तिष्ठन्ते। स यदुद्वायंति। तदनुं पृशवोऽपं कामन्ति। इषे र्य्ये रंमस्व॥२४॥

सहंसे द्युम्नायं। ऊर्जेऽपत्यायेत्यांह। पृशवो वै र्यिः। पृश्नेवास्मैं रमयित। सार्स्वतौ त्वोथ्सौ सिमंन्धातामित्यांह। ऋख्सामे वे सारस्वतावुथ्सौ। ऋख्सामाभ्यांमेवैन् सिमंन्धे। सम्राडंसि विराड्सीत्यांह। रथन्तरं वे सम्राट्। बृहद्विराट्॥२५॥

ताभ्यांमेवैन् समिन्धे। वज्रो वै चुक्रम्। वज्रो वा एतस्यं युज्ञं विच्छिनत्ति।

यस्यानों वा रथों वाऽन्तराऽग्नी यातिं। आह्वनीयंमुद्धाप्यं। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यदंग्ने पूर्वं प्रभृंतं पद हि तैं। सूर्यंस्य र्श्मीनन्वांतृतानं। तत्रं रियष्ठामनु सं भेरैतम्। सं नंः सृज सुमत्या वाजंवत्येतिं॥२६॥

पूर्वेणैवास्यं युज्ञेनं युज्ञमनु सन्तेनोति। त्वमंग्ने सुप्रथां असीत्यांह। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांभिरेव युज्ञ सन्तेनोति। अग्नयं पिथुकृतं पुरोडाशंमुष्टा-कंपालं निर्वेपत्। अग्निमेव पिथुकृत् स्वेनं भाग्धेयेनोपंधावति। स एवैनं युज्ञियं पन्थामिपं नयति। अनुङ्वान्दक्षिणा। वृही ह्यंष समृद्धौ॥२७॥

हर्त्यथाँग्निहोत्रं निम्नोचित हरेद्देवतां गच्छत्युद्वायँन्मन्थेद्रमस्व बृहद्विराङिति नर्व च (नि वै पूर्वं त्रीणि निम्नोचित दुर्भेण् यद्विरंण्यमग्निहोत्रं पुनुर्वरुणो वारुणं नि वा पुतस्या-युदेतिं चतुर्गृहीतमाज्यं यदाज्यं पराँच्युषाः पुनीर्मेत्रो मैत्रं यस्याऽऽहव्नीयेऽनुद्वाते गार्हपत्यो यद्वे मन्थेदुद्धरेत्॥)॥—————[४]

यस्यं प्रातः सब्ने सोमोंऽतिरिच्यंते। माध्यं दिन् सर्वनं कामयंमानो-ऽभ्यतिरिच्यते। गौर्धयति मुरुतामिति धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। हिनस्ति वै सुन्ध्यधीतम्। सुन्धीव खलु वा पुतत्। यथ्सवनस्यातिरिच्यंते। यद्धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। सुन्धेः शान्त्यैं। गायुत्र सामं भवति पश्चदुशः स्तोमंः। तेनैव प्रांतः सवनान्नयंन्ति॥२८॥

मुरुत्वंतीषु कुर्वन्ति। तेनैव माध्यं दिनाथ्सवंनान्नयंन्ति। होतुंश्चम्समनून्नयन्ते। होताऽनुं शश्सिति। मध्यत एव यज्ञश् समादंधाति। यस्य माध्यं दिने सवंने सोमोंऽतिरिच्यंते। आदित्यं तृतीयसवनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यंते। गौरिवीतश् सामं भवति। अतिरिक्तं वै गौरिवीतम्। अतिरिक्तं यथ्सवंनस्यातिरिच्यंते॥२९॥

अतिरिक्तस्य शान्त्यैं। बण्महा असि सूर्येति कुर्वन्ति। यस्यैवाऽऽदित्यस्य सर्वनस्य कामेनातिरिच्यंते। तेनैवेनं कामेन समर्धयन्ति। गौरिवीत सामं भवति। तेनैव माध्यं दिनाथ्सवंनान्नयंन्ति। सप्तदशः स्तोमंः। तेनैव तृंतीयसवनान्नयंन्ति। होत्रंश्चमसमनून्नयन्ते। होताऽनं श असित॥३०॥

मध्यत एव यज्ञ समादंधाति। यस्यं तृतीयसवने सोमोंऽतिरिच्यंत। उक्थ्यं कुर्वीत। यस्योक्थ्यंऽतिरिच्यंत। अतिरात्रं कुर्वीत। यस्यांतिरात्रं-ऽतिरिच्यंते। तत्त्वे दुष्प्रज्ञानम्। यजमानं वा एतत्प्शवं आसाह्यंयन्ति। बृहथ्सामं भवति। बृहद्वा इमाँ श्लोकान्दांधार। बार्ह्ताः पृशवंः। बृह्तैवास्मै पृशून्दांधार। शिपिविष्टवंतीषु कुर्वन्ति। शिपिविष्टो वै देवानां पुष्टम्। पृष्टग्रैवैन् समंध्यन्ति। होतुंश्चमसमनूत्रंयन्ते। होताऽनुंश स्सिति। मध्यत एव यज्ञ समादंधाति॥३१॥

पकैंको वै जनतांयामिन्द्रं। एकं वा एताविन्द्रंम्भि सश्संनुतः। यौ द्वौ सर्सुनुतः। प्रजापंतिर्वा एष वितायते। यद्यज्ञः। तस्य ग्रावांणो दन्ताः। अन्यत्रं

वा एते सर्सुनुतः। प्रजापात्वा एष वितायता यद्यज्ञः। तस्य ग्रावाणा दन्ताः। अन्यत्र वा एते सर्सुन्वतोर्निर्वपसित। पूर्वणोप्सृत्यां देवता इत्यांहुः। पूर्वोप्सृतस्य वै श्रेयांन्भवति। एतिवन्त्याज्यांनि भवन्त्यभिजित्यै॥३२॥

म्रुत्वंतीः प्रतिपदंः। म्रुतो वै देवानामपंराजितमायतंनम्। देवानांमेवापंराजित आयतंने यतते। उभे बृहद्रथन्तरे भंवतः। इयं वाव रंथन्तरम्। असौ बृहत्। आभ्यामेवैनंमन्तरेति। वाचश्च मनंसश्च। प्राणाचांपानाचं। दिवश्चं पृथिव्याश्चं॥३३॥

अभिजिद्भवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। विश्वजिद्भवति। विश्वस्य जित्यै। यस्य भूया रेसो यज्ञकतव इत्यांहुः। स देवतां वृङ्क इतिं। यद्यंग्निष्टोमः सोमः परस्ताथ्स्यात्॥३४॥

उक्थ्यं कुर्वीत। यद्युक्थंः स्यात्। अतिरात्रं कुर्वीत। यज्ञऋतुभिरेवास्यं देवतां वृङ्के। यो वै छन्दोंभिरभिभवंति। स सर्स्सुन्वतोरभिभवति। संवेशायं त्वोपवेशाय त्वेत्यांह। छन्दा रंसि वै संवेश उंपवेशः। छन्दों भिरेवास्य छन्दा ईस्यभिभंवति। इष्टर्गो वा ऋत्विजांमध्वर्युः॥३५॥

इष्टर्गः खलु वै पूर्वोऽर्षुः क्षीयते। प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातमित्यांह। प्राणापानयोरेव श्रंयते। प्राणांपानौ मा मां हासिष्टमित्यांह। नैनं पुराऽऽयुंषः प्राणापानौ जंहितः। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानां प्रमीयंते। तं यदंववर्जेयुः। ऋर्कृतांमिवैषां लोकः स्यौत्। आहंर दहेतिं ब्रूयात्॥३६॥ तं दंक्षिणतो वेद्यै निधायं। सर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंयुः। इयं वै सर्पतो

चत्र्थः प्रश्नः (अष्टकम् १)

राज्ञीं। अस्या एवैनं परिंददति। व्यृंद्धं तदित्यांहुः। यथ्स्तुतमनंनुशस्तमितिं। होतां प्रथमः प्रांचीनावीती माँर्जालीयं परीयात्। यामीरंनुब्रुवन्। सर्पराज्ञीनांं कीर्तयेत्। उभयोरिवैनं लोकयोः परिददति॥३७॥

अथों धुवन्त्येवैनम्। अथो न्येवास्मैं ह्रवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकेभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अग्न आयू रंषि पवस इति प्रतिपदं कुर्वीरन्। रथन्तरसांमैषार सोमः स्यात्। आयुरेवाऽऽत्मन्दंधते। अथो पाप्मानंमेव विज्ञहंतो यन्ति॥३८॥ अभिजित्यै पृथिव्याश्च स्यादंध्वर्युर्बूयाल्लोकयोः परिंददित कुर्वीर्ङ्क्षीणि

असुर्यं वा एतस्माद्वर्णं कृत्वा। पशवों वीर्यमपं ऋामन्ति। यस्य यूपों विरोहंति। त्वाष्ट्रं बहुरूपमालंभेत। त्वष्टा वै रूपाणांमीशे। य एव रूपाणामीशे। सौंऽस्मिन्पश्न् वीर्यं यच्छति। नास्मौत्पशवों वीर्यमपं ऋामन्ति। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानांमग्निरुद्वायंति॥३९॥

यदांहवनीयं उद्घार्यंत्। यत्तं मन्थंत्। विच्छिन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यदांहवनीयं उद्घार्यंत्। आग्नींद्धादुद्धंरेत्। यदाग्नींद्ध उद्घार्यंत्। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यद्गार्हंपत्य उद्घार्यंत्। अतं एव पुनंर्मन्थेत्॥४०॥

अत्र वाव स निलंयते। यत्र खलु वै निलीनमुत्तमं पश्यंन्ति। तदेनिमच्छन्ति। यस्माद्दारोंरुद्वार्यंत्। तस्यारणीं कुर्यात्। कुर्मुकमिपं कुर्यात्। एषा वा अग्नेः प्रिया तुन्। यत्क्रंमुकः। प्रिययैवैनं तुनुवा समर्धयिति। गार्हंपत्यं मन्थति॥४१॥

गार्हंपत्यो वा अग्नेर्योतिः। स्वादेवैनं योनैंर्जनयति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। यस्य सोमं उपदस्यैत्। सुवर्ण् हिरंण्यं द्वेधा विच्छिद्यं। ऋजीषेंऽन्यदांधूनुयात्। जुहुयादन्यत्। सोमंमेवाभिषुणोतिं। सोमं जुहोति। सोमंस्य वा अभिषूयमाणस्य प्रिया तुनूरुदंक्रामत्॥४२॥

तथ्सुवर्ण् १ हिरंण्यमभवत्। यथ्सुवर्ण् १ हिरंण्यं कुर्वन्तिं। प्रिययैवैनं तनुवा समर्थयन्ति। यस्याक्रीत् १ सोमंमपृहरेयुः। क्रीणीयादेव। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यस्यं क्रीतमंपहरेयुः। आदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुंणुयात्। गायत्री यर सोममाहंरत्। तस्य योऽर्श्शुः प्राऽपंतत्॥४३॥

त आंदारा अंभवन्। इन्द्रों वृत्रमंहन्। तस्यं वृत्कः परांऽपतत्। तानिं फाल्गुनान्यंभवन्। पृशवो वै फाल्गुनानिं। पृशवः सोमो राजां। यदांदारा श्रृश्चं फाल्गुनानिं चाभिषुणोति। सोमंमेव राजांनम्भिषुंणोति। शृतेनं प्रातः सवने श्रींणीयात्। दथ्ना मध्यं दिने॥४४॥

नीतिमिश्रेणं तृतीयसवने। अग्निष्टोमः सोमंः स्याद्रथन्तरसांमा। य एवर्त्विजों वृताः स्युः। त एंनं याजयेयुः। एकां गां दक्षिणां दद्यात्तेभ्यं एव। पुनः सोमं क्रीणीयात्। युज्ञेनैव तद्यज्ञमिंच्छति। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। सर्वाभयो वा एष देवताभयः सर्वेभ्यः पृष्ठेभ्यं आत्मानमागंरते। यः सृत्रायांगुरतें। एतावान्खलु वै पुरुषः। यावंदस्य वित्तम्। सर्ववेद्सेनं यजेत। सर्वपृष्ठोऽस्य सोमः स्यात्। सर्वाभ्य एव देवताभयः सर्वेभ्यः पृष्ठेभ्यं आत्मानं निष्क्रीणीते॥४५॥

प्रविमानः सुवर्जनः। प्वित्रेण विचर्षणिः। यः पोता स पुनातु मा। पुनन्तुं

पविमानः सुवजनः। पावत्रण विचर्षाणः। यः पाता स पुनातु मा। पुनन्तु मा देवजनाः। पुनन्तु मनेवो धिया। पुनन्तु विश्वं आयर्वः। जातंवेदः पवित्रवत्। पवित्रंण पुनाहि मा। शुक्रेणं देव दीर्द्यत्। अग्ने कत्वा कतूर् रनुं॥४६॥

यत्ते प्वित्रंम्चिषि। अग्ने वितंतमन्त्रा। ब्रह्म तेनं पुनीमहे। उभाभ्यां देव सवितः। प्वित्रंण स्वेनं च। इदं ब्रह्मं पुनीमहे। वैश्वदेवी पुनती देव्यागांत। यस्यै बह्बीस्तुनवों वीतपृष्ठाः। तया मदन्तः सधुमाद्येषु। वयः स्याम् पतंयो रयीणाम्॥४७॥

वैश्वानरो रिश्मिभिर्मा पुनातु। वातंः प्राणेनेषिरो मंयोभूः। द्यावांपृथिवी पर्यसा पर्योभिः। ऋतावंरी यज्ञिये मा पुनीताम्। बृहद्भिः सवितस्तृभिः। वर्षिष्ठैर्देव मन्मंभिः। अग्ने दक्षैः पुनाहि मा। येनं देवा अपुनत। येनाऽऽपो दिव्यं कर्शः। तेने दिव्येन ब्रह्मणा॥४८॥

इदं ब्रह्मं पुनीमहे। यः पांवमानीर्ध्येतिं। ऋषिंभिः सम्भृंत्र रसम्। सर्व्

स पूतमंश्ञाति। स्वदितं मांतिरिश्वंना। पावमानीर्यो अध्येतिं। ऋषिंभिः सम्मृंत्र् रसम्। तस्मै सरंस्वती दुहे। क्षीर् स्पिर्मधूंदकम्। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः॥४९॥

सुद्धा हि पर्यस्वतीः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः। ब्राह्मणेष्वमृतर् हितम्। पावमानीर्दिशन्तु नः। इमं लोकमथो अमुम्। कामान्थ्समध्यन्तु नः। देवीर्देवैः समाभृताः। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः। सुद्धा हि घृतश्चर्तः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः॥५०॥

ब्राह्मणेष्वमृत १ हितम्। येनं देवाः प्वित्रेण। आत्मानं पुनते सदाँ। तेनं सहस्रधारेण। पावमान्यः पुनन्तु मा। प्राजापत्यं प्वित्रम्। शतोद्याम १ हिर्ण्मयम्। तेनं ब्रह्मविदो व्यम्। पूतं ब्रह्मं पुनीमहे। इन्द्रंः सुनीती सह मां पुनातु। सोमंः स्वस्त्या वरुंणः समीच्यां। यमो राजां प्रमृणाभिः पुनातु मा। जातवेदा मोर्जयंन्त्या पुनातु॥५१॥

अर्चु रयोृणां ब्रह्मणा स्वस्त्ययंनीः सुद्ध्या हि घृतृश्चृत् ऋषिंभिः सम्भृतो रसः पुनातु त्रीणि च॥—————————[८]

प्रजा वै स्त्रमांसत् तप्स्तप्यंमाना अर्जुह्वतीः। देवा अपश्यश्रम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनौर्धमास ऊर्जुमवांरुन्थत। तस्मांदर्धमासे देवा इंज्यन्ते। पितरोऽपश्यश्रम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं मास्यूर्जुमवारुन्थत। तस्मौन्मासि पितृभ्यः क्रियते। मनुष्यां अपश्यश्रम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५२॥

तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं द्वयीमूर्ज्मवांरुन्थत। तस्माद्विरह्नां मनुष्येंभ्य उपंहियते। प्रातश्चं सायं चं। पृशवांऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं त्रयीमूर्ज्मवांरुन्थत। तस्मात्रिरह्नंः पृशवः प्रेरंते। प्रातः संङ्गवे सायम्। असुरा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५३॥ तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं संवथ्सर ऊर्ज्मवांरुन्थत। ते देवा अमन्यन्त। अमी वा इदमंभूवन्। यद्वयः स्म इति। त पृतानिं चातुर्मास्यान्यंपश्यन्। तानि निरंवपन्। तैरेवैषां तामूर्जमवृञ्जत। ततों देवा अभवन्। पराऽसुराः॥५४॥

यद्यजंते। यामेव देवा ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यत्पितृभ्यः क्रोतिं। यामेव पितर् ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यदांवस्थेऽत्रृष्ट् हरेन्ति। यामेव मनुष्यां ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यद्दक्षिणां ददांति॥५५॥

यामेव पृशव ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यचांतुर्मास्यैर्यजंते। यामेवासुरा ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। भवंत्यात्मनां। परांस्य भ्रातृंव्यो भवति। विराजो वा एषा विक्रांन्तिः। यचांतुर्मास्यानिं। वैश्वदेवेनास्मिं होके प्रत्यंतिष्ठत्। वृरुणप्रघासेर्न्तिरक्षे। साक्मेथेर्मुष्मिं होके। एष ह त्वावेतथ्सर्वं भवति। य एवं विद्वा इश्वांतुर्मास्यैर्यजंते॥ ५६॥

अग्निर्वाव संवथ्सरः। आदित्यः परिवथ्सरः। चन्द्रमां इदावथ्सरः। वायुरंनुवथ्सरः। यद्वैश्वदेवेन यजेते। अग्निमेव तथ्संवथ्सरमाप्नोति। तस्माद्वैश्वदेवेन यजमानः। संवथ्सरीणाई स्वस्तिमा शास्त इत्याशांसीत। यद्वरुणप्रघासैर्यजेते।

मुनुष्यां अपश्यश्रमुसं घृतस्यं पूर्णंश् स्वुधामसुरा अपश्यश्रमुसं घृतस्यं पूर्णंश् स्वुधामसुरा ददौत्यतिष्ठचुत्वारि च॥

आदित्यमेव तत्पंरिवथ्सरमाँप्रोति॥५७॥

चत्र्थः प्रश्नः (अष्टकम् १)

तस्माँद्वरुणप्रघासैर्यजंमानः। परिवृथ्सरीणाई स्वस्तिमा शाँस्त इत्याशांसीत। यथ्मांकमेधेर्यजंते। चन्द्रमंसमेव तदिदावथ्सरमाँप्रोति। तस्माँथ्साकमेधेर्यजंमानः। इदावथ्सरीणाई स्वस्तिमा शाँस्त इत्याशांसीत। यत्पितृयज्ञेन यजंते। देवानेव तदन्ववंस्यति। अथवा अस्य वायुश्चांनुवथ्सरश्चाप्रींतावुच्छिंष्येते। यच्छुंनासीरीयेण यजंते॥५८॥

वायुमेव तदंनुवथ्सरमाँप्रोति। तस्माँच्छुनासीरीयेण यजंमानः। अनुवथ्सरीणाई स्वस्तिमा शाँस्त इत्याशांसीत। संवथ्सरं वा एष ईंपस्तीत्यांहुः। यश्चांतुर्मास्यैर्यजंत इतिं। एष ह त्वै संवथ्सरमाँप्रोति। य एवं विद्वाइश्चांतुर्मास्यैर्यजंते। विश्वे देवाः समयजन्त। तेंऽग्निमेवायंजन्त। त एतं लोकमंजयन्॥५९॥

यस्मिन्नग्निः। यद्वैश्वदेवेन् यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नग्निः। अग्नेरेव सायुंज्यमुपैति। यदा वैश्वदेवेन् यजंते। अर्थं संवथ्स्रस्यं गृहपंतिमाप्नोति। चत्र्थः प्रश्नः (अष्टकम् १)

यदा संवथ्सरस्यं गृहपंतिमाप्नोतिं। अथं सहस्रयाजिनंमाप्नोति। यदा सहस्रयाजिनंमाप्नोतिं॥६०॥

अथं गृहमेधिनंमाप्रोति। यदा गृंहमेधिनंमाप्रोतिं। अथाग्निर्भवति। यदाग्निर्भवंति। अथ गौर्भवति। एषा वै वैश्वदेवस्य मात्रां। एतद्वा एतेषांमव्मम्। अतोतो वा उत्तराणि श्रेया स्मि भवन्ति। यद्विश्वे देवाः स्मयंजन्त। तद्वैश्वदेवस्य वैश्वदेवत्वम्॥६१॥

अथांऽऽदित्यो वर्रुण् राजानं वरुणप्रघासैरयजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्नादित्यः। यद्वेरुणप्रघासैर्यजंते। एतमेव लोकं जयति। यस्मिन्नादित्यः। आदित्यस्यैव सायुंज्यमुपैति। यदांदित्यो वर्रुण् राजानं वरुणप्रघासै-रयंजत। तद्वेरुणप्रघासानां वरुणप्रघासत्वम्। अथु सोमो राजा छन्दार्शसे साकमेधैरयजत॥६२॥

स एतं लोकमंजयत्। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। यथ्सांकमेधैर्यजंते। एतमेव

लोकं जंयित। यस्मिईश्चन्द्रमां विभातिं। चन्द्रमंस एव सायुंज्यमुपैति। सोमो वै चन्द्रमाः। एष ह् त्वै साक्षाथ्सोमं भक्षयित। य एवं विद्वान्थ्सांकमेधेर्यजंते। यथ्सोमंश्च राजा छन्दार्सस च स्मैधंन्त॥६३॥

तथ्सांकमेधाना रे साकमेधत्वम्। अथर्तवेः पितरेः प्रजापंतिं पितरं

पितृयुज्ञेनांयजन्त। त पृतं लोकमंजयन्। यस्मिन्नृतविः। यत्पितृयुज्ञेन् यजेते। पृतमेव लोकं जयित। यस्मिन्नृतविः। ऋतूनामेव सायुज्यमुपैति। यदृतविः पितरिः प्रजापितिं पितरें पितृयुज्ञेनायंजन्त। तत्पितृयुज्ञस्यं पितृयज्ञत्वम्॥६४॥ अथौषिधय इमं देवं त्र्यम्बकैरयजन्त प्रथेमहीति। ततो व ता अप्रथन्त। य पृवं विद्वाः स्त्र्यम्बकैर्यज्ञंते। प्रथंते प्रजयां पृश्भिः। अर्थं वायुः परमेष्ठिन रेश्नासीरीयेणायजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्वायुः। यच्छुंनासीरीयेण यजंते।

वायोरेव सायुंज्यमुपैति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्र चांतुर्मास्ययाजी मींयता (३)

एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्वायुः॥६५॥

चतुर्थः प्रश्नः (अष्टकम् १)

न प्रमीयता (३) इति। जीवन्वा एष ऋतूनप्येति। यदि वसन्तौ प्रमीयते। वसन्तो भेवति। यदि ग्रीष्मे ग्रीष्मः। यदि वर्षासुं वर्षाः। यदि शरदि शरत्। यदि हेमेन् हेमन्तः। ऋतुर्भूत्वा संवथ्सरमप्येति। संवथ्सरः प्रजापंतिः। प्रजापंतिवीवैषः॥६६॥

परिवृथ्सरमाप्नोति शुनासीरीर्येण् यर्जतेऽजयन्थ्सहस्रयाजिनंमाप्नोतिं वैश्वदेवृत्वः सांकमेधेरयजत समैधंन्त पितृयज्ञत्वं जंयित् यस्मिन्वायुर्हेमृन्तस्रीणिं च॥——[१०]

उभयें युवर सुराममुदंस्थान्नि वै यस्यं प्रातः सवन एकैकोऽसुर्यं पर्वमानः प्रजा वै सत्रमांसताग्निर्वाव संवथ्सरो दर्शा॥१०॥

.

उभये वा उदस्थाथ्सर्वाभिर्मध्यतोऽत्र वाव ब्राँह्मणेष्वथं गृहमेधिनुर् षट्थांष्टिः॥६६॥

उभये वा वैषः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

अग्नेः कृत्तिंकाः। शुक्रं प्रस्ताङ्योतिंर्वस्तांत्। प्रजापंते रोहिणी। आपंः प्रस्तादोषंधयोऽवस्तांत्। सोमंस्येन्वका वितंतानि। प्रस्ताद्वयंन्तोऽवस्तांत्। कृद्रस्यं बाहू। मृग्यवंः प्रस्तांद्विक्षारोऽवस्तांत्। अदित्ये पुनंवसू। वातंः प्रस्तांदार्द्रम्वस्तांत्॥१॥

बृह्स्पतेंस्तिष्यः। जुह्वंतः प्रस्ताद्यजंमाना अवस्तांत्। सूर्पाणांमाश्रेषाः। अभ्यागच्छंन्तः प्रस्तांदभ्यानृत्यंन्तोऽवस्तांत्। पितृणां मुघाः। रुदन्तः प्रस्तांदपश्रू १ शोऽवस्तांत्। अर्यम्णः पूर्वे फल्गुंनी। जाया प्रस्तांदषभोऽवस्तांत्। भगस्योत्तरे। वृह्तवंः प्रस्ताद्वहंमाना अवस्तांत्॥२॥

देवस्यं सिवृतुर्हस्तंः। प्रस्वः प्रस्तांध्यनिर्वस्तांत्। इन्द्रंस्य चित्रा। ऋतं प्रस्तांध्यत्यम्वस्तांत्। वायोर्निष्ट्यां व्रतिः। प्रस्तादसिंद्धिर्वस्तांत्।

इन्द्राग्नियोर्विशांखे। युगानि प्रस्तांत्कृषमांणा अवस्तांत्। मित्रस्यांनूराधाः। अभ्यारोहंत्प्रस्तांद्भ्यारूढम्वस्तांत्॥३॥ इन्द्रंस्य रोहिणी। शृणत्प्रस्तांत्प्रतिशृणद्वस्तांत्। निर्ऋंत्ये मूल्वर्हंणी। प्रतिभुञ्जन्तंः प्रस्तांत्प्रतिशृणन्तोऽवस्तांत्। अपां पूर्वा अषाढाः। वर्चः प्रस्तांथ्यमितिर्वस्तांत्। विश्वेषां देवानामुत्तंराः। अभिजयंत्प्रस्तांद्भिजितम्वस्तांत्

विष्णोः श्रोणा पृच्छमानाः। पुरस्तात्पन्थां अवस्तात्। ४॥ वसूना अविष्ठाः। भूतं परस्ताद्भृतिरवस्तात्। इन्द्रस्य शतभिषक्। विश्वव्यंचाः परस्तां द्विश्वक्षिंतिर्वस्तांत्। अजस्यैकंपदः पूर्वे प्रोष्ठपदाः। वैश्वान्रं पुरस्ताँद्वैश्वावस्वम्वस्तांत्। अहें बुंध्रियस्योत्तरे। अभिषिश्चन्तंः परस्तांदभिषुण्वन्तो-ऽवस्तात्। पूष्णो रेवतीं। गार्वः परस्ताद्वथ्सा अवस्तात्। अश्विनोरश्वयुजौं। ग्रामः परस्ताथ्सेनाऽवस्तांत्। यमस्यांपभरंणीः। अपकर्षन्तः पुरस्तांदपुवहंन्तोऽवस्तांत्। पूर्णा पृश्चाद्यते देवा अद्धुः॥५॥

यत्पुण्यं नक्षंत्रम्। तद्बद्धंवीतोपव्युषम्। यदा वै सूर्यं उदितिं। अथ् नक्षंत्रं नैतिं। यत्पुण्यं नक्षंत्रम्। तद्बद्धंवीतोपव्युषम्। यदा वै सूर्यं उदितिं। अथ् नक्षंत्रं नैतिं।

यावंति तत्र सूर्यो गच्छैत्। यत्रं जघन्यं पश्यैत्। तावंति कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते। एव॰ हु वै युज्ञेषुं च शतद्यंम्नं च माथ्स्यो निरवसाययां चकार॥६॥

यो वै नेक्ष्रत्रियं प्रजापंतिं वेदं। उभयोरेनं लोकयौर्विदुः। हस्तं एवास्य हस्तंः। चित्रा शिरंः। निष्ट्या हृदंयम्। ऊरू विशांखे। प्रतिष्ठाऽनूराधाः। एष वै नेक्ष्रत्रियः प्रजापंतिः। य एवं वेदं। उभयोरेनं लोकयौर्विदुः॥७॥

अस्मि ॥ श्रीमुष्मि ॥ यां कामयेत दुहितरं प्रिया स्यादिति। तां निष्ट्यायां दद्यात्। प्रियेव भवति। नेव तु पुन्रागच्छति। अभिजिन्नाम् नक्षंत्रम्। उपरिष्टादषाढानाम्। अवस्ताच्छ्रोणायै। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवास्तस्मिन्नक्षंत्रेऽभ्यंजयन्॥८॥ यद्भ्यजंयन्। तदंभिजितोंऽभिजित्त्वम्। यं कामयेतानपज्य्यं जयेदितिं। तमेतस्मिन्नक्षंत्रे यातयेत्। अनुपज्य्यमेव जयित। पापपंराजितिमव तु। प्रजा-पंतिः पृशूनंसृजत। ते नक्षत्रं नक्षत्रमुपांतिष्ठन्त। ते समावन्त प्वाभवन्। ते रेवतीमुपांतिष्ठन्त॥९॥

ते रेवत्यां प्राभंवन्। तस्माँद्रेवत्यां पशूनां कुंवीत। यत्किं चाँर्वाचीन् सोमाँत्। प्रैव भंवन्ति। सुलिलं वा इदमंन्त्रासीँत्। यदतंरन्। तत्तारंकाणां तारकृत्वम्। यो वा इह यजेते। अमुर स लोकं नक्षते। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्॥१०॥

देवगृहा वै नक्षेत्राणि। य एवं वेदे। गृह्येव भेवति। यानि वा इमानि पृथिव्याश्चित्राणि। तानि नक्षेत्राणि। तस्मांदश्चीलनांमङ्श्चित्रे। नावंस्येन्न यंजेत। यथां पापाहे कुंरुते। तादगेव तत्। देवनुक्षुत्राणि वा अन्यानिं॥११॥

यम्नुक्षुत्राण्यन्यानिं। कृत्तिंकाः प्रथमम्। विशांखे उत्तमम्। तानिं देवनक्षुत्राणिं। अनूराधाः प्रथमम्। अपुभरंणीरुत्तमम्। तानिं यमनक्षुत्राणिं। यानिं देवनक्षुत्राणिं।

तानि दक्षिणेन परियन्ति। यानि यमनक्षत्राणि॥१२॥

तान्युत्तंरेण। अन्वेषामराथ्स्मेति। तदंनूराधाः। ज्येष्ठमेषामवधिष्मेति। तद्येष्ठघ्री। मूलंमेषामवृक्षामेति। तन्मूलवर्हंणी। यन्नासंहन्त। तदंषाढाः। यदश्लोणत्॥१३॥

तच्छ्रोणा। यदर्श्वणोत्। तच्छ्रविष्ठाः। यच्छ्रतमभिषज्यन्। तच्छ्रतभिषक्। प्रोष्ठपदेषूदंयच्छन्त। रेवत्यांमरवन्त। अश्वयुजोरयुञ्जत। अपुभरंणीष्वपांवहन्। तानि वा एतानि यमनक्षत्राणि। यान्येव देवनक्षत्राणि। तेषुं कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते॥१४॥

चुकारै्वं बेदोभयोरेनं लोकर्योविंदुरजयब्रेवर्तोमुपातिष्ठन्त नक्षत्रत्वमृन्यानि यानिं यमनक्षत्राण्यश्लोणद्यमनक्षत्राणि त्रीणिं च॥——————————[२]

देवस्यं सिवृतुः प्रातः प्रस्वः प्राणः। वरुणस्य सायमास्वोऽपानः। यत्प्रंती्चीनं प्रात्स्तनात्। प्राचीनः सङ्गवात्। ततो देवा अग्निष्टोमं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। मित्रस्यं सङ्गवः। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि पृशवंः समायंन्ति। यत्प्रंती्चीनः सङ्गवात्॥१५॥

वदेत्॥१७॥

मध्यं दिनात्। प्राचीनंमपराह्णात्। ततो देवाः षोंडशिनं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः॥१६॥

भगंस्यापराह्णः। तत्पुण्यं तेज्ञस्व्यहंः। तस्मादपराह्णे कुंमार्यो भगंमिच्छमानाश्चरन्ति। यत्प्रंतीचीनंमपराह्णात्। प्राचीनर् सायात्। ततो देवा अंतिरात्रं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। वरुणस्य सायम्। तत्पुण्यं तेज्ञस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि नानृतं

प्राचीनं मध्यं दिनात्। ततो देवा उक्थ्यं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः।

बृहस्पतें मध्यं दिनः। तत्पुण्यं तेजस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि तेक्ष्णिष्ठं तपति। यत्प्रंतीचीनं

ब्राह्मणो वा अष्टाविष्शो नक्षेत्राणाम्। समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षेत्राणि। चत्वार्यश्चीलानि। तानि नवं। यचं पुरस्तान्नक्षेत्राणां यचावस्तांत्। तान्येकांदश। ब्राह्मणो द्वांदशः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरित। संवथ्यरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भंवति। समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षेत्राणि। चत्वार्यश्चीलानि। तानि नवं। आग्नेयी

उपारश्वन्तर्यामौ निरंमिमीतामिमीत पट्टं॥

रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। तान्येकांदश। आदित्यो द्वांदशः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरित। सुंवथ्यरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भवति॥१८॥

सङ्गवाथ्योंड्शिन्ं निरंमिमत् तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गो वंदेद्भवति समानस्याहुः पञ्च पुण्यांनि नक्षंत्राण्युष्टौ चं॥—————[३]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कति पात्रांणि युज्ञं वंहन्तीतिं। त्रयोंदशेतिं ब्र्यात्। स यद्भ्यात्। कस्तानि निरंमिमीतेतिं। प्रजापंतिरितिं ब्रूयात्। स यद्भ्यात्। कुत्स्तानि निरंमिमीतेतिं। आत्मन् इतिं। प्राणापानाभ्यांमेवोपाईश्वन्तर्यामौ निरंमिमीत॥१९॥ व्यानादुंपा १ शुसर्वनम्। वाच ऐन्द्रवायवम्। दक्षऋतुभ्यां मैत्रावरुणम्। श्रोत्रांदाश्विनम्। चक्षुंषः शुक्रामन्थिनौं। आत्मनं आग्रयणम्। अङ्गेभ्य उक्थ्यम्। आयुंषो ध्रुवम्। प्रतिष्ठायां ऋतुपात्रे। यज्ञं वाव तं प्रजापंतिर्निरंमिमीत। स निर्मितो नाद्धियत समंब्रीयत। स एतान्प्रजापंतिरपिवापानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स यज्ञमप्यंवपत्। यदंपिवापा भवंन्ति। यज्ञस्य धृत्या असंब्लयाय॥२०॥

ऋतमेव पंरमेष्ठि। ऋतं नात्येति किश्चन। ऋते संमुद्र आहिंतः। ऋते भूमिरिय १ श्रिता। अग्निस्तिग्मेन शोचिषां। तप आक्रान्तम् ष्णिहां। शिरस्तपस्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंर्तये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वर्तये। तदतं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२१॥ यद्घर्मः पर्यवर्तयत्। अन्तान्पृथिव्या दिवः। अग्निरीशान ओर्जसा। वर्रुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मरुद्भिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रांन्तमुष्णिहाँ। शिरस्तपस्याहितम्। वैश्वानरस्य तेर्जसा। ऋतेनांस्य नि वर्तये।

सृत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तथ्सृत्यम्। तद्द्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२२॥ यो अस्याः पृथिव्यास्त्वचि। निवर्तयत्योषंधीः। अग्निरीशांन ओजंसा। वर्रणोधीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आऋौन्तमुष्णिहां। शिरुस्तपुस्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वर्तये।

सृत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तथ्सृत्यम्। तद्वृतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२३॥

एकं मासमुदंसृजत्। प्रमेष्ठी प्रजाभ्यः। तेनाभ्यो मह आवंहत्। अमृतं मर्त्याभ्यः। प्रजामनु प्र जांयसे। तदुं ते मर्त्यामृतम्। येन मासां अर्धमासाः। ऋतवंः परिवथ्सराः। येन ते ते प्रजापते। ईजानस्य न्यवंर्तयन्। तेनाहमस्य ब्रह्मणा। निवंतियामि जीवसे। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आऋांन्तम्ष्णिहां। शिरस्तपस्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंर्तये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनास्याभि वर्तये। तदुतं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२४॥ परिवर्तये सहाभिवर्तय उष्णिहां राध्यासुं न्यवंर्तयृत्रुपंवर्तये चुत्वारिं च। (ऋतमेव षोर्डश। यद्घुर्मो यो अस्याः सप्तदंशसप्तदश। एकुं मासुं चर्तुर्वि १शितः)॥ 🕻 🕻 🗍

देवा वै यद्यज्ञेऽकुर्वत। तदसुंरा अकुर्वत। तेऽसुंरा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्यो नापंश्यन्। ते केशानग्रेंऽवपन्त। अथ् श्मश्रूंणि। अथोपपृक्षौ। तत्स्तेऽवांश्व आयन्। परांऽभवन्। यस्यैवं वपंन्ति। अवांङेति॥२५॥

अथो परैव भंवति। अर्थ देवा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्योऽपश्यन्। त उंपपृक्षावग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रृंणि। अथ् केशान्। तत्स्तेऽभवन्। सुवृगं लोकमायन्। यस्यैवं वपन्ति। भवत्यात्मनां। अथो सुवर्गं लोकमेति॥२६॥

अथैतन्मनुंर्वित्रे मिथुनमंपश्यत्। स श्मश्रूण्यग्रेंऽवपतः। अथोपपृक्षौः। अथ् केशान्। ततो वै स प्राजांयत प्रजयां पृशुभिः। यस्यैवं वपंन्ति। प्र प्रजयां पृशुभिर्मिथुनैर्जायते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते संवथ्सरे व्यायंच्छन्तः। तान्देवाश्चांतुर्मास्यैरेवाभि प्रायुंञ्जत॥२७॥

वैश्वदेवेनं चतुरों मासोऽवृञ्जतेन्द्रंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चार्वर्तयन्त परिं च। वरुणप्रघासेश्चतुरों मासोऽवृञ्जत् वरुणराजानः। ताञ्छीर्षं नि चार्वर्तयन्त परिं च। साक्रमेधेश्चतुरों मासोऽवृञ्जत् सोमंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चार्वर्तयन्त परिं च। या संवथ्सर उपजीवाऽऽसींत्। तामेषामवृञ्जत। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥२८॥

य एवं विद्वाः श्वांतुर्मास्यैर्यजंते। भ्रातृंव्यस्यैव मासो वृक्ता। शीर्षं नि च

वृतयंते परि च। यैषा संवथ्सर उंपजीवा। वृङ्के तां भ्रातृंव्यस्य। क्षुधाऽस्य भ्रातृंव्यः पर्रा भवति। लोहितायसेन नि वर्तयते। यद्वा इमामग्निर्ऋतावागंते निवर्तयंति। एतदेवैना रूपं कृत्वा निवर्तयति। सा ततः श्वश्वो भूयंसी भवंन्त्येति॥२९॥

प्र जांयते। य एवं विद्वाँ होहितायुसेनं निवर्तयंते। एतदेव रूपं कृत्वा नि वंर्तयते। स ततः श्वश्वो भूयान्भवंन्नेति। प्रैव जांयते। त्रेण्या शंलुल्या नि वंर्तयेत। त्रीणि त्रीणि वै देवानां मृद्धानिं। त्रीणि छन्दा १सि। त्रीणि सर्वनानि। त्रयं इमे लोकाः॥३०॥

ऋध्यामेव तद्वीर्य एषु लोकेषु प्रति तिष्ठति। यचांतुर्मास्ययाज्यांत्मनो नावद्येत्। देवेभ्य आवृंश्चेत। चृतृषु चंतृषु मासेषु नि वंतियेत। प्रोक्षंमेव तद्देवेभ्य आत्मनो-ऽवंद्यत्यनांव्रस्काय। देवानां वा एष आनीतः। यश्चांतुर्मास्ययाजी। य एवं विद्वान्नि चं वृत्तयंते परि च। देवतां एवाप्येति। नास्यं रुद्रः प्रजां पृशून्भि मन्यते॥३१॥

पृत्येत्युयुश्चतासुंरा एति लोका मन्यते॥━────ि्६्]

आयुंषः प्राण सन्तेन्। प्राणादेपान सन्तेन्। अपानाद्यान सन्तेन्। व्याना चक्षुः सन्तेन्। चक्षुंषः श्रोत्र सन्तेन्। श्रोत्रान्मनः सन्तेन्। मनंसो वाच सन्तेन्। वाच आत्मान सन्तेन्। आत्मनः पृथिवी सन्तेन्। पृथिव्या अन्तरिक्ष सन्तेन्। अन्तरिक्षाद्विष सन्तेन्। दिवः सुवः सन्तेन्॥ ३२॥

इन्द्रों दधीचो अस्थिभैः। वृत्राण्यप्रतिष्कुतः। ज्ञ्घानं नवृतीर्नवं। इच्छन्नश्वंस्य यच्छिरंः। पर्वतेष्वपंश्रितम्। तिद्वंदच्छर्यणावंति। अत्राह् गोरमंन्वत। नाम् त्वष्टुंरपीच्यम्। इत्था चन्द्रमंसो गृहे। इन्द्रमिद्गाथिनों बृहत्॥३३॥

इन्द्रंमकेंभिर्किणः। इन्द्रं वाणीरनूषत। इन्द्र इद्धर्योः सर्चां। सम्मिश्च आवेचो युजां। इन्द्रों वुज्री हिर्ण्ययः। इन्द्रों दीर्घाय चक्षंसे। आ सूर्यर्थ रोहयिद्दिवि। वि गोभिरद्रिमैरयत्। इन्द्रं वाजेषु नो अव। सहस्रंप्रधनेषु च॥३४॥

उग्र उग्राभिंरूतिभिः। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तंवे। स वृषां वृष्भो

भुंवत्। इन्द्रः स दामंने कृतः। ओजिंष्टः स बले हितः। द्युम्नी श्लोकी स सौम्यः। गिरा वज्रो न सम्भृंतः। सबंलो अनंपच्युतः। वृवक्षुरुग्रो अस्तृंतः॥३५॥

बृहचास्तृंतः॥——[८]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स प्रजापंतिरिन्द्रं ज्येष्ठं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनमसुरा बलीया॰सोऽहन्त्रितिं। प्रह्लादों हु वै कायाधवः। विरोचन् हु स्वं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनं देवा अहन्त्रितिं। ते देवाः प्रजापंतिमुपस्मेत्योचुः। नाराजकंस्य युद्धमंस्ति। इन्द्रमन्विंच्छामेतिं। तं यंज्ञकृतुभिरन्वैंच्छन्॥३६॥

तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दन्। तमिष्टिंभिरन्वैच्छन्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दन्। तदिष्टीनामिष्टित्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तस्मां एतमांग्नावैष्ण्वमेकांदशकपालं दीक्षणीयं निरंवपन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तान्पंत्रीसंयाजान्त उपानयन्॥३७॥

ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। ते प्रांयणीयंम्भि सुमारोहन्। तदंपुद्रुत्यांतन्वत।

ताञ्छुय्यँन्त उपानयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। त आंतिथ्यम्भि समारोहन्। तदंपृद्रुत्यातन्वत। तानिडान्त उपानयन्। ते तदंन्तमेव कृत्वोदंद्रवन्। तस्मादेता एतदंन्ता इष्टंयः सन्तिष्ठन्ते॥३८॥

पुव हे देवा अर्कुर्वत। इति देवा अंकुर्वत। इत्यु वै मंनुष्याः कुर्वते। ते देवा ऊंचुः। यद्वा इदमुचैर्यज्ञेन चराम। तन्नोऽसुराः पाप्माऽनुविन्दन्ति। उपा श्रूपसदां चराम। तथा नोऽसुराः पाप्मा नानुवेथ्स्यन्तीति। त उपा श्रूपसदंमतन्वत। तिस्र एव सामिधेनीरनूच्यं॥३९॥

स्रुवेणांघारमाघार्य। तिस्रः परांचीराहुंतीरहुत्वा। स्रुवेणांपसदं जुह्वां चंकुः। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी्र स्वाहेतिं। अश्नन्यापिपासे ह् वा उग्रं वचेः। एनंश्च वैरंहत्यं च त्वेषं वचेः। एत ह् वाव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं देवा अपंजिन्नरे। तथों एवैतदेंवंविद्यजमानः। तिस्र एव सांमिधेनीर्नूच्यं। स्रुवेणांघारमाघार्य॥४०॥ तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणोंपसदं जुहोति। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं

वचो अपांवधी इस्वाहेतिं। अश्नन्यापिपासे ह् वा उग्रं वर्चः। एनश्च वैरहत्यं च त्वेषं वर्चः। एतमेव तर्चतुर्धाविहितं पाप्मानं यजमानोऽपं हते। तेऽभिनीयैवाहंः पशुमाऽलंभन्त। अह्रं एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्राचंरन्। रात्रिया एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे॥४१॥ तस्मादिभिनीयैवाहंः पशुमा लंभेत। अह्रं एव तद्यजमानोऽवंतिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्रचंरेत्। रात्रिया एव तद्यजमानोऽवंतिं

पाप्मानं भ्रातृंब्यानपं नुदते। स एष उपवस्थीयेऽहं द्विदेवृत्यः पृशुरा लेभ्यते। द्वयं वा अस्मिँ ह्योके यजमानः। अस्थि च मार्सं च। अस्थि चैव तेन मार्सं च यजमानः सङ्स्कुरुते। ता वा एताः पश्च देवताः। अग्नीषोमांवृग्निर्मित्रावरुणौ॥४२॥ पृश्चपृश्ची वै यजमानः। त्वङ्गार्सः स्नावाऽस्थि मृज्ञा। एतमेव

पश्चपश्ची वै यजंमानः। त्वङ्गार्सः स्नावाऽस्थिं मुज्जा। एतमेव तत्पंश्चधाविहितमात्मानं वरुणपाशान्मुंश्चिति। भेषजतांयै निर्वरुणत्वायं। तर् सप्तिभृष्ठव्दोभिः प्रातरंह्वयन्। तस्मांथ्सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दारंसि प्रातरनुवाके- ऽनूँच्यन्ते। तमृतयोपस्मेत्योपांसीदन्। उपाँस्मै गायता नर् इतिं। तस्मांदेतयां बहिष्पवमान उपसद्यः॥४३॥

पुेच्छुत्रनयुः स्तिष्ठन्ते ऽनूच्यानूच्यं स्रुवेणांघारमाघार्य रात्रिया एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिन्नरे मित्रावरुणौ नवं च (देवा यर्जमानो देवा देवा यर्जमानो

स संमुद्र उत्तर्तः प्राज्वेलद्भूम्यन्तेनं। एष वाव स संमुद्रः। यच्चात्वंलः। एष उवेव स भूम्यन्तः। यद्वैद्यन्तः। तदेतित्रिंशलं त्रिंपूरुषम्। तस्मात्तं त्रिंवित्स्तं खनित्त। स सुंवर्णरज्ताभ्यां कुशीभ्यां परिंगृहीत आसीत्। तं यदस्या अध्यजनंयन्। तस्मादादित्यः॥४४॥

अथ यथ्सुंवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत् आसींत्। साऽस्यं कौशिकतां। तं त्रिवृताऽभि प्रास्तुंवत। तं त्रिवृताऽदंदत। तं त्रिवृताऽहंरन्। यावंती त्रिवृतो मात्रां। तं पंश्रद्शेनाभि प्रास्तुंवत। तं पंश्रद्शेनादंदत। तं पंश्रद्शेनाहंरन्। यावंती पश्रद्शस्य मात्रां॥४५॥ तः संप्तद्शेनाभि प्रास्तुंवत। तः संप्तद्शेनादंदत। तः संप्तद्शेनाहंरन्। यावंती सप्तद्शस्य मात्रां। तस्यं सप्तद्शेनं ह्रियमाणस्य तेजो हरोंऽपतत्। तमेंकवि शेनाभि प्रास्तुंवत। तमेंकवि शेनादंदत। तमेंकवि शेनाहंरन्। यावंत्येकवि शस्य मात्रां। ते यित्रवृतां स्तुवतें॥४६॥

त्रिवृतैव तद्यजंमान्मादंदते। तं त्रिवृतैव हंरन्ति। यावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्निर्वे त्रिवृत्। यावद्वा अग्नेदंहंतो धूम उदेत्यानु व्येतिं। तावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्नेरेवैनं तत्। मात्राः सायुंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ यत्पंश्रद्शेनं स्तुवतें। पृश्रद्शेनैव तद्यजंमान्मादंदते॥४७॥

तं पंश्चद्रशेनेव हंरन्ति। यावंती पश्चद्रशस्य मात्राँ। चन्द्रमा वै पंश्चद्रशः। एष हि पंश्चद्रयामंपक्षीयतें। पृश्चद्रयामांपूर्यतें। चन्द्रमंस एवेनं तत्। मात्रा सायंज्य सलोकतांं गमयन्ति। अथ यथ्मंप्तद्रशेनं स्तुवतें। स्प्तद्रशेनेव तद्यजंमान्मादंदते। तर संप्तद्रशेनेव हंरन्ति॥४८॥

यावंती सप्तद्रशस्य मात्रां। प्रजापंतिर्वे संप्तद्रशः। प्रजापंतिरेवेनं तत्। मात्राष्ट्र सायुंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ यदंकिविष्शेनं स्तुवतें। एकविष्शेनेव तद्यजंमान्मादंदते। तमेंकिविष्शेनेव हंरन्ति। यावंत्येकिविष्शस्य मात्रां। असो वा आंदित्य एंकिविष्शः। आदित्यस्यैवेनं तत्॥४९॥

मात्रा सायुं ज्य स्ति स्वर्णां गमयन्ति। ते कुश्यौं। व्यंघ्रन्। ते अंहोरात्रे अंभवताम्। अहंरेव स्वर्णां अभवताम्। रज्ता रात्रिः। स यदांदित्य उदेति। पृतामेव तथ्सुवर्णां कुशीमनु समेति। अथ यदंस्तमेति। पृतामेव तद्रंज्तां कुशीमनुसंविंशति। प्रहादों हु वै कांयाध्वः। विरोचंन् स्वं पुत्रमुदांस्यत्। स प्रदेशेऽभवत्। तस्मौत्प्रद्रादुंदकं नाचांमेत्॥५०॥

 इति। त्रिवृत्पंश्चदशः संप्तदश एंकवि १ शः॥ ५१॥

पुतानि वाव तानि ज्योती १षि। य पुतस्य स्तोमाँः। सोँऽब्रवीत्। सप्तद्दशेनं ह्रियमाणो व्यंलेशिषि। भिषज्यंत मेतिं। तमृश्विनौ धानाभिरभिषज्यताम्। पूषा कर्म्भेणं। भारती परिवापेणं। मित्रावरुंणौ पयस्यंया। तदांहः॥५२॥

यदिश्वभ्यां धानाः। पूष्णः कंरम्भः। भारंत्ये परिवापः। मित्रावरुंणयोः पयस्याऽथं। कस्मादेतेषा हिवषामिन्द्रंमेव यंजन्तीतिं। पृता ह्येनं देवता इतिं ब्रूयात्। पृतैर्ह्विर्भिरभिषज्य इस्तस्मादितिं। तं वसंवोऽष्टाकंपालेन प्रातः सवने-ऽभिषज्यन्। रुद्रा एकांदशकपालेन माध्यं दिने सवने। विश्वं देवा द्वादंशकपालेन तृतीयसवने॥५३॥

स यद्ष्टाकंपालान्प्रातः सव्ने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सर्वने। द्वादंशकपालाङ्स्तृतीयसव्ने। विलोम् तद्यज्ञस्यं क्रियेत। एकांदशकपालानेव प्रांतः सव्ने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सर्वने। एकांदशकपालाङ्- स्तृतीयसवने। यज्ञस्यं सलोमृत्वायं। तदांहुः। यद्वसूंनां प्रातः सवनम्। रुद्राणां माध्यं दिनु सवनम्। विश्वेषां देवानां तृतीयसवनम्। अथ कस्मादेतेषा हिवषामिन्द्रमेव यंजन्तीतिं। एता ह्यंनं देवता इति ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्भिरभि-षज्य इस्तस्मादितिं॥५४॥

्रकृष्ट्रिय आह्म्प्तीयसक्ते प्रांतः सक्तं पर्व वा [११] तस्यावांचोऽवपादादंबिभयुः। तमेतेषुं स्प्तस्य छन्दंः स्वश्रयन्। यदश्रंयन्। तच्छ्रांयन्तीयंस्य श्रायन्तीयत्वम्। यदवारयन्। तद्वारवन्तीयंस्य वारवन्तीयत्वम्।

तस्यावीच पुवावंपादादंबिभयुः। तस्मां पुतानिं सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दा हुस्युपीदधुः। तेषामित त्रीण्यंरिच्यन्त। न त्रीण्युदंभवन्॥५५॥

स बृह्तीमेवास्पृंशत्। द्वाभ्यांमक्षराँभ्याम्। अहोरात्राभ्यांमेव। तदांहुः। कृतमा सा देवाक्षंरा बृह्ती। यस्यान्तत्प्रत्यतिंष्ठत्। द्वादंश पौर्णमास्यः। द्वादशाष्ट्रकाः। द्वादंशामावास्याः। एषा वाव सा देवाक्षंरा बृह्ती॥५६॥ यस्यां तत्प्रत्यतिष्ठदिति। यानि च छन्दा ईस्यत्यिरच्यन्त। यानि च नोदर्भवन्। तानि निर्वीर्याणि हीनान्यंमन्यन्त। साऽब्रंबीद्वहृती। मामेव भूत्वा। मामुप् सङ्श्रंयतेति। चतुर्भिरक्षरैरनुष्ठुग्बृंहृतीं नोदंभवत्। चतुर्भिरक्षरैः पुङ्किःबृंहृती-मत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि चत्वार्यक्षराण्यपुच्छिद्यांदधात्॥५७॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। अष्टाभिर्क्षरैरुण्णिग्बृंह्तीं नोदंभवत्। अष्टाभिर्क्षरैम्ब्रिष्टुग्बृंह्तीमत्यंरिच्यत। तस्यांमेतान्यष्टावृक्षराण्यप्च्छिद्यां-दधात्। ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। द्वाद्शभिर्क्षरैर्गायत्री बृंह्तीं नोदंभवत्। द्वाद्शभिर्क्षरैर्जगंती बृह्तीमत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि द्वादंशाक्षराण्यप्च्छिद्यांदधात्॥५८॥

ते बृंहती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। सौंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। छन्दा रेस् रथों मे भवत। युष्माभिर्हमेतमध्वांनमनु सञ्चराणीतिं। तस्यं गायत्री च जगेती च पक्षावंभवताम्। उष्णिक्नं त्रिष्टुष्य प्रष्ट्यौं। अनुष्टुष्यं पङ्किश्च धुर्यौं। पश्चमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

बृह्त्येवोद्धिरंभवत्। स एतं छंन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वानमनु समंचरत्। एतः ह् वै छंन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वानमनु सश्चरित। येनैष एतथ्सश्चरित। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥५९॥

अुभुवुन्वाव सा देवाक्षरा बृहुत्यंदभाद्वादंशाक्षराँण्यपुच्छिद्यांदभादास्थाय पद्वं॥——————————————————————[१२]

अग्रेः कृत्तिका यत्पुण्यं देवस्यं सिवुर्व्वक्षवादिनः कत्यृतमेव देवा वा आयुंषः प्राणिमन्द्रौ दधीचो देवासुराः स प्रजापितिः स संमुद्रो ये वै चृत्वार्स्तस्यावांचो

द्वादंश॥१२॥

अग्नेः कृत्तिंका देवगृहा ऋतमेवर्ध्यामेव तिस्रः परांचीर्ये वै चत्वारो नवंपश्चाशत्॥५९॥

अग्नेः कृत्तिंका य उं चैनमेवं वेदं॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अनुंमत्यै पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपित। ये प्रत्यञ्चः शम्यांया अवृशीयंन्ते। तन्नैर्ऋतमेकंकपालम्। इयं वा अनुंमितः। इयं निर्ऋतिः। नैर्ऋतेन् पूर्वेण् प्रचरित। पाप्मानंमेव निर्ऋतिं पूर्वां निरवंदयते। एकंकपालो भवति। एक्धैव निर्ऋतिं निरवंदयते। यदहृत्वा गार्हंपत्य ईयुः॥१॥

रुद्रो भूत्वाऽग्निरंनूत्थायं। अध्वर्यं च यजंमानं च हन्यात्। वीह् स्वाहा-ऽऽहुंतिं जुषाण इत्याह। आहुंत्यैवेन रे शमयति। नार्तिमार्च्छंत्यध्वर्युनं यजंमानः। एकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्धे निर्ऋत्ये भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै निर्ऋत्यै दिक्। स्वायांमेव दिशि निर्ऋतिं निरवंदयते॥२॥

स्वकृंत इरिणे जुहोति प्रद्रे वाँ। एतद्वे निर्ऋत्या आयतंनम्। स्व एवायतंने निर्ऋतिं निरवंदयते। एष तें निर्ऋते भाग इत्यांह। निर्दिशत्येवैनांम्। भूतें षष्ठमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

हिवष्मंत्यसीत्यांह। भूतिंमेवोपावंतित। मुश्चेममश्हंस इत्यांह। अश्हंस एवैनं मुश्रति। अङ्गुष्ठाभ्यां जुहोति॥३॥

अन्तत एव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णं वासंः कृष्णतूषं दक्षिणा। एतद्वे निर्ऋत्यै रूपम्। रूपेणैव निर्ऋतिं निरवंदयते। अप्रतिक्षमायंन्ति। निर्ऋत्या अन्तर्हित्यै। स्वाहा नमो य इदं चुकारेति पुन्रेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। आहुंत्यैव नमस्यन्तो गार्हंपत्यमुपावर्तन्ते। आनुमतेन प्रचरित। इयं वा अनुमितिः॥४॥ इयमेवास्मै राज्यमन् मन्यते। धेनुर्दक्षिणा। इमामेव धेनुं कुंरुते। आदित्यं चरुं

निर्वपित। उभर्यौष्वेव प्रजास्वभिषिंच्यते। दैवींषु च मानुंषीषु च। वरो दक्षिंणा। वरो हि राज्य समृद्धै। आग्नावैष्णवमेकांदशकपालं निर्वपति। अग्निः सर्वा देवताः॥५॥

विष्णुंर्य्ज्ञः। देवता श्चेव यज्ञं चार्व रुन्धे। वाम्नो वही दक्षिणा। यद्वही। तेन ऽत्रेयः। यद्वाम्नः। तेन वैष्णवः समृद्धे। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालुं

यदैन्द्रं दिधं॥८॥

निर्वपति। अग्नीषोमाँभ्यां वा इन्द्रों वृत्रमंहिन्निर्ति। यदंग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति॥६॥

वार्त्रघमेव विजित्यै। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धौ। इन्द्रों वृत्र॰ ह्त्वा। देवतांभिश्चेन्द्रियेणं च व्यार्ध्यत। स एतमैन्द्राग्नमकांदशकपालमपश्यत्। तिन्नरंवपत्। तेन् व स देवतांश्चेन्द्रियं चावांरुन्ध। यदैन्द्राग्नमेकांदशकपालं निर्वपंति। देवतांश्चेव तेनैन्द्रियं च यजमानोऽवं रुन्धे। ऋष्भो वही दक्षिणा॥७॥ यद्वही। तेनांऽऽग्नेयः। यदंष्भः। तेनैन्द्रः समृद्धौ। आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपति। ऐन्द्रं दिधं। यदांश्चेयो भवंति। अग्निर्वे यंज्ञमुखम्। युज्ञमुखम्विद्धं पुरस्तांद्धत्ते।

इन्द्रियमेवावं रुन्थे। ऋषभो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनाँऽऽग्नेयः। यदंषभः। तेनैन्द्रः समृद्धे। यावंतीर्वे प्रजा ओषंधीनामहुंतानामाश्जन्ं। ताः परांऽभवन्। आग्रयणं भवति हुताद्यांय। यजंमान्स्यापंराभावाय॥९॥

देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता ईन्द्राग्नी उदंजयताम्। तावेतमैंन्द्राग्नं द्वादेशकपालं निर्चृणाताम्। यदैँन्द्राग्नो भवत्युज्जित्यै। द्वादेशकपालो भवति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। वैश्वदेवश्चरुर्भवति। वैश्वदेवं वा अन्नम्। अन्नमेवास्मै स्वदयति॥१०॥

प्रथमजो वथ्सो दक्षिणा समृद्धै। सौम्य इयामाकं चरुं निर्वपति। सोमो वा अंकृष्टपच्यस्य राजां। अकृष्टपच्यमेवास्में स्वदयति। वासो दक्षिणा। सौम्यर हि देवतंया वासः समृद्धौ। सरंस्वत्यै चरुं निर्वपति। सरंस्वते चरुम्। मिथुनमेवावं रुन्धे। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धे। एति वा एष यंज्ञमुखादध्याः। यो ऽग्नेर्देवतांया एतिं। अष्टावेतानिं हवी १षिं भवन्ति। अष्टाक्षरा गायत्री। गायत्रौंऽग्निः। तेनैव यंज्ञमुखादध्यां अग्नेर्देवतांयै नैतिं॥११॥

र्डुयुर्निरवंदयतेऽङ्गुष्ठाभ्यां जुहोत्यनुंमतिर्देवतां निर्वपंति वही दक्षिणा यदैन्द्रं दध्यपंराभावाय स्वदयित गावौ दक्षिणा समृद्धौ पद्व॥

वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टा न प्राजायन्त।

षष्ठमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

सौंऽग्निरंकामयत। अहमिमाः प्रजंनयेयमितिं। स प्रजापंतये शुचंमदधात्। सों ऽशोचत्प्रजामिच्छमानः। तस्माद्यं चं प्रजा भुनिक्त यं च न। तावुभौ शोचतः प्रजामिच्छमांनौ। तास्वग्निमप्यंसृजत्। ता अग्निरध्यैत्॥१२॥

सोमो रेतोंऽदधात्। सविता प्राजंनयत्। सरंस्वती वाचंमदधात्। पूषाऽपोंषयत्। ते वा एते त्रिः संवथ्सरस्य प्रयुंज्यन्ते। ये देवाः पुष्टिंपतयः। संवथ्सरो वै प्रजापंतिः। संवथ्सरेणैवास्मै प्रजाः प्राजनयत्। ताः प्रजा जाता मरुतौऽघ्नन्। अस्मानपि न प्रायुक्षतेतिं॥१३॥

स पुतं प्रजापंतिर्मारुतः सप्तकंपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। ततो वै प्रजाभ्योऽकल्पत। यन्मारुतो निरुप्यतें। यज्ञस्य क्रुप्त्यें। प्रजानामघाताय। सप्तकंपालो भवति। सप्तगंणा वै मरुतंः। गणश एवास्मै विशं कल्पयति। स प्रजापंतिरशोचत्॥१४॥

याः पूर्वाः प्रजा असृक्षि। मरुतस्ता अंवधिषुः। कथमपंराः सृजेयेतिं। तस्य

शुष्मं आण्डं भूतं निरंवर्तत। तद्युदंहरत्। तदंपोषयत्। तत्प्राजांयत। आण्डस्य वा एतद्रूपम्। यदामिक्षां। यद्युद्धरंति॥१५॥

प्रजा एव तद्यजंमानः पोषयित। वैश्वदेव्यांमिक्षां भवित। वैश्वदेव्यां वै प्रजाः। प्रजा एवास्मै प्रजनयित। वाजिनमानयित। प्रजास्वेव प्रजातासु रेतों दधाित। द्यावापृथिव्यं एकंकपालो भवित। प्रजा एव प्रजाता द्यावापृथिवीभ्यांमुभ्यतः परि गृह्णाति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥१६॥

मामग्रे यजत। मया मुखेनासुंराञ्जेष्यथेति। मां द्वितीयमिति सोमोंऽब्रवीत्। मया राज्ञां जेष्यथेति। मां तृतीयमिति सिवता। मया प्रसूता जेष्यथेति। मां चंतुर्थीमिति सरंस्वती। इन्द्रियं वोऽहं धाँस्यामीति। मां पंश्चमिति पूषा। मयाँ प्रतिष्ठयां जेष्यथेति॥१७॥ तैंऽग्निना मुखेनासुंरानजयन्। सोमेन राज्ञां। सुवित्रा प्रसूताः। सरंस्वतीन्द्रियमंदधा

पूषा प्रतिष्ठाऽऽसींत्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदेतानि ह्वी १ वि निरुप्यन्ते

विजित्यै। नोत्तंरवेदिमुपंवपति। पृशवो वा उत्तरवेदिः। अजांता इव ह्यंतर्हिं पशर्वः॥१८॥

प्शवः॥१८॥ ऐदित्यंशोचद्युद्धरंत्यव्रवीत्प्रतिष्ठयां जेप्यथेत्पेतर्हिं पशकं॥ — [२]

त्रिवृद्धर्हिर्भवति। माता पिता पुत्रः। तदेव तन्मिथुनम्। उल्बं गर्भो जरायुं। तदेव तन्मिथुनम्। त्रेधा बर्हिः सन्नद्धं भवति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेव लोकेषु प्रति तिष्ठति। एकधा पुनः सन्नद्धं भवति। एकं इव ह्ययं लोकः॥१९॥

अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रतिं तिष्ठति। प्रसुवों भवन्ति। प्रथम्जामेव पृष्टिमवं रुन्थे। प्रथम्जो वथ्सो दक्षिणा समृद्धै। पृषदाज्यं गृह्णाति। प्शवो वै पृषदाज्यम्। पृश्नेवावं रुन्थे। पृश्चगृहीतं भवति। पाङ्का हि पृशवः। बहुरूपं भवति॥२०॥

बहुरूपा हि प्शवः समृद्धै। अग्निं मंन्थन्ति। अग्निम्ंखा वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यद्ग्निं मन्थन्ति। अग्निम्ंखा एव तत्प्रजा यजंमानः सृजते। नवं प्रयाजा इंज्यन्ते। नवानूयाजाः। अष्टौ ह्वी॰िषं। द्वावांघारौ। द्वावाज्यंभागौ॥२१॥ त्रिष्शथ्सम्पद्यन्ते। त्रिष्शदेक्षरा विराट्। अर्न्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। यजंमानो वा एकंकपालः। तेज् आज्यम्। यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव तेजंसा समर्थयति। यजंमानो वा एकंकपालः। पशव आज्यम्॥२२॥

यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव पृशुभिः समर्धयति। यदल्पंमानयेंत्। अल्पां एनं पृशवों भुञ्जन्त उपंतिष्ठेरन्। यद्बह्वांनयेंत्। बहवं एनं पृशवोऽभुंञ्जन्त उपंतिष्ठेरन्। बह्वांनीयाविः पृष्ठं कुर्यात्। बहवं एवैनं पृशवों भुञ्जन्त उपंतिष्ठन्ते। यजंमानो वा एकंकपालः। यदेकंकपालस्यावद्येत्॥२३॥

यजंमानस्यावंद्येत्। उद्घा माद्येद्यजंमानः। प्र वां मीयेत। स्कृदेव होत्व्यः। स्कृदिव हि सुंवर्गो लोकः। हुत्वाऽभि जुंहोति। यजंमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमियत्वा। तेजंसा समर्धयति। यजंमानो वा एकंकपालः। सुवर्गो लोक आंहवनीयः॥२४॥

यदेकंकपालमाहवनीयें जुहोतिं। यजमानमेव सुंवर्गं लोकं गमयति।

यद्धस्तेन जुहुयात्। सुवृग्गिश्लोकाद्यजंमान्मवंविध्येत्। स्रुचा जुंहोति। सुवृग्गस्यं लोकस्य समण्ट्ये। यत्प्राङ्घ्यंत। देवलोकम्भिजंयेत्। यद्देक्षिणा पितृलोकम्। यत्प्रत्यक्॥२५॥

रक्षा १सि यज्ञ १ हंन्युः। यदुदड्डंः। मनुष्युलोकम्भिजंयेत्। प्रतिष्ठितो होत्व्यः। एकंकपालं वै प्रतितिष्ठंन्तं द्यावांपृथिवी अनु प्रतिं तिष्ठतः। द्यावांपृथिवी ऋतवंः। ऋतून् यज्ञः। यज्ञं यज्ञंमानः। यज्ञंमानं प्रजाः। तस्मात्प्रतिष्ठितो होतव्यः॥२६॥

वाजिनों यजित। अग्निर्वायुः सूर्यः। ते वै वाजिनः। तानेव तद्यंजित। अथो खल्वांहुः। छन्दार्शस् वै वाजिन इतिं। तान्येव तद्यंजित। ऋख्सामे वा इन्द्रंस्य हरीं सोम्पानौं। तयोः परिधयं आधानम्। वाजिनं भाग्धेयम्॥२७॥

यदप्रहत्य परिधीं जुंहुयात्। अन्तर्राधानाभ्यां घासं प्रयंच्छेत्। प्रहत्यं परिधीं जुंहोति। निर्राधानाभ्यामेव घासं प्रयंच्छति। बर्हिषिं विषिश्चन्वाजिनमा नंयति। प्रजा वै बर्हिः। रेतो वाजिनम्। प्रजास्वेव रेतों दधाति। समुपहूर्यं भक्षयन्ति। पुतथ्सोमपीथा ह्येते। अथो आत्मन्नेव रेतो दधते। यजंमान उत्तमो भंक्षयति। पुशवो वै वार्जिनम्। यजंमान पुव पुशून्प्रतिष्ठापयन्ति॥२८॥

लोको बंहरूपं भंवत्याज्यंभागो पृशव आज्यंमवृद्येदांहव्नीयंः प्रत्यक्तसम्मान्त्रतिष्ठितो होत्व्यां भाग्धेयंमेते चृत्वारि च॥———[३] प्रजापितिः सर्विता भूत्वा प्रजा असुजत। ता एन्मत्यंमन्यन्त। ता

प्रजापातः सावता भूत्वा प्रजा असृजता ता एन्मत्यमन्यन्त। ता अस्मादपाँक्रामन्। ता वर्रुणो भूत्वा प्रजा वर्रुणेनाग्राहयत्। ताः प्रजा वर्रुणगृहीताः। प्रजापंतिं पुन्रुपांधावन्नाथिम्च्छमानाः। स प्रतान्प्रजापंतिर्वरुण-प्रघासानपश्यत्। तां निर्वपत्। तैर्वे स प्रजा वरुणपाशादमुश्चत्। यद्वेरुणप्रघासा निरुप्यन्ते॥२९॥

प्रजानामवंरुणग्राहाय। तासां दक्षिणो बाहुर्न्यंक्र आसींत्। स्वयः प्रसृंतः। स एतां द्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुदंहन्। ततो वै स प्रजानां दक्षिणं बाहुं प्रासारयत्। यद्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुद्धन्ति। प्रजानांमेव तद्यजंमानो दक्षिणं बाहुं प्रसारयित। तस्मां चातुर्मास्ययाज्यंमुष्मिं ल्लोक उभयाबांहुः। यज्ञाभिं जितक् ह्यंस्य। पृथमात्राद्वेदी असंम्भिन्ने भवतः॥३०॥

तस्मौत्पृथमात्रं व्यश्सौं। उत्तरस्यां वेद्यांमृत्तरवेदिमुपं वपति। पृशवो वा उत्तरवेदिः। पृश्नवेवावं रुन्धे। अथो यज्ञप्रषोऽनंन्तरित्ये। एतद्भौह्मणान्येव पश्चं ह्वीश्षिं। अथैष ऐन्द्राग्नो भंवति। प्राणापानौ वा एतौ देवानाम्। यदिन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नी। भवंति॥३१॥

प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलं वा एतौ देवानांम्। यदिन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नी। भवंति। ओजो बलंमेवावं रुन्धे। मारुत्यांमिक्षां भवति। वारुण्यांमिक्षां। मेषी चं मेषश्चं भवतः। मिथुना एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति। लोमशौ भवतो मेध्यत्वायं॥३२॥

श्मीपूर्णान्युपं वपति। घासमेवाभ्यामपिं यच्छति। प्रजापंतिमुन्नाद्यं नोपांनमत्। स एतेनं श्तेध्मेन ह्विषाऽन्नाद्यमवांरुन्ध। यत्पंरः श्तानिं शमीपूर्णानि भवंन्ति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। सौम्यानि वै क्रीरांणि। सौम्या खलु वा आहुंतिर्दिवो वृष्टिं च्यावयति। यत्करीरांणि भवंन्ति। सौम्ययैवाहंत्या दिवो वृष्टिमवं रुन्थे। काय एकंकपालो भवति। प्रजानां कन्त्वायं। प्रतिपूरुषं कंरम्भपात्राणि भवन्ति। जाता एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्वति। एक्मितिरिक्तम्। जिन्छ्यमांणा एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्वति॥३३॥

उत्तरस्यां वेद्याम्न्यानि ह्वी १ षि सादयति। दक्षिणायां मारुतीम्। अपधुरमेवैनां

युनक्ति। अथो ओर्ज पुवासामवं हरित। तस्माद्धह्मणश्च क्षत्राच्च विशोऽन्यतो-ऽपक्रमिणीः। मारुत्या पूर्वया प्रचरित। अनृतमेवावं यज्ञते। वारुण्योत्तरया। अन्तत पुव वर्रुणमवं यज्ञते। यदेवाध्वर्यः क्रोतिं॥३४॥

तत्प्रंतिप्रस्थाता करोति। तस्माद्यच्छ्रेयाँन्करोतिं। तत्पापीयान्करोति। पत्नीं वाचयति। मेध्यांमेवेनां करोति। अथो तपं एवेनामुपं नयति। यञ्जार सन्तन्न प्रंब्रूयात्। प्रियं ज्ञाति रुंन्ध्यात्। असौ में जार इति निर्दिशेत्। निर्दिश्यैवेनं वरुणपाशेनं ग्राहयति॥३५॥

षष्ठमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

प्रघास्यान् हवामह् इति पत्नीमुदानयिति। अह्वंतैवैनाम्। यत्पत्नी प्रोनुवाक्यामनुब्रूयात्। निर्वीयो यजमानः स्यात्। यजमानोऽन्वांह। आत्मन्नेव वीर्यं धत्ते। उभौ याज्या सवीर्यत्वायं। यद्ग्रामे यदरंण्य इत्यांह। यथोदितमेव वर्रणमवं यजते। यजमानदेवत्यो वा आहवनीर्यः॥३६॥

भ्रातृव्यदेवत्यो दक्षिणः। यदांहवनीयं जुहुयात्। यजमानं वरुणपाशेनं ग्राहयेत्। दक्षिणेऽग्रौ जुंहोति। भ्रातृंव्यमेव वंरुणपाशेनं ग्राहयित। शूर्पेण जुहोति। अन्यमेव वरुणमवं यजते। शीर्षत्रेध निधायं जुहोति। शीर्षत एव वरुणमवं यजते। प्रत्यिङ्गिष्ठं जुहोति॥३७॥

प्रत्यङ्केष वंरुणपाशान्निर्मुच्यते। अऋन्कर्म कर्मकृत् इत्यांह। देवा-ऽनृणं निरवदायं। अनृणा गृहानुप प्रेतेति वावैतदांह। वरुणगृहीतं वा पृतद्यज्ञस्यं। यद्यजुंषा गृहीतस्यांतिरिच्यंते। तुषाश्च निष्कासश्चं। तुषैश्च निष्कासेनं चावभृथमवैति। वर्रुणगृहीतेनैव वर्रुणमवयजते। अपोऽवभृथमवैति॥३८॥

अपसु वै वर्रुणः। साक्षादेव वर्रुणमवयजते। प्रतियुतो वर्रुणस्य पाश् इत्याह। व्रुणपाशादेव निर्मुच्यते। अप्रतिक्षमा यन्ति। वर्रुणस्यान्तर्हित्यै। एधौंऽस्येधिषीमहीत्याह। समिधैवाग्निं नंमस्यन्तं उपायन्ति। तेजोंऽसि तेजो मिथे धेहीत्याह। तेजं पुवाऽऽत्मन्धंत्ते॥३९॥

कुरोतिं ग्राहयत्याहबुनीयुस्तिष्ठं जुहोत्युपोंऽवभृथमवैति धत्ते॥————[५]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममेयमनींकवती तुनूः। तां प्रीणीत। अथासुंरान्भि भंविष्यथेतिं। ते देवा अग्नयेऽनींकवते पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपन्। सौंऽग्निरनींकवान्थ्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चतुर्धाऽनींकान्यजनयत। ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः॥४०॥

यद्ग्रयेऽनींकवते पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निर्वपंति। अग्निमेवानींकवन्त्र स्वेनं भाग्धेयेन प्रीणाति। सौंऽग्निरनींकवान्थ्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चृतुर्धाऽनींकानि जनयते। असौ वा आंदित्यों ऽग्निरनीं कवान्। तस्यं रुश्मयोऽनीं कानि। साक र सूर्येणोद्यता निर्वपति। साक्षादेवास्मा अनीं कानि जनयति। तेऽसुंराः परांजिता यन्तः। द्यावांपृथिवी उपांश्रयन्॥४१॥

ते देवा मुरुद्धाः सान्तप्नेभ्यंश्चरं निरंवपन्। तान्द्यावांपृथिवीभ्यांमेवोभ्यतः समंतपन्। यन्मुरुद्धाः सान्तप्नेभ्यंश्चरं निर्वपंति। द्यावांपृथिवीभ्यांमेव तद्भ्यतो यजंमानो भ्रातृंव्यान्थ्यन्तंपति। मुध्यन्दिने निर्वपति। तर्िह् हि तेक्ष्णिष्टं तपंति। चुरुर्भवति। सुर्वतं पुवैनान्थ्यन्तंपति। ते देवाः श्वोविज्यिनः सन्तः। सर्वासां दुग्धे गृहमेधीयं चरुं निरंवपन्॥४२॥

आशिता एवाद्योपंवसाम। कस्य वाऽहेदम्। कस्यं वा श्वो भीवितेतिं। स शृतों-ऽभवत्। तस्याहुंतस्य नाश्जन्ं। न हि देवा अहुंतस्याश्जन्तिं। तेंऽब्रुवन्। कस्मां इम॰ होंष्याम् इतिं। मुरुद्धों गृहमेधिभ्य इत्यंब्रुवन्। तं मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों-ऽजुहवुः॥४३॥ ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यस्यैवं विदुषों मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों गृहे जुह्नंति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। यद्वै यज्ञस्यं पाकुत्रा ऋियतें। पृश्व्यं तत्। पाकुत्रा वा पुतित्क्रंयते। यन्नेध्माबुर्हिर्भवंति। न सांमिधेनीरुन्वाहं॥४४॥

न प्रयाजा इज्यन्तै। नानूयाजाः। य एवं वेदं। पृशुमान्भंवति। आज्यंभागौ यजति। यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरेति। मुरुतों गृहमेधिनों यजति। भागधेयेनैवैनान्थ्समंध्यति। अग्निइस्वंष्टकृतंं यजित प्रतिष्ठित्यै। इडाँन्तो भवति। पृशवो वा इडाँ। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति॥४५॥

यत्पत्नी गृहमेधीयंस्याश्जीयात्। गृहमेध्यंव स्यात्। वि त्वंस्य युज्ञ ऋध्येत। यत्राश्जीयात्। अगृहमेधी स्यात्। नास्यं युज्ञो व्यृंद्धोत। प्रतिवेशं पचेयुः।

यन्नाश्जीयात्। अगृहमेधी स्यात्। नास्य युज्ञी व्यृद्धोत। प्रतिवेश प तस्यांश्जीयात्। गृह्मेध्येव भवति। नास्यं युज्ञो व्यृद्धाते॥४६॥

ते देवा गृंहमे्धीयेंनेष्ट्वा। आशिता अभवन्। आञ्जताभ्यंञ्जत। अनुं

वृथ्सानंवासयन्। तेभ्योऽसुंराः क्षुधं प्राहिण्वन्। सा देवेषुं लोकमविंत्वा। असुंरान्युनंरगच्छत्। गृहमेधीयेनेष्ट्वा। आश्विता भवन्ति। आश्वेतेऽभ्यंश्वते॥४७॥

अनुं वृथ्सान् वांसयन्ति। भ्रातृंव्यायैव तद्यजंमानः क्षुधं प्रहिंणोति। ते देवा गृंहमेधीयेनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं न्यंदधुः। अस्मानेव श्व इन्द्रों निहिंतभाग उपावर्तितेतिं। तानिन्द्रों निहिंतभाग उपावर्तित। गृह्मेधीयेनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं निदंध्यात्। इन्द्रं एवैनं निहिंतभाग उपावर्तित। गार्हंपत्थे जुहोति॥४८॥

भागधेयेंनैवैन् समर्धयित। ऋषभमाह्वयित। वृषद्भार एवास्य सः। अथों इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजंमानो भ्रातृव्यंस्य वृङ्के। इन्द्रों वृत्र हत्वा। परौं परावर्तमगच्छत्। अपाराधमिति मन्यंमानः। सौंऽब्रवीत्। क इदं वेदिष्यतीतिं। तैंऽब्रुवन्मुरुतो वरं वृणामहै॥४९॥

अर्थ व्यं वेदाम। अस्मभ्यंमेव प्रंथम र ह्विर्निरुप्याता इति। त एंन्मध्यंक्रीडन्। तत्क्रीडिनां क्रीडित्वम्। यन्मुरुद्धाः क्रीडिभ्यः प्रथम र ह्विर्निरुप्यते विजित्यै।

ऋद्धते ऽभ्यं अते जुहोति वृणामहै भवत्यष्टौ चं॥

निरवंदयते॥५२॥

साक र सूर्येणोद्यता निर्वपति। एतस्मिन्वै लोक इन्द्रों वृत्रमंहुन्थ्समृंद्धौ। एतद्ग्राह्मणान्येव पश्चं हवी रिषे। एतद्ग्राह्मण ऐन्द्राग्नः। अथैष ऐन्द्रश्चरुर्भवति॥५०॥

उद्धारं वा एतिमन्द्र उदंहरत। वृत्र॰ हृत्वा। अन्यासुं देवतास्विधे। यदेष ऐन्द्रश्चरुभवंति। उद्धारमेव तं यजंमान् उद्धरते। अन्यासुं प्रजास्विधे। वैश्वकुर्मण एकंकपालो भवति। विश्वान्येव तेन् कर्माण् यजंमानोऽवं रुन्धे॥५१॥

वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता वंरुणप्रघासैर्वरुणपाशादंमुश्चत्। साकुमेधेः प्रत्यंस्थापयत्। त्र्यंम्बके रुद्रं निरवादयत। पितृयज्ञेनं सुवुर्गं लोकमंगमयत्। यद्वैश्वदेवेन यजंते। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। ता

वंरुणप्रघासैवंरुणपाशान्म्ं अति। साकमेधेः प्रतिष्ठापयति। त्र्यंम्बकै

-पितृयुज्ञेनं सुवुर्गं लोकं गंमयति। दुक्षिणतः प्रांचीनावीती निर्वपति।

अर्धो हि पिंतृणाम्। एकयोपंमन्थति॥५५॥

मासांनेव प्रींणाति। यस्मिन्वा ऋतौ पुरुंषः प्रमीयंते। सौंऽस्यामुष्मिं ह्लोके भंवति। बहुरूपा धाना भंवन्ति। अहोरात्राणांमभिजित्यै। पितृभ्यौंऽग्निष्वात्तेभ्यों मन्थम्। अर्धमासा वै पितरौंऽग्निष्वात्ताः॥५४॥ अर्धमासानेव प्रींणाति। अभिवान्यांयै दुग्धे भंवति। सा हि पितृदेवत्यं दुहे।

यत्पूर्णम्। तन्मंनुष्यांणाम्। उपूर्यर्थो देवानांम्। अर्थः पितृणाम्। अर्थ उपमन्थति।

ति पितृन्गच्छति। इमान्दिशं वेदिमुद्धन्ति। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तैं।

एका हि पिंतृणाम्। दक्षिणोपंमन्थति। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। अनार्भ्योपंमन्थति।

दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। अनांदत्य तत्। उत्तर्त एवोपवीय निर्वपेत्। उभये हि

देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। अथो यदेव दंक्षिणार्धेऽधि श्रयंति। तेनं दक्षिणावृंत्। सोमाय

संवथ्सरमेव प्रीणाति। पितृभ्यो बर्हिषद्धो धानाः। मासा वै पितरो बर्हिषदः।

पितृमते पुरोडाश १ षद्कंपालं निर्वपति। संवथ्सरो वै सोमः पितृमान्॥५३॥

चतुंः स्रक्तिर्भवति। सर्वा ह्यनु दिशंः पितरंः। अखांता भवति॥५६॥

खाता हि देवानांम्। मृध्यतों'ऽग्निराधीयते। अन्ततो हि देवानांमाधीयतें। वर्षीयानिध्म इध्माद्भवित व्यावृत्त्यै। परिश्रयति। अन्तर्हितो हि पितृलोको मनुष्यलोकात्। यत्पर्रषि दिनम्। तद्देवानांम्। यदंन्तरा। तन्मनुष्यांणाम्॥५७॥

यथ्समूलम्। तत्पंतृणाम्। समूलं ब्र्हिभंवति व्यावृत्त्यै। दक्षिणा स्तृंणाति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। त्रिः पर्येति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रींणाति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रींणाति। यत्प्रंस्त्रं यज्ञंषा गृह्णीयात्। प्रमायुंको यजंमानः स्यात्। यन्न गृह्णीयात्। अनायतनः स्यात्। तूष्णीमेव न्यंस्येत्। न प्रमायुंको भवंति। नानायतनः। यत्रीन्यंरिधीन्यंरिद्ध्यात्॥५९॥

मृत्युना यजंमानं परिगृह्णीयात्। यन्न पंरिद्ध्यात्। रक्षारंसि युज्ञर हंन्युः। द्वौ पंरिधी परिद्धाति। रक्षंसामपंहत्यै। अथों मृत्योरेव यजंमान्मुथ्सृंजति। यत्रीणि त्रीणि ह्वी इष्युंदाहरेयुः। त्रयंस्रय एषा साकं प्रमीयेरन्। एकैंकमनूचीनाँन्युदाहरन्ति। एकैंक एवैषांमन्वश्चः प्रमीयते। कृशिपुं कशिप्व्यांय। उपबर्हणम्पबर्हण्यांय। आञ्जनमाञ्चन्यांय। अभ्यञ्जनमभ्यञ्चन्यांय। यथाभागमे-वैनाँन्प्रीणाति॥६०॥

अग्नयं देवेभ्यः पितृभ्यः समिध्यमानायानुं ब्रूहीत्यांह। उभये हि देवाश्चं पित्रश्चेज्यन्ते। एकामन्वांह। एका हि पितृणाम्। त्रिरन्वांह। त्रिर्हि देवानांम्। आघारावाघारयति। यज्ञप्रषोरनन्तरित्ये। नार्षेयं वृणीते। न होतारम्॥६१॥ यदार्षेयं वृणीते। यज्ञपरुषोरनन्तरित्ये। प्रमायुंको यज्ञमानः स्यात्। प्रमायुंको होतां। तस्मान्न वृणीते। यज्ञमानस्य होतुंगीपीथायं। अपं बर्हिषः प्रयाजान् यंजिति।

युज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। प्राचीनावीती सोमं यजति। पितृदेवत्यां हि।

प्रजा वै ब्रहिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मृंजित। आज्यंभागौ यजित॥६२॥

एषाऽऽहुंतिः। पश्चकृत्वोऽवं द्यति। पश्च ह्यंता देवताः। द्वे पुरोऽनुवाक्यें। याज्यां देवतां वषद्कारः। ता एव प्रींणाति। सन्तंतमवं द्यति॥६३॥

ऋतूना सन्तंत्यै। प्रैवैभ्यः पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽऽह। प्रणंयति द्वितीयंया।

गुमर्यति याुज्यया। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। अह्नं एवैनान्पूर्वया पुरो-उनुवाक्यंयाऽत्यानंयति। रात्रिंयै द्वितीयंया। ऐवैनान् याज्यंया गमयति। दक्षिणतीं-ऽवदायं। उदङ्कातें क्रामित व्यावृंत्त्यै॥६४॥ आ स्वधेत्याश्रांवयति। अस्तुं स्वधेतिं प्रत्याश्रांवयति। स्वधा नम् इति

वर्षद्वरोति। स्वधाकारो हि पितृणाम्। सोममग्रे यजति। सोमप्रयाजा हि पितरंः। सोमं पितृमन्तं यजित। संवथ्सरो वै सोमंः पितृमान्। संवथ्सरमेव तद्यंजित। पितृन्बंहिषदों यजति॥६५॥

ये वै यज्वांनः। ते पितरों बर्हिषदंः। तानेव तद्यंजित। पितृनंग्निष्वात्तान् यंजिति। ये वा अयंज्वानो गृहमेधिनंः। ते पितरौंऽग्निष्वात्ताः। तानेव तद्यंजिति।

अग्निं केव्यवाहंनं यजित। य एव पितृणामग्निः। तमेव तद्यंजिति॥६६॥

हीज्यन्तैं। अत्रे पितरो यथाभागं मन्दध्वमित्यांह। ह्लाका हि पितरंः। उदंश्चो निष्क्रांमन्ति। एषा वै मंनुष्यांणां दिक्। स्वामेव तिद्दश्मनु निष्क्रांमन्ति॥६७॥ आहुवनीयमुपंतिष्ठन्ते। न्येवास्मै तद्भवते। यथ्मत्यांहवनीयें। अथान्यत्र चरन्ति। आतमितोरुपंतिष्ठन्ते। अग्निमेवोपंद्रष्टारं कृत्वा। पितृन्तिरवंदयन्ते। अन्तं वा एते प्राणानां गच्छन्ति। य आतमितोरुपं तिष्ठन्ते। सुसन्दशं त्वा व्यमित्यांह॥६८॥

अथो यथाऽग्निः स्विष्टकृतं यजीति। ताहगेव तत्। पुतत्ते तत् ये च त्वामन्विति

तिसृषुं स्रक्तीषु निदंधाति। तस्मादा तृतीयात्पुरुंषान्नाम न गृह्णन्ति। एतावंन्तो

प्राणो वै सुंस्नन्दक्। प्राणमेवाऽऽत्मन्दंधते। योजा न्विंन्द्र ते हरी इत्यांह। प्राणमेव पुनंरयुक्त। अक्षुन्नमीमदन्त हीति गार्हंपत्यमुपतिष्ठन्ते। अक्षुन्नमीमदन्ताथ त्वोपतिष्ठामह् इति वावैतदांह। अमीमदन्त पितरंः सोम्या इत्यभि प्रपंद्यन्ते। अमीमदन्त पितरोऽथं त्वाऽभि प्रपंद्यामह् इति वावैतदांह। अपः परिषिश्चति।

षष्ठमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

अथो तुर्पयंत्येव। तृष्यंति प्रजयां पृश्भिः। य एवं वेदं। अपं बर्हिषावनूयाजो यंजित। प्रजा वे बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मृंजिति। चतुरंः प्रयाजान् यंजित। द्वावंनूयाजो। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। न पत्यन्वांस्ते। न संयोजयन्ति। यत्पत्यन्वासीत। यथ्संयाजयेयुः। प्रमायंका स्यात्। तस्मान्नान्वांस्ते। न संयोजयन्ति। पित्वेयै गोपीथायं॥७०॥

होतांरुमाज्यंभागो यजति सन्तंतुमवंद्यति व्यावृंत्ये बर्हिषदों यजति तम्व तद्यंज्ञत्यमु निष्कांमन्त्याहेनानृतवो नवं च॥==========[९]

प्रतिपूरुषमेकंकपालां निर्वपति। जाता एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एक्मितिरिक्तम्। जुनिष्यमाणा एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकंकपाला भवन्ति। एक्धैव रुद्रं निरवंदयते। नाभिघांरयति। यदंभिघारयैत्। अन्तर्वचारिणर्थं रुद्रं कुर्यात्। एकोल्मुकेनं यन्ति॥७१॥

तिद्ध रुद्रस्यं भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव

आमेवैतामा शाँस्ते॥७४॥

दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्रो वा अंपृशुकांया आहुंत्यै नातिष्ठत। असौ तें पृशुरिति निर्दिशेद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तमंस्मै पृशुं निर्दिशति। यदि न द्विष्यात्। आखुस्तें पशुरितिं ब्रूयात्॥७२॥

न ग्राम्यान्पशून् हिनस्ति। नार्ण्यान्। चृतुष्पथे जुंहोति। एष वा अंग्रीनां

पड्वींशो नामं। अग्निवत्येव जुंहोति। मध्यमेन पूर्णेनं जुहोति। सुग्ध्येषा। अथो खलुं। अन्तमेनैव होत्व्यम्। अन्तत एव रुद्रं निरवंदयते॥७३॥
एष ते रुद्र भागः सह स्वस्नाऽम्बिक्येत्यांह। शरद्वा अस्याम्बिका स्वसां। तया वा एष हिनस्ति। यश हिनस्ति। तयैवैन र सह शंमयति। भेषजङ्गव इत्यांह।

यावन्त एव ग्राम्याः पशर्वः। तेभ्यों भेषजं करोति। अवाम्ब रुद्रमंदिमहीत्यांह।

त्र्यम्बकं यजामह् इत्याह। मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतादिति वावैतदाह। उत्किरन्ति। भगस्य लीफ्सन्ते। मूतेंकृत्वाऽऽसंजन्ति। यथा जनं यतेऽवसं क्रोतिं। ताद्दगेव तत्। एष ते रुद्र भाग इत्यांह निरवंत्त्यै। अप्रंतीक्षमा यंन्ति। अपः परिषिश्चति। रुद्रस्यान्तर्हित्यै। प्र वा एतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये त्र्यंम्बकैश्चरंन्ति। आदित्यं च्रुं पुन्रेत्य निर्वपति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति॥७५॥

युन्ति ब्रूयान्त्रिरवंदयते शास्ते सिश्चति पद्गं॥————[१०]

अर्नुमत्यै वैश्वदेवेन् ताः सृष्टाश्चिवृत्युजापंतिः सिव्तोत्तंरस्यान्देवासुराः सौंऽग्निर्यत्पत्नीं वैश्वदेवेन् ता वंरुणप्रघासैरुन्नयें देवेभ्यः प्रतिपूरुषं दर्श॥१०॥ अर्नुमत्यै प्रथमुजो वृथ्सो बंहुरूपा हि पुशवुस्तस्मौत्पृथमात्रं यदुन्नयेऽनीकवत उद्धारं वा अन्नयें देवेभ्यः प्रतिपूरुषं पश्चंसप्ततिः॥७५॥

अनुंमत्यै प्रतिं तिष्ठन्ति॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

पुतद्वाँह्मणान्येव पश्चं ह्वी १ षिं। अथेन्द्रांय शुनासीरांय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवथ्सरो वा इन्द्राशुनासीरंः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्थे। वाय्वयं पयो भवति। वायुर्वे वृष्ट्यै प्रदापयिता। स पुवास्मै वृष्टिं प्रदापयित। सौर्यं एकंकपालो भवति। सूर्येण वा अमुष्मिं ह्योके वृष्टिंधृता। स पुवास्मै वृष्टिं निर्यच्छिति॥१॥

द्वादशगव सीरं दक्षिणा समृद्धे। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अग्निमंब्रुवन्। त्वयां वीरेणासुरान्भिमंवामेतिं। सौंऽब्रवीत्। त्रेधाऽहमात्मानं विकंरिष्य इतिं। स त्रेधाऽऽत्मानं व्यंकुरुत। अग्निं तृतीयम्। रुद्रं तृतीयम्। वर्रणं तृतीयम्॥२॥

सौं ऽब्रवीत्। क इदं तुरीयमितिं। अहमितीन्द्रों ऽब्रवीत्। सन्तु सृंजावहा इतिं। तौ

समंसृजेताम्। स इन्द्रंस्तुरीयंमभवत्। यदिन्द्रंस्तुरीयमभवत्। तदिन्द्रतुरीयस्थैन्द्र-तुरीयत्वम्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदिन्द्रतुरीयं निरुप्यते विजित्यै॥३॥

वृहिनीं धेनुर्दक्षिणा। यद्घहिनीं। तेनांऽऽग्रेयी। यद्गैः। तेनं रौद्री। यद्धेनुः। तेनैन्द्री। यथ्म्री सती दान्ता। तेनं वारुणी समृद्धै। प्रजापंतिर्यज्ञमंसृजत॥४॥

तर सृष्टर रक्षा इंस्यजिघारसन्। स पृताः प्रजापंतिरात्मनों देवता निरंमिमीत। ताभिवैं स दिग्भ्यो रक्षा इसि प्राणुंदत। यत्पंश्चावृत्तीयं जुहोतिं। दिग्भ्य पृव तद्यजमानो रक्षा इसि प्रणुंदते। समूंढर रक्षः सन्दंग्धर रक्ष इत्याह। रक्षा इस्येव सन्दंहित। अग्नयं रक्षोघ्ने स्वाहेत्याह। देवतांभ्य पृव विजिग्यानाभ्यों भाग्धेयं करोति। प्रष्टिवाही रथो दक्षिणा समृंद्धै॥५॥

इन्द्रों वृत्र १ ह्त्वा। असुंरान्पराभाव्यं। नर्मुचिमासुरं नार्लभत। तर शृच्यां-ऽगृह्णात्। तौ समेलभेताम्। सौंऽस्माद्भिशुंनतरोऽभवत्। सौंऽब्रवीत्। सुन्धार सन्दंधावहै। अथु त्वाऽवं स्रक्ष्यामि। न मा शुष्केणु नार्द्रेणं हनः॥६॥ न दिवा न नक्तमितिं। स एतम्पां फेनंमसिश्चत्। न वा एष शुष्को नार्झो व्युंष्टाऽऽसीत्। अनुंदितः सूर्यः। न वा एतिद्दवा न नक्तम्। तस्यैतिस्मिं ह्योके। अपां फेनेन शिर उदंवर्तयत्। तदंनमन्वंवर्तत। मित्रंद्रुगितिं॥७॥

स पृतानंपामार्गानंजनयत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स रक्षा्र्स्यपाहत। यदंपामार्गहोमो भवंति। रक्षंसामपंहत्यै। पृकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध रक्षंसां भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। पृषा वै रक्षंसां दिक्। स्वायांमेव दिशि रक्षारंसि हन्ति॥८॥

स्वकृत इरिणे जुहोति प्रदेर वाँ। एतद्वै रक्षंसामायतनम्। स्व एवायतंने रक्षा श्रीसे हिन्ता। पूर्णमयेन स्रुवेणं जुहोति। ब्रह्म वै पूर्णः। ब्रह्मणैव रक्षाश्रीसे हिन्ता। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंसव इत्याह। सिवतुं प्रंसूत एव रक्षाश्रीसे हिन्ता। हृतश्र रक्षोऽविधिष्म रक्ष इत्याह। रक्षंसाङ् स्तृत्यैं। यद्वस्ते तद्दक्षिणा निरवित्ये। अप्रतिक्षमायंन्ति। रक्षंसाम्न्तर्हित्ये॥१॥

धात्रे पुरोडाशं द्वादेशकपालं निर्वपति। संवथ्सरो वै धाता। संवथ्सरेणैवास्मै प्रजाः प्रजनयति। अन्वेवास्मा अनुमतिर्मन्यते। राते राका। प्र सिनीवाली

यच्छति वर्रुणं तृतीयं विजित्या असुजत समृद्धौ हुनो मित्रंद्रुगितिं हुन्ति स्तृत्यै त्रीणिं च॥

जनयित। प्रजास्वेव प्रजांतासु कुह्वां वाचंं दधाित। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धौ। आग्नावैष्णवमेकांदशकपालं निर्वपित। ऐन्द्रावैष्णवमेकांदशकपालम्॥१०॥ वैष्णवं त्रिकपालम्। वीर्यं वा अग्निः। वीर्यंमिन्द्रः। वीर्यं विष्णुः। प्रजा एव

वृष्ण्व त्रिकपालम्। वाय वा आग्नः। वायामन्द्रः। वाय विष्णुः। प्रजा एव प्रजाता वीर्ये प्रतिष्ठापयति। तस्मौत्प्रजा वीर्यावतीः। वामन ऋष्भो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनौऽऽग्नेयः। यदंषभः॥११॥

तेनैन्द्रः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृद्धे। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति। इन्द्रासोमीयमेकांदशकपालम्। सौम्यं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। अग्निः प्रजानां प्रजनियता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापियता। सोमं एवास्मै रेतो दर्धाति॥१२॥

अग्निः प्रजां प्रजनयति। वृद्धामिन्द्रः प्रयंच्छति। बुभुर्दक्षिणा समृद्धै। सोमापौष्णं

चुरुं निर्वपति। ऐन्द्रापौष्णं चुरुम्। सोमो वै रेतोधाः। पूषा पंशूनां प्रजनियता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं एवास्मै रेतो दर्धाति। पूषा पृशून्प्रजनयति॥१३॥

वृद्धानिन्द्रः प्रयंच्छति। पौष्णश्चरुभंवति। इयं वै पूषा। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति।

श्यामो दक्षिणा समृद्धी। बहु वै पुरुषो मेध्यमुपंगच्छति। वैश्वानुरं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवथ्सरो वा अग्निर्वेश्वानुरः। संवथ्सरेणैवैन हं स्वदयति। हिरंण्यं दक्षिणा॥१४॥

प्वित्रं वै हिरंण्यम्। पुनात्येवैनम्ं। बहु वै राजन्योऽनृतं करोति। उपं जाम्ये हरते। जिनातिं ब्राह्मणम्। वदत्यनृतम्। अनृते खलु वै क्रियमांणे वरुणो गृह्णाति।

हि देवत्याऽश्वः समृद्धौ॥१५॥

ऐन्द्रावेष्ण्वमेकांदशकपालं यहंष्मो दर्थाति पूषा पृश्नुजनयित हिरंण्यं दक्षिणा दक्षिणेकं च॥———[२]

वारुणं यंवमयं चरुं निर्वपति। वरुणपाशादेवैनं मुश्चति। अश्वो दक्षिणा। वारुणो

रुबिनांमेतानि हुवी १षि भवन्ति। एते वै राष्ट्रस्यं प्रदातारंः। एतंऽपादातारंः। य

एव राष्ट्रस्यं प्रदातारंः। येऽपादातारंः। त एवास्मै राष्ट्रं प्रयंच्छन्ति। राष्ट्रमेव भंवति। यथ्समाहृत्यं निर्वपेता अरंबिनः स्युः। यथायथं निर्वपति रिवत्वायं॥१६॥

यथ्सद्यो निर्वपेत्। यावंतीमेकेन ह्विषाऽऽशिषंमव रुन्थे। तावंतीमवंरुन्थीत। अन्वहित्रवंपित। भूयंसीमेवाशिष्मवं रुन्थे। भूयंसी यज्ञऋतूनुपैति। बार्हस्पृत्यं च्रं निर्वपित ब्रह्मणों गृहे। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंन्नेव क्षत्रमन्वारंम्भयति। शितिपृष्ठो दक्षिणा समृद्धौ॥१७॥

पुन्द्रमेकांदशकपाल १ राजन्यंस्य गृहे। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। ऋषभो दक्षिणा समृद्धे। आदित्यं चुरुं महिष्ये गृहे। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेनुर्दक्षिणा समृद्धे। भगाय चुरुं वावाताये गृहे। भगमेवास्मिन्दधाति। विचित्तगर्भा पष्ठौही दक्षिणा समृद्धे॥१८॥

नैर्ऋतं चरुं परिवृत्त्यै गृहे कृष्णानां व्रीहीणां नखिर्निभिन्नम्। पाप्मानमेव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णा कूटा दक्षिणा समृद्धे। आग्नेयमृष्टाकंपाल॰ सेनान्यों गृहे। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धौ। वारुणं दर्शकपाल र सूतस्यं गृहे। वरुणसवमेवावं रुन्धे। महानिंरष्टो दक्षिणा समृद्धौ। मारुत र सप्तर्कपालं ग्रामण्यो गृहे॥१९॥

अत्रं वै मुरुतः। अत्रंमेवावं रुन्धे। पृश्चिर्दक्षिणा समृद्धे। सावित्रं द्वादंशकपालं क्षुत्तुर्गृहे प्रसूत्ये। उपध्वस्तो दक्षिणा समृद्धे। आश्विनं द्विकपालः संङ्ग्रहीतुर्गृहे। अश्विनौ वै देवानां भिषजौ। ताभ्यांमेवास्में भेषजं करोति। स्वात्यौ दक्षिणा समृद्धे। पौष्णं चरुं भागद्घस्यं गृहे॥२०॥

अत्रं वै पूषा। अत्रमेवावं रुन्धे। श्यामो दक्षिणा समृद्धे। रौद्रं गांवीधुकं चरुमक्षावापस्यं गृहे। अन्तत एव रुद्रं निरवंदयते। श्वल उद्वारो दक्षिणा समृद्धे। द्वादंशैतानि ह्वी १ षि भवन्ति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मै राष्ट्रमवं रुन्धे। राष्ट्रमेव भवति॥२१॥

यन्न प्रति निर्वपेंत्। रुत्निनं आशिषोऽवंरुन्धीरन्। प्रतिनिर्वपति। इन्द्रांय सुत्राम्णं

पुरोडाश्मेकांदशकपालम्। इन्द्रांया॰होमुचैं। आशिषं एवावं रुन्थे। अयं नो राजां वृत्रहा राजां भूत्वा वृत्रं वंध्यादित्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। मैत्राबार्हस्पृत्यं भविति। श्वेतायैं श्वेतवंथ्सायै दुग्धे॥२२॥

बार्ह्स्पत्ये मैत्रमपिं दधाति। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं स्मीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयित। बार्ह्स्पत्येन पूर्वेण प्रचरित। मुखत एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रमन्वारंम्भयित। स्वयं कृता वेदिर्भवित। स्वयं दिनं बर्हिः। स्वयं कृत इध्मः। अनंभिजितस्याभिजित्ये। तस्माद्राज्ञामरंण्यम्भिजितम्। सैव श्वेता श्वेतवंथ्सा दक्षिंणा समृंद्धौ॥२३॥

सप्तमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

वर्रणो धर्मपतीनाम्। एतदेव सर्वं भवति। सृविता त्वा प्रस्वाना स्र स्वतामिति हस्तं गृह्णाति प्रसूँत्यै। ये देवा देवः सुवः स्थेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। मृहते क्षत्रायं महत आधिपत्याय महते जानेराज्यायेत्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना राजेत्यांह। तस्माथ्सोमंराजानो ब्राह्मणाः। प्रति त्यन्नामं राज्यमंधायीत्यांह॥२५॥

राज्यमेवास्मिन्प्रतिंदधाति। स्वां तनुवं वर्रुणो अशिश्वेदित्यांह। वरुणस्वमेवावं रुन्थे। शुचैर्मित्रस्य व्रत्यां अभूमेत्यांह। शुचिमेवेनं व्रत्यं करोति। अमन्मिह महुत ऋतस्य नामेत्यांह। मनुत एवैनम्। सर्वे व्राता वर्रुणस्याभूविन्नित्यांह। सर्वव्रातमेवेनं करोति। वि मित्र एवैररांतिमतारीदित्यांह॥२६॥

अरांतिमैवैनं तारयति। असूंषुदन्त युज्ञियां ऋतेनेत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। व्युं त्रितो जंरिमाणं न आनुडित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। द्वाभ्यां विमृष्टे।

ऽस्यूर्मिरित्यांह॥२८॥

चं ह्विषांमुग्रयें स्विष्ट्कृतें समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परिंगृह्णाति।

विष्णुक्रमान्क्रमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ ह्योकान्भि जंयति॥२७॥

म्त्यानांमध्यंभत्यांहातागुंदित्यांह कमत् एकं चा-----[४]
अर्थेतः स्थेतिं जुहोति। आहुंत्यैवैनां निष्क्रीयं गृह्णाति। अथों हविष्कृंतानामेवाभिर्घृत

गृह्णाति। वहंन्तीनां गृह्णाति। एता वा अपा र राष्ट्रम्। राष्ट्रमेवास्में गृह्णाति। अथो श्रियंमेवेनंम्भिवंहन्ति। अपां पतिंर्सीत्यांह। मिथुनमेवाकंः। वृषां-

र्कुर्मिमन्तमेवैनं करोति। वृष्सेनोऽसीत्यांह। सेनामेवास्य सङ्श्यंति। ब्रुजुक्षितः

स्थेत्याह। एता वा अपां विशंः। विशंमेवास्मै पर्यूहित। मुरुतामोजः स्थेत्याह। अत्रुं वै मुरुतः। अत्रुंमेवावं रुन्धे। सूर्यवर्चसः स्थेत्याह॥२९॥

राष्ट्रमेव वेर्चस्व्यंकः। सूर्यंत्वचसः स्थेत्यांह। सृत्यं वा एतत्। यद्वर्षंति। अर्नृतं

यदातपंति वर्षंति। सृत्यानृते एवावं रुन्धे। नैन र् सत्यानृते उंदिते हि र्रंस्तः। य एवं वेदं। मान्दाः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव ब्रह्मवर्चस्यंकः॥३०॥

वाशाः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। शक्वंरीः स्थेत्यांह। पृशवो वै शक्वंरीः। पृश्नवेवावं रुन्धे। विश्वभृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव पयस्व्यंकः। जन्भृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेवन्द्रियाव्यंकः। अग्नेस्तेजस्याः स्थेत्यांह॥३१॥

राष्ट्रमेव तें ज्रस्व्यंकः। अपामोर्षधीना् रसः स्थेत्याह। राष्ट्रमेव मध्व्यंमकः। सार्स्वतं ग्रहं गृह्णाति। एषा वा अपां पृष्ठम्। यथ्सरंस्वती। पृष्ठमेवैन र समानानां करोति। षोड्शिमंगृह्णाति। षोडंशकलो व पुरुषः। यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। षोड्शिमंर्जुहोति षोड्शिमंगृह्णाति। द्वात्रिर्श्शथ्सम्पद्यन्ते। द्वात्रिर्श्शदक्षरा- ऽनुष्टुक्। वार्गनुष्टुप्सर्वाणि छन्दा रसि। वाचैवैन र सर्विभिश्छन्दोभिर्भिषिश्चति॥३२॥ क्रामिरवाह स्वंववेषः स्थवाह ब्रह्मवृत्याः स्थवाह प्रकृषः पर वी

देवीरापः सं मधुंमतीर्मधुंमतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। ब्रह्मणैवैनाः स॰सृंजति।

अनांधृष्टाः सीद्तेत्यांह। ब्रह्मंणैवैनाः सादयित। अन्तरा होतुंश्च धिष्णियं ब्राह्मणाच्छु १ सिनंश्च सादयित। आग्नेयो वै होता। ऐन्द्रो ब्राह्मणाच्छु १ सी। तेजंसा चैवेन्द्रियेणं चोभ्यतो राष्ट्रं परिगृह्णाति। हिरंण्येनोत्पुंनाति। आहुंत्यै हि प्वित्रांभ्यामृत्पुनन्ति व्यावृंत्त्यै॥३३॥

श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। अनिभृष्टम्सीत्यांह। अनिभृष्ट्ड् ह्यंतत्। वाचो बन्धुरित्यांह। वाचो ह्यंष बन्धुः। तुपोजा इत्यांह। तुपोजा ह्यंतत्। सोमंस्य दात्रमुसीत्यांह॥३४॥

सोमंस्य ह्यंतद्दात्रम्। शुक्रा वंः शुक्रेणोत्पुंनामीत्यांह। शुक्रा ह्यापंः। शुक्रश् हिरंण्यम्। चन्द्राश्चन्द्रेणेत्यांह। चन्द्रा ह्यापंः। चन्द्रश् हिरंण्यम्। अमृतां अमृत्नेत्यांह। अमृता ह्यापंः। अमृत्र् हिरंण्यम्॥३५॥

स्वाहां राज्यसूयायेत्यांह। राज्यसूयांय ह्यंना उत्पुनाति। सुधुमादौँ द्युम्निनीरूर्ज एता इति वारुण्यर्चा गृह्णाति। वुरुणसुवमेवावं रुन्धे। एकया गृह्णाति। एकुधैव

इति यदाहं॥३८॥

यजंमाने वीर्यं दधाति। क्षूत्रस्योल्बंमिस क्षूत्रस्य योनिर्सीतिं ताप्यं चोष्णीषं च प्रयंच्छति सयोनित्वायं। एकंशतेन दर्भपुञ्जीलैः पंवयति। शृतायुर्वे पुरुषः शृतवीर्यः। आत्मैकंशतः॥३६॥

यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। दध्यांशयति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे।

उदुम्बरंमाशयति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। शष्पांण्याशयति। सुरांबिलमेवेनंं करोति। आविदं एता भविन्ति। आविदंमेवेनंं गमयिन्ति॥३७॥ अग्निरेवेनं गार्हंपत्येनावित। इन्द्रं इन्द्रियेणं। पूषा पृश्भिः। मिन्नावरुणो प्राणापानाभ्यांम्। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। स दिवंमिलखत्। सौंऽर्यम्णः पन्थां अभवत्। स आविंन्ने द्यावांपृथिवी धृतन्नते इति द्यावांपृथिवी उपांधावत्।

आभ्यामेव प्रसूतो यर्जमानो वज्रं भ्रातृंव्याय प्रहंरति। आविंन्ना

स आभ्यामेव प्रसूत इन्द्रों वृत्राय वज्रं प्राहरत्। आविन्ने द्यावापृथिवी धृतव्रते

देव्यदितिर्विश्वरूपीत्याह। इयं वै देव्यदितिर्विश्वरूपी। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। आविन्नोऽयम्सावांमुष्यायणौऽस्यां विश्यंस्मिन्नाष्ट्र इत्यांह। विशेवैन १ राष्ट्रेण समर्धयति। महते क्षुत्रायं महत आधिपत्याय महते जानंराज्यायेत्यांह। आमेवैतामा शौस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना राजेत्यांह। तस्माथ्सोमंराजानो ब्राह्मणाः॥३९॥

इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रंष्ट्र इति धनुः प्रयंच्छिति विजित्यै। शृत्रुवाधंनाः स्थेतीषून्ं। शृत्रूवेवास्यं वाधन्ते। पात मां प्रत्यश्चं पात मां तिर्यश्चंमृन्वश्चं मा पातेत्यांह। तिस्रो व शंरूव्याः। प्रतीचीं तिरश्च्यनूचीं। ताभ्यं पृवैनंं पान्ति। दिग्भ्यो मां पातेत्यांह। दिग्भ्य पृवैनंं पान्ति। विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पातेत्यांह। अपंरिमितादेवेनं पान्ति। हिरंण्यवर्णावुषसां विरोक इतिं त्रिष्टुभां बाहू उद्गृह्णाति। इन्द्रियं व वीर्यं त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव वीर्यमुपरिष्टादात्मन्धंत्ते॥४०॥

दिशों व्यास्थांपयति। दिशाम्भिजिंत्त्यै। यदंनु प्रक्रामेंत्। अभि दिशों जयेत्। उत्तु माँद्येत्। मनुसाऽनु प्रक्रांमति। अभि दिशों जयति। नोन्माँद्यति। सुमिधमा तिष्ठेत्यांह। तेजं एवावं रुन्धे॥४१॥

उग्रामा तिष्ठेत्यांह। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। विराजमातिष्ठेत्यांह। अन्नाद्यमेवावं रुन्धे। उदींचीमा तिष्ठेत्यांह। पृश्नेवावं रुन्धे। ऊर्ध्वामातिष्ठेत्यांह। सुवर्गमेव लोकम्भिजंयति। अनून्निंहीते। सुवर्गस्यं लोकस्य समण्टिये॥४२॥

मारुत एष भेवति। अत्रं वै मुरुतः। अत्रंमेवावं रुन्धे। एकंविश्शतिकपालो भवित् प्रतिष्ठित्यै। योऽरण्येऽनुवाक्यो गुणः। तं मध्यत उपद्धाति। ग्राम्येरेव पृश्वभिरारण्यान्पृश्न्परि गृह्णाति। तस्माद्भाम्यैः पृश्वभिरारण्याः पृशवः परिगृहीताः। पृथिवैन्यः। अभ्यंषिच्यत॥४३॥

स राष्ट्रं नाभवत्। स एतानि पार्थान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स राष्ट्रमंभवत्। यत्पार्थानि जुहोतिं। राष्ट्रमेव भवति। बार्ह्स्पृत्यं पूर्वेषामुत्तमं भवति। ऐन्द्रमुत्तरेषां प्रथमम्। ब्रह्मं चैवास्मैं क्ष्त्रं चं स्मीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रति-ष्ठापयति॥४४॥

षद्वरस्तांदिभिषेकस्यं ज्ञहोति। षडुपिरेष्टात्। द्वादंश् सम्पंद्यन्ते। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरः खलु वै देवानां पूः। देवानांमेव पुरं मध्यतो व्यवंसपिति। तस्य न कुतंश्चनोपांव्याधो भवति। भूतानामवेष्टीर्जुहोति। अत्रात्र वै मृत्युर्जायते। यत्रंयत्रैव मृत्युर्जायते। ततं पृवैनमवयजते। तस्माद्राज्सूयेनेजानो नाभिचंरित्वै। प्रत्यर्गनमभिचारः स्तृंणुते॥४५॥

सोमस्य त्विषिरसि तवेव मे त्विषिभूयादिति शार्दूलचुर्मोपंस्तृणाति। यैव सोमे त्विषिः। या शाँदूले। तामेवावं रुन्धे। मृत्योवां एष वर्णः। यच्छाँदूलः। अमृत्र् हिरंण्यम्। अमृतंमसि मृत्योमां पाहीति हिरंण्यमुपाँस्यति। अमृतंमेव मृत्योर्न्तर्धत्ते। श्वामानं भवति॥४६॥ इति क्रीब॰ सीसेन विध्यति। दुन्द्रशूकांनेवावंयजते। तस्मौत्क्रीबं देन्द्रशूकां दश्शंकाः। निरंस्तं नमुंचेः शिर् इति लोहितायसं निरंस्यति। पाप्मानंमेव नमुंचिं निरवंदयते। प्राणा आत्मनः पूर्वंऽभिषिच्या इत्यांहुः॥४७॥ सोमो राजा वर्रुणः। देवा धर्मसुवंश्च ये। ते ते वाच स्मवन्तां ते ते प्राण संवन्तामित्यांह। प्राणानेवाऽऽत्मनः पूर्वानिभिषिश्चति। यद्भ्यात्। अग्नेस्त्वा तेजंसाऽभिषिश्चामीति। तेजस्वयंव स्यात्। दुश्चर्मा तु भवत्। सोमस्य त्वा चुम्नेनाभिषिश्चामीत्यांह। सोम्यो वै देवत्या पुरुषः॥४८॥

शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दिद्योन्मां

पाहीत्युपरिष्टादिध निदंधाति। उभयतं एवास्मै शर्म दधाति। अवैष्टा दन्दशूका

स्वयैवैनं देवतंयाऽभिषिश्चिति। अग्नेस्तेज्सेत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। सूर्यस्य वर्चसेत्यांह। वर्चं एवास्मिन्दधाति। इन्द्रंस्येन्द्रियेणेत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। मित्रावरुणयोवीर्येणेत्यांह। वीर्यमेवास्मिन्दधाति। मुरुतामोज्सेत्यांह॥४९॥ ओर्ज पुवास्मिन्दधाति। क्षुत्राणां क्षुत्रपंतिर्सीत्यांह। क्षुत्राणांमेवेनं क्षुत्रपंतिं करोति। अति दिवस्पाहीत्यांह। अत्यन्यान्पाहीति वावैतदांह। स्मावंवृत्रन्नध्रागुदीचीरित्यांह। राष्ट्रमेवास्मिन्ध्रुवमंकः। उच्छेषंणेन जुहोति। उच्छेषंणभागो वै रुद्रः। भागुधेयेनैव रुद्रं निरवंदयते॥५०॥ उदंबुरेत्याग्नीं द्रे जुहोति। पृषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्र यत्ते क्रयी परं नामेत्यांह। यद्वा अस्य क्रयी परं नामे। तेन वा पृष हिनस्ति। यर हिनस्ति। तेनैवेन र् सह शंमयति। तस्मै हुतमंसि यमेष्टंमसीत्यांह। यमादेवास्यं

मृत्युमवंयजते॥५१॥
प्रजापते न त्वदेतान्यन्य इति तस्यै गृहे जुंहुयात्। यां कामयेत राष्ट्रमंस्यै प्रजा स्यादितिं। राष्ट्रमेवास्यै प्रजा भवति। पूर्णमयेनाध्वर्युर्भिषिश्चिति। ब्रह्मवर्चसमेवा-स्मिन्त्विषं दधाति। औदुंम्बरेण राजन्यः। ऊर्जमेवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। आश्वंत्थेन् वैश्यः। विशंमेवास्मिन्पृष्टिं दधाति। नैयंग्रोधेन् जन्यः। मित्राण्येवास्मै कल्पयति।

अथो प्रतिष्ठित्यै॥५२॥

सप्तमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

भ्वत्याहुः पुरुष ओज्रमेत्यांह निरवंदयते यजते जन्यो हे चं॥———[८] इन्द्रस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति रथमुपावंहरति विजित्ये। मित्रावरुणयोस्त्वा

प्रशास्त्रोः प्रशिषां युन्ज्मीत्यांह। ब्रह्मणैवैनं देवतांभ्यां युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनक्ति। त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। द्वौ संव्येष्ठसारथी। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५३॥

षङ्घा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं युनिक्तः। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ श्लोकान्भिजंयति। यः क्षुत्रियः प्रतिंहितः। सौंऽन्वारंभते। राष्ट्रमेव भवति। त्रिष्टुभाऽन्वारंभते। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति॥५४॥

भंवति। त्रिष्टुभाऽन्वारंभते। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति॥५४॥ मुरुतां प्रस्वे जेषमित्यांह। मुरुद्धिरेव प्रसूत् उज्जयित। आप्तं मन् इत्यांह। यदेव मन्सैफ्सींत्। तदांपत्। राजन्यं जिनाति। अनांकान्त पुवाकंमते। वि वा पुष इन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यो राजन्यं जिनाति। सम्हिमंन्द्रियेणं वीर्येणत्यांह॥५५॥

इन्द्रियमेव वीर्यमात्मन्धंत्ते। पशूनां मन्युरंसि तवेव मे मन्युर्भ्यादिति वारोही उपानहाबुपं मुश्चते। पुशूनां वा एष मृन्युः। यद्वराहः। तेनैव पंशूनां मन्युमात्मन्धंत्ते। अभि वा इय र सुंषुवाणं कामयते। तस्ये श्वरेन्द्रियं वीर्यमादांतोः। वारांही उपानहावुपंमुश्रते। अस्या एवान्तर्धत्ते। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानांत्यै॥५६॥ नमों मात्रे पृंथिव्या इत्याहाहि ईसायै। इयंदस्यायुंरस्यायुंर्मे धेहीत्यांह। आयुरेवाऽऽत्मन्धेत्ते। ऊर्गस्यूर्जं मे धेहीत्यांह। ऊर्जमेवाऽऽत्मन्धेत्ते। युङ्कासि वर्चोऽसि वर्चो मियं धेहीत्यांह। वर्च एवाऽऽत्मन्धंत्ते। एकुधा ब्रुह्मण् उपंहरित। पुक्धैव यर्जमान् आयुरूर्जुं वर्चो दधाति। रथविमोचनीयां जुहोति प्रतिं-ष्ठित्यै॥५७॥

त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। तस्माँचतुर्जुहोति। यदुभौ सहावृतिष्ठेताम्। समानं लोकिर्मियाताम्। सह संङ्ग्रहीत्रा रथवाहंने रथमादंधाति। सुवर्गादेवैनं लोकादन्तर्दधाति। हुर्सः शुंचिषदित्यादधाति। ब्रह्मणैवैनंमुपावहरंति। ब्रह्मणा-ऽऽदंधाति। अतिंच्छन्दसाऽऽदंधाति। अतिंच्छन्दा वै सर्वाणि छन्दार्रस। सर्वेभिरेवैनं छन्दोंभिरादंधाति। वर्ष्म् वा एषा छन्दंसाम्। यदतिंच्छन्दाः। यदतिंच्छन्दसा दधांति। वर्ष्म्वैनर्रं समानानां करोति॥५८॥

पुचने दुधाति वीर्यंणत्याहानांत्ये प्रतिष्ठित्ये ब्रह्मणऽऽदंधाति सुप्त चं॥————[९]
मित्रोऽसि वर्रुणोऽसीत्याह। मैत्रं वा अहंः। वारुणी रात्रिः। अहोरात्राभ्यांमेवैनंमुपाव

मित्रोऽसि वरुणाऽसात्याहा मेत्र वा अहः। वारुणा सात्रः। अहारात्राम्याम् वनसुपा मित्रोऽसि वरुणोऽसीत्याह। मैत्रो वै दक्षिणः। वारुणः सव्यः। वैश्वदेव्यामिक्षा। स्वमेवेनौ भागधेर्यमुपावंहरति। समहं विश्वैदिवेरित्याह॥५९॥

वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। ता एवाद्याः कुरुते। क्षत्रस्य नाभिरिस क्षत्रस्य योनिर्सीत्यंधीवासमास्तृंणाति सयोनित्वायं। स्योनामा सींद सुषदामा सीदित्यांह। यथायजुरेवैतत्। मा त्वां हिश्सीन्मा मां हिश्सीदित्याहाहिश्सायै। निषंसाद धृतव्रंतो वर्रुणः पस्त्यांस्वा साम्रांज्याय सुऋतुरित्यांह। साम्रांज्यमेवैन श्रे

एवावं रुन्धे॥६२॥

सुऋतुं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व राजन्ब्रह्माऽसि सिवृताऽसि सृत्यसंव इत्याह। सिवतारंमेवैन र सत्यसंव करोति॥६०॥

ब्रह्मा(३)न्त्व राजन्ब्रह्माऽसीन्द्रोंऽसि सत्यौजा इत्याह। इन्द्रंमेवैन ई

सत्यौर्जसं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व र राजन्ब्रह्माऽसिं मित्रोंऽसि सुशेव

इत्यांह। मित्रमेवैन र सुशवं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व र राजन्ब्रह्मासि वरुणोऽसि स्त्यधर्मेत्यांह। वरुणमेवैन र स्त्यधर्माणं करोति। स्विताऽसि स्त्यसंव इत्यांह। गायत्रीमेवैतेनांभि व्याहंरित। इन्द्रोऽसि स्त्यौजा इत्यांह। त्रिष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरित॥६१॥

मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। जगंतीमेवैतेनांभि व्याहंरित। स्त्यमेता देवताः। स्त्यमेतानि छन्दारंसि। स्त्यमेवावं रुन्धे। वरुणोऽसि स्त्यधर्मेत्यांह। अनुष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरित। सत्यम्वावं रुन्धे। सत्यानृते वरुणः। सत्यानृते

नैन ५ सत्यानृते उंदिते हि ६ स्तः। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति स्फ्यं प्रयंच्छति। वज्रो वै स्फ्यः। वज्रेंणैवास्मां अवरप्र १ रंन्थयति। एव १ हि तच्छ्रेयः। यदंस्मा एते रध्येयः। दिशोऽभ्यंय १ राजांऽभूदिति पश्चाक्षान्प्रयंच्छति। एते वै सर्वेऽयाः। अपंराजायिनमेवैनं करोति॥६३॥

ओदनमुद्भुंवते। प्रमेष्ठी वा एषः। यदोंदनः। प्रमामेवैन् श्रियं गमयित। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)नित्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। शौनः शेपमाख्यांपयते। वरुणपाशादेवैनं मुञ्जति। प्रः शृतं भंवति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। मारुतस्य चैकंवि शितकपालस्य वैश्वदेव्ये चामिक्षांया अग्नये स्वष्टकृते समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परिं गृह्णाति। अपान्नन्ने स्वाहोर्जो नन्ने स्वाहाऽग्नये गृहपंतये स्वाहेतिं तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति॥६४॥

देवैरित्यांह सुत्यसंवं करोति त्रिष्टुभंमे्वैतेनांभि व्याहंरित सत्यानृते एवावं रुन्धे करोति शुतेन्द्रियुः षद् चं॥lacksquare

सप्तमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

पुतद्वाँह्मणानि धात्रे रुबिनाँन्देवसुवामुर्थेतो देवीर्दिशः सोमस्येन्द्रंस्य मित्रो दर्शा॥१०॥

पुतद्वाहाणानि वैष्णुवं त्रिकपालमत्त्रं वै पूषा वाशाः स्थेत्यांह् दिशो व्यास्थापयत्युदंङ्वरेत्य ब्रह्मा(३)न्त्व॰ राज्ञञ्चतुष्पष्टिः॥६४॥

एतद्वाँह्मणानि प्रतिं तिष्ठति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

वर्रणस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। तथ्स् स्मृद्धिरन् समंसर्पत्। तथ्स् स्मृपारं सरस्वत्या वाचा द्वितीयें। स्वित्रा प्रंस्वतं तृतीयें। पूष्णा प्रशुभिश्चतुर्थे। बृह्स्पतिना ब्रह्मंणा पश्चमे। इन्द्रेण देवेनं षष्ठे। वर्रुणेन स्वयां देवतंया सप्तमे॥१॥

सोमेन राज्ञाँ ऽष्टमे। त्वष्ट्रां रूपेणं नवमे। विष्णुंना युज्ञेनाँ ऽऽप्नोत्। यथ्म र सृपो भवंन्ति। इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजंमान आप्नोति। पूर्वापूर्वा वेदिर्भवति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावं रुद्धे। पुरस्तां दुप्सदा र सौम्येन प्रचंरति। सोमो वै रेतोधाः। रेतं पुव तद्दंधाति। अन्तरा त्वाष्ट्रेणं। रेतं पुव हितं त्वष्टां रूपाणि विकंरोति। उपिष्टाद्वैष्ण्वेनं। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञ पुवान्ततः प्रतिं तिष्ठति॥२॥

सप्तमे दंधाति पश्चं च॥=

जामि वा एतत्कुर्वन्ति। यथ्मद्यो दीक्षयंन्ति सद्यः सोमं क्रीणन्ति। पुण्डरिस्रजां प्रयंच्छुत्यजांमित्वाय। अङ्गिरसः सुवर्गं लोकं यन्तः। अपसु दीक्षात्पसी प्रावेशयन्। तत्पुण्डरीकमभवत्। यत्पुण्डरिस्रजां प्रयच्छंति। साक्षादेव दीक्षात्पसी अवं रुन्धे। दशभिवंथ्सतरेः सोमं क्रीणाति। दशाकष्करा विराट्॥३॥

अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। मुष्करा भंवन्ति सेन्द्रत्वायं। दशपेयों

भवति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। शृतं ब्राँह्मणाः पिंबन्ति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। स्प्तद्शः स्तोत्रं भवति। स्प्तद्शः प्रजापंतिः॥४॥ प्रजापंतेराप्त्यै। प्राकाशावंध्वर्यवं ददाति। प्रकाशमेवैनं गमयति। स्रजंमुद्भात्रे। व्यंवास्में वासयति। रुका होत्रें। आदित्यमेवास्मा उन्नयति। अर्थं

द्वादंश पष्टौहीर्ब्रह्मणैं। आयुंरेवावं रुन्धे। वृशां मैंत्रावरुणायं। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। ऋष्मं ब्राह्मणाच्छुर्सिनें। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। वासंसी नेष्टापोत्भ्याम्। प्वित्रे

प्रस्तोतृप्रतिहर्तृभ्यांम्। प्राजापत्यो वा अर्श्वः। प्रजापंतेरास्यै॥५॥

एवास्यैते। स्थूरि यवाचितमंच्छावाकायं। अन्तत एव वर्रणमवं यजते॥६॥

अनुङ्गाहंमग्नीधं। विह्नुर्वा अनुङ्गान्। विह्निर्ग्नीत्। विह्नित्वेव विह्नं यज्ञस्यावं रुन्धे। इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं त्रेधेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। भृगुस्तृतीयमभवत्। श्रायन्तीयं तृतीयम्। सरंस्वती तृतीयम्। भार्गवो होतां भवति। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भवति। वार्वन्तीयमग्निष्टोमसामम्। सार्स्वतीर्पो गृह्णाति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुद्धे। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भवति। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं श्रयति। वार्वन्तीयमग्निष्टोमसामम्। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं वार्यति॥७॥

ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। दिशामवैष्टयो भवन्ति। दिश्वेव प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय। पश्चं देवतां यजित। पश्च दिशः। दिश्वेव प्रतिं तिष्ठति। ह्विषोहिवष इष्ट्वा बांर्हस्पत्यम्भिघांरयति। यजमानदेवत्यों वै

प्रति तिष्ठति। ह्विषोहविष इष्ट्वा बार्हस्पत्यम् बृहस्पतिः। यजमानमेव तेजसा समर्धयति॥८॥

विराद्वजापंतिरर्श्वः प्रजापंतेराप्त्यैं यजते ब्रह्मसामं भवति सप्त चं॥

आदित्यां मृल्हां गुर्भिणीमा लेभते। मा्रुतीं पृश्चिं पष्टौहीम्। विशं चैवास्मैं राष्ट्रं चं सुमीचीं दधाति। आदित्यया पूर्वया प्रचंरति। मा्रुत्योत्तंरया। राष्ट्र एव विश्वमनुंबध्नाति। उचैरांदित्याया आश्रांवयति। उपार्शु मार्रुत्यै। तस्मौद्राष्ट्रं विशमतिवदति। गर्भिण्यांदित्या भवति॥९॥

इन्द्रियं वै गर्भः। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अगुर्भा मांरुती। विश्वे मुरुतः। विश्वंमेव निरिन्द्रियामकः। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अश्विनौः पूषन्वाचः सृत्यः संन्निधायं। अनृतेनासुरान्भ्यंभवन्। तैंऽश्विभ्यां पूष्णे पुरोडाश्ं द्वादंशकपालं निर्वपन्। ततो वै ते वाचः सृत्यमवारुभ्यत॥१०॥

यदिश्वभ्यां पूष्णे पुरोडाश्ं द्वादंशकपालं निर्वपंति। अनृतेनैव भ्रातृंव्यानिभूयं। वाचः सत्यमवं रुन्थे। सरंस्वते सत्यवाचे चुरुम्। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृणाति। सवित्रे सत्यप्रसवाय पुरोडाश्ं द्वादंशकपालं प्रसूत्ये। दूतान्प्रहिंणोति। आविदं एता भवन्ति। आविदंमेवेनं गमयन्ति। अथो दूतेभ्यं एव न छिंद्यते। तिसृधन्व १ शुंष्कदृतिर्दक्षिणा समृद्धौ॥११॥

आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपति। तस्माच्छिशिरे कुरुपश्चालाः प्राश्ची यान्ति। सौम्यं चरुम्। तस्माद्वसन्तं व्यवसार्यादयन्ति। सावित्रं द्वादेशकपालम्।

तस्मौत्पुरस्ताद्यवांना । सिवृत्रा विर्श्नन्थते। बार्हस्पत्यं चुरुम्। सिवृत्रैव विरुध्यं। ब्रह्मणा यवानादंधते। त्वाष्ट्रमष्टाकंपालम्॥१२॥

रूपाण्येव तेनं कुर्वते। वैश्वान्तरं द्वादेशकपालम्। तस्मां अघन्ये नैदांघे प्रत्यश्चः कुरुपश्चाला यान्ति। सारुस्वतं चरुं निर्वपिति। तस्मांत्प्रावृष्टि सर्वा वाचो वदन्ति। पौष्णेन व्यवस्यन्ति। मैत्रेणं कृषन्ते। वारुणेन विधृता आसते। क्षेत्रपृत्येनं पाचयन्ते। आदित्येनादंधते॥१३॥

मासिमाँस्येतानि ह्वी॰ षि निरुप्याणीत्यांहुः। तेनैवर्तून्प्रयुंङ्कः इति। अथो खल्वांहुः। कः संवथ्सरं जीविष्यतीति। षड्डेव पूँर्वेद्युर्निरुप्यांणि। षडुंत्तरेद्युः। तेनैवर्त्नप्रयुंङ्के। दक्षिणो रथवाहनवाहः पूर्वेषां दक्षिणा। उत्तर् उत्तरेषाम्। संवर्थ्सरस्यैवान्तौ युनक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्यै॥१४॥

लाष्ट्रम्हाकंपालं व्यते युनकोकं चााः——[४] इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं दशुधेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। स यत्प्रंथुमं निरष्ठींवत्।

इन्द्रस्य सुपुवाणस्य दर्शयान्द्रय वाय पराऽपतत्। स यत्त्रयम ।न्रष्ठावत्। तत्कंलमभवत्। यद्वितीयम्। तद्वदंरम्। यत्तृतीयम्। तत्कर्कन्धुं। यत्रुस्तः। स सि॰हः। यदक्ष्यौः॥१५॥

स शाँदूंलः। यत्कर्णयोः। स वृकंः। य ऊर्ध्वः। स सोमंः। याऽवांची। सा सुराँ। त्रयाः सक्तंवो भवन्ति। इन्द्रियस्यावंरुद्धौ। त्रयाणि लोमांनि॥१६॥

त्विषिमेवावं रुन्धे। त्रयो ग्रहाँः। वीर्यमेवावं रुन्धे। नाम्नां दश्मी। नव् वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणा इन्द्रियं वीर्यम्। प्राणानेवेन्द्रियं वीर्यं यजमान आत्मन्धत्ते। सीसेन क्रीबाच्छष्पांणि क्रीणाति। न वा एतदयो न हिरण्यम्॥१७॥ यथ्सीसम्। न स्त्री न पुमान्। यत्क्रीबः। न सोमो न सुरां। यथ्सौत्रामणी

समृद्धै। स्वाद्वीं त्वां स्वादुनेत्यांह। सोमंमेवैनां करोति। सोमोंऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व सरंस्वत्यै पच्यस्वेन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पच्यंते। तिस्रः स॰सृष्टा वसति॥१८॥

तिस्रो हि रात्रींः क्रीतः सोमो वसंति। पुनातुं ते परिस्रुत्मिति यजुंषा पुनाति व्यावृंत्त्यै। प्वित्रेण पुनाति। प्वित्रेण हि सोमं पुनन्ति। वारेण शर्श्वता तनेत्यांह। वारेण हि सोमं पुनन्ति। वायुः पूतः प्वित्रेणिति नैतयां पुनीयात्। व्यृंद्धा ह्येषा। अतिपवितस्यैतयां पुनीयात्। कुविदङ्गेत्यनिरुक्तया प्राजापत्ययां गृह्णाति॥१९॥

अनिरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। आश्विनं धूम्रमालंभते। अश्विनौ वै देवानौं भिषजौं। ताभ्यांमेवास्मै भेषजं कंरोति। सार्स्वतं मेषम्। वाग्वै सर्रस्वती। वाचैवैनं भिषज्यति। ऐन्द्रमृष्भ सेन्द्रत्वायं॥२०॥

अक्ष्योर्लोमानि हिरंण्यं वसति गृह्णाति भिषज्यत्येकं च॥__________________________

वर्डबा दक्षिणा॥२३॥

नैतेषां पशूनां पुरोडाशां भवन्ति। ग्रहंपुरोडाशा ह्यंते। युव स्प्रामंमिश्वनिति सर्वदेवत्यं याज्यानुवाक्यं भवतः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति॥२१॥ ब्राह्मणं परिक्रीणीयादुच्छेषंणस्य पातारम्। ब्राह्मणो ह्याहुंत्या उच्छेषंणस्य पाता। यदि ब्राह्मणं न विन्देत्। वृत्मीक्वपायामवं नयेत्। सैव ततः प्रायंश्वित्तः। यद्वै सौंत्रामण्ये व्यृंद्धम्। तदंस्यै समृंद्धम्। नानादेवत्याः पृशवंश्व पुरोडाशांश्व भवन्ति समृंद्धौ। ऐन्द्रः पंशूनामृंत्तमो भवति। ऐन्द्रः पुरोडाशांनां प्रथमः॥२२॥ इन्द्रिये एवास्मै समीचीं दधाति। पुरस्तांदनूयाजानां पुरोडाशैः प्रचंरति। पृशवो

वै पुरोडाशाः। पशूनेवावं रुन्धे। ऐन्द्रमेकांदशकपालं निर्वपति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे।

सावित्रं द्वादंशकपालं प्रसूँत्यै। वारुणं दर्शकपालम्। अन्तत एव वर्रणमवं यजते।

यत्रिषु यूपेष्वालभेता बहिर्धाऽस्मादिन्द्रियं वीर्यं दध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्।

एकयूप आलंभते। एकधैवास्मिन्निन्द्रियं वीर्यं दधाति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति।

उत वा एषाऽश्वर्थं सूते। उताऽश्वंतरम्। उत सोमं उत सुराँ। यथ्मौत्रामणी समृद्धे। बार्हस्पत्यं पृशुं चंतुर्थमंतिपवितस्या लंभते। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणेव यज्ञस्य व्यृद्धमपिं वपति। पुरोडाशंवानेष पृशुर्भवति। न ह्यंतस्य ग्रहं गृह्णन्ति। सोमंप्रतीकाः पितरस्तृण्णुतेति शतातृण्णायार्थं समवंनयति॥२४॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दक्षिणेऽग्नौ जुंहोति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। हिरंण्यमन्तरा धारयति। पूतामेवैनां जुहोति। श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। यत्रैव शंतातृण्णां धारयंति॥२५॥

तिन्नदंधाति प्रतिष्ठित्यै। पितृन् वा एतस्यैन्द्रियं वीर्यं गच्छति। य सोमोंऽति पवंते। पितृणां याँज्यानुवाक्यांभिरुपं तिष्ठते। यदेवास्यं पितृनिन्द्रियं वीर्यं गच्छंति। तदेवावं रुन्थे। तिसृभिरुपं तिष्ठते। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। अथो त्रीणि वै यज्ञस्यैन्द्रियाणि। अध्वर्युर्होतां ब्रह्मा। त उपंतिष्ठन्ते। यान्येव

यज्ञस्यैन्द्रियाणि। तैरेवास्मै भेषजं करोति॥२६॥

प्रीणाति प्रथमो दक्षिणा समर्वनयति धारयंतीन्द्रियाणि चुत्वारि च॥————[६]

अग्निष्टोममग्र आहंरति। यज्ञमुखं वा अग्निष्टोमः। यज्ञमुखमेवारभ्यं स्वमा क्रमते। अथैषोऽभिषेचनीयंश्चतुस्त्रिष्ट्शपंवमानो भवति। त्रयंस्त्रिष्श्दे देवताः। ता प्वाऽऽप्नोति। प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्ट्शः। तमेवाऽऽप्नोति। स्र्श्र पृष स्तोमांनामयंथा-पूर्वम्। यद्विषंमाः स्तोमाः॥२७॥

पुतावान् वै युज्ञः। यावान्यवंमानाः। अन्तः श्लेषंणुं त्वा अन्यत्। यथ्समाः पवंमानाः। तेनाऽसर्श्वारः। तेनं यथापूर्वम्। आत्मनैवाग्निष्टोमेनुर्प्नोतिं। आत्मना पुण्यों भवति। प्रजा वा उक्थानिं। पृशवं उक्थानिं। यदुक्थ्यों भवत्यनु सन्तंत्त्यै॥२८॥

स्तोमांः पुशवं उक्थान्येकं च॥————[७]

उपं त्वा जामयो गिर् इतिं प्रतिपद्भवति। वाग्वै वायुः। वाच एवैषोंऽभिषेकः।

सर्वासामेव प्रजानार् सूयते। सर्वा एनं प्रजा राजेति वदन्ति। एतम् त्यन्दश् क्षिप् इत्याह। आदित्या वै प्रजाः। प्रजानामेवैतेनं सूयते। यन्ति वा एते यंज्ञमुखात्। ये संम्भार्या अक्रन्॥२९॥

यदाह् पवंस्व वाचो अंग्रिय इति। तेनैव यंज्ञमुखान्नयंन्ति। अनुष्टुक्प्रंथमा भंवति। अनुष्टुगुंत्तमा। वाग्वा अनुष्टुक्। वाचैव प्रयन्ति। वाचोद्यंन्ति। उद्वतीर्भवन्ति। उद्वद्वा अनुष्टुभों रूपम्। आनुष्टुभो राजन्यः॥३०॥

तस्मादुद्वंतीर्भवन्ति। सौर्यनुष्टुगुंत्तमा भविति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। यो वै स्वादेति। नैन र्रं स्व उपनमिति। यः सामंभ्य एति। पापीयान्थ्सुषुवाणो भविति। एतानि खलु वै सामानि। यत्पृष्ठानि। यत्पृष्ठानि भवन्ति॥३१॥

तैरेव स्वान्नैतिं। यानिं देवराजाना् सामानि। तैर्मुष्मिंश्लोक ऋंध्रोति। यानिं मनुष्यराजाना् सामानि। तैर्स्मिंश्लोक ऋंध्रोति। उभयोरेव लोकयोर् ऋध्रोति। देवलोके च मनुष्यलोके च। एकविष्शोऽभिषेचनीयस्योत्तमो भवति। एकविष्शः

अक्रंत्राजन्यों भवंन्ति दशपेयों माद्येत्रीणिं च॥

केशवपनीयंस्य प्रथमः। सप्तदशो दंशपेयंः॥३२॥

विड्वा एंकविर्शः। राष्ट्र संप्तद्रशः। विशं एवैतन्मध्यतीं ऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एव विशां प्रियः। विशो हि मध्यतों ऽभिषिच्यतें। यद्वा एंनम्दो दिशो ऽनुं व्यास्थापयंन्ति। तथ्सुंवर्गं लोकम्भ्या रोहित। यदिमं लोकं न प्रत्यवरोहेंत्। अतिज्ञनं वेयात्। उद्वां माद्येत्। यदेष प्रतीचीनः स्तोमो भवंति। इममेव तेनं लोकं प्रत्यवरोहित। अथों अस्मिन्नेव लोकं प्रति तिष्ठत्यनुंन्मादाय॥३३॥

इयं वै रंज्ता। असौ हरिणी। यद्रुक्मौ भवंतः। आभ्यामेवैनंमुभ्यतः परि गृह्णाति। वर्रुणस्य वा अभिष्चियमान्स्याऽऽपंः। इन्द्रियं वीर्यं निरंघ्नन्। तथ्सुवर्ण् १

हिरंण्यमभवत्। यद्रुकामंन्तर्दधांति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानिर्घाताय। शतमानो भवति शतक्षंरः। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। आयुर्वे हिरंण्यम्। आयुष्यां पुवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। तेजो वै हिरंण्यम्। तेजस्यां पुवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वै हिरंण्यम्। वर्चस्यां एवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति॥३४॥

अप्रतिष्ठितो वा एष इत्याहुः। यो राजसूर्येन यर्जत इतिं। यदा वा एष एतेनं द्विरात्रेण यर्जते। अर्थ प्रतिष्ठा। अर्थ संवथ्सरमाप्नोति। यावन्ति

संवथ्सरस्याहोरात्राणि। तावंतीरेतस्यं स्तोत्रीयाः। अहोरात्रेष्वेव प्रतिं तिष्ठति। अग्निष्टोमः पूर्वमहंर्भवति। अतिरात्र उत्तरम्॥३५॥

नानैवाहोरात्रयोः प्रति तिष्ठति। पौर्णमास्यां पूर्वमहंभवति। व्यष्टकायामुत्तरम्। नानैवार्धमासयोः प्रति तिष्ठति। अमावास्यायां पूर्वमहंभवति। उद्दृष्ट उत्तरम्। नानैव मासयोः प्रति तिष्ठति। अथो खलुं। ये एव समानपक्षे पुण्याहे स्याताम्। तयौः कार्यं प्रतिष्ठित्यै॥३६॥

अपृश्व्यो द्विरात्र इत्यांहुः। द्वे ह्येते छन्दंसी। गायत्रं च त्रैष्टुंभं च। जगंतीम्नत्यंन्ति। न तेन् जगंती कृतेत्यांहुः। यदेनान्तृतीयसव्ने कुर्वन्तीतिं।

यदा वा पुषाऽहीन्स्याह्भंजंते। साह्रस्यं वा सर्वनम्। अथैव जगंती कृता। अथं पश्व्यंः। व्यृंष्टि्वां पुष द्विंरात्रः। य पुवं विद्वान्द्विंरात्रेण यजंते। व्येवास्मां उच्छति। अथो तमं पुवापं हते। अग्निष्टोममंन्त्तत आ हंरति। अग्निः सर्वां देवताः। देवतांस्वेव प्रतिं तिष्ठति॥३७॥

उत्तंरं प्रतिष्ठित्ये पशुव्यः सप्त चं॥————[१०]

वर्रुणस्य जामि वा ईंश्वर आंग्नेयमिन्द्रंस्य यत्रिष्वंग्निष्टोममुपं त्वेयं वै रंजताऽप्रंतिष्ठितो दर्शा।१०॥

वर्रणस्य यदिश्विभ्यां यित्रृषु तस्मादुर्द्वतीः सप्ततित्ररेशत्॥३७॥

वरुंणस्य प्रतिं तिष्ठति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥अष्टकम् २॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अङ्गिरसो वै स्त्रमांसत। तेषां पृश्चिर्घर्मधुगांसीत्। सर्जीषेणांजीवत्। तैंऽब्रुवन्। कस्मै नु स्त्रमांस्महे। येंऽस्या ओषंधीर्न जनयांम् इतिं। ते दिवो वृष्टिंमसृजन्त। यावंन्तः स्तोका अवापंद्यन्त। तावंतीरोषंधयोऽजायन्त। ता जाताः पितरों विषेणांलिम्पन्॥१॥

तासां ज्रुग्ध्वा रुप्यन्त्यैत्। तें ऽब्रुवन्। क इदिमृत्थमंक्रितिं। व्यं भाग्धेयमिच्छमाना इति पितरों ऽब्रुवन्। किं वो भाग्धेयमितिं। अग्निहोत्र एव नोऽप्यस्त्वित्यं ब्रुवन्। तेभ्यं एतद्भांग्धेयं प्रायंच्छन्। यद्भुत्वा निमार्षि। ततो वै त ओषंधीरस्वदयन्। य एवं वेदं॥२॥

स्वदंन्तेऽस्मा ओषंधयः। ते वृथ्समुपावांसृजन्। इदं नों ह्व्यं प्रदांप्येतिं।

सौंऽब्रवीद्वरं वृणै। दशं मा रात्रींर्जातं न दोहन्। आसङ्गवं मात्रा सह चंराणीति। तस्मौद्वथ्सं जातं दश रात्रीर्न दुंहन्ति। आसङ्गवं मात्रा सह चंरति। वारेवृत्ड् ह्यस्य। तस्मौद्वथ्स॰ स॰सृष्टधय॰ रुद्रो घातुंकः। अति हि सन्धान्धयंति॥३॥

प्रजापंतिर्शिमंसृजत। तं प्रजा अन्वंसृज्यन्त। तमंभाग उपाँस्त। सौंऽस्य

प्रजाभिरपाँकामत्। तमंवरुरुंध्समानोऽन्वैत्। तमंवरुधं नाशंक्रोत्। स तपोंऽतप्यत। सौंऽग्निरुपांरमतातांपि वै स्य प्रजापंतिरितिं। स रराटादुदंमृष्ट॥४॥

तद्घृतमंभवत्। तस्माद्यस्यं दक्षिण्तः केशा उन्मृंष्टाः। ताञ्चेष्ठलृक्ष्मी प्रांजापृत्येत्यांहुः। यद्र्राटांदुदमृष्ट। तस्माद्रराटे केशा न संन्ति। तद्ग्रौ प्रागृह्णात्। तद्यंचिकिथ्सत्। जुहवानी(३) मा हौषा(३)मितिं। तिद्वंचिकिथ्सायै जन्मं। य एवं विद्वान् विचिकिथ्सति॥५॥

वसीय एव चेतयते। तं वाग्भ्यंवदज्जुहुधीतिं। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वम्सीतिं। स्वैव ते

वागित्यंब्रवीत्। सोऽजुहोथ्स्वाहेतिं। तथ्स्वांहाकारस्य जन्मं। य एव इस्वांहाकारस्य जन्म वेदं। करोतिं स्वाहाकारेणं वीर्यम्। यस्यैवं विदुषंः स्वाहाकारेण जुह्वंति॥६॥ भोगांयैवास्यं हुतं भंवति। तस्या आहुंत्यै पुरुषमसृजत। द्वितीयंमजुहोत्। सोऽश्वंमसृजत। तृतीयंमजुहोत्। स गामंसृजत। चतुर्थमंजुहोत्। सोऽविंमसृजत। पश्चममंजुहोत्। सोंऽजामंसृजत॥७॥

सौंऽग्निरंबिभेत्। आहुंतीभिवें मांऽऽप्नोतीतिं। स प्रजापंतिं पुनः प्राविंशत्। तं प्रजापंतिरब्रवीत्। जायुस्वेतिं। सौंऽब्रवीत्। किं भागधेयंमुभि जीनिष्य इतिं। तुभ्यमेवेद १ ह्याता इत्यंब्रवीत्। स एतद्भाग्धेयंमुभ्यंजायत। यदंग्निहोत्रम्॥८॥ तस्मादि शिहोत्रमुंच्यते। तद्ध्यमानमादित्यौं ऽब्रवीत्। मा हौंषीः। उभयोर्वे नांवेतिदितिं। सौंऽग्निरंब्रवीत्। कथं नौं होष्युन्तीतिं। सायमेव तुभ्यंं जुहवन्ं। प्रातर्मह्यमित्यं ब्रवीत्। तस्मांदुग्नयं साय १ ह्रंयते। सूर्यांय प्रातः॥९॥

आुग्नेयी वै रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। यदनुंदिते सूर्ये प्रातर्जुहुयात्। उभयंमेवाग्नेयः

स्यौत्। उदिते सूर्ये प्रातर्जुहोति। तथाऽग्नये साय हूंयते। सूर्याय प्रातः। रात्रिं वा अनुं प्रजाः प्र जांयन्ते। अहा प्रतिं तिष्ठन्ति। यथ्सायं जुहोतिं॥१०॥

प्रैव तेनं जायते। उदिते सूर्ये प्रातर्जुहोति। प्रत्येव तेनं तिष्ठति।

प्रजापंतिरकामयत् प्रजांयेयेतिं। स एतदंग्निहोत्रं मिथुनमंपश्यत्। तदुदिते सूर्येऽजुहोत्। यज्ञंषाऽन्यत्। तूष्णीमन्यत्। ततो वै स प्राजांयत। यस्यैवं विदुष् उदिते सूर्येऽग्निहोत्रं जुह्वंति॥११॥

पैत जांयते। अशो यथा दिवाँ प्रजानवेति। ताद्येत तत्। अशो खल्लांदः।

प्रैव जांयते। अथो यथा दिवाँ प्रजानन्नेतिं। ताहगेव तत्। अथो खल्वांहुः। यस्य वै द्वौ पुण्यौ गृहे वसंतः। यस्तयोर्न्यः राधयंत्यन्यं न। उभौ वाव स तावृंच्छ्तीतिं। अग्निं वावाऽऽदित्यः सायं प्र विंशति। तस्मांदग्निर्दूरान्नक्तं दहशे। उभे हि तेजंसी सम्पद्येते॥१२॥

उद्यन्तं वावाऽऽदित्यम्भिरनुं समारोहित। तस्मौद्धूम पुवाग्नेर्दिवां दद्दशे। यद्ग्रये

सायं जुंहुयात्। आ सूर्याय वृश्चेत। यथ्सूर्याय प्रातर्जुहुयात्। आऽग्नये वृश्चेत। देवतांभ्यः समदं दध्यात्। अग्निज्यीतिज्यीतिः सूर्यः स्वाहेत्येव साय होत्व्यम्। सूर्यो ज्योतिज्यीतिंज्यां स्वाहेतिं प्रातः। तथोभाभ्याः साय ह्रंयते॥१३॥

उभाभ्यां प्रातः। न देवतांभ्यः समदं दधाति। अग्निज्यांतिरित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। प्रजा ज्योतिरित्यांह। प्रजा एवास्मै प्र जनयति। सूर्यो ज्योतिरित्यांह। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतो दधाति। ज्योतिरिग्निः स्वाहेत्यांह। प्रजा एव प्रजांता अस्यां प्रतिष्ठापयति॥१४॥

तूष्णीमुत्तंरामाहुंतिं जुहोति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। यदुदिते सूर्ये प्रांतर्जुहुयात्। यथाऽतिंथये प्रद्रुताय शून्यायांवस्थायांहार्य हर्नन्ति। तादृगेव तत्। क्वाऽऽह् तत्स्तद्भवतीत्यांहुः। यथ्स न वेदं। यस्मै तद्धर्न्तीतिं। तस्माद्यदौंष्सं जुहोतिं। तदेव सम्प्रति। अथो यथा प्रार्थमौष्सं परिवेवेष्टि। तादृगेव तत्॥१५॥

अमृष्ट् विचिकिथ्सति जुह्वंत्युजामंसुजताग्निहोत्र< सूर्याय प्रातर्जुहोति जुह्वंति सम्पर्धेते हूयते स्थापयति सम्प्रति द्वे चं॥———————[२]

रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। पत्नी स्थाली। यन्मध्येऽग्नेरंधिश्रयेत्। रुद्राय पत्नीमपिं दध्यात्। प्रमायुंका स्यात्। उदीचोऽङ्गांरान्निरूह्याधिं श्रयति। पत्नियै गोपीथायं। व्यन्तान्करोति। तथा पत्यप्रमायुका भवति॥१६॥

घुर्मो वा पुषोऽशाँन्तः। अहंरहः प्र वृंज्यते। यदंग्निहोत्रम्। प्रतिषिश्चेत्पशुकांमस्य। शान्तिमेव हि पंश्वयम्। न प्रतिषिश्चेद्वह्मवर्चसकांमस्य। सिमंद्धिमव हि ब्रह्मवर्चसम्। अथो खलुं। प्रतिषिच्यंमेव। यत्प्रतिषिश्चति॥१७॥

तत्पंश्व्यम्। यञ्जुहोति। तद्बंह्मवर्चसि। उभयमेवाकः। प्रच्युंतं वा एतद्स्माल्लोकात्। अगंतं देवलोकम्। यच्छृतः ह्विरनंभिघारितम्। अभि द्योतयति। अभ्येवैनंद्घारयति। अथों देवृत्रेवैनंद्रमयति॥१८॥

पर्यम्नि करोति। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पर्यम्नि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। यत्प्राचीनंमुद्वासयेत्। यजंमान १ शुचा ऽपंयेत्। यद्दंक्षिणा। पितृदेवत्य ई स्यात्। यत्प्रत्यक्॥१९॥ पत्नी र्श्र शुचाऽपंयेत्। उदीचीन् मुद्धां सयित। एषा वै देवमनुष्याणा र्श्र शान्ता दिक्। तामेवैन्दनू द्वां सयित् शान्त्ये। वर्त्मं करोति। यज्ञस्य सन्तंत्ये। निष्टंपित। उपैव तथ्स्तृंणाति। चतुरुन्नंयित। चतुंष्पादः पृशवंः॥२०॥

पृश्निवावं रुन्थे। सर्वांन्पूर्णानुन्नंयित। सर्वे हि पुण्यां राद्धाः। अनूच् उन्नंयित। प्रजायां अनूचीनृत्वायं। अनूच्येवास्यं प्रजाऽर्धुका भवति। सम्मृंशित् व्यावृंत्त्यै। नाहोंष्युनुपं सादयेत्। यदहोंष्यनुपसादयेत्। यथाऽन्यस्मां उपनिधायं॥२१॥

अन्यस्मैं प्रयच्छंति। ताहगेव तत्। आऽस्मैं वृश्च्येत। यदेव गार्हंपत्येऽधि श्रयंति। तेन गार्हंपत्यं प्रीणाति। अग्निरंबिभेत्। आहुंतयो माऽत्येष्यन्तीतिं। स एता समिधंमपश्यत्। तामाऽधंत्त। ततो वा अग्नावाहुंतयोऽध्रियन्त॥२२॥

यदेन समयंच्छत्। तथ्समिधंः सिम्त्वम्। सिमध्मा दंधाति। समेवैनं यच्छति। आहुंतीनां धृत्यैं। अथो अग्निहोत्रमेवेध्मवंत्करोति। आहुंतीनां प्रतिष्ठित्यै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदेका समिधंमाधाय द्वे आहुंती जुहोतिं। अथ कस्या स

समिधिं द्वितीयामाहंतिं जुहोतीतिं॥२३॥

यद्वे स्मिधांवा द्थ्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एका र्समिधंमाधायं। यजुंषा-ऽन्यामाहुंतिं जुहोति। उभे एव स्मिद्धंती आहुंती जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। आदीं प्रायां जुहोति। समिद्धमिव हि ब्रंह्मवर्च्सम्। अथो यथाऽतिंथिं ज्योतिंष्कृत्वा पंरि वेवेष्टि। ताद्दगेव तत्। चतुरुन्नंयित। द्विर्जुहोति। तस्मांद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौ द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठापयित॥२४॥

प्राऽस्रीराः। यं कामयेत् वसीयान्थस्यादितिं। कनीयस्तस्य पूर्वर् हुत्वा। उत्तरं

भूयों जुहुयात्। एषा वा उंत्तरावृत्याहुंतिः। तान्देवा अंजुहवुः। तत्स्तें ऽभवन्॥२५॥ यस्यैवं जुह्वंति। भवंत्येव। यं कामयेत् पापीयान्थ्स्यादितिं। भूयस्तस्य पूर्वर्षे हुत्वा। उत्तरं कनीयो जुहुयात्। एषा वा अवाच्याहुंतिः। तामसुंरा अजुहवुः। तत्स्ते

परांऽभवन्। यस्यैवं जुह्वंति। परैव भंवति॥२६॥

हुत्वोपं सादयत्यजांमित्वाय। अथो व्यावृत्त्यै। गार्हंपत्युं प्रतींक्षते। अनंनुध्यायिनमेवैनं करोति। अग्निहोत्रस्य वै स्थाणुरंस्ति। तं य ऋच्छेत्। यज्ञस्थाणुमृच्छेत्। एष वा अग्निहोत्रस्यं स्थाणुः। यत्पूर्वाऽऽहुंतिः। तां यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥२७॥

यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। अतिहाय पूर्वामाहुंतिं जुहोति। यज्ञस्थाणुमेव परिं वृणक्ति। अथो भ्रातृंव्यमेवास्वाऽतिं क्रामित। अवाचीन र सायमुपंमार्ष्टि। रेतं एव तद्दंधाति। ऊर्धं प्रातः। प्र जंनयत्येव तत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। चतुरुन्नंयति॥२८॥

द्विर्जुहोति। अथ कं द्वे आहुंती भवत इतिं। अग्नौ वैश्वान्र इतिं ब्रूयात्। एष वा अग्निर्वैश्वान्रः। यद्वाँह्मणः। हुत्वा द्विः प्राश्ञांति। अग्नावेव वैश्वान्रे द्वे आहुंती जुहोति। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमाँष्टिं। द्विः प्राश्ञांति॥२९॥

षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं

देवृत्यंमग्निहोत्रमितिं। वैश्वदेवमितिं ब्रूयात्। यद्यजुंषा जुहोतिं। तदैंन्द्राग्नम्। यत्तूष्णीम्। तत्प्रांजापत्यम्॥३०॥

यन्निमार्ष्टि। तदोषंधीनाम्। यद्वितीयम्। तत्पितृणाम्। यत्प्राश्ञांति। तद्गर्भाणाम्। तस्माद्गर्भा अनंश्ञन्तो वर्धन्ते। यदाचामंति। तन्मंनुष्यांणाम्। उदंङ्घर्यावृत्याचांमति॥३१॥

आत्मनों गोपीथायं। निर्णेनेक्ति शुद्धौं। निष्टंपित स्वगाकृत्ये। उिद्दंशित। स्मूर्षीनेव प्रीणाित। दक्षिणा पूर्यावर्तते। स्वमेव वीर्यमनुं पूर्यावर्तते। तस्मादक्षिणोऽर्धं आत्मनों वीर्यावत्तरः। अथों आदित्यस्यैवावृत्मनुं पूर्यावर्तते। हुत्वोप सिर्मन्थे॥३२॥

ब्रह्मवर्चसस्य सिमंद्धै। न ब्र्हिरनु प्र हंरेत्। असईस्थितो वा एष यज्ञः। यदंग्निहोत्रम्। यदंनु प्रहरेत्। यज्ञं विच्छिंन्द्यात्। तस्मान्नानुं प्रहृत्यम्। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अपो नि नंयति। अव्भृथस्यैव रूपमंकः॥३३॥ अुभुव-भुवति जुहुयात्रंयति मार्ष्टि द्विः प्राश्नांति प्राजापुत्यमाचांमतीन्थेऽकः॥🕳

ब्रह्मवादिनो वदन्ति। अग्निहोत्रप्रायणा यज्ञाः। किं प्रायणमग्निहोत्रमिति। वथ्सो वा अग्निहोत्रस्य प्रायणम्। अग्निहोत्रं यज्ञानाम्। तस्यं पृथिवी सदः। अन्तिरक्षमाग्नीद्भम्। द्यौर्हंविर्धानम्। दिव्या आपः प्रोक्षणयः। ओषंधयो बर्हिः॥३४॥

वनस्पतंय इध्मः। दिशः परिधयः। आदित्यो यूपः। यजमानः पृशः। समुद्रो-ऽवभृथः। संवथ्सरः स्वंगाकारः। तस्मादाहिताग्रेः सर्वमेव बर्हिष्यं दत्तं भवित। यथ्सायं जुहोतिं। रात्रिमेव तेनं दक्षिण्यां कुरुते। यत्प्रातः॥३५॥

अहंरेव तेनं दक्षिण्यं कुरुते। यत्ततो ददांति। सा दक्षिणा। यावंन्तो वै देवा अहंतमादन्। ते परांऽभवन्। त एतदिग्निहोत्र सर्वस्यैव संमवदायांजुहवुः। तस्मादाहुः। अग्निहोत्रं वै देवा गृहाणां निष्कृतिमपश्यित्रितिं। यथ्सायं जुहोतिं। रात्रिया एव तद्धुताद्यांय॥३६॥ यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्प्रातः। अहं एव तद्धुताद्याय। यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्ततोऽश्ञातिं। हुतमेव तत्। द्वयोः पर्यसा जुहुयात्पृशुकांमस्य। एतद्वा अग्निहोत्रं

-मिथुनम्। य एवं वेदं। प्र प्रजयां पशुभिर्मिथुनैर्जायते॥३७॥

ड्रमामेव पूर्वया दुहे। अमूमुत्तंरया। अधिश्रित्योत्तंरमा नंयति। योनांवेव तद्रेतंः सिश्चति प्रजनंने। आज्येन जुहुयात्तेजंस्कामस्य। तेजो वा आज्यम्। तेजस्र्येव भंवति। पर्यसा पृशुकांमस्य। एतद्वै पंशूनाः रूपम्। रूपेणैवास्मै पृशूनवं रुन्थे॥३८॥

पृशुमानेव भंवति। द्ध्नेन्द्रियकांमस्य। इन्द्रियं वै दिधं। इन्द्रियाव्यंव भंवति। यवाग्वा ग्रामंकामस्योषधा वै मंनुष्याः। भागधेयेनेवास्मे सजातानवं रुन्धे। ग्राम्यंव भंवति। अयंज्ञो वा एषः। योऽसामा॥३९॥

चतुरुन्नंयित। चतुरक्षर॰ रथन्तरम्। रथन्तरस्यैष वर्णः। उपरीव हरित। अन्तरिक्षं वामदेव्यम्। वामदेव्यस्यैष वर्णः। द्विर्जुहोति। द्यक्षरं बृहत्। बृह्त एष

वर्णः। अग्निहोत्रमेव तथ्सामंन्वत्करोति॥४०॥

यो वा अंग्निहोत्रस्योंप्सदो वेदं। उपैंनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्ं। उन्नीयोपं सादयति। पृथिवीमेव प्रींणाति। होष्यन्नुपंसादयति। अन्तरिक्षमेव प्रींणाति। हुत्वोपं सादयति। दिवंमेव प्रींणाति। पुता वा अंग्निहोत्रस्योंप्सदंः॥४१॥

य एवं वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्। यो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितं प्रत्याश्रांवित् होतांरं ब्रह्माणं वषद्भारं वेदं। तस्य त्वेव हुतम्। प्राणो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितम्। अपानः प्रत्याश्रांवितम्। मनो होतां। चक्षुंब्रह्मा। निमेषो वंषद्भारः॥४२॥

य एवं वेदं। तस्य त्वेंव हुतम्। सायं यावांनश्च वै देवाः प्रांत्यांवांणश्चाग्निहोत्रिणों गृहमागंच्छन्ति। तान् यन्न तुर्पयेंत्। प्रजयांऽस्य पृशुभिर्वि तिष्ठेरन्। यत्तर्पयेंत्। तृप्ता एनं प्रजयां पृशुभिस्तर्पयेयुः। स्जूर्देवैः सायं यावंभिरितिं साय सम्मृंशति। स्जूर्देवैः प्रातर्यावंभिरितिं प्रातः। ये चैव देवाः सायं यावांनो ये चे

प्रातर्यावांणः॥४३॥

तानेवोभयाईस्तर्पयति। त एंनं तृप्ताः प्रजयां पृशुभिंस्तर्पयन्ति। अरुणो हं स्माहौपंवेशिः। अग्निहोत्र एवाहर सायं प्रांत्वंज्रं भ्रातृंव्येभ्यः प्र हंरामि। तस्मान्मत्पापीयारसो भ्रातृंव्या इतिं। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। समिथ्संप्तमी। सप्तपंदा शक्वरी। शाक्वरो वर्ज्ञः। अग्निहोत्र एव तथ्सायं प्रांत्वंज्रं यजमानो भ्रातृंव्याय प्र हंरति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति॥४४॥

बुर्हिः प्रातर्हुताद्यांय जायते रुन्धेऽसामा कंरोत्येता वा अग्निहोत्रस्योंपुसदों वषद्भारश्चं प्रातुर्यावाणो वज्रस्तीणि च॥——————[५]

प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मृन्वन्मं जायेतेतिं। सोंऽजुहोत्। तस्यांऽऽत्मृन्वदंजायत। अग्निर्वायुरांदित्यः। तेंऽब्रुवन्। प्रजापंतिरहोषीदात्मृन्वन्मं जायेतेतिं। तस्यं वयमंजनिष्महि। जायंतान्न आत्मृन्वदिति तेंऽजुहवुः। प्राणानांमग्निः। तनुवैं वायुः॥४५॥

चक्षुंष आदित्यः। तेषा १ हुतादंजायत् गौरेव। तस्यै पर्यसि व्यायंच्छन्त। मर्म

प्राणानांमहमित्यग्निः॥४६॥

हुतादंजिन ममेतिं। ते प्रजापंतिं प्रश्ञमायन्। स आंदित्यौऽग्निमंब्रवीत्। युत्रो नौ जयात्। तन्नौ सहासदितिं। कस्यै कोऽहौंषीदितिं प्रजापंतिरब्रवीत्कस्यै क इतिं।

त्नुवां अहमितिं वायुः। चक्षुंषोऽहमित्यांदित्यः। य एव प्राणानामहौंषीत्। तस्यं हुतादंजनीतिं। अग्नेर्हुतादंजनीतिं। तदंग्निहोत्रस्यांग्निहोत्रत्वम्। गौर्वा अग्निहोत्रम्। य एवं वेद् गौरंग्निहोत्रमितिं। प्राणापानाभ्यांमेवाग्निः समर्धयति। अव्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवति॥४७॥

य एवं वेदं। तौ वायुरंब्रवीत्। अनु मा भंजत्मितिं। यदेव गार्हंपत्ये-ऽधिश्रित्यांहवनीयंम्भ्युंद्रवान्। तेन त्वां प्रीणानित्यंब्र्ताम्। तस्माद्यद्वार्हंपत्ये-ऽधिश्रित्यांहवनीयंम्भ्युंद्रवंति। वायुम्व तेनं प्रीणाति। प्रजापंतिर्देवताः सृजमानः। अग्निम्व देवतानां प्रथममंसृजतः। सौंऽन्यदांलुभ्यंमवित्वा॥४८॥

प्रजापंतिमुभि पूर्यावंर्तत। स मृत्योरंबिभेत्। सोंऽमुमांदित्यमात्मनो निरंमिमीत।

त १ हुत्वा पराँ ध्वर्यावर्तत। ततो वै स मृत्युमपां जयत्। अपं मृत्युं जंयित। य एवं वेदं। तस्माद्यस्यैवं विदुषंः। उत्तेकाहमुत ह्यहं न जुह्वंति। हुतमेवास्यं भवित। असौ

ह्यांदित्यौऽग्निहोत्रम्॥४९॥

रौद्रं गिवं। वायव्यंमुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। सौम्यं दुग्धम्। वारुणमिधं श्रितम्। वैश्वदेवा भिन्दवंः। पौष्णमुदंन्तम्। सारुस्वतं विष्यन्दंमानम्। मैत्र शरंः। धातुरुद्वांसितम्। बृह्स्पतेरुत्रीतम्। सवितुः प्र क्रान्तम्। द्यावापृथिव्य हियमाणम्। ऐन्द्राग्रमुपंसन्नम्। अग्नेः पूर्वाऽऽहुंतिः। प्रजापंतेरुत्तंरा। ऐन्द्र हुतम्॥५०॥

दक्षिणत उपं सृजित। पितृलोकमेव तेनं जयित। प्राचीमा वर्तयित। देवलोकमेव तेनं जयित। उदींचीमावृत्यं दोग्धि। मनुष्यलोकमेव तेनं जयित। पूर्वो दुह्याञ्चेष्ठस्यं ज्यैष्ठिनेयस्यं। यो वां गृतश्रीः स्यात्। अपंरौ दुह्यात्किन्ष्ठस्यं कानिष्ठिनेयस्यं। यो वा बुभूषेत्॥५१॥

न सं मृंशति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। वायव्यं वा एतदुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। मैत्रं दुग्धम्। अर्थम्ण उद्वास्यमानम्। त्वाष्ट्रमुन्नीयमानम्। बृह्स्पतेरुन्नीतम्। सवितुः प्रक्रौन्तम्। द्यावापृथिव्यः हियमाणम्॥५२॥

पुन्द्राग्नमुपं सादितम्। सर्वांभ्यो वा पृष देवतांभ्यो जुहोति। योंऽग्निहोत्रं जुहोति। यथा खलु वे धेनुं तीर्थे तर्पयंति। पृवमंग्निहोत्री यजमानं तर्पयति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। प्र सुवर्गं लोकं जानाति। पश्यंति पुत्रम्। पश्यंति पौत्रम्। प्र प्रजयां पृशुभिर्मिथुनैर्जायते। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५३॥

प्रशिक्ष्यमाणआयते हे चे॥

[८]

त्रयो वै प्रैयमेधा आंसन्। तेषां त्रिरेकौंऽग्निहोत्रमंजुहोत्। द्विरेकंः। स्कृदेकंः। तेषां यस्त्रिरजुंहोत्। स ऋचाऽजुंहोत्। यो द्विः। स यजुंषा। यः स्कृत्। स तूष्णीम्॥५४॥ यश्च यजुषाऽजुंहोद्यश्चं तूष्णीम्। तावुभावाधीताम्। तस्माद्यजुषाऽऽहुंतिः पूर्वा होत्व्यां। तूष्णीमुत्तंरा। उभे एवधी अवं रुन्धे। अग्निज्योतिज्योतिंर्ग्निः स्वाहेतिं सायं जुंहोति। रेतं एव तद्दंधाति। सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेतिं प्रातः। रेतं एव हितं प्र जनयति। रेतो वा एतस्यं हितं न प्र जायते॥५५॥

यस्याँग्निहोत्रमहुंत् सूर्योऽभ्यंदेतिं। यद्यन्ते स्यात्। उन्नीय प्राङ्क्दाद्रंवेत्। स उपसाद्यातिमितोरासीत। स यदा ताम्येँत्। अथु भूः स्वाहेतिं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे भूतः। तमेवोपांसरत्। स एवेनं तत् उन्नयित। नार्तिमार्च्छंति यजमानः॥५६॥ व्या जायते वर्षमानः॥——[९] यद्ग्निमुद्धरंति। वसंवस्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति।

यद्ग्रिमुद्धरंति। वसंवस्तर्द्ध्याः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। वसुंष्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भंवति। निहितो धूपायञ्छेते। रुद्रास्तर्द्ध्याः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। रुद्रेष्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भंवति। प्रथममिध्ममुर्चिरा लंभते। आदित्यास्तर्द्धाग्नः॥५७॥

तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। आदित्येष्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भेवति। सर्वे एव संवृंश इध्म आदींग्नो भवति। विश्वे देवास्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। विश्वेष्वेवास्यं देवेष्वंग्निहोत्र हुतं भेवति। नित्रामृर्चिरुपावैति लोहिनीकेव भवति। इन्द्रस्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। इन्द्रं एवास्यांग्निहोत्र हुतं भेवति॥५८॥

अङ्गारा भवन्ति। तेभ्योऽङ्गारेभ्योऽर्चिरुदंति। प्रजापंतिस्तर्ध्वाग्नः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। प्रजापंतावेवास्यांग्निहोत्र हृतं भवति। शरोऽङ्गारा अध्यूहन्ते। ब्रह्म तर्द्धाग्नः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। ब्रह्मन्नेवास्यांग्निहोत्र हृतं भवति। वसुंषु रुद्रेष्वांदित्येषु विश्वंषु देवेषुं। इन्द्रें प्रजापंतौ ब्रह्मन्ं। अपंरिवर्गमेवास्यैतासुं देवतांसु हुतं भवति। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५९॥ आदित्यासह्यित्यं पृवास्यांग्रहोत्र इतं भवति देवषुं चत्वारं च (यद्विजिहितः प्रथमः सर्वं प्रव वित्रामङ्गांगः शरोऽङ्गांग् ब्रह्म वसुंब्रहो॥॥—[१०]

ऋतं त्वां सत्येन परिषिश्चामीतिं सायं परिषिश्चति। सत्यं त्वर्तेन परिषिश्चामीतिं

प्रातः। अग्निर्वा ऋतम्। असावांदित्यः सृत्यम्। अग्निमेव तदांदित्येनं सायं परिषिश्चति। अग्निनांऽऽदित्यं प्रातः सः। यावदहोरात्रे भवंतः। तावंदस्य लोकस्यं। नार्तिर्न रिष्टिः। नान्तो न पर्यन्तौऽस्ति। यस्यैवं विदुषौऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उंचैनदेवं वेदं॥६०॥

अङ्गिरसः प्रजापंतिरुग्नि॰ रुद्र उंत्तरावंतीं ब्रह्मवादिनोंऽग्निहोत्रप्रांयणा युज्ञाः प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मुन्बद्रौद्रङ्गविं दक्षिणतस्त्रयो वे यद्ग्निमृतं त्वां सुत्येनैकांदश॥११॥ अङ्गिरसः प्रैव तेनं पश्नेव यन्निमार्ष्टि यो वा अग्निहोत्रस्योपसर्दो दक्षिणतः पष्टिः॥६०॥

अङ्गिरसो य उंचैनदेवं वेदं॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्ट्रके द्वितीयः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंजेयेति। स एतं दर्शहोतारमपश्यत्। तं मर्नसा-ऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बेंऽजुहोत्। ततो वै स प्रजा असृजत। ता अस्माथ्सृष्टा अपाँकामन्। ता ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रहुत्वम्। यः कामयेत् प्रजांयेयेतिं। स दर्शहोतारं मर्नसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बे जुंहुयात्। प्रजापंतिवै दर्शहोता॥१॥

प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजांयते। मनंसा जुहोति। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। पूर्णयां जुहोति। पूर्ण इंव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। न्यूंनया जुहोति। न्यूंनाद्धि प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। प्रजाना सृष्ट्यै॥२॥

दुर्भस्तम्बे जुंहोति। एतस्माद्वै योनैः प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यस्मादेव योनैः प्रजापंतिः प्रजा असृजत। तस्मादेव योनेः प्रजायते। ब्राह्मणो दक्षिणत उपास्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येव प्रजायते। ग्रहो भवति। प्रजानाः सृष्टानां

धृत्यैं। यं ब्राँह्मणं विद्यां विद्वाः सं यशो नर्च्छेत्॥३॥ सोऽरंण्यं परेत्यं। दुर्भस्तम्बमुद्गर्थ्यं। ब्राह्मणं दंक्षिणतो निषाद्यं। चतुंर्होतॄन्व्याचंक्षीत

पृतद्वै देवानां पर्मं गृह्यं ब्रह्मं। यचतुंर्होतारः। तदेव प्रकाशं गंमयति। तदेनं

प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयति। दुर्भस्तम्बमुद्भथ्य व्याचेष्टे॥४॥

अग्निवान् वै दंर्भस्तम्बः। अग्निवत्येव व्याचंष्टे। ब्राह्मणो दंक्षिणत उपाँस्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येवैनं यशं ऋच्छति। ईश्वरन्तं यशोर्तोरित्यांहः। यस्यान्ते व्याचष्ट् इतिं। वर्स्तस्मै देयः। यदेवैनं तत्रोपनमंति। तदेवावं रुन्थे॥५॥

अग्निमादधानो दशहोत्राऽरिणमवं दध्यात्। प्रजातमेवैनमा धत्ते। तेनैवोद्दुत्यांग्निहोत्रं जुंहुयात्। प्रजातमेवैनं जुहोति। ह्विर्निर्वपस्यं दशहोतारं व्याचंक्षीत। प्रजातमेवैनं

निर्वपति। सामिधेनीरंनुवृक्ष्यं दर्शहोतारं व्याचंक्षीत। सामिधेनीरेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। अथो युज्ञो वै दर्शहोता। युज्ञमेव तंनुते॥६॥ दर्शहोता सृष्ट्यां ऋच्छेद्धाचेष्टे रुन्ध एव तंनुते निर्ऋतिगृहीतुं पश्चं

अभिचरं दर्शहोतारं जुहुयात्। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिदंशमी। सप्राणमेवैनमभि चरति। एतावद्वै पुरुषस्य स्वम्। यावंत्प्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तदभि चंरति। स्वकृंत इरिंणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वा अस्यै निर्ऋंतिगृहीतम्। निर्ऋतिगृहीत पुवैनं निर्ऋत्या ग्राहयति। यद्वाचः कूरम्। तेन वर्षंद्वरोति। वाच एवैनं कूरेण प्र वृंश्वति। ताजगार्तिमार्च्छति॥७॥

प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंजेयेतिं। स पृतं चतुंर्होतारमपश्यत्। तं मनसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयंऽजुहोत्। ततो वै स दंर्शपूर्णमासावं-

सृजत। तावंस्माथ्सृष्टावपांकामताम्। तौ ग्रहेंणागृह्णात्। तद्ग्हंस्य ग्रहत्वम्। दर्शपूर्णमासावालभंमानः। चतुर्होतारं मनसाऽनुद्रुत्याहवनीये जुहुयात्। दुर्शुपूर्णमासावेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते॥८॥

ग्रहों भवति। दुर्शपूर्णमासयोः सृष्टयोर्धृत्यै। सोऽकामयत चातुर्मास्यानि

सृजे्येतिं। स पृतं पश्चंहोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयेंऽजुहोत्। ततो् वै स चांतुर्मास्यान्यंसृजत। तान्यंस्माथ्सृष्टान्यपांकामन्। तानि ग्रहेणागृह्णात्। तद्गहंस्य ग्रहुत्वम्। चाुतुर्मास्यान्यालभंमानः॥९॥

पश्चेहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयें जुहुयात्। चातुर्मास्यान्येव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। ग्रहों भवति। चातुर्मास्याना ५ सृष्टानां धृत्यैं। सोऽकामयत पशुबन्ध ५ सृंजे्येति। स एत १ षड्ढोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स पंशुबुन्धमंसृजत। सोंस्माथ्सृष्टोऽपांकामत्। तं ग्रहेणागृह्णात्॥१०॥ तद्गहंस्य ग्रहत्वम्। पृशुबन्धेनं युक्ष्यमाणः। षङ्कोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयें जुहुयात्। पुशुबन्धमेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। पुशुबन्धस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। सोंऽकामयत सौम्यमंध्वर सृंजेयेतिं। स पुत सप्तहोंतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयेंऽजुहोत्। ततो वै स सौम्यमंध्वरमंसृजत॥११॥ सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपांकामत्। तं ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रहुत्वम्। दीक्षिष्यमाणः।

सप्तहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयं जुहुयात्। सौम्यमेवाध्वर स्ष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। सौम्यस्याध्वरस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। देवेभ्यो वै यज्ञो न प्राभंवत्। तमेतावच्छः समंभरन्॥१२॥

यथ्संम्भाराः। ततो वै तेभ्यों यज्ञः प्राभंवत्। यथ्संम्भारा भवंन्ति। यज्ञस्य प्रभूँत्यै। आतिथ्यमासाद्य व्याचेष्टे। यज्ञमुखं वा आतिथ्यम्। मुख्त एव यज्ञः सम्भृत्य प्र तंनुते। अयंज्ञो वा एषः। योऽप्रक्षीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्नीर्व्याचेष्टे। यज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजनंनाय। उपसथ्सु व्याचेष्टे। एतद्वै पत्नीनामायतंनम्। स्व एवनां आयत्नेऽवंकल्पयति॥१३॥

पूजापंतिरकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोऽतप्यत। स त्रिवृत् स्तोमंमसृजत। तं पश्चद्शः स्तोमो मध्यत उदंतृणत्। तौ पूर्वपक्षश्चापरपक्षश्चाभवताम्। पूर्वपक्षं देवा अनवसृज्यन्त। अपरपक्षमन्वसुराः। ततो देवा अभवन्। पराऽसुराः। यं कामयेत्

वसीयान्थ्स्यादितिं॥१४॥

तं पूर्वपक्षे यांजयेत्। वसीयानेव भवति। यं कामयेत् पापीयान्थ्स्यादिति। तमंपरपक्षे यांजयेत्। पापीयानेव भवति। तस्मौत्पूर्वपक्षोऽपरपक्षात्कंरुण्यंतरः। प्रजापितिर्वे दशहोता। चतुरहोता पश्चहोता। षङ्कोता सप्तहोता। ऋतवंः संवथ्सरः॥१५॥

प्रजाः प्रश्वं इमे लोकाः। य एवं प्रजापंतिं बहोर्भ्यार्स्सं वेदं। बहोर्व भूयाँ-भवति। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजतः। स इन्द्रमिप् नासृजतः। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येति। सौंऽब्रवीत्। यथाऽहं युष्माङ्स्तप्साऽसृक्षिः। एविमन्द्रं जनयध्वमिति॥१६॥

ते तपोंऽतप्यन्त। त आत्मिन्निन्द्रंमपश्यन्। तमंब्रुवन्। जायस्वेतिं। सौंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्य इतिं। ऋतून्थ्यंवथ्युरम्। प्रजाः पुशून्। इमाँ ह्योकानित्यंब्रुवन्। तं वै माऽऽहुंत्या प्र जनयुतेत्यंब्रवीत्॥१७॥ तं चतुंरहोत्रा प्राजंनयन्। यः कामयेत वीरो म् आजांयेतेतिं। स चतुंरहोतारं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे चतुंरहोता। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहेति ग्रहेण जुहोति। आऽस्यं वीरो जांयते। वीर॰ हि देवा एतयाऽऽहुंत्या प्राजंनयन्। आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकेंऽस्पर्धन्त। व्यं पूर्वे सुवर्गं लोकिमियाम वयं पूर्व इतिं॥१८॥

त अदित्या एतं पश्चहोतारमपश्यन्। तं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नींध्रेऽजुहवुः। ततो वै ते पूर्वे सुवर्गं लोकमांयन्। यः सुंवर्गकांमः स्यात्। स पश्चहोतारं पुरा प्रांतरनु-वाकादाग्नींध्रे जुहुयात्। संवथ्सरो वै पश्चहोता। संवथ्सरः सुंवर्गो लोकः। संवथ्सर एवर्तुषुं प्रतिष्ठायं। सुवर्गं लोकमेति। तेंऽब्रुवन्निङ्गरस आदित्यान्॥१९॥

क्वं स्था क्वं वः सुद्धो हुव्यं वंक्ष्याम् इति। छन्दः स्वित्यंब्रुवन्। गायत्रियां त्रिष्टुभि जगत्यामिति। तस्माच्छन्दः सु सुद्ध आदित्येभ्यः। आङ्गीरसीः प्रजा हुव्यं वंहन्ति। वहंन्त्यस्मै प्रजा बुलिम्। ऐनुमप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं। द्वादंश्

मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकविर्शः। एतस्मिन्वा एष श्रितः। एतस्मिन्प्रतिष्ठितः। य एवमेत १ श्रितं प्रतिष्ठितं वेदे। प्रत्येव तिष्ठति॥२०॥

स्यादिति संबध्सरो जंनयध्यमितीत्यंत्रबोत्पूर्व इत्यांदित्यानृतवः पद्वाः प्रजापतिरकामयत प्रजायेयेति। स एतं दर्शहोतारमपश्यत्। तेनं दशधाऽऽत्मानं

विधायं। दशहोत्राउतप्यत। तस्य चित्तिः सुगासीत्। चित्तमाज्यम्। तस्यैतावंत्येव वागासीत्। एतावान् यज्ञऋतुः। स चतुर्होतारमसृजत। सोऽनन्दत्॥२१॥

असृंक्षि वा इमिमिति। तस्य सोमों हुविरासींत्। स चतुंर्होत्राऽतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भूरिति व्याहंरत्। स भूमिमसृजत। अग्निहोत्रं दंर्शपूर्णमासौ यजूर्षि। स द्वितीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भुव इति व्याहंरत्॥२२॥

सौंऽन्तिरिक्षमसृजतः। चातुर्मास्यानि सामानि। स तृतीयंमतप्यतः। सोऽताम्यत्। स सुवरिति व्याहरत्। स दिवंमसृजतः। अग्निष्टोममुक्थ्यंमितरात्रमृचंः। एता वै व्याह्रंतय इमे लोकाः। इमान्खलु वै लोकानन् प्रजाः पृशवृश्छन्दार्रस् प्राजायन्तः। द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् २)

प्र प्रजयां पृशुभिर्मिथुनैर्जायते। स पश्चंहोतारमसृजत। स ह्विर्नाविंन्दत। तस्मै सोमंस्तुनुवं प्रायंच्छत्। पृतत्तं ह्विरितिं। स पश्चंहोत्राऽतप्यत। सोंऽताम्यत्। स प्रत्यङ्कंबाधत। सोऽसुंरानसृजत। तद्स्याप्रियमासीत्॥२४॥

तद्दुर्वर्ण् हरेण्यमभवत्। तद्दुर्वर्णस्य हिरेण्यस्य जन्मं। स द्वितीयंमतप्यत। सोऽताम्यत्। स प्राङंबाधतः। स देवानंसृजतः। तदंस्य प्रियमांसीत्। तथ्सुवर्ण् हिरेण्यमभवत्। तथ्सुवर्णस्य हिरेण्यस्य जन्मं। य एव॰ सुवर्णस्य हिरेण्यस्य जन्म वेदं॥२५॥

सुवर्णं आत्मनां भवति। दुर्वर्णों उस्य भ्रातृं व्यः। तस्मां थ्सुवर्ण् हिरंण्यं भार्यम्। सुवर्णं एव भवति। ऐनं प्रियं गंच्छति नाप्रियम्। स सप्तहोतारमसृजत। स सप्तहोत्रैव सुवर्णं लोकमैत्। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदत। त्रयस्त्रिष्शेन प्रत्यंतिष्ठत्। एकविष्शेन रुचंमधत्त॥२६॥

प्रतिंगृह्णाति। वर्रुणायाश्वमित्यांह॥२९॥

एकवि श्रोन रुचं धत्ते। सप्तदशेन प्र जांयते। तस्मांध्सप्तदशः स्तोमो न निर्हृत्यंः। प्रजापंतिर्वे संप्तदशः। प्रजापंतिमेव मध्यतो धंत्ते प्रजाँत्यै॥२७॥ अनन्दद्भव इति व्याहंरद्वेदांसीद्वेदांधत्त प्रजाँत्यै॥ देवा वै वर्रुणमयाजयन्। स यस्यैयस्यै देवतांयै दक्षिणामनंयत्। तामंब्रीनात्। तें ऽब्रुवन्। व्यावृत्य प्रतिंगृह्णाम। तथां नो दक्षिणा न ब्लेष्यतीतिं। ते व्यावृत्य प्रत्यंगृह्णन्। ततो वै तान्दक्षिणा नाष्ठीनात्। य एवं विद्वान्व्यावृत्य दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। नैनं दक्षिंणा ब्रीनाति॥२८॥ राजां त्वा वरुंणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिरंण्यमित्यांह। आग्नेयं वै

हिरंण्यम्। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रतिगृह्णाति। सोमाय वास इत्याह। सौम्यं वै वासंः।

स्वयैवैनंद्देवतंया प्रतिंगृह्णाति। रुद्राय गामित्यांह। रौद्री वै गौः। स्वयैवैनां देवतंया

सप्तदशेन प्राजायत। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यजेते। सप्तहौत्रैव स्वर्गं लोकमेति।

त्रिणवेन स्तोमेनेभ्यो लोकेभ्यो भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। त्रयस्नि॰शेन प्रतिं तिष्ठति।

वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतया प्रतिंगृह्णाति। प्रजापंतये पुरुषमित्यांह। प्राजापत्यो वे पुरुषः। स्वयैवैनं देवतया प्रतिं गृह्णाति। मनवे तल्पमित्यांह। मानवो वे तल्पंः। स्वयैवैनं देवतया प्रतिं गृह्णाति। उत्तानायांङ्गीर्सायान् इत्यांह। इयं वा उत्तान आंङ्गीरसः॥३०॥

अन्यैवैन्त्प्रतिं गृह्णाति। वैश्वान्यर्चा रथं प्रतिं गृह्णाति। वैश्वान्रो वै देवत्या रथंः। स्वयैवनं देवत्या प्रतिं गृह्णाति। तेनांमृत्त्वमंश्यामित्यांह। अमृतंमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। वयो दात्र इत्यांह। वयं पुवैनं कृत्वा। सुव्गं लोकं गंमयति। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्र इत्यांह॥३१॥

यद्वै शिवम्। तन्मयंः। आत्मनं एवैषा परींतिः। क इदं कस्मां अदादित्यांह। प्रजापंतिर्वे कः। स प्रजापंतये ददाति। कामः कामायेत्यांह। कामेंन हि ददांति। कामेन प्रतिगृह्णातिं। कामों दाता कामः प्रतिग्रहीतेत्यांह॥३२॥

कामो हि दाता। कामः प्रतिग्रहीता। काम र समुद्रमाविशेत्यांह। समुद्र इंव हि

कामः। नेव हि काम्स्यान्तोऽस्ति। न संमुद्रस्यं। कामेन त्वा प्रतिगृह्णामीत्यांह। येन कामेन प्रतिगृह्णातिं। स एवैनंम्मुष्मिं श्लोके काम् आगंच्छति। कामैतत्तं एषा तें काम् दक्षिणेत्यांह। कामं एव तद्यजंमानोऽमुष्मिं श्लोके दक्षिणामिच्छति। न प्रतिग्रहीतिरिं। य एवं विद्वान्दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। अनृणामेवैनां प्रतिं गृह्णाति॥३३॥

ब्रीनात्यश्वमित्यांहाङ्गीरुसः प्रंतिग्रहीत्र इत्यांह प्रतिग्रहीतेत्यांहु दक्षिणेत्यांह चृत्वारिं च॥—————[५]

अन्तो वा एष यज्ञस्ये। यद्दंशममहंः। दृशमेऽहंन्थ्सर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंवन्ति। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। अन्नाद्यमवं रुन्थते। तिसृभिः स्तुवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्योऽन्नाद्यमवं रुन्थते। पृश्चिवतीर्भवन्ति। अन्नं वै पृश्चि॥३४॥

अन्नमेवावं रुन्थते। मनंसा प्रस्तौति। मनुसोद्गायित। मनंसा प्रतिं हरित। मनं इव हि प्रजापितः। प्रजापित्रास्यै। देवा वै सुर्पाः। तेषािम्य राज्ञी। यथ्सपिराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्ति। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥३५॥

चतुंर्होतृन् होता व्याचंष्टे। स्तुतमनुंश १ सति शान्त्यै। अन्तो वा एष यज्ञस्यं।

यद्दंशममहंः। पृतत्खलु वै देवानां पर्मं गृह्यं ब्रह्मं। यचतुंर्होतारः। दृश्मेऽहु श्चतुंर्होतृच्याचंष्टे। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। पर्मं देवानां गृह्यं ब्रह्मावं रुन्धे। तदेव प्रकाशं गमयति॥३६॥

तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयित। वार्चं यच्छित। यज्ञस्य धृत्यै। यज्ञमानदेवत्यं वा अहं। भ्रातृव्यदेवत्यां रात्रिः। अहा रात्रिं ध्यायेत्। भ्रातृव्यस्यैव तल्लोकं वृंङ्के। यिद्वा वार्चं विसृजेत्। अहुर्भातृंव्यायोच्छि १ षेत्। यन्नक्तं विसृजेत्। रात्रिं भ्रातृंव्यायोच्छि १ षेत्। अधिवृक्षसूर्ये वार्चं विसृजिति। एतावन्तमेवास्में लोकमुच्छि १ षित। यार्वदादित्यों ऽस्तमेतिं॥३७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टाः समंश्लिष्यन्। ता रूपेणानुप्राविंशत्। तस्मांदाहुः। रूपं वै प्रजापंतिरितिं। ता नाम्नाऽनु प्राविंशत्। तस्मांदाहुः। नाम् वै प्रजापंतिरितिं। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्ध्वयेते॥३८॥

मित्रमेव भेवतः। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजत। स इन्द्रमिप नासृंजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येति। स आत्मित्रिन्द्रंमपश्यत्। तमंसृजत। तं त्रिष्टुग्वीर्यं भूत्वाऽनु प्राविंशत्। तस्य वर्ज्ञः पश्चद्शो हस्त आपंद्यत। तेनोदय्यास्रानभ्यभवत्॥३९॥

य एवं वेदं। अभि भ्रातृंव्यान्भवति। ते देवा असुंरैर्विजित्यं। सुवर्गं लोकमायन्। तें ऽमुष्मिं होके व्यंक्षुध्यन्। तें ऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीरसं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेतिं॥४०॥ तस्य वा इयं क्रृप्तिः। यदिदं किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मै। स वा अयं मंनुष्येषु युज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यो हव्यं वहित। य एवं वेदं। उपैनं यज्ञो नमिति। सोंऽमन्यत। अभि वा इमेंऽस्माल्लोकादमुं लोकं कमिष्यन्तु इतिं। स वार्चस्पते हृदिति व्याहंरत्। तस्मौत्पुत्रो हृदंयम्। तस्मांदस्माल्लोकादमुं लोकं नाभि कामयन्ते। पुत्रो हि हृदंयम्॥४१॥

ह्वयेंते अभवत्कल्पयेतीतिं चत्वारिं च

देवा वै चतुरहोतृभिर्यज्ञमंतन्वत। ते वि पाप्मना भ्रातृंव्येणाजंयन्त। अभि सुंवर्गं

लोकमंजयन्। य एवं विद्वाः श्चतुं रहोतृभिर्यज्ञं तंनुते। वि पाप्मना भ्रातृं व्येण जयते। अभि सुंवर्गं लोकं जयति। षड्ढोंत्रा प्रायणीयमा सांदयति। अमुष्मे वै लोकाय षड्ढोता। प्रन्ति खलु वा एतथ्सोमम्। यदंभिषुण्वन्ति॥४२॥

ऋजुधैवैनंमुमुं लोकं गंमयित। चतुंर्होत्राऽऽतिथ्यम्। यशो वै चतुंर्होता। यशं एवाऽऽत्मन्धंत्ते। पश्चंहोत्रा पृशुमुपंसादयित। सुवृग्यों वै पश्चंहोता। यजंमानः पृशुः। यजंमानमेव सुवृगं लोकं गंमयित। ग्रहान्गृहीत्वा सप्तहांतारं जुहोति। इन्द्रियं वै स्प्तहोता॥४३॥

ड्डन्ड्रियमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। यो वै चतुंर्होतॄननुसव्नं तुर्पयंति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन सोमपीथो नंमित। बहिष्यवमाने दशंहोतारं व्याचंक्षीत। माध्यं दिने पर्वमाने चतुंर्होतारम्। आर्भवे पर्वमाने पश्चंहोतारम्। पितृयुज्ञे षङ्कांतारम्। यज्ञायज्ञियंस्य स्तोत्रे सप्तहोतारम्। अनुसुवनमेवैना ईस्तर्पयति॥४४॥

तृप्यंति प्रजयां प्शुभिः। उपैन सोमपीथो नमिति। देवा वै चतुर्होतृभिः स्त्रमांसत। ऋद्विंपरिमितं यशंस्कामाः। तैंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषात्रस्तथ्महास्दितिं। सोमुश्चतुर्होत्रा। अग्निः पश्चंहोत्रा। धाता षड्ढोंत्रा॥४५॥

इन्द्रंः सप्तहोँत्रा। प्रजापंतिर्दशंहोत्रा। तेषा १ सोम १ राजांनं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापाँकामत्। तेनं प्रलायंमचरत्। तं देवाः प्रैषेः प्रैषंमैच्छन्। तत्प्रैषाणां प्रैषत्वम्। निविद्धिन्यंवेदयन्। तन्निविदाँन्निवित्त्वम्॥४६॥

आप्रीभिराप्नुवन्। तदाप्रीणांमाप्रित्वम्। तमंघ्नन्। तस्य यशो व्यंगृह्णतः। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वेव गृहीताः। तैंऽब्रुवन्। यो वै नः श्रेष्ठोऽभूत्॥४७॥

तमंबधिष्म। पुनेरिमः सुंवामहा इतिं। तं छन्दोभिरसुवन्त। तच्छन्दंसां छन्दस्त्वम्। साम्रा समानंयन्। तथ्साम्नः सामृत्वम्। उक्थैरुदंस्थापयन्। तदुक्थानांमुक्थत्वम्। य एवं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥४८॥

सर्वमायुरिति। सोमो वै यशंः। य एवं विद्वान्थ्सोमंमागच्छंति। यशं एवैनंमृच्छति। तस्मादाहुः। यश्चैवं वेद् यश्च न। तावुभौ सोम्मागच्छतः। सोमो हि यशंः। तं त्वाऽव यशं ऋच्छुतीत्यांहुः। यः सोमे सोमं प्राहेति। तस्माथ्सोमे सोमः प्रोच्यंः। यशं एवैनंमृच्छिति॥४९॥

अभिषुण्वन्तिं सप्तहोंता तर्पयति पङ्गौत्रा निवित्त्वमभूँतिष्ठति प्राहेति द्वे चं॥————[८]

ड्दं वा अग्रे नैव किं च नाऽऽसींत्। न द्यौरांसीत्। न पृंथिवी। नान्तरिक्षम्। तदसंदेव सन्मनोऽकुरुत् स्यामितिं। तदंतप्यत। तस्मांत्तेपानाद्धूमोऽजायत। तद्भ्यों-ऽतप्यत। तस्मांत्तेपानादिग्निरंजायत। तद्भ्योंऽतप्यत॥५०॥

तस्मौत्तेपानाञ्चोतिरजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादर्चिरंजायत। तद्भूयो-ऽतप्यत। तस्मौत्तेपानान्मरीचयोऽजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादुंदारा अंजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तद्भ्रमिव समहन्यत। तद्वस्तिमीभनत्॥५१॥ स संमुद्रोऽभवत्। तस्माँध्समुद्रस्य न पिंबन्ति। प्रजनंनिमव् हि मन्यंन्ते। तस्माँत्पृशोर्जायंमानादापंः पुरस्ताँद्यन्ति। तद्दशंहोताऽन्वंसृज्यत। प्रजापंतिर्वे दशंहोता। य एवं तपंसो वीर्यं विद्वाङ्स्तप्यंते। भवंत्येव। तद्वा इदमापंः सिल्लमांसीत्। सोऽरोदीत्प्रजापंतिः॥५२॥

स कस्मां अज्ञि। यद्यस्या अप्रंतिष्ठाया इतिं। यद्पस्वंवापंद्यत। सा पृथिव्यंभवत्। यद्यमृष्ट। तद्न्तिरक्षिमभवत्। यदूर्ध्वमुदमृष्ट। सा द्यौरंभवत्। यदरोदीत्। तदनयों रोदस्त्वम्॥५३॥

य एवं वेदे। नास्यं गृहे रुंदिन्ति। एतद्वा एषां लोकानां जन्मं। य एवमेषां लोकानां जन्म वेदे। नैषु लोकेष्वार्तिमार्च्छति। स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। स इमां प्रतिष्ठां वित्वाऽकांमयत् प्रजांयेयेति। स तपोंऽतप्यत। सौंऽन्तर्वानभवत्। स ज्यनादसुरानसृजत॥५४॥

तेभ्यों मृन्मये पात्रेऽन्नंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपांहत। सा

तिमिस्राऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यतः। सोंन्तर्वानभवत्। स प्रजनंनादेव प्रजा अंसृजतः। तस्मांदिमा भूयिष्ठाः। प्रजनंनाद्धेना असृंजतः॥५५॥ ताभ्यों दारुमये पात्रे पयोऽदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्। तामपांहतः। सा जोथ्स्रांऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यतः। सोंऽन्तर्वानभवत्। स उंपपृक्षाभ्यांमेवर्तूनंसृजतः। तेभ्यों रज्ते पात्रे घृतमंदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्॥५६॥

तामपांहत। सोंऽहोरात्रयोः सन्धिरंभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपों-ऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स मुखाँद्देवानंसृजत। तेभ्यो हरिंते पात्रे सोमंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपांहत। तदहंरभवत्॥५७॥

पुते वै प्रजापंतेर्दीहाँः। य पुवं वेदं। दुह पुव प्रजाः। दिवा वै नोंऽभूदितिं। तद्देवानां देवत्वम्। य पुवं देवानां देवत्वं वेदं। देववांनेव भवति। पुतद्वा अंहोरात्राणां जन्मं। य पुवमंहोरात्राणां जन्म वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति॥५८॥ अस्तोऽधि मनोंऽसृज्यत। मनेः प्रजापंतिमसृजत। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तद्वा इदं मनस्येव पंरमं प्रतिष्ठितम्। यदिदं किं चं। तदेतच्छ्वांवस्यसन्नाम् ब्रह्मं। व्युच्छन्तीं व्युच्छन्तीं व्युच्छन्त्यस्मै वस्यंसीवस्यसी व्युच्छति। प्रजायते प्रजयां प्शुभिः। प्रपंरमेष्ठिनो मात्रांमाप्नोति। य एवं वेदं॥५९॥

अग्निरंजायत् तद्भृषोऽतप्यताभिनदरोदीत्प्रजापंतीरोद्स्त्वमंसृज्ञतासंजत घृतमंदुह्द्याऽस्य सा तुनूरासीदहंरभवदच्छिति वेदं (हुदं धूमौऽग्निज्यौंतिर्चिर्मरीचय उदारास्तद्भ्रः स ज्ञथन्।थ्सा तिमिस्रा स प्रजनंनाथ्सा जोथ्सा स उंपपृक्षाभ्याः सीऽहोरात्रयौः सन्धिः स मुखात्तदहर्देववौन्मृन्मयं दारुमयं रज्ञते हरिते तेभ्यस्ताभ्यो द्वे तेऽत्रं पर्यो घृतः सोमम्॥॥

प्रजापंतिरिन्द्रंमसृजतानुजाव्रं देवानांम्। तं प्राहिणोत्। परेहि। एतेषां देवानामधिपतिरेधीति। तं देवा अंब्रुवन्। कस्त्वमिसं। व्यं वै त्वच्छ्रेयार्श्सः स्म इतिं। सोंऽब्रवीत्। कस्त्वमिसं व्यं वै त्वच्छ्रेयार्श्सः स्म इतिं। सोंऽब्रवीत्। कस्त्वमिसं व्यं वै त्वच्छ्रेयार्श्सः स्म इतिं मा देवा अंवोच्नितिं। अथ वा इदं तर्हिं प्रजापंतौ हरं आसीत्॥६०॥

यदस्मिन्नांदित्ये। तदेनमब्रवीत्। पृतन्मे प्रयंच्छ। अथाहमेतेषां देवानामधिपतिर्भविष कोऽहः स्यामित्यंब्रवीत्। पृतत्प्रदायेतिं। पृतथ्स्या इत्यंब्रवीत्। यदेतद्भवीषीतिं। द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् २)

को हु वै नाम प्रजापंतिः। य एवं वेदं॥६१॥ विदुरेंनं नाम्नां। तदंस्मै रुकां कृत्वा प्रत्यंमुश्चत्। ततो वा इन्द्रों

देवानामधिपतिरभवत्। य एवं वेदे। अधिपतिरेव संमानानां भवति। सोऽमन्यत। किं किं वा अंकर्मितिं। स चन्द्रं म् आह्रेति प्रालंपत्। तच्चन्द्रमंसश्चन्द्रम्सत्वम्। य एवं वेदे॥६२॥

चन्द्रवानेव भविति। तं देवा अंब्रुवन्। सुवीर्यों मर्या यथां गोपायत् इति। तथ्सूर्यस्य सूर्यत्वम्। य एवं वेदं। नैनं दभ्नोति। कश्च नास्मिन्वा इदिमेन्द्रियं प्रत्यस्थादिति। तदिन्द्रंस्येन्द्रत्वम्। य एवं वेदं। इन्द्रियाव्येव भविति॥६३॥

अयं वा इदं पर्मोऽभूदितिं। तत्परमेष्ठिनः परमेष्ठित्वम्। य एवं वेदं। परमामेव काष्ठां गच्छति। तं देवाः संमन्तं पर्यविशन्। वसंवः पुरस्तांत्। रुद्रा दंक्षिणतः। आदित्याः पृश्चात्। विश्वं देवा उत्तर्तः। अङ्गिरसः प्रत्यश्चम्॥६४॥ साध्याः पराश्चम्। य एवं वेदं। उपैन समानाः संविशन्ति। स प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा आवंयत्। ता अंस्मै नातिष्ठन्तान्नाद्यांय। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। दक्षिणतः पर्यायन्। स दंक्षिणतः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः॥६५॥

पृश्चात्पर्यायन्। स पृश्चात्पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्। उत्तर्तः पर्यायन्। स उत्तर्तः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्॥६६॥

मुखंमुत्तर्तः। ऊर्ध्वा उदांयन्। स उपरिष्टान्त्र्यंवर्तयत। ताः सर्वतोमुखो भूत्वा-ऽऽवंयत्। ततो वै तस्मैं प्रजा अतिष्ठन्तान्नाद्याय। य एवं विद्वान्परि च वर्तयंते नि चं। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा अति। तिष्ठंन्तेऽस्मै प्रजा अन्नाद्यांय। अन्नाद एव भंवति॥६७॥

अर्भोद्वेद चन्द्रमुस्तं य एवं वेदैन्द्रियाय्येव भवति प्रत्यश्चं मुर्खं दक्षिण्तो मुर्खं पृक्षात्रवं च॥—————[१०] प्रजापतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामिति। स एतं दशहोतारमपश्यत्। तं प्रायुंङ्का तस्य प्रयुंक्ति बहोर्भयांनभवत्। यः कामयंत बहोर्भ्यांन्थ्स्यामिति। स दर्शहोतारं प्रयुंक्षीत। बहोरेव भूयांन्भवति। सोऽकामयत वीरो म् आजांयेतेति। स दर्शहोतुश्चतुंरहोतारं निरिमिमीत। तं प्रायुंङ्का॥६८॥

तस्य प्रयुक्तीन्द्रोऽजायत। यः कामयेत वीरो म् आजायेतेति। स चतुर्होतार् प्रयुंश्चीत। आऽस्यं वीरो जायते। सोऽकामयत पशुमान्थ्रस्यामिति। स चतुर्होतुः पश्चंहोतार् निरेमिमीत। तं प्रायुंङ्का। तस्य प्रयुंक्ति पशुमानंभवत्। यः कामयेत पशुमान्थ्रस्यामिति। स पश्चंहोतार् प्रयुंश्चीत॥६९॥

पृशुमानेव भवति। सोंऽकामयत्त्वों मे कल्पेर्न्नितिं। स पश्चेहोतुः षङ्कांतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्का तस्य प्रयुंत्त्यृतवोंऽस्मा अकल्पन्त। यः कामयेत्त्वों मे कल्पेर्न्नितिं। स षङ्कांतारं प्रयुंजीत। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः। सोंऽकामयत सोम्पः सोंमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोंमयाजी जांयेतेतिं॥७०॥

स षङ्क्षीतुः सप्तहीतार् निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्क। तस्य प्रयुंक्ति सोम्पः

द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् २)

सोमयाज्यंभवत्। आऽस्यं सोमपः सोमयाज्यंजायत। यः कामयेत सोमपः सोमयाजी स्याम्। आ में सोमपः सोमयाजी जांयेतेति। स सप्तहोतारं प्रयुंश्चीत। सोमुप एव सोमयाजी भवति। आऽस्यं सोमपः सोमयाजी जांयते। स वा एष पशुः पंश्चधा प्रतिं तिष्ठति॥७१॥

पुद्भिर्मुखेन। ते देवाः पुशून् वित्वा। सुवुर्गं लोकमायन्। तेंऽमुष्मिँ लोक व्यंक्षुध्यन्। तेंंऽब्रुवन्। अमृतंः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीरसं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेतिं। तस्य वा इयं क्रुप्तिः॥७२॥

यदिदं किं चे। य एवं वेदे। कल्पेतेऽस्मै। स वा अयं मेनुष्येषु यज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सन्धो देवेभ्यों हव्यं वंहति। य एवं वेदं। उपैनं यज्ञो नंमति। यो वै चतुंरहोतृणां निदानं वेदं। निदानंवान्भवति। अग्निहोत्रं वै दशंहोतुर्निदानम्। द्रशुपूर्णमासौ चतुरहोतुः। चातुर्मास्यानि पश्चंहोतुः। पशुबन्धः षङ्कोतुः। सौम्यौ- द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् २)

ऽध्वरः सप्तहोतुः। पुतद्वै चर्तुर्होतृणां निदानम्। य पुवं वेदे। निदानवान्भवति॥७३॥

अमिमीत तं प्रायुंङ्क पश्चहोतार् प्र युंश्चीत जायेतेतिं तिष्ठति क्कृषि्दर्यहोतुर्निदानर्थ सप्त चं॥———————————[११]

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः स्ंज्येति प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ स्ंज्येति प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति स तपः स त्रिवृतं प्रजापंतिरकामयत् दर्शहोतार् तेनं दश्धाऽऽत्मानं देवा वै वर्षणमन्तो वै प्रजापंतिस्ताः सृष्टाः समंश्चिष्यं देवा वै चतुरहोतृभिरिदं वा अग्रे प्रजापंतिरिन्द्रं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयानेकांदश॥११॥ प्रजापंतिस्तद्वहंस्य प्रजापंतिरकामयतानयैवेनृत्तस्य वा हुयं क्कृषिस्तस्मांत्तेपानाङ्योतिर्यदस्मिन्नांदित्ये स पङ्कोतुः सप्तहोतार् त्रिसंप्तिः॥७३॥

प्रजापंतिरकामयत निदानंवान्भवति॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्विमितिं। यदेवैषु चंतुर्धा होतांरः। तेन् चतुंर्होतारः। तस्माचतुंर्होतार उच्यन्ते। तचतुर्रहोतृणां चतुर्होतृत्वम्। सोमो वै चतुंर्होता। अग्निः पश्चहोता। धाता षङ्कोता। इन्द्रः सप्तहोता॥१॥

प्रजापंतिर्दर्शहोता। य एवं चतुंर्होतृणामृद्धिं वेदे। ऋभ्रोत्येव। य एषामेवं बन्धुतां वेदे। बन्धुंमान्भवति। य एषामेवं क्रृप्तिं वेदे। कल्पतेऽस्मै। य एषामेवमायतेनं वेदे। आयतंनवान्भवति। य एषामेवं प्रतिष्ठां वेदे॥२॥

प्रत्येव तिष्ठति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। दशंहोता चतुंर्होता। पश्चंहोता षड्ढोता सप्तहोता। अथ कस्माचतुंर्होतार उच्यन्त इति। इन्द्रो वै चतुंर्होता। इन्द्रः खलु वै श्रेष्ठों देवतानामुपदेशंनात्। य एविमन्द्रक्ष् श्रेष्ठं देवतानामुपदेशंनाद्वेदं। विसिष्ठः समानानां भवति। तस्माच्छ्रेष्ठंमायन्तं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्।

तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् २)

सप्तहोंता प्रतिष्ठां वेदं बुध्यन्ते षद्वं॥=

अयमवांसादितिं। कीर्तिरंस्य पूर्वाऽऽगंच्छति जनतांमायतः। अथो एनं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्। अयमवांसादितिं॥३॥

दक्षिणां प्रतिग्रहीष्यन्थ्सप्तदंशकृत्वोऽपाँन्यात्। आत्मानंमेव सिनिन्धे। तेजंसे वीर्याय। अथौं प्रजापंतिरेवैनाँ भूत्वा प्रतिगृह्णाति। आत्मनो-ऽनाँत्यै। यद्येन्मार्त्विज्याद्वृतः सन्तं निर्हरेरन्। आग्नीध्रे जुहुयाद्दशंहोतारम्। चतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पुरस्ताँत्प्रत्यिङ्ग्रिष्ठन्। प्रतिलोमं विग्राहम्॥४॥

प्राणानेवास्योपं दासयित। यद्येनं पुनंरुप् शिक्षेयुः। आग्नींध्र एव जुंहुयाद्दशंहोतारम्। चतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पृश्चात्प्राङासीनः। अनुलोममविंग्राहम्। प्राणानेवास्मे कल्पयित। प्रायंश्चित्ती वाग्घोतेत्यृतुमुखऋतुमुखे जुहोति। ऋतूनेवास्मे कल्पयित। कल्पन्तेऽस्मा ऋतवः॥५॥

क्रुप्ता अंस्मा ऋतव् आयंन्ति। षड्ढांता वै भूत्वा प्रजापंतिरिद सर्वमसृजत। स

मनोऽसृजत। मन्सोऽधि गायत्रीमंसृजत। तद्गायत्रीं यशं आर्च्छत्। तामाऽलंभत। गायत्रिया अधि छन्दा इंस्यसृजत। छन्दोभ्योऽधि साम। तथ्साम् यशं आर्च्छत्। तदाऽलंभत॥६॥

साम्रोऽधि यज्र्इंष्यसृजत। यजुर्भ्योऽधि विष्णुम्। तद्विष्णुं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। विष्णोरध्योषंधीरसृजत। ओषंधीभ्योऽधि सोमम्। तथ्सोम् यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। सोमादधि पशूनंसृजत। पशुभ्योऽधीन्द्रम्॥७॥

तिदन्द्रं यशं आर्च्छत्। तदेनुन्नाति प्राच्यंवत। इन्द्रं इव यश्स्वी भंवति। य एवं वेदं। नैनं यशोऽति प्रच्यंवते। यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वमृत्तान एवाऽऽङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृहीतं नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सर्वमृत्तानस्त्वांऽऽङ्गीर्सः प्रतिगृह्णात्वत्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आङ्गीर्सः। अनयैवैनृत्प्रतिगृह्णाति। नैन र् हिनस्ति। बुर्हिषा प्रतीयाद्वां वाऽश्वं वा। एतद्वे पंशूनां प्रियं धामं। प्रियेणैवैनं धाम्ना प्रत्येति॥८॥

विग्राहंमृतवस्तदाऽलंभुतेन्द्रं गृह्वीयाथ्यद्वं॥

यो वा अविंद्वान्निवर्तयंते। विशीर्षा सपाँप्गाऽमुष्मिँ ह्योके भंवति। अथ यो विद्वान्निवर्तयंते। सशीर्षा विपाँप्गाऽमुष्मिँ ह्योके भंवति। देवता वै सप्त पृष्टिकामा न्यवर्तयन्त। अग्निश्चं पृथिवी चं। वायुश्चान्तिरक्षं च। आदित्यश्च द्यौश्चं चन्द्रमाँ। अग्निन्यंवर्तयत। स साहस्रमंपुष्यत्॥९॥

पृथिवी न्यंवर्तयत। सौषंधीभिवंनस्पितिभिरपुष्यत्। वायुर्न्यंवर्तयत। स मरीचीभिरपुष्यत्। अन्तिरिक्षं न्यंवर्तयत। तद्वयोभिरपुष्यत्। आदित्यो न्यंवर्तयत। स रिश्मिभिरपुष्यत्। द्यौर्न्यंवर्तयत। सा नक्षंत्रैरपुष्यत्। चन्द्रमा न्यंवर्तयत। सोऽहोरात्रैर्र्धमासैर्मासैर्ऋतुभिः संवथ्सरेणांपुष्यत्। तान्योषान्युष्यति। याङ्स्ते-ऽपुष्यन्। य पृवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परि च॥१०॥

 प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै सौंऽर्धिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। अर्धिमिन्द्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान् हिरंण्यं प्रतिगृह्णाति। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णाति। अर्धमस्येन्द्रियस्यापंत्रामित। तस्य वै सोमंस्य वासंः प्रतिजग्रहुषंः। तृतीयिमिन्द्रिय-स्यापांत्रामत्॥११॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स तृतींयमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। तृतींयमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। य एवं विद्वान् वासंः प्रतिगृह्णाति। अथ् योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णाति। तृतींयमस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वै रुद्रस्य गां प्रतिजग्रहुषंः। चतुर्थमिन्द्रियस्यापाकामत्। तामेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स चंतुर्थमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त॥१२॥

चतर्थपिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्यानां प्रविगदावि। अथ

चृतुर्थिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान्गां प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। चृतुर्थमंस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वै वर्रुणस्याश्वं प्रतिजग्रहुषंः। पृश्चमिनिद्रियस्यापाकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स पश्चमिनिद्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। पृश्चमिनिद्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वानश्वं प्रतिगृह्णातिं॥१३॥

अथ योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। पृश्चममंस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वै प्रजापंतेः पुरुषं प्रतिजग्रहुषंः। षृष्ठमिन्द्रियस्यापाकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स षृष्ठमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। षृष्ठमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। षृष्ठमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। य पृवं विद्वान्पुरुषं प्रतिगृह्णातिं। अथ योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। षष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंक्रामित॥१४॥

तस्य वै मनोस्तर्ल्पं प्रतिजग्रहुषंः। सप्तमिनिद्वयस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वे स संप्तमिनिद्वयस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। सप्तमिनिद्वयस्या-ऽऽत्मन्नुपाधंत्त। य पृवं विद्वाङ्स्तर्ल्पं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। सप्तममस्येन्द्रियस्यापंकामित। तस्य वा उत्तानस्याँऽऽङ्गीर्सस्याप्रांणत्प्रतिजग्रहुषंः। अष्टमिनिद्वयस्यापाँकामत्॥१५॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै सोंऽष्ट्रमिनिद्वयस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। अष्ट्रमिनिद्वय-स्याऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वानप्राणत्प्रतिगृह्णाति। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णाति। अष्टममंस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वमृत्तान एवा-ऽऽङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिंगृहीतं नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सर्वमृत्तानस्त्वाऽऽङ्गीर्सः प्रतिंगृह्णात्वत्येव प्रतिंगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आङ्गीरसः। अनयैवैनत्प्रतिंगृह्णाति। नैनर् हिनस्ति॥१६॥

तृतीयमिन्द्रियस्यापाँकामचतुर्थमिन्द्रियस्यात्मज्ञुपापृत्तार्थं प्रतिगृह्णातं पृष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंकामत्यष्टमिनिद्र्यस्यापाँकामत्प्रतिगृह्णीयाचृत्वारिं च (तस्य वा अग्नेर्हिरंण्यूर् सोमंस्य वास्त्सदेतेनं रुद्रस्य गान्तामेतेन् वर्रुणस्यार्थं प्रजापंतेः पृरुषं मनोस्तल्पन्तमेतेनीत्तानस्य तदेतेनाप्राण्चद्वै। अर्थं तृतीयमष्टमं तचेत्र्यं तां पंश्रमर पृष्ठर संतुमन्तम्। तदेतेन् द्वे तामेतेनैकं तमेतेन् त्रीणि तदेतेनेकम्॥॥

[४]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यद्दशंहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनं प्रजा अंसृजन्तेतिं। प्रजापंतिना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनं प्रजा अंसृजन्त। यचतुंर्होतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनौषंधीरसृजन्तेतिं। सोमेन वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१७॥

तेनौषंधीरसृजन्त। यत्पश्चंहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्।

केनैभ्यो लोकेभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। केनैंषां पृशूनंवृञ्जतेतिं। अग्निना वै ते गृहपंतिना-ऽऽर्भुवन्। तेनैभ्यो लोकेभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। तेनैषां पृशूनंवृञ्जत। यथ्बङ्कोतारः सूत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्भुवन्॥१८॥

केन्तूनंकल्पयन्तेति। धात्रा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन्तूनंकल्पयन्त। यथ्मप्तहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केन् सुवंरायन्। केन्माँ श्लोकान्थ्समंतन्वन्नितिं। अर्यम्णा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन् सुवंरायन्। तेनेमाँ श्लोकान्थ्समंतन्वन्नितिं॥१९॥

पृते वै देवा गृहपंतयः। तान् य पृवं विद्वान्। अप्यन्यस्यं गार्हप्ते दीक्षंते। अवान्तरमेव स्त्रिणांमृभ्नोति। यो वा अर्यमणुं वेदं। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। यज्ञो वा अर्यमा। आर्यावस्तिरिति वै तमांहुर्यं प्रशर्सन्ति। आर्यावस्तिर्भवति। य पृवं वेदं॥२०॥

यद्वा इदं किं चे। तथ्सर्वं चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधि युज्ञो निर्मितः। स य

आर्धुवृत्रार्धुवृत्रित्येवं वेदाँति सर्वा दिशोऽभि जंयति (वै तेनं सुत्रङ्केनं॥)॥■

एवं विद्वान् विवर्दत। अहमेव भूयों वेद। यश्चतुंर्होतृन् वेदिति। स ह्येव भूयो वेदे। यश्चतुंर्होतृन् वेदे। यो वै चतुंर्होतृणा् होतृन् वेदे। सर्वासु प्रजास्वन्नमित्त॥२१॥

सर्वा दिशोऽभि जंयति। प्रजापंतिर्वे दर्शहोतृणा् होताँ। सोम्श्चतुंर्होतृणा् होताँ। अग्निः पश्चंहोतृणा् होताँ। धाता षड्ढांतृणा् होताँ। अर्यमा सप्तहोतृणा् होताँ। एते वै चतुंर्होतृणा् होतांरः। तान् य एवं वेदं। सर्वासु प्रजास्वन्नंमित्त। सर्वा दिशोऽभि जंयति॥२२॥

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा व्यंस्रश्सत। स हृदंयं भूतोंऽशयत्। आत्मन् हा (३) इत्यह्वंयत्। आपः प्रत्यंशृण्वन्। ता अंग्निहोत्रेणेव यंज्ञकृतुनोपं पूर्यावंर्तन्त। ताः कुसिन्धमुपौंहन्। तस्मादिग्निहोत्रस्यं यज्ञकृतोः। एकं ऋत्विक्। चृतुष्कृत्वोऽह्वंयत्।

अग्निर्वायुरांदित्यश्चन्द्रमाः॥२३॥ ते प्रत्यंशृण्वन्। ते दंर्शपूर्णमासाभ्यांमेव यंज्ञऋतुनोपं पर्यावंर्तन्त। त पश्चकृत्वोऽह्वंयत्। पशवः प्रत्यंशृण्वन्। ते चांतुर्मास्यैरेव यंज्ञऋतुनोपं पर्यावंर्तन्त। त उपौहं लोमं छुवीं मार्समिस्थं मुज्जानम्। तस्माचातुर्मास्यानां यज्ञक्रतोः॥२४॥ पश्चर्त्विजः। षुद्गत्वोऽह्वंयत्। ऋतवः प्रत्यंश्रण्वन्। ते पंशुबन्धेनैव यंज्ञऋतुनोपंपर्यावंर्तन्त। त उपौंहन्थ्स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवांश्चं प्राणम्। तस्मौत्पशुबन्धस्यं यज्ञऋतोः। षड्दत्विजः। सप्तकृत्वोऽह्वंयत्। होत्राः प्रत्यंशृण्वन्। ताः सौम्येनैवाध्वरेणं यज्ञऋतुनोर्पपर्यावंर्तन्त॥२५॥ ता उपौहन्थ्सप्त शीर्षणयान्त्राणान्। तस्माथ्सौम्यस्याध्वरस्यं यज्ञकृतोः। सुप्त होत्राः प्राचीर्वषंद्भवन्ति। दुशुकृत्वोऽह्वंयत्। तपुः प्रत्यंशृणोत्। तत्कर्मणैव संवध्सरेण सर्वैर्यज्ञऋतुभिरुपं पर्यावंर्तत। तथ्सर्वमात्मानमपंरिवर्गमुपौहत्। तस्मांथ्संवथ्सरे

उपौहङ्श्वत्वार्यङ्गानि। तस्माद्दर्शपूर्णमासयौर्यज्ञकतोः। चत्वारं ऋत्विजः।

सर्वे यज्ञकृतवोऽवंरुध्यन्ते। तस्माद्दशंहोता चतुंर्होता। पश्चंहोता षङ्कोता सप्तहोता। एकहोत्रे बुलि॰ हंरन्ति। हर्रन्त्यस्मै प्रजा बुलिम्। ऐन्मप्रतिख्यातं गच्छति। य

एवं वेदं॥२६॥

चुन्द्रमाश्चातुर्मास्यानां यज्ञकृतोरंष्वरेणं यज्ञकृतुनोपं पूर्यावर्तन्त सप्तहोता चृत्वारिं च॥————[६]

प्रजापंतिः पुरुषमसृजतः। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममायमन्नंमस्त्वितिं। सोंऽबिभेत्। सर्वं वे माऽयं प्र धंक्ष्यतीतिं। स एता श्रश्चतुं रहोतृनात्मस्परंणानपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स आत्मानंमस्पृणोत्। यदंग्निहोत्रं जुहोतिं। एकंहोतारमेव तद्यंज्ञकृत्मांप्रोत्यग्निहोत्रम्॥२७॥

कुसिन्धं चाऽऽत्मनेः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयित। चतुर्रहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति दर्शपूर्णमासौ। चत्वारिं चाऽऽत्मनोऽङ्गानि स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयित। समित्पंश्चमी। पश्चंहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति चातुर्मास्यानिं। लोमं छुवीं मार्समित्यं मुज्ञानम्॥२८॥

तानि चाऽऽत्मनः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयित।

अग्निहोत्रं मञ्जानन्द्विर्जुहोत्यपंरिवर्गङ् स्पृणोत्येकं च॥

द्विर्जुंहोति। षड्ढोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति पशुब्न्धम्। स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवाँश्चं प्राणम्। तानिं चाऽऽत्मनंः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति॥२९॥

स्मिथ्संप्तमी। स्प्तहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति सौम्यमंध्वरम्। स्प्त चाऽऽत्मनंः शीर्षण्याँन्प्राणान्थ्स्गृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयित। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमाँष्टिं। द्विः प्राश्ञांति। दशंहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति संवथ्सरम्। सर्वं चाऽऽत्मान्मपंरिवर्गः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति॥३०॥

प्रजापंतिरकामयत् प्रजांयेयेति। स तपोंऽतप्यतः। सोंंऽन्तर्वानभवतः। स हरिंतः श्यावोंऽभवतः। तस्माथ्स्र्यंन्तर्वत्नाः। हरिंणी सती श्यावा भवति। स विजायंमानो गर्भेणाताम्यतः। स तान्तः कृष्णः श्यावोंऽभवतः। तस्मांत्तान्तः कृष्णः श्यावो भवति।

तस्यासुरेवाजींवत्॥३१॥

तेनासुनाऽसुंरानसृजत। तदसुंराणामसुर्त्वम्। य एवमसुंराणामसुर्त्वं वेदं। असुंमानेव भंवति। नैन्मसुंर्जहाति। सोऽसुंरान्थ्सृष्ट्वा पितेवांमन्यत। तदनुं पितॄनं-सृजत। तित्पंतृणां पिंतृत्वम्। य एवं पिंतृणां पिंतृत्वं वेदं। पितेवैव स्वानां भवति॥३२॥

यन्त्यंस्य पितरो हवम्ं। स पितृन्थ्सृष्ट्वाऽऽमंनस्यत्। तदनुं मनुष्यांनसृजतः। तन्मंनुष्यांणां मनुष्यत्वम्। य पृवं मंनुष्यांणां मनुष्यत्वं वेदं। मृनुस्त्येव भेवति। नैनं मनुंर्जहाति। तस्मैं मनुष्यांन्थ्ससृजानायं। दिवां देवत्राऽभंवत्। तदनुं देवानंसृजतः। तद्देवानां देवत्वम्। य पृवं देवानां देवत्वं वेदं। दिवां हैवास्यं देवत्रा भंवति। तानि वा पृतानि चत्वार्यम्भारसि। देवा मंनुष्याः पितरोऽसुंराः। तेषु सर्वेष्वम्भो नभं इव भवति। य पृवं वेदं॥३३॥

अजीवुथ्स्वानां भवति देवानंसृजत सप्त चं॥🕳

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यो वा इमं विद्यात्। यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायंरियात्। न पुराऽऽयंषः प्र मीयेत। पृशुमान्थस्यात्। विन्देतं प्रजाम्। यो वा इमं वेदं॥३४॥

यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुरिति। न पुराऽऽयुंषः प्र मीयते। पृशुमान्भवति। विन्दते प्रजाम्। अन्धः पंवते। अपोऽभि पंवते। अपोऽभि सम्पंवते॥३५॥

अस्याः पंवते। इमाम्भि पंवते। इमाम्भि सम्पंवते। अग्नेः पंवते। अग्निम्भि पंवते। अग्निम्भि सम्पंवते। अन्तरिक्षात्पवते। अन्तरिक्षम्भि पंवते। अन्तरिक्षम्भि सम्पंवते। आदित्यात्पंवते॥३६॥

आदित्यम्भि पंवते। आदित्यम्भि सम्पंवते। द्योः पंवते। दिवंम्भि पंवते। दिवंम्भि सम्पंवते। दिग्भ्यः पंवते। दिशोऽभि पंवते। दिशोऽभि सम्पंवते। स यत्पुरस्ताद्वातिं। प्राण एव भूत्वा पुरस्तांद्वाति॥३७॥ तस्मौत्पुरस्ताद्वान्तम्। सर्वाः प्रजाः प्रति नन्दन्ति। प्राणो हि प्रियः प्रजानाम्। प्राण इंव प्रियः प्रजानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष प्राण एव। अथ् यद्दंक्षिणतो वातिं। मात्तरिश्वेव भूत्वा दंक्षिणतो वांति। तस्मौद्दक्षिणतो वान्तं विद्यात्। सर्वा दिश आ वांति॥३८॥

सर्वा दिशोऽनु वि वांति। सर्वा दिशोऽनु सं वातीतिं। स वा एष मांतिरश्वैव। अथ् यत्पश्चाद्वातिं। पर्वमान एव भूत्वा पृश्चाद्वांति। पूतमंस्मा आहंरन्ति। पूतमुपंहरन्ति। पूतमंश्ञाति। य एवं वेदं। स वा एष पर्वमान एव॥३९॥

अथ यदुंत्तर्तो वाति। सृवितैव भूत्वोत्तर्तो वाति। सृवितेव स्वानां भवति। य एवं वेदे। स वा एष संवितैव। ते य एनं पुरस्तादायन्तंमुप्वदेन्ति। य एवास्यं पुरस्तांत्पाप्मानः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति। पुरस्तादितंरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ य एनं दक्षिणत आयन्तंमुप्वदंन्ति॥४०॥

य एवास्यं दक्षिणतः पाप्मानंः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति। दक्षिणत इतरान्पाप्मनंः

सचन्ते। अथ् य एनं पृश्चादायन्तंमुप् वर्दन्ति। य पृवास्यं पृश्चात्पाप्मानः। ता इस्तेऽपं घ्रन्ति। पृश्चादितंरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ् य एनमुत्तर्त आयन्तंमुप् वर्दन्ति। य पृवास्यौत्तर्तः पाप्मानः। ता इस्तेऽपं घ्रन्ति॥४१॥

उत्तर्त इतंरान्याप्मनः सचन्ते। तस्मदिवं विद्वान्। वीवं नृत्येत्। प्रेवं चलेत्। व्यस्येवाक्ष्यौ भाषित। मण्टयेदिव। ऋाथयेदिव। शृङ्गायेतेव। उत मोपं वदेयुः। उत में पाप्मान्मपं हन्युरितिं। स यान्दिशं स्निमेष्यन्थस्यात्। यदा तान्दिशं वातो वायात्। अथ प्रवेयात्। प्र वां धावयेत्। सातमेव रेदितं व्यूढं गुन्धमभि प्रच्यंवते। आऽस्य तं जनपदं पूर्वां कीर्तिर्गच्छिति। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। य एवं वेदं॥४२॥

पूजापंतिः सोम् र राजांनमसृजत। तं त्रयो वेदा अन्वंसृज्यन्त। तान् हस्तें-ऽकुरुत। अथ ह सीतां सावित्री। सोम् र राजांनं चकमे। श्रद्धामु स चंकमे। साऽऽहं पितरं प्रजापंतिमुपंससार। त॰ होवाच। नमंस्ते अस्तु भगवः। उपं त्वाऽयानि॥४३॥

प्रत्वां पद्ये। सोमं वै राजांनं कामये। श्रृद्धामु स कांमयत् इतिं। तस्यां उ ह स्थांग्रमंलङ्कारं केल्पयित्वा। दशंहोतारं पुरस्तांद्धाख्यायं। चतुर्होतारं दक्षिणतः। पश्चंहोतारं पश्चात्। षड्ढोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारश्च पत्निंभिश्च मुखेंऽलङ्कत्यं॥४४॥

आऽस्यार्धं वंब्राज। ता १ होदीक्ष्यों वाच। उप मा वंर्तस्वेतिं। त १ होवाच। भोगं तु म आचंक्ष्व। एतन्म आचंक्ष्व। यत्तें पाणावितिं। तस्यां उ ह त्रीन् वेदान्प्रदंदौ। तस्मादुह स्त्रियो भोगमैव हारयन्ते। स यः कामयेत प्रियः स्यामितिं॥४५॥

यं वां कामयेत प्रियः स्यादितिं। तस्मां एतः स्थांग्रमंलङ्कारं केल्पयित्वा। दर्शहोतारं पुरस्तांद्याख्याये। चतुंरहोतारं दक्षिणतः। पश्चेहोतारं पृश्चात्। षङ्कोतारमुत्तरतः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारैश्च पत्निभिश्च मुखेंऽलङ्कृत्यं।

आस्यार्धं व्रंजेत्। प्रियो हैव भंवति॥४६॥

तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् २)

ब्रह्मौत्मुन्वदंसृजतः। तदंकामयतः। समात्मनां पद्येयेतिं। आत्मुन्नात्मन्नित्यामंत्रयतः। तस्मैं दश्म हूतः प्रत्यंशृणोत्। स दशंहूतोऽभवत्। दशंहूतो हु वै नामैषः।

देवाः॥४७॥ आत्मुन्नात्मुन्नित्याम् त्रयत। तस्मै सप्तम १ हृतः प्रत्यंशृणोत्। स स्प्तहूंतोऽभवत्।

तं वा एतं दर्शहृत सन्तम्। दर्शहोतेत्याचंक्षते परोक्षेण। परोक्षंप्रिया इव हि

सप्तर्हतो हु वै नामैषः। तं वा एतः सप्तर्हतः सन्तम्। सप्तहोतेत्याचेक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षेप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामन्नयत। तस्मै षष्ठः हूतः प्रत्यंश्रणोत्। स षड्ढंतोऽभवत्॥४८॥

षड्ढूंतो हु वै नामैषः। तं वा एतः षड्ढूंतः सन्तम्। षड्ढ्योतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामन्त्रयत। तस्मै पञ्चमः हूतः

प्रत्यंशृणोत्। स पश्चंहूतोऽभवत्। पश्चंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं पश्चंहूत्र् सन्तम्। पश्चंहोतेत्याचंक्षते परोक्षंण॥४९॥

प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै चतुर्थ हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स चतुर्हृतोऽभवत्। चतुर्हृतो हु वै नामैषः। तं वा एतं चतुर्हृत सन्तम्। चतुर्हृतित्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तमंत्रवीत्। त्वं वै मे नेदिष्ठ हूतः प्रत्यंश्रौषीः। त्वयंनानाख्यातार् इति। तस्मान्नु हैना् श्रुश्चतुर्होतार् इत्याचंक्षते। तस्मांच्छुश्रूषुः पुत्राणा् हृ हृद्यंतमः। नेदिष्ठो हृद्यंतमः। नेदिष्ठो ब्रह्मंणो भवति। य एवं वेदं॥५०॥

ब्रह्मवादिनः किं दक्षिणां यो वा अविद्वान्तस्य वै ब्रह्मवादिनो यद्दर्शहोतारः प्रजापंतिर्व्ययः प्रजापंतिः पुरुषं प्रजापंतिरकामयत् स तपुः सौँऽन्तर्वान्ब्रह्मवादिनो

यो वा हुमं विद्यात्प्रजापंतिः सोम्॰् राजांनुं ब्रह्मांत्मुन्वदेकांदश॥११॥

ब्रह्मवादिनस्तस्य वा अग्नेर्यद्वा इदं किं चं प्रजापंतिरकामयत् य एवास्यं दक्षिणतः पंश्चाशत्॥५०॥

ब्रह्मवादिनो य एवं वेदं॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

जुष्टो दमूंना अतिथिर्दुरोणे। इमं नो यज्ञम्पं याहि विद्वान्। विश्वां अग्नेऽभियुजों विहत्यं। शृत्रूयतामा भरा भोजनानि। अग्ने शर्धं महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानि सन्तु। सञ्जास्पत्य स्यम्मा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महा सि। अग्ने यो नोऽभितो जनः। वृको वारो जिघा सित॥१॥

ताइस्त्वं वृत्रहं जिहि। वस्वस्मभ्यमा भेर। अग्ने यो नोऽिभदासंति। समानो यश्च निष्ट्यः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। त्विमेन्द्राभिभूरंिस। देवो विज्ञातवीर्यः। वृत्रहा पुरुचेतनः। अप प्राचं इन्द्र विश्वारं अमित्रान्॥२॥

अपापांचो अभिभूते नुदस्व। अपोदींचो अपंशूराधरा चं ऊरौ। यथा तव शर्मुन्मदेम। तिमन्द्रं वाजयामिस। मृहे वृत्राय हन्तंवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। युजे रथं गुवेषंणुर् हिरेभ्याम्। उप ब्रह्मांणि जुजुषाणमंस्थुः। विबांधिष्टास्य रोदंसी महित्वा। इन्द्रों वृत्राण्यंप्रतीजंघन्वान्॥३॥

ह्व्यवाहंमभिमातिषाहम्ं। रक्षोहणं पृतंनासु जिष्णुम्। ज्योतिष्मन्तं दीद्यंतं पुरंन्धिम्। अग्निः स्विष्टकृतमा हुवेम। स्विष्टमग्ने अभि तत्पृणाहि। विश्वां देव पृतंना अभि ष्य। उरुं नः पन्थां प्रदिशन्विभांहि। ज्योतिष्मद्धेह्यज्ञरं न आर्युः। त्वामंग्ने हिवष्मंन्तः। देवं मर्तास ईडते॥४॥

मन्ये त्वा जातवेदसम्। स ह्व्या वंक्ष्यानुषक्। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः। सिन्धुं न नावा दुंरिताऽतिं पर्षि। अग्नें अत्रिवन्मनंसा गृणानः। अस्माकंं बोध्यविता तुनूनांम्। पूषा गा अन्वेतु नः। पूषा रंक्षुत्वर्वतः। पूषा वाजर्ं सनोतु नः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः॥५॥

सो अस्मा अभंयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अर्घृणिः सर्ववीरः। अप्रयुच्छन्पुर एतु प्रजानन्। त्वमंग्ने सुप्रथां असि। जुष्टो होता वरेण्यः। त्वयां युज्ञं वितन्वते। चत्र्थः प्रश्नः (अष्टकम् २)

अग्नी रक्षा रेसि सेधित। शुक्रशोचिरमंर्त्यः। शुचिः पावक ईड्यः। अग्ने रक्षां णो अर्ह्सः॥६॥

प्रतिं ष्म देव रीषंतः। तिपंष्ठैरजरों दह। अग्ने हश्सि न्यंत्रिणम्ं। दीद्यन्मर्त्येष्वा। स्वे क्षयें शुचिव्रत। आ वांत वाहि भेषजम्। वि वांत वाहि यद्रपंः। त्व र हि विश्वभंषजः। देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातौ वातः॥७॥

आ सिन्धोरा पंरावर्तः। दक्षंं मे अन्य आवार्तु। परान्यो वांतु यद्रपंः। यददो वांत ते गृहे। अमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसें। ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह आवंह। वात आवांतु भेषजम्। शम्भूमंयोभूनों हृदे॥८॥

प्र ण आयू ५ षि तारिषत्। त्वमंग्ने अयासिं। अया सन्मनंसा हितः। अया सन् हव्यमूहिषे। अया नों धेहि भेषजम्। इष्टो अग्निराहुंतः। स्वाहांकृतः पिपर्तु नः। स्वगा देवेभ्यं इदं नर्मः। कामों भूतस्य भव्यंस्य। सुम्राडेको विराजित॥९॥

स इदं प्रति पप्रथे। ऋतूनुथ्मृंजते वशी। कामस्तदग्रे समंवर्तताधि। मनसो

रेतः प्रथमं यदासीत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। त्वयां मन्यो स्रथमार्जन्तः। हर्षमाणासो धृषता मंरुत्वः। तिग्मेषंव आयुंधा स्रशिशांनाः। उप प्रयन्ति नरों अग्निरूपाः॥१०॥

मन्युर्भगों मन्युरेवासं देवः। मन्युर्होता वर्रुणो विश्ववेदाः। मन्युं विशं ईडते देवयन्तीः। पाहि नो मन्यो तपंसा श्रमेण। त्वमंग्ने व्रत्भृच्छुचिः। देवा असादया इह। अग्ने ह्व्याय वोढवे। व्रतानुबिभ्नंद्वतपा अदाभ्यः। यजां नो देवा अज्ञरंः सुवीरंः। दधद्रव्नांनि सुविदानो अंग्ने। गोपाय नो जीवसे जातवेदः॥११॥

चक्षुंषो हेते मनंसो हेते। वाचों हेते ब्रह्मंणो हेते। यो मांऽघायुरंभिदासंति। तमंग्ने मेन्या मेनिं कृणा यो मा चक्षुंषा यो मनंसा। यो वाचा ब्रह्मंणाऽघायुरंभिदासंति।

जिघारं सत्यमित्रां अघुन्वानींडते सर्वा अरहंसो वातो हृदे राजत्यग्निरूपाः सुविदानो अंग्रु एकं च॥

मन्या मान कृणा या मा चक्षुषा या मनसा। या बाचा ब्रह्मणाऽघायुराम्दासाता तयाँऽग्रे त्वं मेन्या। अमुममेनेनिं कृणा यत्किश्चासौ मनसा यर्च वाचा। य्जैर्जुहोति यर्जुषा हिविर्भिः॥१२॥ तन्मृत्युर्निर्ऋंत्या संविदानः। पुरादिष्टादाहुंतीरस्य हन्तु। यातुधाना निर्ऋतिरादुरक्षः। ते अस्य घ्रन्त्वनृतेन स्त्यम्। इन्द्रेषिता आज्यमस्य मथ्नन्तु। मा तथ्समृद्धि यद्सौ क्रोतिं। हन्मिं तेऽहं कृत॰ ह्विः। यो में घोरमचींकृतः। अपाँश्चौ त उभौ बाह्। अपनद्याम्यास्यम्॥१३॥

अपं नह्यामि ते बाहू। अपं नह्याम्यास्यम्। अग्नेर्देवस्य ब्रह्मणा। सर्वं तेऽविधषं कृतम्। पुराऽमुष्यं वषद्भारात्। यज्ञं देवेषुं नस्कृधि। स्विष्टम्स्माकं भूयात्। माऽस्मान्प्रापन्नरातयः। अन्तिं दूरे सुतो अग्ने। भ्रातृंव्यस्याभिदासंतः॥१४॥

वृषद्भारेण वर्ज्रेण। कृत्या॰ हंन्मि कृतामृहम्। यो मा नक्तं दिवां सायम्। प्रातश्चाह्नों निपीयंति। अद्या तिमंन्द्र वर्ज्रेण। भातृंव्यं पादयामिस। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तन्त्वां। प्रपंद्ये सगुः सार्श्वः। सह यन्मे अस्ति तेनं। ईडें अग्निं विपश्चितम्॥१५॥

गिरा यज्ञस्य सार्धनम्। श्रुष्टीवानंन्धितावानम्। अग्ने श्वकेमं ते वयम्। यमं देवस्यं वाजिनंः। अति द्वेषार्थसे तरेम। अवंतं मा समंनसौ समोकसौ। सर्वतसौ सरेतसौ। उभौ मामंवतञ्जातवेदसौ। शिवौ भंवतम् च नंः। स्वयं कृण्वानः सुगमप्रयावम्॥१६॥ तिग्मशृंङ्गो वृष्भः शोशुंचानः। प्रत्नः स्धस्थमनु पश्यमानः। आ तन्तुंम्ग्निर्दिव्यं त्तान। त्वन्नस्तन्तंरुत सेतंरग्ने। त्वं पन्थां भवसि देवयानंः। त्वयाऽग्ने पष्ठं

तंतान। त्वन्नस्तन्तुंरुत सेतुंरग्ने। त्वं पन्थां भवसि देवयानंः। त्वयाँऽग्ने पृष्ठं वयमारुहेम। अथां देवैः संधमादं मदेम। उदुंत्तमं मुंमुग्धि नः। वि पाशं मध्यमञ्चृत। अवांधमानिं जीवसे॥१७॥

व्य सोम व्रते तवं। मनस्त्नूषु बिभ्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमिह। इन्द्राणी देवी सुभगं सुपत्नीं। उद शेन पित्विद्यं जिगाय। त्रि श्रिष्टं स्या ज्यनं योजनानि। उपस्थ इन्द्र स्थिवंरं बिभिर्ति। सेनां हु नामं पृथिवी धनञ्जया। विश्वव्यंचा अदितिः सूर्यत्वक्। इन्द्राणी देवी प्रासहा ददाना॥१८॥

सा नों देवी सुहवा शर्म यच्छत्। आत्वांऽहार्षम्नतरंभूः। ध्रुवस्तिष्ठाविंचाचिलः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत्। ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृंथि्वी। ध्रुवं विश्वंमिदं जगत्। ध्रुवा ह पर्वता इमे। ध्रुवो राजां विशाम्यम्। इहैवैधि मा व्यंथिष्ठाः॥१९॥

पर्वत ड्वाविचाचितः। इन्द्रं इवेह ध्रुवस्तिष्ठ। इह राष्ट्रमुं धारय। अभितिष्ठ पृतन्यतः। अधेरे सन्तु शत्रंवः। इन्द्रं इव वृत्रहा तिष्ठ। अपः क्षेत्रांणि स्अयन्। इन्द्रं एणमदीधरत्। ध्रुवं ध्रुवेणं हृविषां। तस्मैं देवा अधिब्रवन्। अयं च्ब्रह्मंणस्पतिः॥२०॥

जुष्टीं नरो ब्रह्मणा वः पितृणाम्। अक्षंमव्ययं न किलारिषाथ। यच्छक्वंरीषु बृह्ता रवेण। इन्द्रे शुष्ममदंधाथा वसिष्ठाः। पावका नः सरंस्वती। वाजेंभिर्वाजिनींवती। यज्ञं वेष्ठु धिया वंसुः। सरंस्वत्यभिनों नेषि वस्यः। मा पंस्फरीः पर्यसा मा न आधंक्। जुषस्वं नः सुख्यां वेश्यां च॥२१॥

मा त्वक्षेत्राण्यरंणानि गन्म। वृञ्जे ह्विर्नमंसा ब्र्हिर्ग्नौ। अयामि सुग्घृतवंती सुवृक्तिः। अम्यक्षि सद्म सदेने पृथिव्याः। अश्रांयि युज्ञः सूर्ये न चक्षुंः। इहार्वाञ्चमितं चत्र्थः प्रश्नः (अष्टकम् २)

ह्वये। इन्द्रं जैत्रांय जेतंवे। अस्माकंमस्तु केवंलः। अवश्विमिन्द्रंमुमुतो हवामहे। यो गोजिद्धंनुजिदंश्वजिद्यः॥२२॥

इमं नों यज्ञं विंह्वे जुंषस्व। अस्य कुंमों हरिवो मेदिनं त्वा। असंम्मृष्टो जायसे मातृवोः शुचिः। मन्द्रः क्विरुदंतिष्ठो विवस्वतः। घृतेनं त्वा वर्धयन्नग्न आहुत। धूमस्तें केतुरंभविद्दिवि श्रितः। अग्निरग्रैं प्रथमो देवतानाम्। संयातानामृत्तमो विष्णुंरासीत्। यजमानाय परिगृह्यं देवान्। दीक्षयेद हिवरा गंच्छतन्नः॥२३॥

अग्निश्चं विष्णो तपं उत्तमं महः। दीक्षापालेभ्योऽवनंत् हि शंक्रा। विश्वेदिवैर्यिज्ञियैः संविदानौ। दीक्षामस्मै यजंमानाय धत्तम्। प्र तिद्वष्णुः स्तवते वीर्याय। मृगो न भीमः कुंचरो गिरिष्ठाः। यस्योरुषुं त्रिषु विक्रमंणेषु। अधि क्षियन्ति भुवंनानि विश्वां। नूमर्तो दयते सिन्ष्यन् यः। विष्णंव उरुगायाय दाशंत्॥२४॥

प्र यः सुत्राचा मनंसा यजांतै। एतावंन्तुन्नर्यमा विवासात्। विचंक्रमे पृथिवीमेष

विष्णुंरस्तु त्वस्पस्तवीयान्। त्वेष इ ह्यंस्य स्थविंरस्य नामं॥२५॥
होतांरं चित्ररंथमध्वरस्यं। यज्ञस्यंयज्ञस्य केतु र रुशंन्तम्। प्रत्यंधिं देवस्यंदेवस्य
महा। श्रिया त्वंग्निमितिंथिं जनांनाम्। आ नो विश्वांभिक्तिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं
जुषाणो हेर्यश्व याहि। वरीवृजध्स्थविंरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधद्वृषंण र शुष्मंमिन्द्र।

एताम्। क्षेत्रांय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्। ध्रुवासों अस्य कीरयो जनांसः। उरुक्षिति ध

सुजनिमा चकार। त्रिर्देवः पृथिवीमेष एताम्। विचंक्रमे शतर्चसं महित्वा। प्र

इन्द्रंः सुवर्षा जनयन्नहांनि। जिगायोशिग्भः पृतंना अभि श्रीः॥२६॥ प्रारोचयन्मनंवे केतुमहाँम्। अविन्द्ज्योतिर्बृह्ते रणांय। अश्विनाववंसे निह्वंये वाम्। आ नूनं यांतर सुकृतायं विप्रा। प्रात्युंक्तेनं सुवृता रथेन। उपागंच्छत्मवसागंतन्नः। अविष्टं धीष्वश्विना न आसु। प्रजावद्रेतो अह्रंयं नो अस्तु। आवाँ तोके तनये तूर्तुजानाः। सुरत्नांसो देववीतिं गमेम॥२७॥ त्वर सोम् ऋतुंभिः सुऋतुंभ्रं। त्वं दक्षैः सुदक्षों विश्ववेदाः। त्वं वृषां

चतुर्थः प्रश्नः (अष्टकम् २)

सुवर्षाम्पस्वां वृजनेस्य गोपाम्। भ्रेषुजा स्रिक्षिति स्रिश्वंसम्। जर्यन्तं त्वामनं मदेम सोम। भवां मित्रो न शेव्यों घृतासंतिः। विभूतद्यम्न एव या उस्प्रियाः॥२८॥
अधां ते विष्णो विदुषां चिद्दध्यः। स्तोमो यज्ञस्य राध्यों ह्विष्मंतः। यः पूर्व्यायं वेधसे नवींयसे। सुमज्ञांनये विष्णवे ददांशित। यो जातमस्य महतो महि ब्रवांत्। सेदु श्रवोंभिर्युज्यं चिद्दस्यंसत्। तमं स्तोतारः पूर्व्यं यथां विद ऋतस्यं। गर्भ हे हिवषां प्राप्ति । अपन्ति जानस्य नामं निद्वित्त्वत् । वहने विष्णो सम्पति भेनाम्हे॥२०॥

सेदु श्रवोभिर्युज्यं चिद्भ्यंसत्। तम् स्तोतारः पूर्व्यं यथां विद ऋतस्यं। गर्भरं ह्विषां पिपर्तन। आऽस्यं जानन्तो नामं चिद्विवक्तन। बृहत्तं विष्णो सुमृतिं भंजामहे॥२९॥ इमा धाना घृंतुस्रुवंः। हरीं इहोपंवक्षतः। इन्द्ररं सुखतंमे रथें। एष ब्रह्मा प्रतेमहे। विदथें शर्रसिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्रते वन्वे। वनुषो हर्यतं मदम्। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिभिक्षारु सेचंते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु॥३०॥ हरिवर्पसङ्गिरंः। आचंर्षणिप्रा वृष्मो जनानाम्। राजां कृष्टीनां पुंरुहूत इन्द्रंः।

चतुर्थः प्रश्नः (अष्टकम् २)

स्तुतश्रंवस्यन्नवसोपंमद्रिक्। युक्ता हरी वृषणायाँ ह्यर्वाङ्। प्र यथ्सिन्धंवः प्रसवं यदायन्। आपः समुद्र रथ्येव जग्मुः। अतिश्चिदिन्द्रः सदसो वरीयान्। यदी र सोमः पृणतिं दुग्धो अश्शुः। ह्यांमसि त्वेन्द्रं याह्यंर्वाङ्॥३१॥

अर्रन्ते सोमंस्तनुवें भवाति। शतंत्रतो मादयंस्वा सुतेषुं। प्रास्मा अंव पृतंनासु प्रयुथ्सु। इन्द्रांय सोमाः प्रदिवो विदानाः। ऋभुर्येभिर्वृषंपर्वा विहायाः। प्रयम्यमाणान्प्रति षू गृंभाय। इन्द्र पिब वृषंधूतस्य वृष्णंः। अहेंडमान् उपंयाहि युज्ञम्। तुभ्यं पवन्तु इन्दंवः सुतासंः। गावो न वंज्रिन्थ्स्वमोको अच्छं॥३२॥ इन्द्रा गंहि प्रथमो यज्ञियांनाम्। या तें काकुथ्सुकृता या वरिष्ठा। यया

शश्वित्पबिस् मध्वे ऊर्मिम्। तयां पाहि प्र तें अध्वर्युरस्थात्। सन्ते वज्रों वर्ततामिन्द्र गृव्युः। प्रातुर्युजा वि बोधय। अश्विनावेह गंच्छतम्। अस्य सोमंस्य पीतयें। प्रात्यावांणा प्रथमा यंजध्वम्। पुरा गृध्रादरंरुषः पिबाथः। प्रातर्हि यज्ञमिश्वना दर्धाते। प्रशर्रसन्ति कवर्यः पूर्वभाजः। प्रातर्यंजध्वमिश्वनां हिनोत। न

सायमंस्ति देवया अर्जुष्टम्। उतान्यो अस्मद्यंजते विचायः। पूर्वः पूर्वो यर्जमानो वनीयान्॥३३॥

चाश्वजिद्यो गंच्छतं नो दाशुन्नामांभिश्रीर्गमेम सुप्रथा भजामहे विशन्तु याह्यविङच्छं पिबाथः पद्वं॥ नुक्तं जाताऽस्योषधे। रामे कृष्णे असिक्रि च। इद॰ रंजनि रजय। किलासं पिलतं च यत्। किलासं च पिलतं चं। निरितो नांशया पृषंत्। आ नः स्वो अंश्ञुतां वर्णः। परौ श्वेतानि पातय। असितं ते निलयनम्। आस्थानमसितं तवं॥३४॥ असिंक्रियस्योषधे। निरितो नांशया पृषंत्। अस्थिजस्यं किलासंस्य। तनूजस्यं च यत्त्वचि। कृत्ययां कृतस्य ब्रह्मणा। लक्ष्मं श्वेतमंनीनशम्। सरूपा नामं ते

माता। सरूपो नामं ते पिता। सरूपाऽस्योषधे सा। सरूपिमदं कृधि॥३५॥
शुन हेवेम मुघवानिमन्द्रम्। अस्मिन्भरे नृतंमं वाजंसातौ। शृण्वन्तंमुग्रमूतयें
समथ्सं। घ्रन्तं वृत्राणि सञ्जितं धनानाम्। धूनुथ द्यां पर्वतान्दाशुषे वसं। नि वो वनां जिहते यामं नो भिया। कोपयंथ पृथिवीं पृंश्विमातरः। युधे यदंग्राः पृषंतीरयुंग्ध्वम्। प्रवेपयन्ति पर्वतान्। विविश्चन्ति वनस्पतीन्॥३६॥

प्रोवारत मरुतो दुर्मदां इव। देवांसः सर्वया विशा। पुरुत्रा हि सद्दृङ्क्ष्मिं। विशो विश्वा अनुं प्रभु। समर्थ्युं त्वा हवामहे। समध्यविश्वमवंसे। वाज्यन्तों हवामहे। वाजेषु चित्रराधसम्। सङ्गच्छध्वर संवंदध्वम्। सं वो मनार्रसे जानताम्॥३७॥

देवा भागं यथा पूर्वै। सञ्जानाना उपासंत। समानो मन्नः सिनंतिः समानी। समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानं केतो अभि स॰ रेभध्वम्। संज्ञानेन वो हिवषां यजामः। समानी व आकूंतिः। समाना हृदंयानि वः। समानमंस्तु वो मनः। यथां वः सुसहासंति॥३८॥

स्ंज्ञानं नः स्वैः। स्ंज्ञान्मरंणैः। स्ंज्ञानंमिश्विना युवम्। इहास्मासु नियंच्छतम्। स्ंज्ञानं मे बृह्स्पितिः। स्ंज्ञानर् सिवता करत्। स्ंज्ञानंमिश्वना युवम्। इह मह्यं नि यंच्छतम्। उपं च्छायामिव घृणैः। अगन्म शर्म ते वयम्॥३९॥ अग्ने हिरंण्यसन्दशः। अदंब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वम्। शिवेभिर्द्य परिपाहि नो गयम्। हिरंण्यजिह्वः सुविताय नव्यंसे। रक्षा मार्किनी अघशर्रस ईशत। मदेमदे हि नो दुदः। यूथा गवांमृजुऋतुः। सङ्गृभाय पुरूशता। उभया हुस्त्या वसुं। शिशीहि राय आ भर॥४०॥

शिप्रिंन्वाजानां पते। शचींवस्तवं दुष्सनां। आ तू नं इन्द्र भाजय। गोष्वश्वेषु शुभुषुं। सहस्रेषु तुवीमघ। यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। आदित्यास्तस्मांन्मा यूयम्। ऋतस्युर्तेनं मुश्चत। ऋतस्युर्तेनांऽऽदित्याः॥४१॥

यजंत्रा मुश्चतेह माँ। यज्ञैर्वो यज्ञवाहसः। आशिक्षंन्तो न शेकिम। मेदंस्वता यजंमानाः। स्रुचाऽऽज्येन जुह्वतः। अकामा वो विश्वेदेवाः। शिक्षंन्तो नोपं शेकिम। यदि दिवा यदि नक्तम्। एनं एन्स्योकंरत्। भूतं मा तस्माद्भव्यं च॥४२॥

द्रुपदादिव मुञ्जतु। द्रुपदादिवेन्मुंमुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलांदिव। पूतं पवित्रेणेवाऽऽज्यम्। विश्वे मुञ्चन्तु मैनंसः। उद्वयं तमंस्स्परि। पश्यन्तो ज्योतिरुत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यम्। अगन्म ज्योतिरुत्तमम्॥४३॥

वृषासो अर्शः पंवते ह्विष्मान्थ्सोमः। इन्द्रंस्य भाग ऋत्यः शतायुः।

स मा वृषांणं वृष्भं कृंणोतु। प्रियं विशाः सर्ववीरः सुवीरम्ं। कस्य वृषां सुते सर्चां। नियुत्वांन्वृष्भो रंणत्। वृत्रृहा सोमंपीतये। यस्ते शृङ्ग वृषोनपात्। प्रणंपात्कुण्डुपाय्यः। न्यंस्मिन्दध्न आ मनः॥४४॥

त र स्प्रीचींक्तयो वृष्णियानि। पौ इस्यांनि नियुतः सश्चरिन्द्रम्। स्मुद्रं न सिन्धंव उक्थशुंष्माः। उरुव्यचंस्ङ्गिर् आ विंशन्ति। इन्द्रांय गिरो अनिंशितसर्गाः। अपः प्रैरयन्थ्सगंरस्य बुध्नात्। यो अक्षेणेव चिक्रया शचींभिः। विष्वंक्तस्तम्भं पृथिवीमुत द्याम्। अक्षोदयच्छवंसा क्षामंबुध्नम्। वार्णवांतस्तिवंषीभिरिन्द्रः॥४५॥

दृढान्यौँघ्रादुशमांन् ओजंः। अवांभिनत्कुकुभः पर्वतानाम्। आ नों अग्ने सुकेतुनां। रियं विश्वायुंपोषसम्। मार्डीकं धेहि जीवसें। त्व॰ सोम महे भगम्ं। त्वं यूनं ऋतायते। दक्षं दधासि जीवसें। रथं युअते मुरुतः शुभे सुगम्। सूरो न

रजारंसि चित्रा विचंरन्ति तन्यवंः। दिवः संम्राजा पर्यसा न उक्षतम्। वाच्रु सुमित्रावरुणाविरावतीम्। पूर्जन्यश्चित्रां वंदित् त्विषीमतीम्। अभ्रा वंसत मरुतः सुमाययां। द्यां वंर्षयतमरुणामरेपसम्। अयुंक्त सप्त शुन्ध्यवंः। सूरो रथंस्य निष्ठयं। ताभिर्याति स्वयुंक्तिभिः। विहेष्ठेभिर्विहरंन् यासि तन्तुम्॥४७॥

अवव्ययन्नसितं देव वस्वंः। दिविध्वतो र्श्मयः सूर्यस्य। चर्मेवावांधुस्तमों अपस्वंन्तः। पूर्जन्यांय प्र गांयत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नों यवसंमिच्छतु। अच्छां वद त्वसंं गीर्मिराभिः। स्तुहि पूर्जन्यं नम्साऽऽविवास। किनेक्रदद्वृष्मो जीरदानुः। रेतों दधात्वोषंधीषु गर्भम्॥४८॥

यो गर्भमोषंधीनाम्। गवां कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्। तस्मा इदास्यें हुविः। जुहोता मधुमत्तमम्। इडां नः संयतं करत्। तिस्रो यदंग्ने शुरद्स्त्वामित्। शुचिं घृतेन शुचंयः सप्र्यन्। नामांनि चिद्दिधिरे युज्ञियांनि। असूदयन्त तुनुवः सुजांताः॥४९॥

इन्द्रंश्च नः शुनासीरौ। इमं यज्ञं मिंमिक्षतम्। गर्भं धत्तः स्वस्तयै। ययोरिदं विश्वं भुवंनमा विवेशं। ययोरानन्दो निहितो महंश्च। शुनांसीरावृत्भिः संविदानौ। इन्द्रंवन्तौ ह्विरिदं जुंषेथाम्। आघाये अग्निमिन्धते। स्तृणन्ति बर्हिरांनुषक्। येषामिन्द्रो युवा सखाँ। अग्न इन्द्रंश्च मेदिनाँ। हथो वृत्राण्यंप्रति। युवः हि वृत्रहन्तमा। याभ्याः सुवरजंयन्नग्रं एव। यावांतस्थतुर्भुवंनस्य मध्यै। प्रचंर्षणी वृषणा वर्ज्रबाहू। अग्नी इन्द्रांवृत्रहणां हवे वाम्॥५०॥

उत नेः प्रिया प्रियास्। सप्तस्वसा सुजुष्टा। सरस्वती स्तोम्याऽभूत्। इमा जुह्वानायुष्मदा नमोभिः। प्रति स्तोमर्थ सरस्वति जुषस्व। तव शर्मन्त्रियतंमे दर्धानाः। उपस्थेयाम शर्णं न वृक्षम्। त्रीणि पदा विचेत्रमे। विष्णुंर्गोपा अदीभ्यः।

ततो धर्माणि धारयन्॥५१॥

तदंस्य प्रियम्भि पाथो अश्याम्। नरो यत्रं देवयवो मदंन्ति। उरुक्रमस्य स हि बन्धंरित्था। विष्णौः पदे पर्मे मध्व उथ्यः। कृत्वादा अस्थु श्रेष्ठः। अद्य त्वां वन्वन्थ्युरेक्णौः। मर्त आनाश सुवृक्तिम्। इमा ब्रह्म ब्रह्मवाह। प्रिया त आ ब्र्हिः सीद। वीहि सूर पुरोडाशम्॥५२॥

उपं नः सूनवो गिरंः। शृण्वन्त्वमृतंस्य ये। सुमृडीका भंवन्तु नः। अद्या नों देव सिवतः। प्रजावंध्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्वप्नियः सुव। विश्वांनि देव सिवतः। दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुव। शुचिंमुर्केर्बृह्स्पतिम्॥५३॥

अध्वरेषुं नमस्यत। अनाम्योज् आ चंके। या धारयंन्त देवा सुदक्षा दक्षंपितारा। असुर्याय प्रमंहसा। स इत् क्षेति सुधित ओकंसि स्वे। तस्मा इडां पिन्वते विश्वदानी। तस्मै विशंः स्वयमेवानंमन्ति। यस्मिन्ब्रह्मा राजंनि पूर्व एति। सर्कृतिमिन्द्र सच्युंतिम्। सच्युंतिं ज्घनंच्युतिम्॥५४॥ कुनात्काभात्र आ भेर। प्रयपस्यित्रीव सुक्थ्यौ। वि न इन्द्र मृधी जिहा कर्नीखुनदिव सापयन्। अभि नः सुष्टुंतिं नय। प्रजापंतिः स्त्रियां यशेः। मुष्कयोरदधाथ्सपम्। कामंस्य तृप्तिमानन्दम्। तस्यौग्ने भाजयेह मा। मोदेः प्रमोद आनुन्दः॥५५॥

मुष्कयोर्निहितः सपंः। सृत्वेव कार्मस्य तृप्याणि। दक्षिणानां प्रतिग्रहे। मनंसिश्चित्तमाकूंतिम्। वाचः सत्यमंशीमिह। पृशूनाः रूपमन्नंस्य। यशः श्रीः श्रंयतां मियं। यथाऽहम्स्या अतृंपः स्त्रियै पुमान्ं। यथा स्त्री तृप्यंति पुर्सि प्रिये प्रिया। एवं भगंस्य तृप्याणि॥५६॥

यज्ञस्य काम्यंः प्रियः। ददामीत्यग्निर्वदिति। तथेति वायुराह् तत्। हन्तेति स्त्यं चन्द्रमाः। आदित्यः स्त्यमोमितिं। आपस्तथ्सत्यमा भेरन्। यशो यज्ञस्य दिक्षणाम्। असौ मे कामः समृद्धताम्। न हि स्पश्मिविदन्नन्यम्स्मात्। वैश्वान्रात्पुरपुतारंमुग्नेः॥५७॥

चतुर्थः प्रश्नः (अष्टकम् २)

अर्मास् आसर्न्। अयूपाः सद्म विभृंता पुरूणिं। वैश्वांनर् त्वया ते नुत्ताः। पृथिवीम्न्याम्भितंस्थुर्जनांसः। पृथिवीं मातरं महीम्। अन्तरिक्षमुपं ब्रुवे। बृहतीमूतये दिवम्। विश्वं बिभर्ति पृथिवी॥५८॥ अन्तरिक्षुं वि पंप्रथे। दुहे द्यौर्बृह्ती पर्यः। न ता नंशन्ति न दंभाति तस्करः। नैनां अमित्रो व्यथिरादंधर्षति। देवाङ्श्च याभिर्यजंते ददांति च। ज्योगित्ताभिः सचते गोपंतिः सह। न ता अर्वा रेणुकंकाटो अश्जुते। न सईस्कृतत्रमुपं यन्ति ता अभि। उरुगायमभयं तस्य ता अनु। गावो मर्त्यस्य वि चरन्ति यज्वनः॥५९॥

ता अभि। उरुगायमभेयं तस्य ता अन्। गावो मर्त्यस्य वि चेरन्ति यज्वेनः॥५९॥ रात्री व्यंख्यदायती। पुरुत्रा देव्यंक्षभिः। विश्वा अधि श्रियोऽधित। उपं ते गा इवाकंरम्। वृणीष्व दुंहितर्दिवः। रात्री स्तोमं न जिग्युषीं। देवीं वाचंमजनयन्त देवाः। तां विश्वरूपाः पृशवों वदन्ति। सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना। धेनुर्वाग्स्मानुप सुष्टुतैतुं॥६०॥

यद्वाग्वदंन्त्यिवचेत्नानि। राष्ट्री देवानां निष्सादं मृन्द्रा। चतंस्र ऊर्जं दुदुहे पया रेसि। क्रं स्विदस्याः पर्मं जंगाम। गौरी मिमाय सिल्लानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा पर्मे व्योमन्। तस्या रे समुद्रा अधि विक्षंरन्ति। तेनं जीवन्ति प्रदिश्वश्चतंस्रः॥६१॥

ततंः क्षरत्यक्षरम्। तद्विश्वमुपं जीवति। इन्द्रासूरां जनयंन्विश्वकर्मा। मुरुत्वारं अस्तु गणवान्थसजातवान्। अस्य स्रुषा श्वशुंरस्य प्रशिष्टिम्। सपत्ना वाचं मनसा उपांसताम्। इन्द्रः सूरों अतर्द्रजारंसि। स्रुषा सपत्ना श्वशुंरो-ऽयमंस्तु। अयर शत्रूं अयतु जर्हंषाणः। अयं वाजं जयतु वाजंसातो। अग्निः क्षंत्रभृदिनिभृष्ट्मोजः। स्हुस्त्रियों दीप्यतामप्रयुच्छन्। विभ्राजंमानः सिमधा न उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहृदग्न्द्याम्॥६२॥

पुरयंन्युग्रेडाण् बहुस्पति ज्ञ्घनेच्युतिमान्न्यो भगस्य तृष्याण्युग्नेः पृथिकी यज्वन एत् प्रविश्वधतंस्रो वाजंसातौ च्त्वारि चा-----------------------[६] वृषां उस्य १शुर्वृष्यभायं गृह्यसे। वृषा् उयमुग्रो नृचक्षंसे। दिव्यः कर्मण्यो हितो

अथो इन्द्रं इव देवेभ्यः। वि ब्रंवीतु जर्नेभ्यः। आयुंष्मन्तुं वर्चस्वन्तम्। अथो अधिपतिं विशाम्॥६३॥ अस्याः पृथिव्या अध्यक्षम्। इमिनन्द्र वृष्मं कृणु। यः सुशृङ्गः सुवृष्मः।

कुल्याणो द्रोण आहिंतः। कार्षीवल प्रगाणेन। वृष्भेणं यजामहे। वृष्भेण यजंमानाः। अर्कूरेणेव सर्पिषां। मृद्धंश्च सर्वा इन्द्रंण। पृतंनाश्च जयामसि॥६४॥ यस्यायमृष्मो हिवः। इन्द्राय परिणीयतैं। जयाति शत्रुंमायन्तम्। अथो हिन्त

पृतन्युतः। नृणामहं प्रणीरसंत्। अग्रं उद्भिन्दतामंसत्। इन्द्र शुष्मं तनुवा मेरंयस्व। नीचा विश्वा अभितिष्ठाभिमातीः। नि शृणीह्याबाधं यो नो अस्ति। उरुं नो लोकं कृंणुहि जीरदानो॥६५॥

प्रेह्मभि प्रेहि प्र भंगु सहंस्व। मा विवेनो वि शृंणुष्वा जनेषु। उदींडितो वृंषभ् तिष्ठ शुष्मैः। इन्द्र शत्रून्पुरो अस्माकं युध्य। अग्ने जेता त्वं जंय। शत्रून्थ्सहस् ओर्ज्सा। वि शत्रून् विमृधों नुद। एतं ते स्तोमं तुविजात् विप्रः। रथं न धीरः स्वपां अतक्षम्। यदीदंग्ने प्रतित्वं देव हर्याः॥६६॥

सुवंवतीर्प एंना जयेम। यो घृतेनाभिमांनितः। इन्द्र जैत्रांय जित्रषे। स नः सङ्कांसु पारय। पृत्नासाह्यंषु च। इन्द्रों जिगाय पृथिवीम्। अन्तरिक्ष्र सुवंर्म्हत्। वृत्रहा पुंरुचेतंनः। इन्द्रों जिगाय सहंसा सहार्रसे। इन्द्रों जिगाय पृतंनानि विश्वां॥६७॥

इन्द्रों जातो वि पुरों रुरोज। स नंः पर्स्पा वरिवः कृणोतु। अयं कृतुरगृंभीतः। विश्वजिदुद्भिदिथ्सोमंः। ऋषिर्विप्रः काव्येन। वायुरंग्रेगा यंज्ञप्रीः। साकङ्गन्मनंसा यज्ञम्। शिवो नियुद्भिः शिवाभिः। वायो शुक्रो अयामि ते। मध्वो अग्रं दिविष्ठिषु॥६८॥

आ यांहि सोमं पीतये। स्वारुहो देव नियुत्वंता। इमिनंद्र वर्धय क्षित्रियांणाम्। अयं विशां विश्पतिंरस्तु राजां। अस्मा इंन्द्र मिह् वर्चार्श्स धेहि। अवर्चसं कणुहि शत्रुंमस्य। इममा भंज ग्रामे अश्वेषु गोषुं। निर्मुं भंज योऽिमत्रों अस्य। वर्ष्मन् क्षत्रस्यं ककुभिं श्रयस्व। ततों न उग्रो वि भंजा वसूनि॥६९॥

अस्मे द्यांवापृथिवी भूरिं वामम्। सन्दुंहाथां घर्मदुघेव धेनुः। अय र राजां प्रिय इन्द्रंस्य भूयात्। प्रियो गवामोषंधीनामुतापाम्। युनज्मिं त उत्तरावंन्तमिन्द्रम्। येन जयांसि न परा जयांसै। स त्वांऽकरेकवृष्भ इस्वानांम्। अथो राजन्नुत्तमं मानुवानांम्। उत्तर्स्त्वमधंरे ते सुपत्नाः। एकवृषा इन्द्रंसखा जिगीवान्॥७०॥

विश्वा आशाः पृतंनाः सञ्जयं जयन्। अभि तिष्ठ शत्रूयतः संहस्व। तुभ्यं भरिनत क्षितयो यविष्ठ। बिलिमंग्ने अन्तित् ओत दूरात्। आ भन्दिष्ठस्य सुमृतिं चिकिद्धि। बृहत्ते अग्ने मिह् शर्म भद्रम्। यो देह्यो अनमयद्वध्स्तैः। यो अर्यपत्नीरुषसंश्वकारे। स निरुध्या नहुषो यह्वो अग्निः। विश्वश्वके बलिहृतः सहोभिः॥७१॥ प्र सद्यो अंग्ने अत्येष्यन्यान्। आविर्यस्मै चारुतरो बुभूथं। ईडेन्यों वपुष्यों

विभावां। प्रियो विशामतिथिर्मानुषीणाम्। ब्रह्मंज्येष्ठा वीर्या सम्भृतानि। ब्रह्माग्रे

ज्येष्ठं दिवमा तंतान। ऋतस्य ब्रह्मं प्रथमोत जंज्ञे। तेनांर्हित् ब्रह्मंणा स्पर्धितुङ्कः। ब्रह्म सुचो घृतवंतीः। ब्रह्मंणा स्वरंवो मिताः॥७२॥

ब्रह्मं यज्ञस्य तन्तंवः। ऋत्विजो ये हंविष्कृतंः। शृङ्गांणीवेच्छृङ्गिणा सन्दंदिश्रिरे। च्षालंवन्तः स्वरंवः पृथिव्याम्। ते देवासः स्वरंवस्तस्थिवाः संः। नमः सर्खिभ्यः सन्नान्माऽवंगात। अभिभूरिग्नरंतरद्रजाः सि। स्पृधो विहत्य पृतंना अभिश्रीः। जुषाणो म आहुंतिं मामहिष्ट। हृत्वा सपत्नान् वरिवस्करन्नः। ईशांनं त्वा भुवंनानामभिश्रियम्। स्तौम्यंग्न उरुकृतः सुवीरम्। हृविर्जुषाणः सपत्नाः अभिभूरंसि। जहि शत्रूः रप मृधो नुदस्व॥७३॥

वि्शां जंयामसि जीरदानों हर्यां विश्वा दिविंष्टिषु वसूनि जिगीवान्थ्सहींभिर्मिता नश्चल्वारिं च॥———————————[পূ]

स प्रत्वत्रवीयसा। अग्नै द्युम्नेन स्यतौ। बृहत्तंतन्थ भानुनौ। नवं नु स्तोमंमुग्नयै। दिवः श्येनायं जीजनम्। वसौः कुविद्वनातिं नः। स्वारुहा यस्य श्रियो दृशे। र्यिर्वीरवंतो यथा। अग्ने युज्ञस्य चेतंतः। अदौभ्यः पुरपुता॥७४॥

अग्निर्विशां मानुंषीणाम्। तूर्णी रथः सदा नवंः। नव् सोमाय वाजिनें। आज्यं पर्यसोऽजिन। जुष्ट् शुचितम्ं वसुं। नवर् सोम जुषस्व नः। पीयूषस्येह तृंण्णुहि। यस्ते भाग ऋता व्यम्। नवस्य सोम ते व्यम्। आ सुंमृतिं वृंणीमहे॥७५॥

स नो रास्व सहस्रिणंः। नवर्ष ह्विर्जुषस्व नः। ऋतुर्भिः सोम् भूतंमम्। तद्ङ्ग प्रतिहर्य नः। राजैन्थ्सोम स्वस्तयै। नव्ड्स्तोम् त्रवर्ष ह्विः। इन्द्राग्निभ्यां नि वेदय। तञ्ज्षेषतार् सचैतसा। शुचिं नु स्तोमं नवंजातम्द्य। इन्द्रौग्नी वृत्रहणा जुषेथौम्॥७६॥

उभा हि वार् सुहवा जोहंवीमि। ता वाजर् स्द्य उंश्ते धेष्ठां। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। इह देवौ संहस्निणौं। यज्ञं न आ हि गच्छंताम्। वसुमन्तर सुवर्विदम्। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। विश्वान्देवाइस्तंर्पयत॥७७॥

ह्विषोऽस्य नवंस्य नः। सुवर्विदो हि जंजि्रे। एदं बर्हः सुष्टरीमा नवेन। अयं

यज्ञो यजंमानस्य भागः। अयं बंभूव भुवंनस्य गर्भः। विश्वं देवा इदम्द्यागंमिष्ठाः। इमे नु द्यावांपृथिवी समीचीं। तन्वाने यज्ञं पुंरुपेशंसन्धिया। आऽस्मै पृणीतां भुवंनानि विश्वां। प्रजां पृष्टिंममृतं नवेन॥७८॥

इमे धेनू अमृतं ये दुहातें। पर्यस्वत्युत्तरामेतु पृष्टिः। इमं यज्ञं जुषमाणे नवेन। समीची द्यावापृथिवी घृताचीं। यविष्ठो हव्यवाहेनः। चित्रभानुर्घृतासुंतिः। नवंजातो वि रोचसे। अग्ने तत्ते महित्वनम्। त्वमंग्ने देवतांभ्यः। भागे देव न मीयसे॥७९॥

स एंना विद्वान् यंक्ष्यसि। नव् स्तोमं जुषस्व नः। अग्निः प्रंथमः प्राश्ञांतु। स हि वेद यथां हिवः। शिवा अस्मभ्यमोषंधीः। कृणोतुं विश्वचंर्षणिः। भुद्रान्नः श्रेयः समनैष्ट देवाः। त्वयांऽवसेन् समंशीमहि त्वा। स नो मयोभूः पितो आ विशस्व। शं तोकायं तनुवे स्योनः। एतम् त्यं मधुना संयुतं यवम्। सरंस्वत्या अधिमनावंचकृषुः। इन्द्रं आसीथ्सीरंपतिः शतक्रंतुः। कीनाशां आसन्मरुतः सुदानंवः॥८०॥

पुरुप्ता वृंणीमहे जुषेथाँन्तर्पयतामृतन्नवेन मीयसे स्योनश्रृत्वारि च॥—————[८]

जुष्टश्चक्षंपो जुष्टीनरो नक्तञ्चाता वृषास उत नो वृषाँऽस्य ५शुः सप्रंत्रवद्ष्टौ॥८॥

जुष्टों मन्युर्भगो जुष्टी नरो हरिवर्पसङ्गिरः शिप्रिन्वाजानामृत नः प्रिया यद्वाग्वदंन्ती विश्वा आशा अशीतिः॥८०॥

जुष्टंः सुदानंवः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

प्राणो रक्षिति विश्वमेजंत्। इर्यो भूत्वा बंहुधा बहूिनं। स इथ्सर्वं व्यानशे। यो देवो देवेषुं विभूरन्तः। आवृंदूदात् क्षेत्रियध्वगद्वृषां। तिमत्प्राणं मन्सोपं शिक्षत। अग्रं देवानांमिदमंत्तु नो हृिवः। मनंसिश्चत्तेदम्। भूतं भव्यं च गुप्यते। तिद्धि देवेष्वंग्रियम्॥१॥

आ नं एतु पुरश्चरम्। सह देवैरिम हवम्। मनः श्रेयंसिश्रेयसि। कर्मन् युज्ञपंतिं दर्धत्। जुषतां मे वागिद हिवः। विराट्टेवी पुरोहिता। ह्व्यवाडनंपायिनी। ययां रूपाणिं बहुधा वदंन्ति। पेशा सि देवाः पंरमे जनित्रे। सा नो विराडनंपस्फुरन्ती॥२॥

वाग्देवी जुंषतामिद १ ह्विः। चक्षुंर्देवानां ज्योतिर्मृते न्यंक्तम्। अस्य विज्ञानांय बहुधा निधीयते। तस्यं सुम्नमंशीमहि। मा नों हासीद्विचक्षणम्। आयुरिन्नः प्रतींर्यताम्। अनंन्धाश्चक्षंषा वयम्। जीवा ज्योतिरशीमिह। सुवर्ज्योतिरुतामृतम्। श्रोत्रेण भद्रमुत शृंण्वन्ति सत्यम्। श्रोत्रेण वाचं बहुधोद्यमानाम्। श्रोत्रेण मोदश्च महंश्च श्रूयते। श्रोत्रेण सर्वा दिश् आ शृंणोिम। येन प्राच्यां उत देक्षिणा। प्रतीच्यें दिशः शृण्वन्त्यंत्तरात्। तदिच्छोत्रं बहुधोद्यमानम्। अरान्न नेिमः परि सर्वं बभ्व॥३॥

उदेहिं वाजिन्यो अंस्यपस्वंन्तः। इद॰ राष्ट्रमा विंश सूनृतांवत्। यो रोहिंतो विश्वमिदं जजानं। स नो राष्ट्रेषु सुधितान्दधातु। रोह॰रोह्॰ रोहिंत् आरुरोह। प्रजाभिवृद्धिं जनुषांमुपस्थम्ं। ताभिः स॰रंब्धो अविद्थ्यडुर्वीः। गातुं प्रपश्यंन्निह

राष्ट्रमाऽहाँ:। आऽहार्षीद्राष्ट्रमिह रोहितः। मृधो व्यांस्थ्दर्भयं नो अस्तु॥४॥ अस्मभ्यं द्यावापृथिवी शक्वंरीभिः। राष्ट्रं दुंहाथामिह रेवतींभिः। विमंमर्श रोहितो विश्वरूपः। समाचुऋाणः प्ररुहो रुहंश्च। दिवंं गुत्वायं महुता मंहिम्ना। वि नों राष्ट्रमुंनत्तु पर्यसा स्वेनं। यास्ते विश्वस्तपंसा सं बभूवुः। गायत्रं वृथ्समनु तास्त आऽगुः। तास्त्वा विंशन्तु महंसा स्वेनं। सं माता पुत्रो अभ्येतु रोहिंतः॥५॥

यूयमुंग्रा मरुतः पृश्विमातरः। इन्द्रंण स्युजा प्रमृंणीथ शत्रून्। आ वो रोहिंतो अशृणोदिभद्यवः। त्रिसंप्तासो मरुतः स्वादुसम्मुदः। रोहिंतो द्यावांपृथिवी जंजान। तस्मिङ्स्तन्तुं परमेष्ठी तंतान। तस्मिङ्खिश्रिये अज एकंपात्। अहर्ष्हृद्यावांपृथिवी बलेन। रोहिंतो द्यावांपृथिवी अंहर्हत्। तेन सुवंः स्तिभृतन्तेन नाकंः॥६॥

सो अन्तरिक्षे रजंसो विमानंः। तेनं देवाः सुवरन्वंविन्दन्। सुशेवंं त्वा भानवां दीदिवा सम्मा समंग्रासो जुह्वां जातवेदः। उक्षन्तिं त्वा वाजिनमा घृतेनं। सक्संमग्ने युवसे भोजंनानि। अग्ने शर्धं मह्ते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जास्पत्य स्यम्मा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महा सि॥७॥

पुनर्नु इन्द्रों मुघवां ददातु। धनांनि शुक्रो धन्यः सुराधाः। अुर्वाचीनं कृणुतां

याचितो मनंः। श्रुष्टी नो अस्य ह्विषो जुषाणः। यानि नोऽजिनं धनानि। जहर्थं शूर मृन्युनां। इन्द्रानुंविन्द नुस्तानिं। अनेनं ह्विषा पुनंः। इन्द्र आशांभ्यः परिं। सर्वाभ्योऽभंयं करत्॥८॥

जेता शत्रून् विचंर्षणिः। आकूँत्यै त्वा कामांय त्वा स्मृधे त्वा। पुरो देधे अमृत्त्वायं जीवसे आकूंतिम्स्यावंसे। कामंमस्य समृद्धौ। इन्द्रंस्य युञ्जते धियंः। आकूंतिं देवीं मनंसः पुरो देधे। यज्ञस्यं माता सुहवां मे अस्तु। यदिच्छामि मनंसा सकांमः। विदेयंमेनद्धृदये निविष्टम्॥९॥

सेदग्निरग्नी १ रत्यें त्युन्यान्। यत्रं वाजी तनयो वीडुपांणिः। सहस्रंपाथा अक्षरां समेति। आशांनां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चतुभ्यों अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः। विधेमं हिवेषां वयम्। विश्वा आशा मधुना स॰ सृजािम। अनुमीवा आप ओषंधयो भवन्तु। अयं यजंमानो मृधो व्यंस्यताम्॥१०॥

अगृंभीताः पृशवंः सन्तु सर्वे। अग्निः सोमो वर्रुणो मित्र इन्द्रंः। बृह्स्पतिः सविता

यः संहुम्री। पूषा नो गोभिरवंसा सरंस्वती। त्वष्टां रूपाणि समंनक्तु युज्ञैः। त्वष्टां रूपाणि दर्धती सरंस्वती। पूषा भगरं सिवता नो ददातु। बृह्स्पित्देद्दिन्द्रंः सहस्रम्ं। मित्रो दाता वर्रुणः सोमों अग्निः॥११॥

आ नों भर भगंमिन्द्र द्युमन्तम्। नि तें देष्णस्यं धीमहि प्ररेके। उर्व इंव पप्रथे

कामों अस्मे। तमापृंणा वसुपते वसूंनाम्। इमं कामंं मन्दया गोभिरश्वैः। चन्द्रवंता राधंसा प्रथंश्च। सुवर्यवों मृतिभिस्तुभ्यं विप्राः। इन्द्रांय वाहंः कुशिकासों अऋन्। इन्द्रंस्य नु वीर्याणि प्रवोचम्। यानि चकारं प्रथमानि वृज्ञी॥१२॥ अहन्निह्मन्वपस्तंतर्द। प्रवृक्षणां अभिनृत्पर्वतानाम्। अहन्निहुं पर्वते शिश्रियाणम्। त्वष्टांऽस्मै वज्रई स्वर्यन्ततक्ष। वाश्रा इंव धेनवः स्यन्दंमानाः।

अञ्जः समुद्रमवं जग्मुरापः। वृषायमाणोऽवृणीत् सोमम्। त्रिकंद्रुकेष्विपबथ्सुतस्यं। आ सायंकं मुघवां दत्त् वज्रम्। अहंन्नेनं प्रथमुजा महीनाम्॥१३॥ इन्द्रो वर्ज्रेण महता वधेनं। स्कन्धार्भसीव कुलिशेनाविवृंक्णा। अहिंः शयत उपपृक्पृंथिव्याम्। अयोध्येव दुर्मद् आ हि जुह्वे। महावीरं तुंविबाधमृंजी्षम्॥१४॥ नातांरीरस्य समृतिं वधानांम्। स॰ रुजानाः पिपिष् इन्द्रंशत्रुः। विश्वो विहाया अर्तिः। वसुर्दधे हस्ते दक्षिणे। तुरणिर्न शिश्रथत्। श्रवस्यया न शिश्रथत्। विश्वंस्मा इदिंषुध्यसे। देवत्रा हव्यमूहिंषे। विश्वंस्मा इथ्सुकृते वारंमृण्वति। अग्निर्द्वारा व्यृंण्वति॥१५॥ उदु जिहां नो अभि काममीरयन्। प्रपृश्चिनविश्वा भुवनानि पूर्वथा। आ केतुना सुषंमिद्धो यजिष्ठः। कामं नो अग्ने अभिहंर्य दिग्भ्यः। जुषाणो हव्यम्मृतेषु दूढां। आ नों र्यिं बंहुलां गोमंतीमिषम्ं। नि धेहि यक्षंद्मृतेषु भूषन्। अश्विना युज्ञमागंतम्। दाशुषुः पुरुंद १ ससा। पूषा रक्षितु नो रियम्॥१६॥

यदिन्द्राहंन्प्रथमजा महीनाम्। आन्मायिनाममिनाः प्रोत मायाः। आथ्सूर्यं

जनयन्द्यामुषासम्। तादीक्रा शत्रूत्र किलांविविथ्से। अहंन्वृत्रं वृत्रुतरं व्यरसम्।

वज्यहींनामृजीषं व्यृंण्वति रक्षतु नो रयि॰ सौभंगान्येकं च॥

ड्मं यज्ञमिश्वनां वर्धयंन्ता। ड्मौ र्यिं यजंमानाय धत्तम्। ड्मौ प्शून्रंक्षतां विश्वतों नः। पूषा नः पातु सद्मप्रयच्छन्। प्रतें महे संरस्वति। सुभंगे वार्जिनीवति। सत्यवाचे भरे मृतिम्। इदं ते ह्व्यं घृतवंथ्सरस्वति। सृत्यवाचे प्रभरेमा ह्वी १षिं। ड्मानिं ते दुरिता सौभंगानि। तेभिव्य स्पुभगांसः स्याम॥१७॥

युज्ञो रायो युज्ञ ईशे वसूनाम्। युज्ञः सुस्यानांमुत सुंक्षितीनाम्। युज्ञ इष्टः पूर्विचित्तिं दधातु। युज्ञो ब्रह्मण्वा अप्येतु देवान्। अयं यज्ञो वर्धतां गोभिरश्वैः।

ड्यं वेदिः स्वपत्या सुवीरां। इदं बर्हिरतिं बर्ही इष्यन्या। इमं यज्ञं विश्वं अवन्तु देवाः। भगं एव भगंवा अस्तु देवाः। तेनं वयं भगंवन्तः स्याम॥१८॥

तं त्वां भग् सर्व् इञ्जोहवीमि। स नो भग पुरएता भेवेह। भग् प्रणेत्भेग् सत्यंराधः। भगेमां धियमुदंव ददंन्नः। भग् प्र णो जनय गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। शर्श्वतीः समा उपयन्ति लोकाः। शर्श्वतीः समा उपयन्त्यापः। इष्टं पूर्त १ शर्श्वतीना १ समाना १ शाश्वतेन । हुविषेष्ठा ८नुन्तं लोकं पर्मा रुरोह॥१९॥

ड्यमेव सा या प्रंथमा व्योच्छंत्। सा रूपाणि कुरुते पश्चं देवी। द्वे स्वसारी वयत्स्तन्नमेतत्। सुनातनं वितंत्र षण्मयूखम्। अवान्या स्तन्तून्किरतो धत्तो अन्यान्। नावंपृज्याते न गंमाते अन्तम्। आ वो यन्तूदवाहासो अद्य। वृष्टिं ये विश्वं मुरुतो जुनन्ति। अयं यो अग्निर्मरुतः सिमेद्धः। एतं जुंषध्वं कवयो युवानः॥२०॥

धारावरा मरुतों धृष्णुवोजसः। मृगा न भीमास्तंविषेभिंक्मिंभिः। अग्नयो न शुंशुचाना ऋजीषिणः। भ्रुमिन्धमन्त उप गा अवृण्वत। वि चंक्रमे त्रिर्देवः। आ वेधसं नीलंपृष्ठं बृहन्तम्। बृह्स्पित् सदेने सादयध्वम्। सादद्योनिं दम् आ दीदिवा सम्। हिरंण्यवर्णमरुष सपेम। स हि शुचिः शृतपंत्रः स शुन्ध्यः॥२१॥

हिरंण्यवाशीरिषिरः सुंवर्षाः। बृह्स्पितः स स्वांवेश ऋष्वाः। पूरू सिखंभ्य आसुितं करिष्ठः। पूष्ड् स्तवं व्रते वयम्। निरंष्येम कदाचन। स्तोतारंस्त इह

स्मंसि। यास्तें पूषन्ना वों अन्तः संमुद्रे। हिर्ण्ययीर्न्तिरिक्षे चरन्ति। याभिर्यासि दूत्या स्पूर्यस्य। कामेन कृतश्रवं इच्छमानः॥२२॥

अरंण्यान्यरंण्यान्यसौ। या प्रेव नश्यंसि। कथा ग्रामं न पृंच्छसि। न त्वाभीरिंव विन्दती (३)। वृषार्वाय वदंते। यदुपावंति चिच्चिकः। आघाटीभिरिव धावयन्। अरण्यानिर्महीयते। उत गावं इवादन्। उतो वेश्मेव दृश्यते॥२३॥

उतो अंरण्यानिः सायम्। श्कटीरिंव सर्जित। गामुङ्गेष्व आ ह्वंयति। दार्वङ्गेष्व उपांवधीत्। वसंत्ररण्यान्याः सायम्। अर्त्नुक्षदितिं मन्यते। न वा अरण्यानिर्हिन्ति। अन्यश्चेत्राभिगच्छंति। स्वादोः फलंस्य ज्रग्ध्वा। यत्र कामं नि पंद्यते। आञ्जनगन्धीः सुर्भीम्। बह्वत्रामकृषीवलाम्। प्राहं मृगाणां मातरम्। अर्ण्यानीमंशः सिषम्॥२४॥

स्याम् कृतेह युवाः शुन्यरिक्वमंन दस्यो निर्मको च्यारि वा

वार्त्रहत्याय शवंसे। पृत्नासाह्याय च। इन्द्र त्वा वंर्तयामिस। सुब्रह्माणं वीरवंन्तं

बृहन्तम्। उरुं गंभीरं पृथुबुंध्रमिन्द्र। श्रुतर्षिमुग्रमंभिमातिषाहम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र रियं दाः। क्षेत्रिये त्वा निर्ऋत्ये त्वा। द्रुहो मुंश्चामि वर्रणस्य पाशांत्। अनागस्ं ब्रह्मंणे त्वा करोमि॥२५॥

शिवे ते द्यावांपृथिवी उभे इमे। शं ते अग्निः सहाद्भिरंस्तु। शं द्यावांपृथिवी सहौषंधीभिः। शम्नतिरंक्षः सह वातेन ते। शं ते चतंस्रः प्रदिशों भवन्तु। या दैवीश्चतंस्रः प्रदिशेः। वातंपत्नीर्भि सूर्यो विच्षे। तासां त्वा ज्रस् आ दंधामि। प्र यक्ष्मं एतु निर्ऋतिं परा्चैः। अमोचि यक्ष्मां दुरितादवंत्र्ये॥२६॥

द्रुहः पाशान्तिर्ऋंत्यै चोदंमोचि। अहा अवंर्तिमविंदथ्स्योनम्। अप्यंभूद्भद्रे सुंकृतस्यं लोके। सूर्यमृतं तमंसो ग्राह्या यत्। देवा अमुंश्चन्नसृंजन्व्यंनसः। एवम्हिम्मं क्षेत्रियाज्ञांमिश्र्सात्। द्रुहो मुंश्चािम् वर्रुणस्य पाशांत्। बृहंस्पते युविमन्द्रेश्च वस्वः। दिव्यस्यंशाथे उत पार्थिवस्य। धृत्तर रिये स्तुंवते कीरयंचित्॥२७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। देवायुधिमन्द्रमा जोहुंवानाः। विश्वावृधंमभि ये रक्षंमाणाः। येनं हृता दीर्घमध्वांनमायन्। अनुन्तमर्थमिनंवथ्स्यमानाः। यत्तं सुजाते हिमवंथ्सु भेषजम्। मयोभूः शन्तंमा यद्धृदोसिं। ततों नो देहि सीबले। अदो गिरिभ्यो अधि यत्प्रधावंसि। सुरुशोभंमाना कुन्येंव शुभ्रे॥२८॥

तां त्वा मुद्गंला ह्विषां वर्धयन्ति। सा नंः सीबले र्यिमा भांजयेह। पूर्वं देवा अपरेणानुपश्यं जन्मंभिः। जन्मान्यवंरैः पराणि। वेदानि देवा अयम्स्मीति माम्। अह १ हित्वा शरीरं ज्रसः प्रस्तात्। प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रमः। वाचं मनंसि सम्भृताम्। हित्वा शरीरं ज्रसः प्रस्तात्। आ भूतिं भूतिं वयमंश्ञवामहै। इमा एव ता उषसो याः प्रथमा व्यौच्छन्। ता देव्यः कुर्वते पश्चंरूपा। शश्वंतीर्नावंपृज्यन्ति। न गमन्त्यन्तमः॥२९॥

क्रोम्यर्वते विच्छ्येऽस्मवामहे च्लारि चा------[६] वसूनां त्वाऽधीतेन। रुद्राणांमूर्म्या। आदित्यानां तेजंसा। विश्वेषां देवानां ऋतुंना। मुरुतामेम्नां जुहोमि स्वाहाँ। अभिभूंतिरहमार्गमम्। इन्द्रंसखा स्वायुधंः। आस्वाशांसु दुष्यहंः। इदं वर्चो अग्निनां दत्तमार्गात्। यशो भर्गः सह ओजो बर्लं च॥३०॥

दीर्घायुत्वायं श्तशांरदाय। प्रतिंगृभ्णामि मह्ते वीर्याय। आयुंरसि विश्वायुंरसि। सर्वायुंरसि सर्वमायुंरसि। सर्वं म् आयुंर्भूयात्। सर्वमायुंर्गेषम्। भूर्भुवः सुवंः। अग्निर्धर्मेणात्रादः। मृत्युर्धर्मेणात्रंपतिः। ब्रह्मं क्षुत्र इस्वाहां॥३१॥

प्रजापंतिः प्रणेता। बृह्स्पतिः पुरप्ता। यमः पन्थाः। चन्द्रमाः पुनर्सुः स्वाहां। अग्निरंत्रादोऽत्रंपितः। अन्नाद्यंमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां। सोमो राजा राजंपितः। राज्यमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां। वरुणः सम्माद्थ्सम्माद्वंतिः। सामाज्यमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां॥३२॥

मित्रः क्षत्रं क्षत्रपंतिः। क्षत्रमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। इन्द्रो बलं बलंपतिः। बलंमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। बृह्स्पति्र्ब्रह्म ब्रह्मपितिः। ब्रह्मास्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। सुविता राष्ट्रश्र राष्ट्रपंतिः। राष्ट्रमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। पूषा विशां विद्वंतिः। विशंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। सरंस्वती पृष्टिः पृष्टिंपत्नी। पृष्टिंमस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। त्वष्टां पशूनां मिथुनानार्थं रूपकृद्रूपपंतिः। रूपेणास्मिन् युज्ञे यजंमानाय पृशून्दंदातु स्वाहाँ॥३३॥

स ईं पाहि य ऋंजीषी तरुंत्रः। यः शिप्रंवान्वृष्भो यो मंतीनाम्। यो गौत्रिभिद्वंज्रभृद्यो हंरिष्ठाः। स इंन्द्र चित्राः अभि तृंन्धि वाजान्। आ ते शुष्मों वृष्भ एतु पश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तात्। आ विश्वतो अभिसमेत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्नः सुवंवद्वेद्धरूम्मे। प्रोष्वंस्मै पुरोर्थम्। इन्द्रांय शूषमंर्चत॥३४॥

अभीके चिदु लोकुकृत्। सुङ्गे सुमर्थ्सु वृत्रहा। अस्माकं बोधि चोदिता।

नर्भन्तामन्यकेषाम्। ज्याका अधि धन्वंसु। इन्द्रं वय शुनासीरम्। अस्मिन् यज्ञे हंवामहे। आ वाजैरुपं नो गमत्। इन्द्रांय शुनासीरांय। सुचा जुंहुत नो हविः॥३५॥

जुषतां प्रति मेधिरः। प्र हव्यानिं घृतवंन्त्यस्मै। हर्यश्वाय भरता सजोषाः। इन्द्रर्तुभिर्ब्रह्मणा वावृधानः। शुनासीरी हिवरिदं जुषस्व। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रम्। प्रियमेधा ऋषंयो नाधंमानाः। अपं ध्वान्तमूणिहि पूर्धि चक्षुः। मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बद्धान्। बृहदिन्द्रांय गायत॥३६॥

मर्रुतो वृत्रहन्तमम्। येन ज्योतिरजनयन्नृतावृधः। देवं देवाय जागृवि। कामिहैकाः क इमे पंतुङ्गाः। मान्थालाः कुलिपरिमापतन्ति। अनांवृतैनान्प्रधंमन्तु देवाः। सौपंर्णं चक्षुंस्तनुवां विदेय। एवा वन्दस्व वरुणं बृहन्तम्। नमस्याधीरममृतंस्य गोपाम्। स नः शर्म त्रिवरूथं वियर्सत्॥३७॥

यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। नाकं सुपूर्णमुप् यत्पतंन्तम्। हृदा वेनंन्तो

अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वर्रणस्य दूतम्। यमस्य योनौं शकुनं भुंर्ण्युम्। शं नों देवीर्भिष्टंये। आपों भवन्तु पीत्रयें। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। ईशांना वार्याणाम्। क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्॥३८॥

अपो यांचामि भेषजम्। अपसु मे सोमों अब्रवीत्। अन्तर्विश्वांनि भेषजा। अग्निं चं विश्वशंम्भुवम्। आपंश्च विश्वभेषजीः। यद्पसु ते सरस्वति। गोष्वश्वेषु यन्मधुं। तेनं मे वाजिनीवति। मुखंमङ्कि सरस्वति। या सरस्वती वैशम्भल्या॥३९॥

तस्यां मे रास्व। तस्यांस्ते भक्षीय। तस्यांस्ते भूयिष्ठभाजों भूयास्म। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोंकुकुञ्जांतवेदः। इहैव सन्तत्र सन्तं त्वाऽग्ने। प्राणेनं वाचा मनंसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्॥४०॥

ज्योतिषा त्वा वैश्वान्रेणोपितिष्ठे। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नम् आरोह। अथां नो वर्धया र्यिम्। या ते अग्ने यिज्ञियां त्नूस्तयेह्यारोहात्माऽऽत्मानम्। अच्छा वसूंनि कृण्वन्नस्मे नर्या पुरूणि। यज्ञो भूत्वा यज्ञमा सींद स्वां योनिम्। जातंवेदो भुव आ जायंमानः सक्षंय एहिं। उपावंरोह जातवेदः पुनस्त्वम्॥४१॥

देवेभ्यों ह्व्यं वंह नः प्रजानन्। आयुंः प्रजाः रियम्स्मास्ं धेहि। अजस्रो दीदिहि नो दुरोणे। तिमन्द्रं जोहवीमि मघवानमुग्रम्। सन्ना दधानमप्रतिष्कृत् श्रवाः सि। मश्हिंष्ठो गीर्भिरा चं यज्ञियोऽववर्तत्। राये नो विश्वां सुपथां कृणोतु वृज्ञी। त्रिकंद्रुकेषु महिषो यवांशिरं तुविशुष्मस्तृपत्। सोममिपिबृद्धिष्णुंना सुतं यथा-ऽवंशत्। स ईं ममाद मिह् कर्म् कर्तवे महामुरुम्॥४२॥

सैन रे सश्चद्वेवं देवः स्त्यिमिन्दु रे स्त्य इन्द्रेः। विदय्तीं स्रमां रुग्णमद्रैः। मित् पार्थः पूर्व्य र सिद्धियंकः। अग्रं नयथ्सुपद्यक्षराणाम्। अच्छा रवं प्रथमा जानतीगौत्। विदद्गव्य रे स्रमां दृढमूर्वम्। येनानुकं मानुषी भोजते विद्। आ ये विश्वौः स्वपत्यानिं चुकुः। कृण्वानासों अमृत्त्वायं गातुम्। त्वं नृभिंनृपते देवहूंतौ॥४३॥

भूरींणि वृत्वा हंर्यश्व हश्सि। त्वन्निदंस्युश्चमुंरिम्। धुनिं चास्वांपयो द्भीतंये सुहन्तुं। एवा पाहि प्रत्नथा मन्दंतु त्वा। श्रुधि ब्रह्मं वावृधस्वोत गीर्भिः। आविः सूर्यं कृणुहि पीपिहीषः। जहि शत्रूरं रिभ गा इन्द्र तृन्धि। अग्ने बाधंस्व वि मृधों नुदस्व। अपामींवा अप रक्षारंसि सेध। अस्मार्थ्समुद्राह्मंहतो दिवो नंः॥४४॥

अपां भूमान्मपं नः सृजेह। यज्ञ प्रतिं तिष्ठ सुमृतौ सुशेवा आ त्वाँ। वसूंनि पुरुधा विंशन्तु। दीर्घमायुर्यजमानाय कृण्वन्। अथामृतेन जिर्तारमिङ्घा। इन्द्रः शुनावृद्धितंनोति सीरम्। संवथ्सरस्यं प्रतिमाणमेतत्। अर्कस्य ज्योतिस्तिदिदांस ज्येष्ठम्। संवथ्सर शुनव्ध्सीरमेतत्। इन्द्रंस्य राधः प्रयंतं पुरु त्मनां। तदंर्करूपं विमिमानमेति। द्वादंशारे प्रतिं तिष्ठतीदृषां। अश्वायन्तो गृव्यन्तो वाजयन्तः। हवांमहे त्वोपंगन्तवा उं। आभूषंन्तस्त्वा सुमृतौ नवांयाम्। व्यमिन्द्र त्वा शुन १ हुंवेम॥४५॥

अर्चृत हुविर्गायत यश्सचर्षणीनां वैशम्भुल्या हांसीत्त्वमुरुं देवहूंती नुस्त्मना पद्वं॥

प्राण उदेहि पुन्रा नों भर युज्ञो रायो वार्त्रहत्याय वसूना स हैं पाह्यष्टौ॥८॥

प्राणो रंक्षत्यर्गृभीता धारावरा मुरुतों दीर्घायुत्वाय ज्योतिंषा त्वा पश्चंचत्वारि १ शत्॥ ४ ५॥

प्राणः शुनः हुंवेम॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

स्वाद्वीं त्वाँ स्वादुनाँ। तीव्रां तीव्रेणं। अमृतांम्मृतेंन। मधुंमतीं मधुंमता। सृजािम् स॰ सोमेंन। सोमोंऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व। सरंस्वत्यै पच्यस्व। इन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्व। परीतो षिश्चता सुतम्। सोमो य उत्तम॰ हिवः॥१॥

द्धन्वा यो नर्यो अपस्वंन्तरा। सुषाव सोम्मद्रिभिः। पुनातुं ते परिस्रुतम्। सोम् सूर्यस्य दुह्ति। वारेण शर्श्वता तना। वायुः पूतः प्वित्रेण। प्राङ्ख्सोमो अतिद्रुतः। इन्द्रंस्य युज्यः सखा। वायुः पूतः प्वित्रेण। प्रत्यङ्ख्सोमो अतिद्रुतः॥२॥

इन्द्रंस्य युज्यः सखाँ। ब्रह्मं क्ष्रत्रं पंवते तेजं इन्द्रियम्। सुरंया सोमः सुत आसुंतो मदांय। शुक्रेणं देव देवताः पिपृग्धि। रसेनान्नं यजंमानाय धेहि। कुविदङ्ग यवंमन्तो यवंश्चित्। यथा दान्त्यंनुपूर्वं वियूयं। इहेहैंषां कृणुत् भोजंनानि। ये ब्रहिषो नमोवृक्तिं न जग्मुः। उपयामगृंहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वा जुष्टं गृह्णामि॥३॥

सरंस्वत्या इन्द्रांय सुत्राम्णैं। एष ते योनिस्तेजंसे त्वा। वीर्याय त्वा बलाय त्वा। तेजोंऽसि तेजो मियं धेहि। वीर्यमिस वीर्यं मियं धेहि। बलंमिस बलं मियं धेहि। नाना हि वां देवहिंत सदेः कृतम्। मा स सृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हि रसीः स्वां योनिंमाविशन्॥४॥

उपयामगृहीतोऽस्याश्विनं तेर्जः। सारस्वतं वीर्यम्। ऐन्द्रं बलम्। एष ते योनिर्मोदाय त्वा। आनन्दायं त्वा महंसे त्वा। ओजोऽस्योजो मियं धेहि। मन्युरंसि मन्युं मियं धेहि। महोंऽसि महो मियं धेहि। सहोंऽसि सहो मियं धेहि। या व्याघ्रं विषूचिका। उभौ वृकं च रक्षंति। श्येनं पंतत्रिण र् सिर्हम्। सेमं पात्व १ हंसः। सम्पृचंः स्थं सं मां भद्रेणं पृङ्का विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्ग॥५॥

हविः प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतो गृह्णाम्याविशन्विपूंचिका पश्चं च॥

सोमो राजाऽमृत र सुतः। ऋजीषेणांजहान्मृत्युम्। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्।

विपान १ शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं। सोमंमुद्धो व्यंपिबत्। छन्दंसा हुर्सः शुंचिषत्। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। अद्धः क्षीरं व्यंपिबत्॥६॥

त्रुङ्कः क्षित्रमा धिया। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। अन्नात्पिर्स्नुतो रसम्। ब्रह्मणा व्यंपिबत् क्षत्रम्। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। रेतो मूत्रं विजंहाति। योनिं प्रविशिदिन्द्रियम्। गर्भो ज्रायुणाऽऽवृंतः। उल्बं जहाति जन्मना। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्॥७॥

वेदेन रूपे व्यंकरोत्। सृतासती प्रजापंतिः। ऋतेनं सृत्यमिन्द्रियम्। सोमेन् सोमौ व्यंपिबत्। सृतासुतौ प्रजापंतिः। ऋतेनं सृत्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा रूपे व्याकंरोत्। सृत्यानृते प्रजापंतिः। अश्रंद्धामनृतेऽदंधात्। श्रद्धाः सृत्ये प्रजापंतिः। ऋतेनं सृत्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा परिस्रुतो रसम्। शुक्रेणं शुक्रं व्यंपिबत्। पयः सोमं प्रजापंतिः। ऋतेनं सृत्यमिन्द्रियम्। विपानः शुक्रमन्यसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयो- ऽमृतं मर्यु॥८॥

सुरावन्तं बर्हिषदर् सुवीरम्। यज्ञर हिन्वन्ति महिषा नमोभिः। दर्धानाः सोमं दिवि देवतांसु। मदेमेन्द्रं यजमानाः स्वर्काः। यस्ते रसः सम्भृत ओषंधीषु। सोमंस्य शुष्मः सुरंया सुतस्यं। तेनं जिन्व यजमानं मदेन। सरंस्वतीमश्विनाविन्द्रंमग्निम्। यमश्विना नमुंचेरासुरादिधं। सरंस्वत्यसंनोदिन्द्रियायं॥९॥

ड्रमन्तर शुक्रं मध्मन्तिमन्दुम्। सोम्र राजांनिम्ह भंक्षयामि। यदत्रं रिप्तर रिसनः सुतस्य। यदिन्द्रो अपिबच्छचीभिः। अहं तदस्य मनसा शिवेनं। सोम्र राजांनिम्ह भंक्षयामि। पितृभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। पितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। प्रपितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। प्रपितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः

अमीमदन्त पितरंः। अतीतृपन्त पितरंः। अमीमृजन्त पितरंः। पितंरः शुन्धंध्वम्। पुनन्तुं मा पितरंः सोम्यासंः। पुनन्तुं मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः। पवित्रेण श्तायुंषा। पुनन्तुं मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः॥११॥ प्वित्रेण श्तायुंषा। विश्वमायुर्व्यश्ववे। अग्र आयूर्षि पवसेऽग्रे पर्वस्व। पर्वमानः सुवर्जनः पुनन्तुं मा देवज्ञनाः। जातंवेदः प्वित्रंवद्यत्ते प्वित्रंम्र्चिषि। उभाभ्यां देव सवितर्वेश्वदेवी पुनती। ये संमानाः समनसः। पितरो यम्राज्ये। तेषां लोकः स्वधा नमः। यज्ञो देवेषुं कल्पताम्॥१२॥

ये संजाताः समनसः। जीवा जीवेषुं मामकाः। तेषा्ड् श्रीमीये कल्पताम्। अस्मिँ श्लोके शतर समाः। द्वे स्रुती अश्वणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यानाम्। याभ्यांमिदं विश्वमेजुथ्समेति। यदंन्तरा पितरं मातरं च। इद॰ हविः प्रजनंनं मे अस्तु। दशंबीर स्वर्गण इस्वस्तयें। आत्मसनि प्रजासनि। पृशुसन्यभयसनि लोकुसिन। अग्निः प्रजां बंहुलां में करोतु। अन्नं पयो रेतों अस्मासुं धत्त। रायस्पोषमिषमूर्जमस्मास्ं दीधरथ्स्वाहाँ॥१३॥ इन्द्रियार्य पितरंः शृतायुंपा पुनन्तुं मा पितामृहाः पुनन्तु प्रपितामहाः कल्पताः स्वस्तये पश्चं च॥

सीसेन तन्त्रं मनंसा मनीषिणंः। ऊर्णासूत्रेणं कवयो वयन्ति। अश्विनां युज्ञ ४

संविता सरेस्वती। इन्द्रेस्य रूपं वर्रणो भिष्ज्यन्। तर्दस्य रूपमृत्र् शचींभिः। तिस्रोऽदंधुर्देवताः स॰रराणाः। लोमानि शष्पैंबंहुधा न तोकांभिः। त्वगंस्य मा॰समंभवन्न लाजाः। तदिश्वनां भिषजां रुद्रवंतिनी। सरेस्वती वयति पेशो

अन्तरः॥१४॥

अस्थि मुज्ञानं मासंरैः। कारोतरेण दर्धतो गवाँ त्वचि। सरस्वती मनसा पेश्वलं वसुं। नासंत्याभ्यां वयति दर्शतं वर्पुः। रसं परिस्रुता न रोहितम्। नुग्नहुर्धीर्स्तसंरुन्न वेमं। पर्यसा शुक्रम्मृतंं जनित्रम्। सुरया मूत्राज्जनयन्ति रेतः। अपामंतिं दुर्मृतिं बार्धमानाः। ऊवेध्यं वात रे सबुवन्तदारात्॥१५॥

इन्द्रंः सुत्रामा हृदंयेन स्त्यम्। पुरोडाशेन सिवता जंजान। यकृत्क्रोमानं वर्रणो भिष्ज्यन्। मतस्रे वायव्यैर्न मिनाति पित्तम्। आन्नाणि स्थाली मधु पिन्वमाना। गुदा पात्राणि सुद्धा न धेनुः। श्येनस्य पत्रं न ष्रीहा शचीभिः। आसन्दी नाभिरुदरं न माता। कुम्भो विनिष्ठुर्जनिता शचीभिः। यस्मिन्नग्रे योन्यां गर्भो अन्तः॥१६॥ प्राशीर्व्यक्तः शतधार् उथ्सं। दुहे न कुम्भी स्वधां पितृभ्यं। मुख् सदंस्य शिर् इथ्सदेन। जिह्वा पवित्रमिश्वना सर सरंस्वती। चप्पन्न पायुर्भिषगंस्य वालं। वस्तिनं शेपो हरंसा तर्स्वी। अश्विभ्यां चक्षुंरमृतं ग्रहाँभ्याम्। छागेन तेजो ह्विषां शृतेनं। पक्ष्मांणि गोधूमैः क्रेलैरुतानिं। पेशो न शुक्लमसितं वसाते॥१७॥

अविर्न मेषो निस्त वीर्याय। प्राणस्य पन्थां अमृतो ग्रहाँभ्याम्। सरंस्वत्युपवाकैर्व्यानम्। नस्यानि बर्हिर्बदंरैर्जजान। इन्द्रंस्य रूपमृष्भो बलाय। कर्णाँभ्याङ् श्रोत्रंममृतं ग्रहाँभ्याम्। यवा न बर्हिर्भुवि केसंराणि। कर्कन्धं जज्ञे मध्रं सार्घं मुखाँत्। आत्मन्नुपस्थे न वृकंस्य लोमं। मुखे श्मश्रूंणि न व्यांघ्रलोमम्॥१८॥

केशा न शीर्षन् यशंसे श्रियै शिखाँ। सिर्हस्य लोम् त्विषिरिन्द्रियाणि। अङ्गाँन्यात्मन्भिषजा तद्श्विनाँ। आत्मान्मङ्गैः समधाथ्सरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपश् शतमान्मार्युः। चन्द्रेण ज्योतिर्मृतं दर्धाना। सरंस्वती योन्यां गर्भमन्तः। अश्विभ्यां पत्नी सुकृतं बिभर्ति। अपार रसेन् वरुणो न साम्ना। इन्द्रई श्रिये जनयंत्रपसु राजां। तेर्जः पशूनार ह्विरिन्द्रियावंत्। परिस्रुता पर्यसा सार्घं मध्री। अश्विभ्यां दुग्धं भिषजा सरस्वत्या सुतासुताभ्यांम्। अमृतः सोम् इन्दुंः॥१९॥

अतंर आरादनवंसाते व्याप्रलोमः राजां चुत्वरि च॥———[४] मित्रोऽसि वर्रुणोऽसि। समृहं विश्वैर्द्वैः। क्षुत्रस्य नाभिरसि। क्षुत्रस्य योनिरसि।

स्योनामा सींद। सुषदामा सींद। मा त्वां हिश्सीत्। मा मां हिश्सीत्। निषंसाद धृतव्रंतो वर्रुणः। पुस्त्यांस्वा॥२०॥

साम्राज्याय सुऋतुंः। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। अश्विनोर्भेषंज्येन। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। सरंस्वत्यै भैषंज्येन॥२१॥

वीर्यायान्नाद्यांयाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्तौभ्याम्। इन्द्रस्येन्द्रियेणं। श्रियै यशंसे बलायाभिषिश्चामि। कोऽसि षष्ठमः प्रश्नः (अष्टकम् २)

कतमों ऽसि। कस्मैं त्वा कार्य त्वा। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंगुजा(३)न्। शिरों मे श्रीः॥२२॥

यशो मुखम्। त्विषिः केशाँश्च श्मश्रूणि। राजां मे प्राणों ऽमृतम्। सम्राद्वर्क्षुः। विराद्धोत्रम्। जिह्वा में भुद्रम्। वाङ्गहः। मनो मन्युः। स्वराङ्गामः। मोदाः प्रमोदा अङ्गलीरङ्गांनि॥२३॥

चित्तं मे सहं। बाह् मे बलंमिन्द्रियम्। हस्तौ मे कर्म वीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरो ममं। पृष्टीर्मे राष्ट्रमुदरम १ सौं। ग्रीवाश्व श्रोण्यौं। ऊरू अंरत्नी जानुंनी। विशो मेऽङ्गानि सर्वतः। नाभिर्मे चित्तं विज्ञानम्। पायुर्मेऽपंचितिर्भसत्॥२४॥

आनन्दनन्दावाण्डौ में। भगः सौभाँग्यं पसंः। जङ्गाँभ्यां पद्मां धर्मोंऽस्मि। विशि राजा प्रतिष्ठितः। प्रति क्षत्रे प्रति तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्वेषु प्रति तिष्ठामि गोषुं। प्रत्यङ्गेषु प्रति तिष्ठाम्यात्मन्। प्रति प्राणेषु प्रति तिष्ठामि पुष्टे। प्रति द्यावांपृथिव्योः। प्रतिं तिष्ठामि यज्ञे॥२५॥

त्रया देवा एकांदश। त्रयस्त्रिष्शाः सुराधंसः। बृह्स्पतिंपुरोहिताः। देवस्यं सिवृतुः स्वे। देवा देवैरंवन्तु मा। प्रथमा द्वितीयैः। द्वितीयौंस्तृतीयैः। तृतीयौः सृत्येनं। सृत्यं यज्ञेनं। यज्ञो यज्ंभिः॥२६॥

यजू १षि सामंभिः। सामाँन्यृग्भिः। ऋचों याज्यांभिः। याज्यां वषद्कारैः। वृषद्कारा आहुंतिभिः। आहुंतयो मे कामान्थ्समंधयन्तु। भूः स्वाहाँ। लोमांनि प्रयंतिर्ममं। त्वङ्ग आनंतिरागंतिः। मार्सं म उपनितिः। वस्वस्थिं। मञ्जा म आनंतिः॥२७॥

यद्देवा देव्हेर्डनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व॰हंसः। यदि दिवा यदि नक्तम्। एना॰सि चकृमा व्यम्। वायुर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व॰हंसः। यदि जाग्रद्यदि स्वप्ने। एना॰सि चकृमा व्यम्॥२८॥

सूर्यो मा तस्मादेनसः। विश्वान्मुञ्चत्व १ हंसः। यद्ग्रामे यदर्रण्ये। यथ्सभायां

यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यद्र्ये। एनंश्चकुमा व्यम्। यदेक्स्याधि धर्मणि। तस्यांव्यजनमसि। यदापो अघ्निया वरुणेति शपांमहे। ततो वरुण नो मुश्च॥२९॥

अवंभृथ निचङ्कुण निचेरुरंसि निचङ्कुण। अवं देवैर्देवकृत्मेनोंऽयाट्। अव् मर्त्यूर्मर्त्यंकृतम्। उरोरा नों देव रिषस्पांहि। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु। दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। द्रुपदादिवेन्मुंमुचानः। स्वित्रः स्नात्वी मलांदिव॥३०॥

पूतं प्वित्रेणेवाऽऽज्यम्। आपः शुन्धन्तु मैनंसः। उद्वयं तमंस्स्परि। पश्यन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यम्। अगंन्म ज्योतिरुत्तंरम्। प्रतियुतो वर्रणस्य पार्शः। प्रत्यंस्तो वर्रणस्य पार्शः। प्रत्यंस्तो वर्रणस्य पार्शः। एधौऽस्येधिषीमिहि। सुमिदंसि॥३१॥

तेजों ऽसि तेजो मियं धेहि। अपो अन्वंचारिषम्। रसेन समंसृक्ष्मिह। पर्यस्वार अग्र आगंमम्। तं मा सर्सृज् वर्चसा। प्रजयां च धनेन च। समावंवर्ति पृथिवी। समुषाः। समु सूर्यः। समु विश्वमिदं जर्गत्। वैश्वान्रज्योतिर्भूयासम्। विभुं काम्ं व्यंश्यवे। भूः स्वाहा॥३२॥

व्यंश्जवे। भूः स्वाहाँ॥३२॥

स्वप्र एनारेसि चकुमा वृषं मृंश् मलांदिव समिदीसे जगुत्रीणि चा। होता यक्षथ्समिधेन्द्रमिडस्पदे। नाभा पृथिव्या अधि। दिवो वर्ष्मन्थ्समिध्यते।

ओजिष्ठश्चर्षणी सहान्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्र्यजी होतां यक्ष्मतनूनपातम्।

ऊतिभिर्जेतांर्मपंराजितम्। इन्द्रं देव॰ सुंवर्विदम्। पृथिभिर्मधुंमत्तमैः। नराश॰सेन तेजंसा॥३३॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्विडांभिरिन्द्रंमीडितम्। आजुह्वांनुममंर्त्यम्। देवो देवैः सवीर्यः। वर्ज्रहस्तः पुरन्दरः। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतांयक्षद्वर्हिषीन्द्रंि

वृष्मं नर्यापसम्। वसुंभीरुद्रैरांदित्यैः। स्युग्भिंर्बर्हिरासंदत्॥३४॥ वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदोजो न वीर्यम्। सहो द्वार् इन्द्रंमवर्धयन्। सुप्रायणा विश्रंयन्तामृतावृधंः। द्वार् इन्द्रांय मीदुषे। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदुषे इन्द्रंस्य धेन्। सुदुघं मातरौं मही। सवातरौ न तेजंसी। वथ्समिन्द्रंमवर्धताम्॥३५॥

वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्देब्या होतांरा। भिषजा सखांया। ह्विषेन्द्रं भिषज्यतः। क्वी देवौ प्रचेतसौ। इन्द्रांय धत्त इन्द्रियम्। वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीः। त्रयंस्त्रिधातंवोपसंः। इडा सरंस्वती भारती॥३६॥

महीन्द्रंपत्नीर्ह्विष्मंतीः। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्त्त्वष्टांर्मिन्द्रं देवम्। भिषज्ञं सुयजं घृत्तिश्रयम्। पुरुरूपं सुरेतंसं मघोनिम्। इन्द्रांय त्वष्टा दर्धदिन्द्रियाणि। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्वद्वन्स्पतिम्। शृमितारं शृतक्रेतुम्। धियो जोष्टारंमिन्द्रियम्॥३७॥

मध्वां सम्अन्यथिभिः सुगेभिः। स्वदांति ह्व्यं मधुना घृतेनं। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यर्जः। होतां यक्षदिन्द्रः स्वाहाऽऽज्यंस्य। स्वाहा मेदंसः। स्वाहां स्तोकानांम्। स्वाहा स्वाहांकृतीनाम्। स्वाहां ह्व्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवाः आज्यपान्।

स्वाहेन्द्र १ होत्राञ्ज्रंषाणाः। इन्द्र आज्यंस्य वियन्तु। होतर्यजं॥३८॥

तेजंसाऽऽसददवर्धतां भारंतीन्द्रियं जुंपाणा द्वे चं (समिधेन्द्रन्तनूनपांतमिडांभिर्बुर्हिष्योजं उपे दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांरं वनस्पितमिन्द्रम्॥ समिधेन्द्रं चतुर्वेत्वेकों वियन्तु

द्विर्वीतामेको वियन्तु द्विर्वेत्वेको वियन्तु होत्वर्यर्ज॥)॥•••••••

सिमिंद्ध इन्द्रं उषसामनींके। पुरोरुचां पूर्वकृद्वांवृधानः। त्रिभिर्देवैस्त्रिष्शता वर्ज्रंबाहुः। ज्ञ्चानं वृत्रं वि दुरों ववार। नराशर्सः प्रतिशूरो मिमानः। तनूनपात्प्रतिं यज्ञस्य धामं। गोभिर्वपावान्मधुंना सम्अन्। हिरंण्यैश्चन्द्री यंज्ञति प्रचेताः। ईडितो देवैर्हरिवार अभिष्टिः। आजुह्वांनो हिवषा शर्धमानः॥३९॥

पुरन्दरो मघवान् वर्ज्रबाहुः। आयांतु यज्ञमुपंनो जुषाणः। जुषाणो बर्हिर्हिर्हिरंवान्न इन्द्रंः। प्राचीन से सीदत्प्रदिशां पृथिव्याः। उरुव्यचाः प्रथंमान इस्योनम्। आदित्यैर्क्तं वसुंभिः सजोषाः। इन्द्रं दुरंः कवृष्यो धावंमानाः। वृषाणं यन्तु जनंयः सुपत्नीः। द्वारो देवीर्भितो विश्रयन्ताम्। सुवीरां वीरं प्रथंमाना महोभिः॥४०॥

उषासानक्तां बृहती बृहन्तम्। पयंस्वती सुदुघे शूरिमन्द्रम्। पेशंस्वती तन्तुंना संव्ययंन्ती। देवानां देवं यंजतः सुरुक्ये। दैव्या मिर्माना मनसा पुरुत्रा। होतांराविन्द्रं प्रथमा सुवाचौ। मूर्धन् यज्ञस्य मधुना दर्धाना। प्राचीनं ज्योतिर्ह्विषां वृधातः। तिस्रो देवीर्हविषा वर्धमानाः। इन्द्रं जुषाणा वृषंणं न पत्नीः॥४१॥

अच्छिन्नं तन्तुं पर्यसा सरेस्वती। इडां देवी भारती विश्वतूँर्तिः। त्वष्टा दधदिन्द्रांय शुष्मम्। अपाकोचिष्टुर्यशसे पुरूणि। वृषा यजन्वृषेणं भूरिरेताः। मूर्धन् यज्ञस्य समनक्तु देवान्। वनस्पतिरवंसृष्टो न पाशैंः। त्मन्यां समञ्जर्छंमिता न देवः। इन्द्रंस्य हब्यैर्जुठरं पृणानः। स्वदांति हब्यं मधुंना घृतेनं। स्तोकानामिन्दं प्रति शूर इन्द्रं। वृषायमाणो वृष्भस्तुंराषाट्। घृतुप्रुषा मधुंना हव्यमुन्दन्। मूर्धन् युज्ञस्यं जुषता ७ स्वाहाँ ॥ ४२ ॥

शर्धमानो महोंभिः पत्नींधृतेनं चुत्वारिं च॥

आचंर्षणिप्रा विवेषु यन्मां। त॰ सुधीचींः। सुत्यमित्तन्न त्वावा ५ अन्यो अस्ति।

इन्द्रं देवो न मर्त्यो ज्यायान्। अह्न्नहिं पिर्शयांनुमर्णः। अवांसृजोऽपो अच्छां समुद्रम्। प्रसंसाहिषे पुरुहूत् शत्रून्। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भंर् दक्षिणेना वसूंनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतींनाम्। स शेवृंधमिधं धाद्युम्नम्से। मिहं क्षत्रं जनाषािडंन्द्र तव्यम्। रक्षां च नो मुघोनः पाहि सूरीन्। राये चं नः स्वपत्या इषे धाः॥४३॥

देवं बर्हिरिन्द्र सुदेवं देवैः। वीरवंध्स्तीणं वेद्यांमवर्धयत्। वस्तौंर्वृतं प्राक्तौंर्भृतम्। राया बर्हिष्मतोऽत्यंगात्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वार्

प्राक्तोंर्भृतम्। राया ब्र्हिष्मतोऽत्यंगात्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वार् इन्द्रं सङ्घाते। विङ्वीर्यामंत्रवर्धयन्। आ वृथ्सेन् तरुणेन कुमारेणं चमीविता अपार्वाणम्। रेणुकंकाटं नुदन्ताम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥४४॥

देवी उषासानक्तां। इन्द्रं यज्ञे प्रयत्यंह्वेताम्। दैवीविशः प्रायांसिष्टाम्। सुप्रीते सुधिते अभूताम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजा। देवी जोष्ट्री वसुधिती। देविमन्द्रंमवर्धताम्। अयाँव्यन्याघा द्वेषा १सि। आन्यावाँक्षीद्वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते॥४५॥

वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहुंती दुघं सुदुघं। पयसेन्द्रंमवर्धताम्। इष्मूर्जम्न्याऽवांक्षीत्। सिग्ध्रिः सपीतिम्न्या। नवेन पूर्वं दयंमाने। पुराणेन नवम्। अधातामूर्जमूर्जाहुंती वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं॥४६॥

देवा दैव्या होतांरा। देविमन्द्रंमवर्धताम्। हृताघंशश्सावाभाँर्षां वसुवार्याणि। यजमानाय शिक्षितौ। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। पितिमिन्द्रंमवर्धयन्। अस्पृंक्षद्भारंती दिवम्। रुद्रैर्यज्ञश्सरंस्वती। इडा वसुंमती गृहान्॥४७॥

वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशरसंः। त्रिव्रूथस्रिवन्धुरः। देविमन्द्रमवर्धयत्। श्तेनं शितिपृष्ठानामाहितः। सहस्रेण प्रवर्तते। मित्रावरुणेदस्य

होत्रमर्हंतः। बृहस्पतिः स्तोत्रम्। अश्विनाऽऽध्वंर्यवम्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४८॥

देव इन्द्रो वनस्पतिः। हिरंण्यपर्णो मधुंशाखः सुपिप्पुलः। देवमिन्द्रंमवर्धयत्। दिवमग्रेणाप्रात्। आऽन्तरिक्षं पृथिवीमंद्दश्हीत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्ज। देवं ब्रहिर्वारितीनाम्। देविमन्द्रमवर्धयत्। स्वासुस्थमिन्द्रेणासन्नम्। अन्या ब्रही इष्युभ्यंभूत्। वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यर्जा। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देविमन्द्रमवर्धयत्। स्विष्टं कुर्विन्थ्स्विष्टकृत्। स्विष्टमुद्य करोतु नः। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४९॥

वियुन्तु यर्ज शिक्षिते शिक्षिते वंसुवनें वसुधेयंस्य वीतां यर्ज गृहान् वेंतु यर्जाभृथ्यद्वं (देवं बुर्हिर्देवीर्द्वारों देवी उषासानक्तां देवी जोष्ट्री देवी ऊर्जाहंती शिक्षितौ देवीस्तिम्रस्तिम्रो देवीर्देव इन्द्रो नराशश्सी देव इन्द्रो वनस्पतिर्देवं बर्हिर्बारितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवम्। वेतु चतुर्वीतामेको वियन्तु चतुर्वेत्ववर्धयदवर्धयन्त्रिरंवर्धतामेकोऽ वर्धयःश्चतुरंवर्धयत्। वस्तोरा वृथ्सेन् दैवीरयावीप रहताऽस्पृक्षच्छतेन् दिवः स्वासस्थः स्विष्टः शिक्षिते शिक्षिते

होतां यक्षथ्समिधाऽग्निमिडस्पदे। अश्विनेन्द्र सरंस्वतीम्। अजो धूम्रो न

गोधूमैः क्वंत्रेर्भेषुजम्। मधु शष्पैर्न तेजं इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षक्तनूनपाथ्सरंस्वती। अविर्मेषो न भेषुजम्। पथा मधुंमृताभरन्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्॥५०॥

बदंरैरुप्वाकांभिर्भेष्जं तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षं नराशरसं न नुग्रहुम्। पतिर सुरांयै भेषजम्। मेषः सरस्वती भिषक्। रथो न चन्द्र्यंश्विनोविपा इन्द्रंस्य वीर्यम्। बदंरैरुप्वाकांभिर्भेष्जं तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥५१॥

होतां यक्षिद्दिडेडित आजुह्वांनः सरंस्वतीम्। इन्द्रं बलेन वर्धयन्। ऋष्भेण् गवैन्द्रियम्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्। यवैंः कर्कन्धुंभिः। मधुं लाजैर्न मासरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्हिः सृष्टरीमोर्णमदाः। भिषङ्गासंत्या॥५२॥ भिषजाऽश्विनाऽश्वा शिशुंमती। भिषग्धेनुः सरंस्वती। भिषग्दुह इन्द्रांय भेषजम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्दुरो दिशंः। क्वष्यां न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशंः। इन्द्रो न रोदंसी दुधं। दुहे कामान्थ्यरंस्वती॥५३॥

अश्विनेन्द्रांय भेषजम्। शुक्रं न ज्योतिंरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुपेशंसोषे नक्तं दिवां। अश्विनां सञ्जानाने। समं जाते सरंस्वत्या। त्विषिमिन्द्रे न भेषजम्। श्येनो न रजंसा हृदा। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं॥५४॥

वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षद्दैव्या होतांरा भिषजाऽश्विनां। इन्द्रं न जागृंवी दिवा नक्तं न भेषुजैः। शूष्ट्रं सरंस्वती भिषक्। सीसेन दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षित्तस्रो देवीर्न भेषुजम्। त्रयंस्त्रिधातंवोऽपसंः। रूपमिन्द्रें हिर्ण्ययम्॥५५॥ अश्विनेडा न भारती। वाचा सरंस्वती। मह् इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्। पयः सोमंः पिर्स्नुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षुत्त्वष्टांर्मिन्द्रंमश्विनां। भिषजं न सरंस्वतीम्। ओजो न जूतिरिन्द्रियम्। वृको न रंभसो भिषक्। यशः सुरंया भेषजम्॥५६॥ श्रिया न मासंरम्। पयः सोमंः पिर्स्नुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्ं। शुमितार श्रुततं गुतं भीमं न मन्यु राजांनं व्याघं

परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्रर्यजं॥५७॥
होतां यक्षद्ग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्तोकानांम्। स्वाहा मेदंसां पृथंक्।
स्वाहा छागंमिश्विभ्यांम्। स्वाहां मेषः सरंस्वत्यै। स्वाहंर्षभिमन्द्रांय सि्रहाय् सहंसेन्द्रियम्। स्वाहाऽग्निं न भेष्जम्। स्वाहा सोमंमिन्द्रियम्। स्वाहेन्द्रः सुत्रामाणः सवितारं वरुणं भिषजां पितम्। स्वाहा वनस्पितंं प्रियं पाथो न

भेषजम्। स्वाहां देवा॰ आँज्यपान्॥५८॥

नमंसाऽश्विना भामम्। सरंस्वती भिषक्। इन्द्रांय दुह इन्द्रियम्। पयः सोमंः

स्वाह् । प्राञ्चंषाणो अग्निर्भेषजम्। पयः सोमः पिर्स्नुतां घृतं मध्रं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्श्विना सरंस्वतीमिन्द्रः सुत्रामाणम्। इमे सोमाः सुरामाणः। छागैर्न मेषेर्ऋष्भः सुताः। शष्येर्न तोक्मिभः। लाजैर्महंस्वन्तः। मदा मासंरेण परिष्कृताः। श्रुक्ताः पर्यस्वन्तोऽमृताः। प्रस्थिता वो मध्रुश्चृतः। तान्श्विना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। जुषन्ताः सौम्यं मध्रं। पिबंन्तु मदेन्तु वियन्तु सोमम्। होत्र्यजं॥५९॥

वीर्षं वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंज्ञ नासंत्या सरंस्वती मधुं हिर्ण्ययं भेषजं वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजांज्यपानुमृताः पश्चं च (स्मिधाऽग्निश् षद्। तनूनपांथ्स्म। नर्शश्स्मृिषंः। इडेडितो यवेर्ष्टो। बर्हिः स्प्ता दुरोऽश्विना नवं। सुपेश्सर्पिः। दैव्या होतांग् सीसेन् रसंः। तिस्रस्त्वष्टांरमृष्टावंष्टो। वनस्पित्मृिषः। अग्निश्चयांदश। अश्विना द्वादंश त्रयोदश। स्मिधाऽग्निं वदेर्षेवंरिश्विना त्विर्षिमृश्विना न भेषजः रूपमृश्विनां भीमं भामम्॥॥

[११]

सिमिद्धो अग्निरंश्विना। तृप्तो घूर्मी विराद्थ्युतः। दुहे धेनुः सरंस्वती। सोमर्थ शुक्रमिहेन्द्रियम्। तृनूपा भिषजां सुते। अश्विनोभा सरंस्वती। मध्वा रजार्थसीन्द्रियम्। इन्द्रांय पृथिभिवहान्। इन्द्रायेन्दुर् सरंस्वती। नराशर्श्वेन नुग्नहुं:॥६०॥ अधातामृश्विना मधुं। भेषजं भिषजां सुते। आजुह्वांना सरंस्वती। इन्द्रांयेन्द्रियाणि वीर्यम्। इडांभिरश्विनाविषम्। समूर्जु सर र्यिं देधुः। अश्विना नमुंचेः सुतम्। सोमर्थ शुक्रं पंरिस्रुतां। सरंस्वती तमार्भरत्। बर्हिषेन्द्रांय पातंवे॥६१॥

कुवृष्यो न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशः। इन्द्रो न रोदंसी दुर्घं। दुहे कामान्थ्सरंस्वती। उषासा नक्तंमश्विना। दिवेन्द्रं सायमिन्द्रियैः। सञ्जानाने सुपेशंसा। समं जाते सरंस्वत्या। पातं नो अश्विना दिवां। पाहि नक्तं सरस्वति॥६२॥

दैव्यां होतारा भिषजा। पातिमन्द्रभ् सर्चां सुते। तिस्रस्रेधा सरंस्वती। अश्विना भारतीडाँ। तीव्रं पंरिस्रुता सोमम्ं। इन्द्रांय सुषवुर्मदम्ं। अश्विना भेषजं मधुं। भेषजं नः सरंस्वती। इन्द्रे त्वष्टा यशः श्रियम्ं। रूपभ रूपमधुः सुते। ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः। शृश्मानः पंरिस्रुतां। कीलालंमश्विभ्यां मधुं। दुहे धेनुः सरंस्वती। गोभिर्न सोममिश्वना। मासंरेण परिष्कृतां। समधाता सरंस्वत्या। स्वाहेन्द्रे सुतं

मध्ं॥६३॥

नुमहुः पात्वे सरस्वत्यः सुतैऽहो चे॥———[१२] अश्विनां हिविरिन्द्रियम्। नमुंचेर्धिया सर्रस्वती। आ शुक्रमांसुराद्वसु। मुघमिन्द्राय

जिभिरे। यमुश्विना सरस्वती। हुविषेन्द्रमवर्धयन्। स बिभेद वृलं मुघम्। नर्मुचावासुरे सर्चा। तिमन्द्रं पशवः सर्चा। अश्विनोभा सरस्वती॥६४॥

दर्धाना अभ्यंनूषत। हिवषां यज्ञिमिन्द्रियम्। य इन्द्रं इन्द्रियं द्धुः। सृविता वरुणो भगः। स सुत्रामां हिवष्पंतिः। यजमानाय सश्चत। सृविता वरुणोऽदर्धत्। यजमानाय दाशुषे। आदंत्त नमुचेर्वसुं। सुत्रामा बर्लमिन्द्रियम्॥६५॥

वर्रुणः क्षुत्रमिन्द्रियम्। भगेन सिवता श्रियम्। सुत्रामा यशंसा बलम्। दर्धाना यज्ञमांशत। अश्विना गोभिरिन्द्रियम्। अश्विभिर्वीर्यं बलम्। हिविषेन्द्रक् सरंस्वती। यज्ञमानमवर्धयन्। ता नासंत्या सुपेशंसा। हिरंण्यवर्तनी नर्गं। सरंस्वती हिविष्मंती। इन्द्र कर्मसु नोऽवत। ता भिषजां सुकर्मणा। सा सुदुघा सरंस्वती। स वृत्रहा

शतऋंतुः। इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्॥६६॥

देवं ब्र्हिः सरंस्वती। सुदेविमन्द्रं अश्विनां। तेजो न चक्षुंरक्ष्योः। ब्र्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देवीर्द्वारो अश्विनां। भिषजेन्द्रे

दशुरान्द्रयम्। वृसुवन वसुययस्य ।वयन्तु यजा द्वाद्वारा आश्वना। ।मृषजन्द्र सर्रस्वती। प्राणं न वीर्यन्नसि। द्वारो दधुरिन्द्रियम्। वृसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६७॥

देवी उषासांविश्वनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। बलं न वाचंमास्यें। उषाभ्यां दधिरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवी जोष्ट्री अश्विनां। सुत्रामेन्द्रे सरंस्वती। श्रोत्रं न कर्णयोर्यशंः। जोष्ट्रीभ्यां दधिरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६८॥

देवी ऊर्जाहुंती दुघे सुदुघें। पयसेन्द्र सरंस्वत्यश्विनां भिषजांवत। शुक्रं न ज्योतिः स्तनंयोराहुंती धत्त इन्द्रियम्। वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जः। देवा देवानां भिषजां। होतांराविन्द्रंमृश्विनां। वृषद्भारेः सरंस्वती। त्विषिं न हृदंये मृतिम्। होतृंभ्यां दधुरिन्द्रियम्। वृसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६९॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। सर्रस्वत्यश्विना भारतीडाँ। शूषन्न मध्ये नाभ्याँम्। इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशर्श्सः। त्रिव्रूथः सर्रस्वत्याऽश्विभ्यांमीयते रथः। रेतो न रूपमृमृतं जनित्रम्। इन्द्रांय त्वष्टा दर्धदिन्द्रियाणि। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७०॥

देव इन्द्रो वनस्पतिः। हिरंण्यपर्णो अश्विभ्याम्। सरंस्वत्याः सुपिप्पृतः। इन्द्रांय पच्यते मध्री ओजो न जूतिमृष्भो न भामम्। वनस्पतिनी दर्धदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजे। देवं बर्हिवीरितीनाम्। अध्वरे स्तीर्णमृश्विभ्याम्। ऊर्णमृदाः सरंस्वत्याः॥७१॥

स्योनिर्मिन्द्र ते सर्दः। ईशायै मृन्यु राजानं बर्हिषां दधुरिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयस्य वियन्तु यजा। देवो अग्निः स्विष्टुकृत्। देवान् यक्षद्यथायथम्। होतांराविन्द्रंमिश्वनां। वाचा वाच् सरंस्वतीम्। अग्नि सोम हं स्विष्टकृत्। स्विष्ट इन्द्रंः सुत्रामां सिवता वर्रणो भिषक्। इष्टो देवो वनस्पतिः। स्विष्टा देवा आंज्यपाः। इष्टो अग्निरिग्निनां। होतां होत्रे स्विष्टकृत्। यशो न दर्धदिन्द्रियम्। ऊर्जुमपंचिति इस्वधाम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७२॥

द्वारों दध्रिस्ट्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् जोष्ट्रीं-यां दध्रिस्ट्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् होर्तृ-यां दध्रिस्ट्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् सरंस्वत्या वनस्पतिः षद्वं (देवं वर्गुहिर्द्वीद्वारीं देवी उपासांविश्वनां देवी जोष्ट्रीं देवी ऊर्जाहंती देवा देवानां भिषजां वषद्वारेर्द्देवीस्तिक्षस्तिक्ष्रों देवीदेव इन्द्रों नराशिश्सों देव इन्द्रों वनस्पतिंद्वं वर्गुहिर्विर्विरितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकुक्ट्रेवान्। समिधाऽग्निं देवं वर्गुहः सरंस्वत्यश्विना सर्वं वियन्तु। द्वारिस्तुक्षः सर्ववियन्तु। अज इन्द्रमोजोऽग्निं पर्ः सरंस्वतीम्। नक्तं पूर्वः सरंस्वति। अन्यत्र सरंस्वती। भिषक्पूर्वं दह इन्द्रियम्। अन्यत्रं दध्गिन्द्रियम्। सौत्रामण्याश् स्तृतास्ति। अञ्चन्त्ययं यज्ञमानः॥)॥
[१४]

अग्निम् होतांरमवृणीत। अयः सुंतासुती यजंमानः। पर्चन्यक्तीः। पर्चन्युरोडाशान्। गृह्णन्यहान्। बुध्रन्नश्विभ्यां छागुः सरंस्वत्या इन्द्रांय। बुध्रन्थसरंस्वत्ये मेषिमन्द्रांयाश्विभ्यांम्। बुध्निन्द्रांयर्षभम्श्विभ्याः सरंस्वत्ये। सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवत्। अश्विभ्यां छागेन् सरंस्वत्या इन्द्रांय॥७३॥

सरंस्वत्यै मेषेणेन्द्रांयाश्विभ्यांम्। इन्द्रांयर्षभेणाश्विभ्याः सरंस्वत्यै। अक्षः स्तान्मेद्स्तः प्रतिपचताग्रंभीषुः। अवीवृधन्त् ग्रहैः। अपातामृश्विना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। सोमान्थ्युराम्णः। उपो उक्थामदाः श्रौद्विमदां अदन्। अवीवृधन्ताङ्कृषैः। त्वामद्यर्षं आर्षेयर्षीणान्नपादवृणीत। अयः सुंतासुती यजंमानः। बहुभ्य आ सङ्गंतेभ्यः। एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति। ता या देवा देवदानान्यदुः। तान्यंस्मा आ च शास्वं। आ चं गुरस्व। इषितश्चं होत्रसिं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः। सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूंहि॥७४॥

उशन्तंस्त्वा हवामहु आ नों अग्ने सुकेतुनां। त्व॰ सोम मुहे भगुं त्व॰

सोम् प्रचिकितो मनीषा। त्वया हि नेः पितरेः सोम् पूर्वे त्वर सोम पितृभिः संविदानः। बर्हिषदः पितर् आऽहं पितृन्। उपहूताः पितरोऽग्निष्वात्ताः पितरः। अग्निष्वात्तानृतुमतो हवामहे। नराशरसे सोमपीथं य आशुः। ते नो अर्वन्तः सुहवां

अनंग्निष्वात्ता जेहंमानाः सप्त चं॥

भवन्तु। शं नों भवन्तु द्विपदे शं चतुंष्पदे। ये अग्निष्वात्ता येऽनंग्निष्वात्ताः॥७५॥

अर्होमुर्चः पितरंः सोम्यासंः। परेऽवंरेऽमृतांसो भवंन्तः। अधि ब्रुवन्तु ते अंवन्त्वस्मान्। वान्यांयै दुग्धे जुषमांणाः करुम्भम्। उदीरांणा अवंरे परे च। अग्निष्वात्ता ऋतुभिः संविदानाः। इन्द्रंवन्तो हविरिदं जुंषन्ताम्। यदंग्ने कव्यवाहन त्वमंग्न ईडितो जांतवेदः। मातंली कव्यैः। ये तांतृपुर्देवत्रा जेहंमानाः। होत्रावृधः स्तोमंतष्टासो अर्कैः। आऽग्ने याहि सुविदत्रेभिरवीङ्। सत्यैः कव्यैः पितृभिर्घर्मसिद्धः। हव्यवाहंमुजरं पुरुप्रियम्। अग्निं घृतेनं हविषां सपूर्यन्। उपांसदं कव्यवाहं पितृणाम्। स नः प्रजां वी्रवंती १ समृण्वतु॥ ७६॥

होतां यक्षदिडस्पदे। समिधानं महद्यशंः। सुषंमिद्धं वरेण्यम्। अग्निमिन्द्रं वयोधसम्। गायत्रीं छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छुचिंव्रतम्। तनूनपांतमुद्भिदम्। यं गर्भमदिंतिर्द्धे॥७७॥ शुचिमिन्द्रं वयोधसम्। उष्णिह्ं छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाह्ं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदीडेन्यम्। ईडितं वृत्रहन्तंमम्। इडांभिरीड्यक् सहं। सोम्मिन्द्रं वयोधसम्। अनुष्टुमं छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवथ्सं गां वयो दर्धत्॥७८॥

बर्हिषि प्रिये। अमृतेन्द्रं वयोधसम्। बृह्तीं छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्र्यजां। होतायक्षद्धचंस्वतीः। सुप्रायणा ऋतावृधः॥७९॥ द्वारों देवीर्हिर्ण्ययीः। ब्रह्माण् इन्द्रं वयोधसम्। पृङ्किः छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाहं

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुबर्हिषदम्ं। पूष्णवन्तुममंर्त्यम्। सीदंन्तं

द्वारों देवीर्हिर्ण्ययीः। ब्रह्माण् इन्द्रं वयोधसम्। पृङ्किः छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाहं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुपेशंसे। सुशिल्पे बृह्ती उभे। नक्तोषासा न दंर्शते। विश्वमिन्द्रं वयोधसम्। त्रिष्टुभं छन्दं इन्द्रियम्॥८०॥ पृष्ठवाहं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्त्रप्रचेतसा। देवानांमुत्तमं यशः। होतांरा देव्यां कवी। स्युजेन्द्रं वयोधसम्। जगंतीं

छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्गाहं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्पेशंस्वतीः॥८१॥

तिस्रो देवीरहिर्ण्ययीः। भारंतीर्बृह्तीर्म्हीः। पितृमिन्द्रं वयोधसम्। विराजं छन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुरेतंसम्। त्वष्टांरं पुष्टिवर्धनम्। रूपाणि बिभ्रंतं पृथंक्। पुष्टिमिन्द्रं वयोधसम्॥८२॥

द्विपदं छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षाणं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छ्वतक्रंतुम्। हिरंण्यपर्णमुक्थिनम्। रश्नां बिभ्रंतं वृशिम्। भगमिन्द्रं वयोधसम्। कुकुमं छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशां वेहतं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्यस्वाहांकृतीः। अग्निं गृहपंतिं पृथंक्। वरुणं भेषुजं कृविम्। क्षुत्रमिन्द्रं वयोधसम्। अतिंच्छन्दसं छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंष्भं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं॥८३॥

द्धे दर्धहतावृधं इन्द्रियं पेशस्वतीर्वयोधसुं वेत्वाऽऽज्यस्य होत्र्यज्ञं सप्त चं (इडस्प्देंऽग्निङ्गांयुत्रीत्र्यविम्ं। शुचिन्नतुष् शुचिमुण्णिहंन्दित्युवाहम्। ईडेन्युर् सोमंमनुष्ठुर्भं

त्रिवृथ्सम्। सुवर्हिषदंममृतेन्द्रं बृह्तीं पश्चाविम्। व्यवस्वतीः सुप्रायुणा द्वारौँ बृह्माणः पृङ्किमिृह तुंर्युवाहम्ँ। सुपेशंसे विश्वमिन्द्रं त्रिष्ट्रभं पष्टवाहम्ँ। प्रचेतसा स्युजेन्द्रं जगंतीमिृहानुङ्गाहम्ँ। पेशंस्वतीस्तिम् पतिं विराजीमिृह धेनुन्न। सुरेतंसुन्त्वष्टां पृष्टिमिन्द्रं द्विपर्दमिृहोक्षाण्त्र। शृतकंतुं भगृमिन्द्रं कुकुभीमिृह वृशात्र। स्वाहांकृतीः क्षत्रमतिंच्छन्दसं बृहदंपभं गां वयो दर्धदिन्द्रियमृषि वसु नवं दृशेहीन्द्रियमृष्टं नव दश् गां न वयो दर्धदिङस्पदे सर्वं वेतु॥)॥—————[१७]

सिमंद्धो अग्निः स्मिधां। सुषंमिद्धो वरेंण्यः। गायत्री छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविगीवयो दधुः। तनूनपाच्छुचित्रतः। तनूपाच सरंस्वती। उष्णिक्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाङ्गोवयो दधुः। इडांभिरग्निरीड्यः। सोमो देवो अमर्त्यः॥८४॥

अनुष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिव्थ्सो गौर्वयो दधुः। सुबर्हिरग्निः पूषण्वान्। स्तीर्णबर्हिरमंत्र्यः। बृह्ती छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविर्गीर्वयो दधुः। दुरो देवीर्दिशो महीः। ब्रह्मा देवो बृह्स्पतिः। पङ्किश्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाङ्गीर्वयो दधुः॥८५॥

उषे यही सुपेशंसा। विश्वे देवा अमंर्त्याः। त्रिष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। पृष्ठवाद्गौर्वयो दधुः। दैव्यां होतारा भिषजा। इन्द्रेण सृयुजां युजा। जर्गती छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्गान्गौर्वयो दधुः। तिस्र इडा सरंस्वती। भारती मुरुतो विशेः॥८६॥ विराद्धन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुर्गौर्न वयो दधुः। त्वष्टां तुरीपो अद्भुतः। इन्द्राग्नी पृष्टिवर्धना। द्विपाच्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षा गौर्न वयो दधुः। शृमिता नो वनस्पितिः। स्विता प्रंसुवन्भगम्। कुकुच्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशा वेहद्गौर्न वयो दधुः। स्वाहां यज्ञं वरुणः। सुक्षत्रो भेषुजं करत्। अतिच्छन्दाश्छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंषभो गौर्वयो दधुः॥८७॥

वसन्तेन्त्नां देवाः। वसंविश्चवृतां स्तुतम्। रथन्तरेण् तेजंसा। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। ग्रीष्मेणं देवा ऋतुनां। रुद्राः पंश्चदशे स्तुतम्। बृह्ता यशंसा बलम्ं। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। वर्षाभिर्ऋतुनांऽऽदित्याः। स्तोमें सप्तदशे स्तुतम्॥८८॥

वैरूपेणं विशोजंसा। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। शार्देन्तुनां देवाः। एक्वि॰्श ऋभवंः स्तुतम्। वैराजेनं श्रिया श्रियम्ं। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। हेम्न्तेन्तुनां देवाः। म्रुतंस्त्रिण्वे स्तुतम्। बलेन् शक्वरीः सहंः। ह्विरिन्द्रे वयों दधुः। शैशिरेण्तुनां देवाः। त्रयस्त्रि र्शें ऽमृत ई स्तुतम्। स्त्येनं रेवतीः क्षत्रम्। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः॥८९॥

स्तोमें सप्तद्रशे स्तुत॰ सहों हुविरिन्द्रे वयों दधुश्चत्वारिं च (वृसुन्तेनं ग्रीप्र्मणं वृर्षाभिः शार्देनं हेमुन्तेनं शैश्चिरेणु पद॥)॥————[१९]

देवं ब्रिहिरिन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। गायत्रिया छन्दंसेन्द्रियम्। तेज् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवीर्देवमंवर्धयन्। उष्णिहा छन्दंसेन्द्रियम्। प्राणिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥९०॥

देवी देवं वंयोधसम्। उषे इन्द्रंमवर्धताम्। अनुष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। वाचमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। बृह्त्या छन्दंसेन्द्रियम्। श्रोत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं॥९१॥

देवी ऊर्जाहुंती देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। पृङ्शा छन्दंसेन्द्रियम्। शुक्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज। देवा दैव्या होतांरा देविमन्द्रं वयोधसम्। देवा देवमंवर्धताम्। त्रिष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। त्विषिमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेर्यस्य वीतां यजं॥९२॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्वयोधसम्। पितिमिन्द्रमवर्धयन्। जगत्या छन्दंसेन्द्रियम्। बल्मिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराशश्सो देविमिन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। विराजा छन्दंसेन्द्रियम्। रेत इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं॥९३॥

देवो वनस्पतिर्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। द्विपदा छन्दंसेन्द्रियम्। भगमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिर्वारितीनां देविमन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। क्कुभा छन्दंसेन्द्रियम्। यश इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृद्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। अतिष्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षुत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥९४॥

वियुन्तु यजं वीतां यजं वीतां यजं वेतु यजं वेतु यजं वेतु यज् पश्चं च (देवं बुर्हिर्गायित्रिया तेजः। देवीद्वरिं उष्णिहाँ प्राणम्। देवी देवमुपे अनुष्टुभा वाचमं। देवी जोष्टी बृहत्या श्रोत्रमं। देवी ऊर्जाहंती पृद्धा शुक्रम्। देवा दैव्या होतांरा त्रिष्टुभा त्विषिमं। देवीस्तिस्तिस्तिस्रो देवीः पितं जगत्या बलमं। देवो नराशश्ची विराजा रेतः। देवो वनुस्पतिर्द्धिपदा भगमं। देवं बुर्हिर्वारितीनां कुकुभा यशः। देवो अग्निः स्विष्टकृदतिच्छन्दसा क्षत्रम्। वेतु वियुन्तु चतुर्वीतामेको वियन्तु चतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयश्चतुर्रवर्धतामेकोऽवर्धयश्चतुर्ववर्धयत्॥॥

[२०]

स्वाद्वीं त्वा सोमः सुरावन्तर् सीसैन मित्रोऽसि यद्देवा होतां यक्षय्यमिधेन्द्रर् सिमंख् इन्द्र आचंरपण्पिपा देवं बुर्हिर्होतां यक्षय्यमिधाऽग्निर सिमंखो अग्निरियेना हिविरिन्द्रियं देवं बुर्हिर सरेस्वत्यग्निमचोशन्तो होतां यक्षदिडस्पदे सिमंखो अग्निः सिमधां वसन्तेनुर्तृनां देवं बुर्हिरिन्द्रं वयोधसं विश्यतिः॥२०॥
स्वाद्वीं त्वाऽमीमदन्त पितरः साम्राज्याय पूतं प्वित्रेणोपासानक्ता बदेरै्रधातां देव इन्द्रो वनस्पतिः पष्टवाहृङ्गां देवी देवं वयोधसं चतुर्नवितः॥९४॥
स्वाद्वीं त्वां वेतु यजं॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

त्रिवृथ्स्तोमों भवति। ब्रह्मवर्चसं वै त्रिवृत्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। अग्निष्टोमः सोमों भवति। ब्रह्मवर्चसं वा अग्निष्टोमः। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। रथन्तर सामे भवति। ब्रह्मवर्चसं वै रथन्तरम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। परिस्रजी होतां भवति॥१॥

अरुणो मिर्मिरस्त्रिशुं ऋः। पृतद्वै ब्रह्मवर्चसस्यं रूपम्। रूपेणैव ब्रह्मवर्चसमवं रुन्थे। बृह्स्पतिरकामयत देवानां पुरोधां गंच्छेयमिति। स पृतं बृहस्पतिस्वमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजत। ततो वै स देवानां पुरोधामंगच्छत्। यः पुरोधाकांमः स्यात्। स बृहस्पतिस्वनं यजेत॥२॥

पुरोधामेव गंच्छति। तस्यं प्रातः सव्ने स्त्रेषुं नाराशृश्सेषुं। एकांदश् दक्षिणा नीयन्ते। एकांदश् मार्ध्यं दिने सर्वने स्त्रेषुं नाराशृश्सेषुं। एकांदश तृतीयसव्ने स्त्रेषुं नाराशृश्सेषुं। त्रयंस्त्रिश्शृथ्सम्पंद्यन्ते। त्रयंस्त्रिश्शृद्वे देवताः। देवतां एवावं रुन्धे। अर्थश्चतुस्त्रिष्शः। प्राजापत्यो वा अर्थः॥३॥

सप्तमः प्रश्नः (अष्टकम् २)

प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्यो देवतांनाम्। यावंतीरेव देवताः। ता प्वावं रुन्थे। कृष्णाजिनेंऽभिषिंश्चति। ब्रह्मणो वा एतद्रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मवर्चसेनैवैन्ष् समर्थयति। आज्येनाभिषिश्चति। तेजो वा आज्यम्। तेजं एवास्मिन्दधाति॥४॥

होतां भवति यजेत् वा अश्वों दधाति॥

यदाँग्नेयो भवंति। अग्निम्ंखा ह्यृद्धिः। अथ् यत्पौष्णः। पृष्टिर्वे पूषा। पृष्टिर्वेश्यंस्य। पृष्टिमेवावं रुन्थे। प्रस्वायं सावित्रः। अथ् यत्त्वाष्ट्रः। त्वष्टा हि रूपाणि विक्रोतिं। निर्वरुणत्वायं वारुणः॥५॥

अथो य एव कश्च सन्थ्सूयतैं। स हि वांरुणः। अथ् यद्वैश्वदेवः। वैश्वदेवो हि वैश्यः। अथ् यन्मांरुतः। मारुतो हि वैश्यः। सप्तैतानिं हुवी १ पिं भवन्ति। सप्तगंणा वै मरुतः। पृश्चिः पष्ठौही मारुत्या लभ्यते। विश्वे मरुतः। विशं एवैतन्मध्यतोऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशः प्रियः। विशो हि मध्यतो-ऽभिषिच्यते। ऋष्मुचर्मेऽध्यभिषिश्चित। स हि प्रंजनियता। दुप्ताऽभिषिश्चित।

ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जैवैनंमन्नाद्येन समर्धियति॥६॥

यदाँग्नेयो भवंति। आग्नेयो वै ब्राह्मणः। अथ् यथ्सौम्यः। सौम्यो हि ब्राह्मणः।

प्रस्वायैव सांवित्रः। अथ यद्वांर्हस्पत्यः। एतद्वै ब्राह्मणस्यं वाक्पतीयम्। अथ यदंग्नीषोमीयः। आग्नेयो वै ब्राह्मणः। तौ यदा सङ्गच्छेते॥७॥

अर्थ वीर्यावत्तरो भवति। अथ् यथ्मारस्वतः। एति प्रत्यक्षं ब्राह्मणस्यं वाक्पतीयम्। निर्वरुणत्वायैव वारुणः। अथो य एव कश्च सन्थ्सूयतें। स हि वारुणः। अथ् यद्यावापृथिव्यः। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। तं द्यावापृथिवी नान्वंमन्येताम्। तमेतेनैव भाग्धेयेनान्वंमन्येताम्॥८॥

वर्ज्रस्य वा एषोऽनुमानायं। अनुंमतवज्ञः सूयाता इति। अष्टावेतानि ह्वी १ षिं भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्री ब्रह्मवर्च्सम्। गायत्रियैव बंह्मवर्च्समवं रुन्थे। हिरंण्येन घृतमृत्पुंनाति। तेजस एव रुचे। कृष्णाजिनेऽभिषिश्चिति। ब्रह्मणो वा एतदंख्सामयों रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मन्नेवैनंमृख्सामयोरध्यभिषिञ्चति। घृतेनाभिषिंश्चति। तथां वीर्यावत्तरो भवति॥९॥

सङ्गच्छेंते भागधेयेनान्वंमन्येता र रूपं चत्वारिं च॥

न वै सोमेंन सोमंस्य सर्वों ऽस्ति। हतो ह्यंषः। अभिषुंतो ह्यंषः। न हि हतः सूयतें। सौमी र सूतवंशामा लेभते। सोमो वै रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। सौम्यर्चा- ऽभिषिश्चित। रेतोधा ह्यंषा। रेतः सोमः। रेतं एवास्मिन्दधाति। यत्किं चं राजसूर्यमृते सोमम्। तथ्सर्वं भवति। अषांढं युथ्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षामपस्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजाः सुंक्षितिः सुश्रवंसम्। जयन्तं त्वामनुं मदेम सोम॥१०॥

यो वै सोमेन सूयतें। स देवस्वः। यः पृशुनां सूयतें। स देवस्वः। य इष्ट्यां सूयतें। स मनुष्यस्वः। एतं वै पृथये देवाः प्रायंच्छन्। ततो वै सोऽप्यांरण्यानां पशूनामंसूयत। यावंतीः कियंतीश्च प्रजा वाचं वदंन्ति। तासा सर्वांसा ।

स्यते॥११॥

य पृतेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। नाराश्र्स्यर्चाऽभिषिश्चिति। मनुष्यां वै नराश्रसं। निह्नुत्य वावैतत्। अथाभिषिश्चिति। यित्कं चं राज्यसूर्यमनुत्तरवेदीकम्। तथ्सर्वं भविति। ये में पश्चाशतंं दृदुः। अश्वानाः स्थस्तुंतिः। द्युमदंग्रे मिह् श्रवंः। बृहत्कृंधि मुघोनांम्। नृवदंमृत नृणाम्॥१२॥

सू $var{q}$ स्थरतुंतिश्लीणं च $ar{q}$

पुष गोंस्वः। षुट्टिश्ष उक्थ्यों बृहथ्सांमा। पर्वमाने कण्वरथन्त्रं भंवति। यो वै वाजुपेर्यः। स सम्राट्थ्सवः। यो राजुसूर्यः। स वंरुणसुवः। प्रजापितिः स्वाराज्यं परमेष्ठी। स्वाराज्यं गौरेव। गौरिव भवति॥१३॥

य एतेन् यर्जते। य उं चैनमेवं वेदं। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः। तिद्धे स्वारांज्यम्। अयुत्ं दक्षिणाः। तिद्धे स्वारांज्यम्। प्रतिधुषाऽभिषिश्चिति। तिद्धे स्वारांज्यम्। अनुद्धते वेद्ये दक्षिणत आंहवनीयंस्य बृह्तः स्तोत्रं प्रत्यभिषिश्चिति। इयं वाव सप्तमः प्रश्नः (अष्टकम् २)

रंथन्तरम्॥१४॥

असौ बृहत्। अनयोरेवैनमनंन्तर्हितम्भिषिंश्चति। पृशुस्तोमो वा एषः। तेनं गोस्वः। षृद्विर्शः सर्वः। रेवज्ञातः सर्हसा वृद्धः। क्षुत्राणां क्षत्रभृत्तंमो वयोधाः। महान्मंहित्वे तंस्तभानः। क्षत्रे राष्ट्रे चं जागृहि। प्रजापंतेस्त्वा परमेष्ठिनः स्वारांज्येनाभिषिंश्चामीत्यांह। स्वारांज्यमेवैनं गमयति॥१५॥

इव भवति प्रवत्त्वस्त्रेहं वा

सि १ हे व्याघ्र उत या पृदांकौ। त्विषिरुग्नौ ब्राह्मणे सूर्ये या। इन्द्रं या देवी सुभगां ज्ञानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या रांजुन्ये दुन्दुभावायंतायाम्।

अर्थस्य ऋन्द्ये पुरुषस्य मायौ। इन्द्रं या देवी सुभगं ज्जानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या हस्तिनिं द्वीपिनि या हिरंण्ये। त्विष्रश्चेषु पुरुषेषु गोषुं॥१६॥

इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आग्नवर्चसा संविदाना। रथे अक्षेषुं वृष्भस्य वाजें। वाते पूर्जन्ये वरुणस्य शुष्में। इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा

न् आग्न्वर्चसा संविदाना। राडंसि विराडंसि। सम्राडंसि स्वराडंसि। इन्द्रांय त्वा तेजंस्वते तेजंस्वन्त ॥ श्रीणामि। इन्द्रांय त्वौजंस्वत ओजंस्वन्त श्रीणामि॥१७॥

इन्द्रांय त्वा पर्यस्वते पर्यस्वन्त ॥ श्रीणामि। इन्द्रांय त्वाऽऽयुंष्मत् आयुंष्मन्त ॥ श्रीणामि। तेजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। तेजंस्वदस्तु मे मुखम्। तेजंस्विच्छरों अस्तु मे। तेजंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्का। तेजंसा सम्पिपृग्धि मा। ओजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि॥१८॥

ओर्जस्वदस्तु मे मुखम्। ओर्जस्विच्छरो अस्तु मे। ओर्जस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्ग्। ओर्जसा सं पिपृग्धि मा। पयोऽसि। तत्ते प्र येच्छामि। पयंस्वदस्तु मे मुखम्। पर्यस्विच्छरो अस्तु मे। पर्यस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्का। पर्यसा सं पिपृग्धि मा॥१९॥

आयुंरिस। तत्ते प्र यंच्छामि। आयुंष्मदस्तु मे मुखम्ं। आयुंष्मच्छिरों अस्तु मे। आयुंष्मान् विश्वतः प्रत्यङ्क्षा आयुंषा सं पिंपृग्धि मा। इममंग्र आयुंषे वर्चसे कृधि। प्रिय॰ रेतों वरुण सोम राजन्। मातेवाँस्मा अदिते शर्म यच्छ। विश्वं देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्॥२०॥

आयुंरिस विश्वायुंरिस। सर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। यतो वातो मनोजवाः। यतः क्षरंन्ति सिन्धंवः। तासाँ त्वा सर्वासार रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। समुद्र इंवािस गृह्मनाँ। सोमं इवास्यदाँभ्यः। अग्निरिंव विश्वतः प्रत्यङ्कः। सूर्यं इव ज्योतिंषा विभूः॥२१॥

अभिप्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्नहा। आतिष्ठ मित्रवर्धनः। तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभित् आतिष्ठ वृत्रहुत्रथम्। आतिष्ठंन्तं परि विश्वं अभूषन्। श्रियं वसानश्चरित स्वरोचाः। महत्तद्स्यासुरस्य नामं। आ विश्वरूपो अमृतानि तस्थौ। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनु बृह्स्पितः॥२३॥

अनु सोमो अन्वग्निरांवीत्। अनुं त्वा विश्वं देवा अंवन्तु। अनुं सप्त राजांनो य उताभिषिक्ताः। अनुं त्वा मित्रावरुणाविहावंतम्। अनु द्यावांपृथिवी विश्वशंम्भू। सूर्यो अहोंभि्रनुं त्वाऽवतु। चन्द्रमा नक्षंत्रैरनुं त्वाऽवतु। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता सोमों अग्निः। आऽयं पृणक्तु रजसी उपस्थम्॥२४॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्मृष्टाः परांचीरायन्। स एतं प्रजापंतिरोदनमंपश्यत्। सोऽन्नं भूतोंऽतिष्ठत्। ता अन्यत्रान्नाद्यमविंत्वा। प्रजापंतिं प्रजा उपावंर्तन्त। अन्नंभेवैनं भूतं पश्यंन्तीः प्रजा उपावंर्तन्ते। य एतेन् यजंते। य

उ चैनमेवं वेदं। सर्वाण्यन्नांनि भवन्ति॥२५॥

सर्वे पुरुषाः। सर्वाण्येवान्नान्यवं रुन्धे। सर्वान्पुरुषान्। राडंसि विराह्सीत्यांह। स्वाराज्यमेवैनं गमयति। यद्धिरण्यं ददांति। तेज्रस्तेनावं रुन्धे। यत्तिंसृधन्वम्। वीर्यं तेनं। यदष्ट्राम्॥२६॥

पुष्टिं तेनं। यत्कंमण्डलुम्ं। आयुष्टेनं। यद्धिरंण्यमा बुध्नातिं। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवास्मिन्दधाति। अथो तेजो वै हिरंण्यम्। तेजं एवाऽऽत्मन्धंत्ते। यदोदनं प्राश्ञातिं। एतदेव सर्वमवरुध्यं॥२७॥

तदंस्मिन्नेक्धाऽधाँत्। रोहिण्यां कार्यः। यद्वाँह्मण एव रोहिणी। तस्मादेव। अथो वर्ष्मैवैन र समानानां करोति। उद्यता सूर्येण कार्यः। उद्यन्तं वा एत र सर्वाः प्रजाः प्रतिनन्दन्ति। दिदृक्षेण्यो दर्शनीयो भवति। य एवं वेदे। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥२८॥ अवेत्योऽवभृथा (३) ना (३) इति। यद्दर्भपुञ्जीलैः प्वयंति। तथ्स्वंदेवावैति। तन्नावैति। त्रिभः पंवयति। त्रयं इमे लोकाः। एभिरेवैनं लोकैः पंवयति। अथो

अपां वा एतत्तेजो वर्चः। यद्दर्भाः। यद्दर्भपुञ्जीलैः प्वयंति। अपामेवैनं तेजसा वर्चसाऽभिषिञ्चति॥२९॥

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँ-श्स्यामिति। स पुतं पंश्वशार्दीयंमपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजत। ततो वै स बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत

बहोर्भूयाँन्थ्स्यामिति। स पंश्रशार्दीयेन यजेत। बहोरेव भूयाँन्भवति। मुरुथ्स्तोमो वा एषः। मरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः॥३०॥

बहुर्भविति। य एतेन् यजिते। य उचैनमेवं वेदे। पृश्चशार्दीयों भविति। पश्च वा ऋतवंः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिं तिष्ठति। अथो पश्चौक्षरा पृङ्किः। पाङ्को यज्ञः। यज्ञमेवावं रुन्धे। सप्तद्शः स्तोमा नातिं यन्ति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै॥३१॥

भूविंष्टा यन्ति द्वे चं॥——————[१०]

अगस्त्यों मुरुद्धं उक्ष्णः प्रौक्षंत्। तानिन्द्र आदंत्त। त एनं वर्ज्रमुद्यत्याभ्यांयन्त। तानगस्त्यंश्चैवेन्द्रंश्च कयाशुभीयंनाशमयताम्। ताञ्छान्तानुपाह्वयत। यत्कंयाशुभीयं भवंति शान्त्यैं। तस्मांदेत ऐन्द्रामारुता उक्षाणंः सवनीयां भवन्ति। त्रयंः प्रथमेऽहृन्ना लंभ्यन्ते। एवं द्वितीयें। एवं तृतीयें॥३२॥

पुवं चेतुर्थे। पश्चौत्तमेऽहन्ना लेभ्यन्ते। वर्षिष्ठमिव ह्येतदर्हः। वर्षिष्ठः समानानाः भवति। य एतेन यजेते। य उंचैनमेवं वेदे। स्वारौज्यं वा एष यज्ञः। एतेन वा एकया वां कान्दमः स्वारांज्यमगच्छत्। स्वारांज्यं गच्छति। य एतेन यजीते॥३३॥ य उं चैनमेवं वेदं। मारुतो वा एषः स्तोमंः। एतेन वै मरुतों देवानां भूयिंष्ठा अभवन्। भूयिष्ठः समानानां भवति। य एतेन यजति। य उं चैनमेवं वेदं। पश्चशारदीयो वा एष यज्ञः। आ पश्चमात्पुरुषादन्नमित्ता। य एतेन यजेते। य उं चैनमेवं वेदं। सप्तदशङ् स्तोमा नातिं यन्ति। सप्तदशः प्रजापंतिः। प्रजापंतिरेव नैतिं॥३४॥

तृतीर्ये गच्छति य एतेन यर्जतेऽति य एतेन यर्जते य उं चैनमेवं वेद त्रीणि च (अगस्त्यः स्वाराँज्यं मारुतः पश्चशार्दीयो वा एप युज्ञः सप्तदुशं

प्रजापंतेरेव नैतिं॥)॥

अस्या जरांसो दुमा मुरित्राः। अर्चर्द्धूमासो अग्नर्यः पावुकाः। श्विचीचर्यः श्वात्रासो भुरण्यवंः। वनुर्षदो वायवो न सोमाः। यजां नो मित्रावरुणा। यजां देवार ऋतं बृहत्। अग्ने यिक्षे स्वन्दमम्। अश्विना पिबंत र सुतम्। दीद्यंग्नी शुचिव्रता। ऋतुनां यज्ञवाहसा॥३५॥

द्वे विरूपे चरतः स्वर्थे। अन्याऽन्यां वथ्समुपं धापयेते। हरिरन्यस्यां भवंति स्वधावान्। शुक्रो अन्यस्यां दहशे सुवर्चाः। पूर्वापुरं चरतो माययैतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतूनन्यो विदर्धंज्ञायते पुनः। त्रीणि शता त्रीषहस्राण्यग्निम्। त्रि १ शर्च देवा नवं चाऽसपर्यन्॥३६॥

औक्षं घृतैरास्तृंणन्बर्हिरंस्मै। आदिद्धोतांरुं न्यंषादयन्त। अग्निनाऽग्निः सिम्धित। कविर्गृहपंतिर्युवां। हृव्यवाङ्गृह्वांऽऽस्यः। अग्निर्देवानां जुठरम्। पूतदंक्षः क्विकंतुः। देवो देवेभिरा गमत्। अग्निश्रियों मुरुतों विश्वकृष्टयः। आ त्वेषमुग्रमवं ईमहे वयम्॥३७॥

ते स्वानिनों रुद्रियां वर्षिनिर्णिजः। सिर्हा न हेषक्रंतवः सुदानंवः। यदुंत्तमे मंरुतो मध्यमे वाँ। यद्वांऽवमे सुंभगासो दिवि ष्ठ। ततों नो रुद्रा उत वाऽन्वस्यं। अग्ने वित्ताद्धविषो यद्यजांमः। ईडें अग्निः स्ववंसन्नमोंभिः। इह प्रंस्तो वि चं यत्कृतं नंः। रथैरिव प्रभेरे वाजयद्भिः। प्रदक्षिणिन्मरुताः स्तोमंमृद्धाम्॥३८॥

यरकृत नः रवार्ष अनर वाज्याङ्गः अवाद्यागम् रताष्ट्र स्तानमृद्धान्॥ २८॥ श्रुधि श्रुंत्कर्ण वहिंभिः। देवैरंग्ने स्यावंभिः। आसींदन्तु बर्हिषि। मित्रो वर्रुणो अर्यमा। प्रात्यावांणो अध्वरम्। विश्वेषामिदंतिर्यज्ञियानाम्। विश्वेषामितंथिमिन्षणाम्। अग्निर्देवानामवं आवृणानः। सुमृडीको भेवतु विश्ववेदाः। त्वे अंग्ने सुमृतिं भिक्षंमाणाः॥ ३९॥

दिवि श्रवो दिधरे यज्ञियांसः। नक्तां च चुकुरुषसा विरूपे। कृष्णं च वर्णमरुणं च सन्धुः। त्वामंग्र आदित्यासं आस्यम्। त्वां जिह्वा शुचंयश्चकिरे कवे। त्वा श रांतिषाचों अध्वरेषुं सिश्चरे। त्वे देवा हिवरंदन्त्याहुंतम्। नि त्वां युज्ञस्य सार्धनम्। अग्ने होतांरमृत्विजम्। वनुष्वद्दंव धीमहि प्रचेतसम्। जीरं दूतममर्त्यम्॥४०॥

युज्ञवाहसासपूर्यन्वयमृद्धां भिक्षमाणाः प्रचेतसमेकं

तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमाना याहि। वायुर्न नियुतों नो अच्छं। पिबास्यन्धों अभिसृष्टो अस्मे। इन्द्रः स्वाहां रिष्मा ते मदाय। कस्य वृषां सुते सर्चा। नियुत्वान्वृष्भो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। इन्द्रं वयं महाधने। इन्द्रमर्भे हवामहे। युजं वृत्रेषुं वज्रिणम्॥४१॥

द्विता यो वृत्रहन्तमः। विद इन्द्रंः श्ततंत्रतुः। उपं नो हरिभिः सुतम्। स सूर आजनयं ज्योतिरिन्द्रम्। अया धिया तुरणिरद्रिबर्हाः। ऋतेनं शुष्मी नवंमानो अर्कैः। व्यंस्त्रिधो अस्रो अद्रिर्बिभेद। उतत्यदाश्वश्वियम्। यदिन्द्र नाहुंषी्ष्वा। अग्रे विक्षु प्रतीदंयत्॥४२॥

भरेष्विन्द्र र सुहवर हवामहे। अर्होम्चर सुकृतं दैव्यं जनम्। अग्निं मित्रं

वर्रण स्मातये भगम्। द्यावांपृथिवी मुरुतः स्वस्तयें। मृहि क्षेत्रं पुरुश्चन्द्रं वि विद्वान्। आदिथ्सिखंभ्यश्चरथ समैरत्। इन्द्रो नृभिरजन्द्दीद्यांनः साकम्। सूर्यमुषसं गातुम्ग्निम्। उरुं नो लोकमन् नेषि विद्वान्। सुवंर्व्ज्योतिरभंय स्वस्ति॥४३॥

ऋष्वा तं इन्द्रं स्थविंरस्य बाहू। उपंस्थेयाम शर्णा बृहन्तां। आ नो विश्वांभिरूतिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरीवृज्ध्स्थविंरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधृद्वृषंण् शृष्मंमिन्द्र। इन्द्रांय गावं आशिरम्। दुदुहे विज्ञिणे मधुं। यथ्सीमुपह्वरे विदत्। तास्ते विज्ञिन्धेनवों जोजयुर्नः॥४४॥

गर्भस्तयो नियुतो विश्ववाराः। अहंरहुर्भूय इज्ञोगुंवानाः। पूर्णा इंन्द्र क्षुमतो भोजंनस्य। इमां ते थियं प्र भेरे महो महीम्। अस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तं आनुजे। तमुंथ्सवे चं प्रस्वे चं सास्हिम्। इन्द्रं देवासः शवंसा मदं ननुं॥४५॥

वुब्रिणंमयथ्स्वुस्ति जॉजयुर्नः सप्त चं॥—————[१३]

प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। तैंऽस्माथ्मृष्टाः परौं च आयन्। तानंग्निष्टोमेन् नाऽऽप्नोत्। तानुक्थ्यंन् नाऽऽप्नोत्। तान्थ्यांडिशिना नाऽऽप्नोत्। तान्नात्रिया नाऽऽप्नोत्। तान्थ्यन्थिना नाऽऽप्नोत्। सौऽग्निमंब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेति। तानुग्निस्त्रिवृता स्तोमेन नाऽऽप्नौत्॥४६॥

स इन्द्रंमब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेतिं। तानिन्द्रः पश्चद्रशेन् स्तोमेंन् नाऽऽप्नौत्। स विश्वान्द्रेवानंब्रवीत्। इमान्मं ईप्स्तेतिं। तान् विश्वेदेवाः संप्तद्रशेन् स्तोमेंन् नाऽऽप्नुंवन्। स विष्णुंमब्रवीत्। इमान्मं ईप्सेतिं। तान् विष्णुंरेकविर्शेन् स्तोमेनाऽऽप्नोत्। वारवन्तीयेनावारयत॥४७॥

इदं विष्णुर्वि चंक्रम् इति व्यंक्रमत। यस्माँत्पृशवः प्रप्रेव अश्शेरन्। स एतेनं यजेत। यदाप्रोंत्। तद्प्तोर्यामंस्याप्तोर्यामृत्वम्। एतेन् वै देवा जैत्वांनि जित्वा। यं काम्मकांमयन्त् तमाँऽऽप्रुवन्। यं कामं कामयंते। तमेतेनाँऽऽप्नोति॥४८॥

स्तोमेंनु नाऽऽप्रोंदवारयतु नर्व च॥———[१४]

व्याघ्रोंऽयम्ग्रौ चंरित प्रविष्टः। ऋषींणां पुत्रो अंभिशस्तिपा अयम्। नमस्कारेण नमंसा ते जुहोमि। मा देवानां मिथुयाकंर्म भागम्। सावीर्हि देव प्रस्वायं पित्रे। वृष्मीणंमस्मै विर्माणंमस्मै। अथास्मभ्य सवितः सर्वतांता। दिवेदिव आ सुवा भूरि पृश्वः। भूतो भूतेषुं चरित प्रविष्टः। स भूतानामधिपतिर्बभूव॥४९॥

तस्यं मृत्यौ चंरित राज्ञसूयम्ं। स राजां राज्यमनुं मन्यतामिदम्। येभिः शिल्पैः पप्रथानामद्दर्शत्। येभिद्याम्भ्यिपर्शत्र्यजापंतिः। येभिर्वाचं विश्वरूपार समव्यंयत्। तेनेममंग्न इह वर्चसा समिङ्गि। येभिरादित्यस्तपंति प्र केतुभिः। येभिः सूर्यो दद्दशे चित्रभानुः। येभिर्वाचं पुष्कलेभिरव्यंयत्। तेनेममंग्न इह वर्चसा समिङ्गि॥५०॥

आऽयं भांतु शर्वसा पश्चं कृष्टीः। इन्द्रं इव ज्येष्ठो भंवतु प्रजावान्। अस्मा अस्तु पुष्कुलं चित्रभांनु। आऽयं पृणक्तु रजंसी उपस्थम्। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कुलं चित्रभांनु। यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्।

तस्मित्राजांनुमधि विश्रयेमम्। द्यौरंसि पृथिव्यंसि। व्याघ्रो वैयाघ्रेऽधिं॥५१॥

विश्रंयस्व दिशों महीः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। तासाँ त्वा सर्वासाः रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। अभि त्वा वर्चसाऽसिचं दिव्येनं। पर्यसा सह। यथासां राष्ट्रवर्धनः॥५२॥

तथाँ त्वा सिवता कंरत्। इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचसङ्गिरंः। र्थीतंमश् रथीनाम्। वार्जाना्श् सत्पंतिं पितम्। वसंवस्त्वा पुरस्तांदिभिषिश्चन्तु गायत्रेण् छन्दंसा। रुद्रास्त्वां दक्षिण्तोऽभिषिश्चन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। आदित्यास्त्वां पश्चादिभिषिश्चन्तु जागंतेन् छन्दंसा। विश्वें त्वा देवा उत्तर्तोऽभिषिश्चं त्वाऽनुंष्टुभेन् छन्दंसा। बृह्स्पतिंस्त्वोपिरंष्टादिभिषिश्चतु पाङ्केन् छन्दंसा॥५३॥

अरुणं त्वा वृकंमुग्रङ्क्षं जङ्करम्। रोचंमानं मुरुतामग्रे अर्चिषंः। सूर्यवन्तं मुघवानं

विषास्हिम्। इन्द्रंमुक्थेषुं नाम्हूतंम १ हुवेम। प्र बाहवां सिसृतं जीवसें नः। आ नो गर्व्यूतिमुक्षतं घृतेनं। आ नो जनें श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इन्द्रंस्य ते वीर्युकृतंः। बाह् उपावं हरामि॥५४॥

बुभूवाव्ययत्तेनेममंग्र इह वर्षसा समिक्षु वैयाघ्रेऽधि राष्ट्रवर्धनः पाङ्केन छन्दसोपावहरामि॥———————————————[१५]

अभि प्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्नहा। आतिष्ठ वृत्रहन्तंमः। तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभितो रथं यौ। ध्वान्तं वांताग्रमनुं स्श्चरंन्तौ। दूरेहेंतिरिन्द्रियावाँन्पत्त्री। ते नोऽग्नयः पप्रंयः पारयन्तु। नमंस्त ऋषे गद। अव्यंथायै त्वा स्वधायै त्वा॥५५॥

मा नं इन्द्राभित्स्त्वदृष्वारिष्टासः। एवा ब्रंह्मन्तवेदंस्तु। तिष्ठा रथे अधि यद्वज्रंहस्तः। आ र्ष्टमीन्देव युवसे स्वर्थः। आ तिष्ठ वृत्रहन्नातिष्ठंन्तं परि। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनुं त्वा मित्रावरुंणौ। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता सोमों अग्निः। अनुं त्वाऽवतु

सविता सवेनं॥५६॥

इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचस्ङ्गिरंः। र्थीतंम १ रथीनाम्। वाजांना १ सत्पंतिं पतिम्। परिमा सेन्या घोषाः। ज्यानां वृञ्जन्तु गृध्नवंः। मेथिष्ठाः पिन्वंमाना इह। मां गोपंतिम्भि संविंशन्तु। तन्मेऽनुंमित्रिरनुं मन्यताम्। तन्माता पृंथिवी तत्पता द्योः॥५७॥

तद्भावांणः सोम्सुतों मयो्भुवंः। तदिश्विना शृणुत सौभगा युवम्। अवं ते हेड् उद्त्र्तमम्। एना व्याघ्रं परिषस्वजानाः। सिन्द्र हिन्विन्ति मह्ते सौभगाय। स्मुद्रं न सुहुवंन्तस्थिवा सम्। मुर्मृज्यन्ते द्वीपिनं मुफ्स्वंन्तः। उदसावेतु सूर्यः। उदिदं माम् व वचंः। उदिहि देव सूर्य। सह वृग्नुना ममं। अहं वाचो विवाचंनम्। मिय् वागस्तु धर्णसिः। यन्तुं नृदयो वर्षंन्तु पूर्जन्यौः। सुपिप्पुला ओषंधयो भवन्तु। अन्नंवतामोदनवंतामामिक्षंवताम्। एषा राजां भूयासम्॥५८॥

स्वुधार्यं त्वा सुवेन द्योः सूर्यं सप्त चं॥————[१६]

द्विनाम्नी दीक्षा वृशिनी ह्युंग्रा। प्र केशाः सुवतं काण्डिनो भवन्ति। तेषां ब्रह्मेदीशे वर्पनस्य नान्यः। आ रोह प्रोष्टं विषंहस्व शत्रून्ं। अवास्त्राग्दीक्षा वृशिनी ह्युंग्रा॥५९॥ देहि दक्षिणां प्रतिर्स्वायुंः। अथामुच्यस्व वरुंणस्य पाशांत्। येनावंपथ्सिवृता क्षुरेणं। सोमंस्य राज्ञो वरुंणस्य विद्वान्। तेनं ब्रह्माणो वपतेदमस्योर्जेमम्। र्य्या वर्चसा स॰ सृंजाथ। मा ते केशाननं गाद्वर्चं एतत्। तथां धाता करोतु ते। तुभ्यमिन्द्रो बृह्स्पतिः। स्विता वर्च आदंधात्॥६०॥

तेभ्यों निधानं बहुधा व्यैच्छन्। अन्तरा द्यावांपृथिवी अपः सुवंः। दुर्भस्तम्बे

वीर्यकृते निधायं। पौर्स्येनेमं वर्चसा सर सृंजाथ। बलं ते बाहुवोः संविता

दंधातु। सोमंस्त्वाऽनक्तु पर्यसा घृतेनं। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौ इस्येनेमं

ये केशिनंः प्रथमाः सत्रमासंत। येभिराभृंतं यदिदं विरोचंते। तेभ्यों जुहोमि

बहुधा घृतेनं। रायस्पोषेणेमं वर्चसा स॰ सृंजाथ। नर्ते ब्रह्मणस्तपंसो विमोकः।

वर्चसा स॰सृंजाथ। यथ्सीमन्तुङ्कङ्कंतस्ते लिलेखं। यद्वां क्षुरः पंरिवृवर्ज् वपर्श्स्ते। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौङ्स्येनेम॰ स॰ सृंजाथो वीर्येण॥६१॥

अवाँसाग्वीक्षा वृशिनो ह्यंग्राऽदेशाहुवर्ज वपई स्ते हे चे। [१७] इन्द्रं वै स्वाविशो मुरुतो नापांचायन्। सोऽनंपचाय्यमान पुतं विंघुनमंपश्यत्।

तमाऽहरत्। तेनायजता तेनैवासान्त र सई स्तम्भं व्यंहन्। यद्यहन्। तिर्धिघनस्यं विघन्त्वम्। वि पाप्मानं भ्रातृंव्य र हते। य एतेन् यजते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

य राजांनं विशो नाप्चायेयुः। यो वा ब्राह्मणस्तमंसा पाप्मना प्रावृंतः स्यात्। स एतेनं यजेत। विघनेनैवैनंद्विहत्यं। विशामाधिपत्यं गच्छति। तस्य द्वे द्वांद्शे स्तोत्रे भवंतः। द्वे चंतुर्विष्शे। औद्भिंद्यमेव तत्। एतद्वे क्षुत्रस्यौद्भिंद्यम्। यदंस्मै स्वाविशो बुलि हरंन्ति॥६३॥

हर्रन्त्यस्मै विशों बुलिम्। ऐन्मप्रंतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं। प्रबाहुग्वा अग्रैं क्षुत्राण्यातेपुः। तेषामिन्द्रंः क्षुत्राण्यादेत्त। न वा इमानि क्षुत्राण्यंभूवन्नितिं।

तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्। आ श्रेयंसो भ्रातृंव्यस्य तेजं इन्द्रियं दंत्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६४॥

तद्यथां हु वै संचिक्तिणों कप्लंकावुपावंहितों स्यातांम्। एवमेतो युग्मन्तों स्तोमौं। अयुक्षु स्तोमेंषु क्रियेते। पाप्मनोऽपंहत्ये। अपं पाप्मानं भ्रातृंव्य हते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। तद्यथां हु वै सूंतग्रामण्यः। एवं छन्दा स्ति। तेष्वसावांदित्यो बृंहतीरभ्यूंढः॥६५॥

स्तोबृंहतीषु स्तुवते स्तो बृंहन्। प्रजयां प्रशुभिरसानीत्येव। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तं वै क्ष्रृतं विशा। विशेवैनं क्षृत्रेण् व्यतिषज्ञति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो वै ग्रामणीः संजातैः। स्जातैरेवैनं व्यतिषज्ञति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो वै पुरुषः पाप्मभिः। व्यतिषक्ताभिरेवास्यं पाप्मनों नुदते॥६६॥

वेद् हर्रन्त्येनमेवं वेद्यार्श्युढः पाप्मभिरेकं च॥————[१८]

त्रिवृद्यदाँग्नेर्यौऽग्निमुंखा ह्युद्धिर्यदाँग्नेय आँग्नेयो न वै सोमेंनु यो वै सोमेंनैष गोंसुवः सि॒॰्हेंऽभि प्रेहिं मित्रवर्धनः प्रजापंतिस्ता आँदनं प्रजापंतिरकामयत

सप्तमः प्रश्नः (अष्टकम् २)

बहोर्भूयांनगस्त्योस्या जरांसुस्तिष्ठा हरीं प्रजापंतिः पुशून्य्याघ्रोऽयमुभिप्रेहिं वृत्रहन्तमो ये केशिन इन्द्रं वा अष्टादंश॥१८॥

त्रिवृद्यो वै सोमेनायुरिस बहुर्भवित तिष्ठा हरीरथ आयं भात तेभ्यो निधान् षट्थाष्टिः॥६६॥

त्रिवृत्पाप्मनों नुदते॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

पीवौन्ना रियव्धं सुमेधाः। श्वेतः सिंपक्ति नियुतांमिभिश्रीः। ते वायवे समनसो वित्रस्थः। विश्वेन्नरं स्वपृत्यानि चक्रः। रायेऽन् यञ्जजतू रोदंसी उभे। राये देवी धिषणां धाति देवम्। अधां वायुं नियुतं सश्चत स्वाः। उत श्वेतं वसुंधितिन्निरेके। आ वायो प्र याभिः। प्र वायुमच्छां बृहती मंनीषा॥१॥

बृहद्रंयिं विश्ववाराः रथप्राम्। द्युतद्यांमा नियुतः पत्यंमानः। क्विः क्विमियक्षसि प्रयज्यो। आ नों नियुद्धिः शृतिनींभिरध्वरम्। सहस्रिणींभिरुपं याहि यज्ञम्। वायों अस्मिन् ह्विषिं मादयस्व। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तं नों अस्तु॥२॥

वय इस्याम् पतियो रयीणाम्। रयीणां पतिं यज्ततं बृहन्तम्। अस्मिन्भरे नृतिमं

वार्जसातौ। प्रजापंतिं प्रथम्जामृतस्यं। यजांम देवमिधं नो ब्रवीतु। प्रजापते त्विन्निधिपाः पुराणः। देवानां पिता जनिता प्रजानांम्। पितिर्विश्वस्य जगंतः पर्स्पाः। हिवर्नो देव विहवे जुंषस्व। तवेमे लोकाः प्रदिशो दिश्रश्च॥३॥

प्रावतों निवतं उद्वतंश्च। प्रजांपते विश्वसृज्ञीवधंन्य इदं नों देव। प्रतिंहर्य ह्व्यम्। प्रजापितं प्रथमं युज्ञियांनाम्। देवानामग्रे यज्तं यंजध्वम्। स नों ददातु द्रविंण र सुवीर्यम्। रायस्पोषं वि ष्यंतु नाभिमस्मे। यो राय ईशे शतदाय उक्थ्यं। यः पंशूना र रक्षिता विष्ठिंतानाम्। प्रजापंतिः प्रथमजा ऋतस्यं॥४॥

सहस्रंधामा जुषता १ ह्विर्नः। सोमांपूषणेमौ देवौ। सोमांपूषणा रजंसो विमानम्। सप्तचंऋ १ रथमविश्वमिन्वम्। विषूवृतं मनंसा युज्यमांनम्। तं जिंन्वथो वृषणा पश्चरिष्मम्। दिव्यंन्यः सदेनं च्ऋ उच्चा। पृथिव्यामन्यो अध्यन्तिरक्षे। तावस्मभ्यं पुरुवारं पुरुक्षुम्। रायस्पोषं विष्यंतान्नाभिमस्मे॥५॥

धियंं पूषा जिंन्वतु विश्वमिन्वः। र्यि सोमों रियपितिर्दधातु। अवंतु

मनीषाऽस्तुं चर्तस्यास्मे किंतवासंश्चत्वारिं

देव्यदितिरन्वां। बृहद्वंदेम विदथें सुवीराः। विश्वान्यन्यो भुवना ज्जानं। विश्वमन्यो अभिचक्षांण एति। सोमांपूषणाववंतं धियंं मे। युवभ्यां विश्वाः पृतना जयम। उद्तेत्तमं वंरुणास्तंभ्राद्याम्। यत्किं चेदं किंत्वासंः। अवं ते हेडस्तत्त्वां यामि। आदित्यानामवंसा न दंक्षिणा। धारयंन्त आदित्यासंस्तिस्रो भूमीधारयन्। यज्ञो देवाना शुचिर्पः॥६॥

ते शुक्रासः शुचंयो रश्मिवन्तंः। सीदंन्नादित्या अधि बर्हिषिं प्रिये। कामेन देवाः सर्थं दिवो नंः। आ यान्तु यज्ञमुपं नो जुषाणाः। ते सूनवो अदितेः

पीवसामिषम्। घृतं पिन्वत्प्रतिहर्यन्नृतेजाः। प्र यज्ञिया यजमानाय येमुरे। आदित्याः कामं पितुमन्तंमस्मे। आ नः पुत्रा अदितेर्यान्तु यज्ञम्। आदित्यासंः पृथिभिर्देवयानैः॥७॥

असमे कामं दाशुषे सन्नमंन्तः। पुरोडाशं घृतवंन्तं जुषन्ताम्। स्कुभायत्

अष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् २)

निर्ऋति १ सेधतामंतिम्। प्र रश्मिभिर्यतंमाना अमृधाः। आदित्याः काम प्रयंतां वर्षद्गतिम्। जुषर्ध्वं नो हव्यदांतिं यजत्राः। आदित्यान्काम्मवंसे हुवेम। ये भूतानिं जनयंन्तो विचिख्युः। सीदंन्तु पुत्रा अदितेरुपस्थम्। स्तीर्णं बर्हिर्हंविरद्यांय देवाः॥८॥

स्तीर्णं बर्हिः सींदता युज्ञे अस्मिन्। ध्राजाः सेधन्तो अमंतिं दुरेवांम्। अस्मभ्यं पुत्रा अदितेः प्र यर्सत। आदित्याः कामं हिवषो जुषाणाः। अग्ने नयं सुपर्था राये अस्मान्। विश्वांनि देव वयुनांनि विद्वान्। ययोध्यंस्मर्ज्जंहुराणमेनः। भूयिष्ठान्ते नमं उक्तिं विधेम। प्र वंः शुक्रायं भानवें भरध्वम्। हव्यं मृतिं चाग्नये सुपूतम्॥९॥ यो दैव्यांनि मानुषा जनूर्षि। अन्तर्विश्वांनि विद्मना जिगांति। अच्छा गिरों मतयो देवयन्तीः। अग्निं यन्ति द्रविणं भिक्षंमाणाः। सुसन्दशर् सुप्रतीकुर् स्वश्रम्। हव्यवाहंमरतिं मानुंषाणाम्। अग्ने त्वमस्मद्यंयोध्यमीवाः। अनेग्नित्रा अभ्यंमन्त कृष्टीः। पुनंरुस्मभ्य र सुवितायं देव। क्षां विश्वेभिरजरेभिर्यजत्र॥१०॥

अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्। स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूश्चं पृथ्वी बंहुला नं उर्वी। भवां तोकाय तनयाय शं योः। प्रकारवो मन्ना वच्यमानाः। देवद्रीचीं नयथ देवयन्तः। दक्षिणावाङ्वाजिनी प्राच्येति। ह्विभिरंन्त्यग्नये घृताचीं। इन्द्रं नरो युजे रथम्ं। जुगृभ्णाते दक्षिणिमन्द्र हस्तम्॥११॥

वस्यवी वसुपते वसूनाम्। विद्या हि त्वा गोपिति शर् गोनौम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण रियन्दौः। तवेदं विश्वंम्भितः पश्च्यम्। यत्पश्यंसि चक्षंसा सूर्यंस्य। गवांमिस गोपितिरेकं इन्द्र। भृक्षीमिहं ते प्रयंतस्य वस्वः। सिनन्द्र णो मनसा नेषि गोभिः। सर सूरिभिर्मघवन्थ्य स्वस्त्या। सं ब्रह्मणा देवकृतं यदस्ति॥१२॥ सं देवाना रे सुमृत्या यिज्ञयांनाम्। आराच्छत्रुमपं बाधस्व दूरम्। उग्रो यः शम्बंः पुरुहूत तेनं। अस्मे धेहि यवंमुद्गोमंदिन्द्र। कृधीधियं जिर्त्रे वाजंरत्नाम्। आ वेधस् स हि शुचिः। बृहस्पितः प्रथमं जायंमानः। महो ज्योतिषः पर्मे

व्योमन्। सप्तास्यंस्तुविजातो खेंण। वि सप्तरंश्मिरधमृत्तमा र्रसि॥१३॥

देवयानैर्देवाः सुपूतं यजत्र हस्तमस्ति तमाईस्यूर्मिभिर्द्वे चं॥

बृह्स्पतिः समंजयद्वसूंनि। महो व्रजान्गोमंतो देव एषः। अपः सिषांस्-थ्सुव्रप्रतित्तः। बृह्स्पतिर्हन्त्यमित्रमकैः। बृहंस्पते पर्येवा पित्रे। आ नो दिवः पावीरवी। इमा जुह्वांना यस्ते स्तनंः। सरंस्वत्यभि नो नेषि। इयश् शुष्मेंभिर्विस्खा इंवारुजत्। सानुं गिरीणान्तंविषेभिंरूर्मिभिः। पारावद्घ्रीमवंसे सुवृक्तिभिः। सरंस्वतीमा विवासेम धीतिभिः॥१४॥

सोमों धेनु र सोमो अर्वन्तमाशुम्। सोमों वीरं कर्मण्यं ददातु। साद्रन्यं विद्थ्य र स्मेयम्। पितुः श्रवंणं यो ददांशदस्मै। अषांढं युथ्सु त्व र सोम् ऋतुंभिः। या ते धामांनि ह्विषा यजंन्ति। त्विम्मा ओषंधीः सोम् विश्वाः। त्वमपो अंजनयस्त्वङ्गाः।

या ते धार्मानि दिवि या पृथिव्याम्। या पर्वतेष्वोषंधीष्वपस्। तेभिर्नो विश्वैः सुमना अहेडन्। राजैन्थ्सोम् प्रति ह्व्या गृंभाय। विष्णोर्नुकं तदस्य प्रियम्। प्र

त्वमातंतन्थोर्वन्तरिक्षम्। त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ॥१५॥

अष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् २)

तद्विष्णुंः। परो मात्रया तनुवां वृधान। न तें महित्वमन्वंश्जुवन्ति। उभे तें विद्म रजंसी पृथिव्या विष्णों देव त्वम्। परमस्यं विथ्से॥१६॥

विचंक्रमे त्रिर्देवः। आ ते महो यो जात एव। अभि गोत्राणि। आभिः स्पृधीं मिथुतीररिषण्यन्। अमित्रंस्य व्यथया मृन्युमिन्द्र। आभिर्विश्वां अभियुजो विष्चीः। आर्याय विशोवंतारीर्दासीः। अयर शृंण्वे अधु जयंत्रुत घ्रन्। अयमुत प्र कृंणुते युधा गाः। यदा सत्यं कृणुते मृन्युमिन्द्रं:॥१७॥

विश्वं दृढं भयत एजंदस्मात्। अनुं स्वधामक्षरन्नापो अस्य। अवर्धत मध्य आ नाव्यानाम्। सधीचीनेन मनसा तिमेन्द्र ओजिष्ठेन। हन्मेनाहन्नभिद्यून्। मरुत्वेन्तं वृष्मं वावृधानम्। अक्वारिं दिव्य १ शासिमन्द्रम्। विश्वासाहमवसे नूतनाय। उग्र १ संहोदामिह तर हुवेम। जिनेष्ठा उग्रः सहसे तुरायं॥१८॥

मुन्द्र ओजिष्ठो बहुलाभिमानः। अवर्धन्निन्द्रं मुरुतंश्चिदत्रं। माता यद्वीरं दधनद्धनिष्ठा। क्रंस्यावों मरुतः स्वधाऽऽसीत्। यन्मामेक र् सुमधंत्ताहिहत्यै।

अह इ ह्युंग्रस्तंविषस्तुविष्मान्। विश्वंस्य शत्रोरनंमं वध्स्रैः। वृत्रस्यं त्वा श्वसथा दीषंमाणाः। विश्वं देवा अंजहुर्ये सर्खायः। मुरुद्धिरिन्द्र सुख्यं ते अस्तु॥१९॥

अथेमा विश्वाः पृतंना जयासि। वधीं वृत्रं मंरुत इन्द्रियेणं। स्वेन् भामेंन तिवृषो बंभूवान्। अहमेता मनंवे विश्वश्चंन्द्राः। सुगा अपश्चंकर् वर्ज्ञंबाहुः। स यो वृषा वृष्णियेभिः समोकाः। महो दिवः पृथिव्याश्चं सम्राट्। सतीनसंत्वा हव्यो भरेषु। मुरुत्वां नो भवत्वन्द्रं ऊती। इन्द्रों वृत्रमंतरद्वृतूर्ये॥२०॥

अनाधृष्यो मघवा शूर इन्द्रंः। अन्वेनं विशो अमदन्त पूर्वीः। अय र राजा जगतश्चर्षणीनाम्। स एव वीरः स उं वीर्यावान्। स एकराजो जगतः पर्स्पाः। यदा वृत्रमतंर्च्छूर् इन्द्रंः। अथाभवद्दमिताभिक्तंतूनाम्। इन्द्रो यज्ञं वर्धयन्विश्ववेदाः। पुरोडाशंस्य जुषता र ह्विर्नः। वृत्रं तीत्वा दान्वं वर्ज्ञबाहुः॥२१॥

दिशोंऽह॰हहृ॰हिता ह॰हंणेन। इमं यज्ञं वर्धयंन्विश्ववंदाः। पुरोडाश्ं प्रतिं गृभ्णात्विन्द्रंः। यदा वृत्रमतंर्च्छूर् इन्द्रेः। अथैकराजो अभव्जनानाम्। इन्द्रों देवाञ्छंम्बर्हत्यं आवत्। इन्द्रों देवानांमभवत्पुरोगाः। इन्द्रों युज्ञे ह्विषां वावृधानः। वृत्रतूर्नो अभये शर्म यश्सत्। यः सप्त सिन्धू रदंधात्पृथिव्याम्। यः सप्त लोकानकृणोद्दिशंश्च। इन्द्रों ह्विष्मान्थ्सगंणो मुरुद्धिः। वृत्रतूर्नो युज्ञमिहोपं यासत॥२२॥

यासत्॥२२॥

वुवुर्थ विथ्स इन्द्रंस्तुरायाँस्त वृत्रतूर्ये वर्जवाहः पृथिव्यात्रीणि च॥

[3]

इन्द्रस्तरंस्वानिभातिहोग्रः। हिरंण्यवाशीरिष्टिरः सुंवर्षाः। तस्यं वय १ सुंमृतौ यिज्ञयंस्य। अपि भृद्रे सौमन्से स्याम। हिरंण्यवर्णी अभयं कृणोतु। अभिमातिहेन्द्रः पृतंनासु जिष्णुः। स नः शर्म त्रिवरूथं वि य १ सत्। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। इन्द्र १ स्तुहि विज्ञण् १ स्तोमंपृष्ठम्। पुरोडाशंस्य जुषता १ हिवर्नः॥२३॥

ह्त्वाभिमांतीः पृतंनाः सहंस्वान्। अथाभंयं कृणुहि विश्वतों नः। स्तुहि शूरंं विज्ञिणमप्रंतीत्तम्। अभिमातिहनंं पुरुहूतमिन्द्रम्ंं। य एक इच्छ्तपंतिर्जनेषु। अष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् २)

तस्मा इन्द्रांय हिवरा जुंहोत। इन्द्रों देवानांमधिपाः पुरोहिंतः। दिशां पतिंरभवद्वाजिनींवान्। अभिमातिहा तंविषस्तुविंष्मान्। अस्मभ्यंं चित्रं वृषंण १ रयिन्दांत्॥२४॥

य इमे द्यावांपृथिवी मंहित्वा। बलेनाद ईहदभिमातिहेन्द्रंः। स नों हविः प्रतिं गृभ्णातु रातयें। देवानां देवो निधिपा नो अव्यात्। अनंवस्ते रथं वृष्णे यत्तें। इन्द्रंस्य नु वीर्यांण्यहन्नहिम्। इन्द्रो यातोऽवंसितस्य राजां। शर्मस्य च शृङ्गिणो वर्ज्जबाहुः। सेदु राजाँ क्षेति चर्षणीनाम्। अरान्न नेमिः परि ता बंभूव॥२५॥ अभि सिध्मो अंजिगादस्य शत्रून्। वितिग्मेनं वृषभेणा पुरोभेत्। सं

वज्रंणासृजद्वृत्रमिन्द्रंः। प्र स्वां मृतिमंतिरुच्छाशंदानः। विष्णुं देवं वर्रणमूतये भगम्। मेदंसा देवा वपयां यजध्वम्। ता नो यज्ञमागंतं विश्वधेना। प्रजावंदस्मे द्रविंगेह धंत्तम्। मेदंसा देवा वपयां यजध्वम्। विष्णुं च देवं वर्रुणं च रातिम्॥२६॥ ता नो अमीवा अप बार्धमानौ। इमं युज्ञं जुषमाणावुपेतम्। विष्णूवरुणा युवर्मध्वरायं नः। विशे जनाय मिह शर्मं यच्छतम्। दीर्घप्रयञ्ज्यू हिवषां वृधाना। ज्योतिषाऽरातीर्दहत्नतमा रसि। ययोरोजंसा स्कभिता रजारेसि। वीर्येभिर्वीरतमा शिवेष्ठा। याऽपत्ये ते अप्रतीत्ता सहोभिः। विष्णूं अगुन्वरुंणा पूर्वहूंतौ॥२७॥

विष्णूंवरुणाविभिशस्तिपावाँम्। देवा यंजन्त ह्विषां घृतेनं। अपामींवार सेधतर रक्षसंश्च। अथांधत्तं यजंमानाय शं योः। अर्होमुचां वृष्मा सुप्रतूर्ती। देवानां देवतंमा शिचेष्ठा। विष्णूंवरुणा प्रतिहर्यतन्नः। इदं नरा प्रयंतमूतये ह्विः। मही नु द्यावांपृथिवी इह ज्येष्ठें। रुचा भवतार शुचयंद्भिर्कैः॥२८॥

यथ्सीं विरिष्ठे बृह्ती विमिन्वन्। नृवद्धोक्षा पंप्रथानेभिरेवैः। प्रपूर्वजे पितरा नव्यंसीभिः। गीर्भिः कृंणुध्वर् सदंने ऋतस्यं। आ नौं द्यावापृथिवी दैव्यंन। जनेन यातं मिहं वां वरूथम्। स इथ्स्वपा भुवंनेष्वास। य इमे द्यावापृथिवी ज्जानं। उर्वी गंभीरे रजंसी सुमेकैं। अवर्शे धीरः शच्या समैरत्॥२९॥

भूरिं द्वे अर्चरन्ती चरेन्तम्। पृद्वन्तं गर्भमुपदींदधाते। नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थैं।

तं पिंपृत र रोदसी सत्यवाचम्। इदं द्यांवापृथिवी सृत्यमंस्तु। पितृर्मात्यिदिहोपं ब्रुवे वाम्। भूतं देवानांमवमे अवोभिः। विद्यामेषं वृज्जनं जीरदानुम्। उर्वी पृथ्वी बहुले दूरे अन्ते। उपं ब्रुवे नमंसा युज्ञे अस्मिन्। दर्धाते ये सुभगे सुप्रतूर्ती। द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात्। या जाता ओषंध्योऽति विश्वाः परिष्ठाः। या ओषंधयः सोमराज्ञीरश्वावृती र सोमवृतीम्। ओषंधीरितिं मातरोऽन्या वो अन्यामंवतु॥३०॥ हिवनं वाद्वभ्व पूर्वि पूर्वहंतव्करेरविस्तर्थ वा [४]

शुचिं नु स्तोम् श्रव्यद्वृत्रम्। उभा वांमिन्द्राग्नी प्र चंर्षणिभ्यः। आ वृत्रहणा गीर्भिर्विप्रः। ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता। सूक्तस्यं बोधि तनंयं च जिन्व। विश्वं तद्भद्रं

यद्वन्ति देवाः। बृहद्वेदेम विदर्थे सुवीराः। स ई र सत्येभिः सर्खिभिः शुचिद्भिः। गोधायसं विधन्सैरतर्दत्। ब्रह्मणस्पतिर्वृषिभिर्वराहैः॥३१॥

घर्मस्वेदेभिर्द्रविणं व्यानट्। ब्रह्मणस्पतेरभवद्यथावृशम्। सृत्यो मृन्युर्मिह् कर्मां करिष्युतः। यो गा उदाज्रथ्म दिवे वि चांभजत्। मृहीवं रीतिः शवंसा सर्त्पृथंक्।

इन्यांनो अग्निं वंनवद्वनुष्यतः। कृतब्रंह्मा शूश्वद्रातहंव्य इत्। जातेनं जातमित्सृत्र सृरंसते। यं युं युजंं कृणुते ब्रह्मंणस्पतिः। ब्रह्मंणस्पते सुयमंस्य विश्वहाँ॥३२॥

रायः स्याम रथ्यो विवस्वतः। वीरेषुं वीरा॰ उपपृक्षिः नस्त्वम्। यदीशांनो ब्रह्मणा वेषिं मे हवम्। स इज्ञनेन स विशा स जन्मना। स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः। देवानां यः पितरंमा विवासित। श्रद्धामना ह्विषा ब्रह्मणस्पतिम्। यास्ते पूषन्नावो अन्तः। शुक्रं ते अन्यत्पूषेमा आशाः। प्रपंथे पृथामंजनिष्ट पूषा॥३३॥

प्रपंथे दिवः प्रपंथे पृथिव्याः। उमे अभि प्रियतंमे स्थस्थैं। आ च परां च चरति प्रजानन्। पूषा सुबन्धंर्दिव आ पृथिव्याः। इडस्पतिर्म्घवां दस्मवर्चाः। तं देवासो अदंदुः सूर्यायैं। कामेन कृतं त्वस्क् स्वश्रम्ं। अजाऽश्वंः पशुपा वाजंबस्त्यः। धियं जिन्वो विश्वे भुवंने अर्पितः। अष्ट्रां पूषा शिथिरामुद्वरीवृजत्॥३४॥

स्श्रक्षाणो भुवंना देव ईयते। शुचीं वो ह्व्या मंरुतः शुचींनाम्। शुचिर् हिनोम्यध्वर शुचिंभ्यः। ऋतेनं स्त्यमृत्सापं आयन्। शुचिंजन्मानः शुचंयः पावकाः। प्र चित्रम्कं गृंणते तुरायं। मारुताय स्वतंवसे भरध्वम्। ये सहा रेसि सहंसा सहंन्ते। रेजंते अग्ने पृथिवी मुखेभ्यः। अरसेष्वा मंरुतः खादयो वः॥३५॥

वक्षंः सुरुक्ता उपं शिश्रियाणाः। वि विद्युतो न वृष्टिभी रुचानाः। अनुं स्वधामायुंधैर्यच्छंमानाः। या वः शर्म शशमानाय सन्ति। त्रिधातूंनि दाशुषं यच्छुताधि। अस्मभ्यं तानि मरुतो वियन्त। र्यिं नो धत्त वृषणः सुवीरम्। इमे तुरं मुरुतो रामयन्ति। इमे सहः सहंस् आ नंमन्ति। इमे शः संवनुष्यतो नि पान्ति॥३६॥

गुरुद्वेषो अरंरुषे दधन्ति। अरा इवेदचंरमा अहेव। प्रप्नं जायन्ते अकंवा महोंभिः। पृश्वेः पुत्रा उपमासो रभिष्ठाः। स्वयां मृत्या मुरुतः सं मिमिक्षुः। अनुं ते दायि मह इन्द्रियायं। सूत्रा ते विश्वमनुं वृत्रहत्यें। अनुं क्षुत्रमनु सहो यजत्र। इन्द्रं देवेभिरनुं ते नृषह्ये। य इन्द्रं शुष्मो मघवन्ते अस्ति॥३७॥

शिक्षा सर्खिभ्यः पुरुहूत् नृभ्यः। त्व १ हि दृढा मंघवन्विचेताः। अपावृधि परिवृतिं

वराहैं विश्वहां ऽजिनष्ट पूषोद्वरीं वृज्जत्खादयों वः पान्त्यस्त्याभिर्नवं च॥

न रार्थः। इन्द्रो राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। अधिक्षमि विषुंरूपं यदस्तिं। ततों ददातु दाशुषे वसूनि। चोद्द्राध् उपंस्तुतश्चिद्वांक्। तमुष्टुहि यो अभिभूत्योजाः। वन्वन्नवांतः पुरुहूत इन्द्रेः। अषांढमुग्र॰ सहंमानमाभिः॥३८॥

गीर्भिर्वर्ध वृष्मं चंर्षणीनाम्। स्थूरस्यं रायो बृंह्तो य ईशैं। तम् ष्टवाम विद्येष्विन्द्रम्। यो वायुना जयंति गोमंतीष्। प्र धृंष्णुया नंयति वस्यो अच्छं। आ ते शुष्मो वृष्म एंतु पृश्चात्। ओत्त्रादंधरागा पुरस्तात्। आ विश्वतो अभिसमेत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्न स्वंविद्धेह्यस्मे॥३९॥

आ देवो यांतु सिवता सुरत्नः। अन्तिरिक्षप्रा वहंमानो अश्वैः। हस्ते दर्धानो नर्या पुरूणि। निवेशयं च प्रसुवं च भूमं। अभीवृतं कृशंनैर्विश्वरूपम्। हिरंण्यशम्यं यज्तो बृहन्तम्। आस्थाद्रथरं सिवता चित्रभानः। कृष्णा रजारंसि तिवेषीं दर्धानः। सर्घा

नो देवः संविता स्वायं। आ सांविषद्वसुंपितुर्वसूंनि॥४०॥

विश्रयंमाणो अमंतिमुरूचीम्। मूर्तभोजंनमधंरासतेन। विजनाँञ्छ्यावाः शिंतिपादों अख्यन्। रथ् हिरंण्यप्रउगं वहंन्तः। शश्विद्दशंः सिवृतुर्देव्यंस्य। उपस्थे विश्वा भुवंनानि तस्थः। वि सुंपूर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यत्। गुभीरवेपा असुंरः सुनीथः। क्वेदानी स्पूर्यः कश्चिकेत। कतमान्द्या रश्मिरस्या तंतान॥४१॥

भगं धियं वाजयंन्तः पुरेन्धिम्। नराशश्सो ग्नास्पतिनी अव्यात्। आ ये वामस्यं सङ्ग्थे रंयीणाम्। प्रिया देवस्यं सिवतुः स्याम। आ नो विश्वे अस्क्रांगमन्तु देवाः। मित्रो अर्यमा वरुणः स्जोषाः। भुवन् यथां नो विश्वे वृधासः। करन्थसुषाहां विथुरं न शवः। शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु। शश्सरस्वती सह धीभिरंस्तु॥४२॥

शर्मिम्षाचः शर्मु रातिषाचः। शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः। ये संवितः सत्यसंवस्य विश्वः। मित्रस्यं व्रते वरुणस्य देवाः। ते सौभंगं वीरवृद्गोम्दप्रः। दर्धातन् द्रविणं चित्रम्स्मे। अग्ने याहि दूत्यं वारिषेण्यः। देवा अच्छा ब्रह्मकृतां गुणेनं। सर्रस्वतीं मुरुतो अश्विनापः। युक्षि देवात्रं ब्रध्यांय विश्वान्॥४३॥

अदिते सुजोषौः। अस्मभ्युष्ट्र शर्म बहुलं वि यन्ता विश्वे देवाः शृणुतेमष्ट्र हवं मे। ये अन्तरिक्षे य उप द्यवि ष्ठ। ये अग्निजिह्वा उत वा यजंत्राः। आसद्यास्मिन्बर्हिषिं मादयध्वम्। आ वां मित्रावरुणा हव्यजुंष्टिम्। नमंसा देवाववंसाऽऽववृत्याम्॥४४॥ अस्माकं ब्रह्म पृतंनासु सह्या अस्माकम्। वृष्टिर्दिव्या सुपारा। युवं वस्त्रांणि पीवसा वंसाथे। युवोरच्छिंद्रा मन्तंवो ह सर्गाः। अवांतिरतमनृंतानि विश्वाः। ऋतेनं मित्रावरुणा सचेथे। तथ्सु वां मित्रावरुणा महित्वम्। ईुर्मा तुस्थुषीरहंभिर्दुदुह्ने। विश्वाः पिन्वथं स्वसंरस्य धेनाः। अनुं वामेकः पविरा वंवर्ति॥४५॥

द्यौः पितः पृथिवि मातरध्रुंक्। अग्नै भ्रातर्वसवो मृडतां नः। विश्वं आदित्या

यद्व १ हिष्ठन्नाति विदे सुदान्। अच्छिंद्र १ शर्म भुवंनस्य गोपा। ततों नो मित्रावरुणाववीष्टम्। सिषांसन्तो जीगिवा १ संः स्याम। आ नो मित्रावरुणा ह्व्यदांतिम्। घृतैर्गव्यूंतिमुक्षत्मिडांभिः। प्रतिं वामत्र वर्मा जनाय। पृणीतमुद्रो दिव्यस्य चारौः। प्र बाहवां सिसृतं जीवसं नः। आ नो गव्यूंतिमुक्षतं घृतेनं॥ ४६॥

आ नो जने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इमा रुद्रायं स्थिरधंन्वने गिरंः। क्षिप्रेषंवे देवायं स्वधाम्ने अषांढाय सहंमानाय मीढुषे तिग्मायंधाय भरता शृणोतंन। त्वादंत्तेभी रुद्र शन्तंमेभिः। श्तर हिमां अशीय भेषजेभिः। व्यंस्मद्वेषों वित्रं व्यर्श्हंः। व्यमीवाङ्श्चातयस्वा विषूंचीः॥४७॥ अर्हंन्बिभर्षि मा नंस्तोके। आ ते पितर्मरुतार सुम्नमेतु। मा नः सूर्यस्य

स्न्हशों युयोथाः। अभि नों वीरो अर्वित क्षमेत। प्र जांयेमिह रुद्र प्रजाभिः। एवा बंभो वृषभ चेकितान। यथां देव न हंणी्षे न हश्सिं। हावनश्रूनों रुद्रेह बोंधि। बृहह्वंदेम विद्धें सुवीराः। परिं णो रुद्रस्यं हेतिः स्तुहि श्रुतम्। मीढुंष्ट्रमार्हन्बिभर्षि। त्वमंग्ने रुद्र आ वो राजांनम्॥४८॥

वर्षि ततानस्त विश्वानं ववृत्यं ववित पूरेन विर्माः श्रुतक्षे वं॥

[ह]

सूर्यो देवीमुषस् रोचंमानामर्यः। न योषांमुभ्येति पृश्चात्। यत्रा नरो देवयन्तो

युगानिं। वितन्वते प्रतिं भुद्रायं भुद्रम्। भुद्रा अश्वां हृरितः सूर्यस्य। चित्रा एदंग्वा

अनुमाद्यांसः। नुमस्यन्तों दिव आ पृष्ठमंस्थुः। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः। तथ्सूर्यंस्य देवृत्वं तन्मंहित्वम्। मुध्या कर्तोवितंतु सञ्जेभार॥४९॥

यदेदयुंक्त हिरितः स्थस्थात्। आद्रात्री वासंस्तन्ते सिमस्मैं। तिन्मित्रस्य वर्रुणस्याभिचक्षे। सूर्यो रूपं कृणुते द्योरुपस्थे। अनुन्तम्न्यद्रुशंदस्य पाजः। कृष्णम्न्यद्धरितः सं भरिन्त। अद्या देवा उदिता सूर्यस्य। निर॰हंसः पिपृतान्निरंवद्यात्। तन्नो मित्रो वर्रुणो मामहन्ताम्। अदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः॥५०॥

दिवो रुका उरुचक्षा उदेति। दूरे अर्थस्तरणिर्भाजमानः। नूनं जनाः सूर्येण् प्रसूताः। आयन्नर्थानि कृणवन्नपार्शसे। शं नो भव चक्षसा शं नो अह्नाँ। शं भानुना शर हिमा शं घृणेनं। यथा शमस्मै शमसंदुरोणे। तथ्सूर्य द्रविणं धेहि चित्रम्। चित्रं देवानामुदंगादनीकम्। चक्षुर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः॥५१॥

आप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्यं आत्मा जर्गतस्त्रस्थुषेश्च। त्वष्टा

दध्तन्नंस्तुरीपम्। त्वष्टां वीरं पिशङ्गंरूपः। दशेमन्त्वष्टंर्जनयन्त गर्भम्। अतंन्द्रासो युव्तयो बिभेर्त्रम्। तिग्मानींक्ड् स्वयंशसं जनेषु। विरोचंमानं परिषीन्नयन्ति। आविष्ट्यो वर्धते चार्रुरास्। जि्ह्यानांमूर्ध्वस्वयंशा उपस्थै॥५२॥

उभे त्वष्टुंर्बिभ्यतुर्जायंमानात्। प्रतीचीं सि॰हं प्रतिंजोषयेते। मित्रो जनान्प्र

स मित्र। अयं मित्रो नंमस्यः सुशेवः। राजां सुक्षत्रो अंजनिष्ट वेधाः। तस्यं वय स्पृमतौ य्ज्ञियंस्य। अपि भृद्रे सौमन्से स्याम। अनुमीवास् इडंया मदंन्तः। मित्रज्मवो वरिम्ना पृथिव्याः। आदित्यस्यं व्रतमुंपृक्ष्यन्तः॥५३॥ वयं मित्रस्यं सुमृतौ स्याम। मित्रं न ई शिम्या गोषुं गृव्यवंत्। स्वाधियो विदर्थे अपस्वजीजनन्। अरंजयता रोदंसी पाजंसा गिरा। प्रति प्रियं यंजतं

विदथे अपस्वजीजनन्। अरेजयता र् रोदसी पाजसा गिरा। प्रति प्रियं यंज्तं जनुषामवंः। महा र आदित्यो नर्मसोपसद्यः। यात्यज्ञंनो गृणते सुशेवंः। तस्मां एतत्पन्यंतमाय जुष्टम्। अग्नौ मित्रायं ह्विरा जुंहोत। आ वा र रथो रोदंसी बद्धधानः॥५४॥
हिरण्ययो वृषंभिर्यात्वश्वैः। घृतवंतिनः पविभीरुचानः। इषां वोढा

नृपतिंर्वाजिनींवान्। स पंप्रथानो अभि पश्च भूमं। त्रिवन्धुरो मन्सायांतु युक्तः। विशो येन् गच्छंथो देवयन्तीः। कुत्रां चिद्यामंमश्विना दर्धाना। स्वश्वां यशसाऽऽयांतम्वांक्। दस्रां निधिं मधुंमन्तं पिबाथः। वि वार् रथों वध्वां यादंमानः॥५५॥

अन्तौं दिवो बांधते वर्तनिभ्यौम्। युवोः श्रियं परि योषांवृणीत। सूरों दुहिता परितिकायायाम्। यद्देवयन्तमवंथः शचीभिः। परिघ्रू सवां मनांवां वयोगाम्। यो ह्स्यवा र्रे रिथरावस्तं उस्राः। रथो युजानः परियाति वर्तिः। तेनं नः शं योरुषसो व्युष्टौ। न्यंश्विना वहतं यज्ञे अस्मिन्। युवं भुज्युमवंविद्ध समुद्रे॥५६॥

उदूंहथुरर्णसो अस्रिधानैः। प्तित्रिभिरश्रमैरंव्यथिभिः। दृश्सनांभिरिश्वना पारयंन्ता। अग्नीषोमा यो अद्य वाँम्। इदं वर्चः सप्यितिं। तस्मै धत्तर सुवीर्यम्। गवां पोष्ड् स्विश्वयम्। यो अग्नीषोमां हिवषां सप्यात्। देवद्रीचा मनसा यो घृतेनं। तस्यं व्रतर रक्षतं पातमरहंसः॥५७॥

विशे जनांय मिह् शर्म यच्छतम्। अग्नीषोमा य आहुंतिम्। यो वां दाशाँद्धविष्कृंतिम्। स प्रजयां सुवीर्यम्। विश्वमायुर्व्यश्ववत्। अग्नीषोमा चेति तद्धीर्यं वाम्। यदमुंष्णीतमवसं पणिङ्गोः। अवांतिरतं प्रथंयस्य शेषंः। अविंन्दतं ज्योतिरकं बहुभ्यः। अग्नीषोमाविम स स मेऽग्नीषोमा ह्विषः प्रस्थितस्य॥५८॥

अहमंस्मि प्रथम्जा ऋतस्यं। पूर्वं देवेभ्यों अमृतंस्य नाभिः। यो मा ददांति स इदेव माऽऽवाः। अहमन्नमन्नंमदन्तंमिद्मा। पूर्वमग्नेरिपं दहृत्यन्नम्। यत्तौ हांसाते अहमुत्तरेषुं। व्यात्तंमस्य पृशवः सुजम्भम्। पश्यंन्ति धीराः प्रचरित् पाकाः।

जहाँम्यन्यत्र जंहाम्यन्यम्। अहमत्रं वश्मिचंरामि॥५९॥

जुभारु द्यौरुग्नेरुपस्थं उपुक्ष्यन्तौ बद्धधानो वृथ्वां यादमानः समुद्रेऽ९हंसुः प्रस्थितस्य॥

स्मानमर्थं पर्येमि भुञ्जत्। को मामन्नं मनुष्यों दयेत। परांके अन्नं निहितं लोक एतत्। विश्वैद्वैः पितृभिर्गुप्तमन्नम्। यद्द्यते लुप्यते यत्परोप्यते। शतत्मी सा तुनूर्में बभूव। मुहान्तौं चुरू संकृद्दुग्धेनं पप्रौ। दिवंं च पृश्ञिं पृथिवीं चं साकम्। तथ्सिम्पबंन्तो न मिनन्ति वेधसंः। नैतद्भयो भवंति नो कनीयः॥६०॥

अत्रं प्राणमत्रंमपानमांहुः। अत्रं मृत्युं तम् जीवातुंमाहुः। अत्रं ब्रह्माणो ज्रसं वदन्ति। अत्रंमाहुः प्रजनंनं प्रजानांम्। मोघमत्रं विन्दते अप्रंचेताः। सत्यं ब्रंवीमि वध इथ्स तस्यं। नार्यमणं पुष्यंति नो सर्खायम्। केवलाघो भवति केवलादी। अहं मेघः स्तनयन्वर्षत्रस्मि। मामंदन्त्यहमंद्ययन्यान्॥६१॥

अह॰ सद्मृतों भवामि। मदांदित्या अधि सर्वे तपन्ति। देवीं वाचंमजनयन्त् यद्वाग्वदंन्ती। अनुन्तामन्तादिधे निर्मितां महीम्। यस्यां देवा अंदधुर्भोजंनानि। एकांक्षरां द्विपदा॰ षद्वंदां च। वाचं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वाचं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वाचं गन्ध्वाः पृशवों मनुष्याः। वाचीमा विश्वा भुवंनान्यर्पिता॥६२॥

सा नो हवंं जुषतामिन्द्रंपत्नी। वागुक्षरं प्रथमुजा ऋतस्यं। वेदांनां माता-

अष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् २)

ऽमृतंस्य नाभिः। सा नो जुषाणोपं यज्ञमागांत्। अवंन्ती देवी सुहवां मे अस्तु। यामृषयो मत्रुकृतों मनीषिणंः। अन्वैच्छं देवास्तपंसा श्रमेण। तान्देवीं वाच ५ हविषां यजामहे। सा नों दधातु सुकृतस्यं लोके। चुत्वारि वाक्परिंमिता पुदानिं॥६३॥

तानिं विदुर्बाह्मणा ये मंनीषिणंः। गुहा त्रीणि निहिंता नेङ्गंयन्ति। तुरीयं वाचो मंनुष्यां वदन्ति। श्रद्धयाऽग्निः समिध्यते। श्रद्धयां विन्दते हविः। श्रद्धां भगस्य मूर्धनि। वचसा वेदयामसि। प्रियः श्रेद्धे ददंतः। प्रियः श्रेद्धे दिदांसतः। प्रियं भोजेषु यज्वंसु॥६४॥ इदं मं उदितं कृिधि। यथां देवा असुरेषु। श्रृद्धामुग्रेषुं चित्रिरे। एवं भोजेषु

यज्वंसु। अस्माकंमुदितं कृधि। श्रद्धां देवा यजमानाः। वायुगोपा उपांसते। श्रद्धाः

ह्रंदय्यंयाऽऽकूत्या। श्रद्धयां ह्यते हविः। श्रद्धां प्रातर्ह्वामहे॥६५॥ श्रद्धां मध्यन्दिनं परि। श्रद्धाः सूर्यस्य निमुचि। श्रद्धे श्रद्धांपयेह माँ। श्रद्धा देवानिधं वस्ते। श्रुद्धा विश्वंमिदं जगत्। श्रुद्धां कार्मस्य मातरम्। हविषां वर्धयामिस। ब्रह्मं जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात्। वि सीमृतः सुरुची वेन आवः। स बुध्नियां उप मा अस्य विष्ठाः॥६६॥

स्तश्च योनिमसंतश्च विवंः। पिता विराजांमृष्मो रंयीणाम्। अन्तरिक्षं विश्वरूप् आविवेश। तमकेर्भ्यंचिन्त वृथ्सम्। ब्रह्म सन्तं ब्रह्मणा वर्धयंन्तः। ब्रह्मं देवानंजनयत्। ब्रह्म विश्वमिदं जगंत्। ब्रह्मंणः क्षुत्रं निर्मितम्। ब्रह्मं ब्राह्मण आत्मनां। अन्तरंस्मित्रिमे लोकाः॥६७॥

अन्तर्विश्वंमिदं जगंत्। ब्रह्मैव भूतानां ज्येष्ठम्ँ। तेन कोऽर्हित स्पर्धितुम्। ब्रह्मन्देवास्त्रयंस्त्रिश्शत्। ब्रह्मित्रन्द्रप्रजापती। ब्रह्मन् ह विश्वां भूतानिं। नावीवान्तः समाहिता। चतंस्र आशाः प्रचंरन्त्वग्नयः। इमं नो यज्ञं नंयतु प्रजानन्। घृतं पिन्वंत्रजर्शं सुवीरम्॥६८॥

ब्रह्मं स्मिद्भंवत्याहुंतीनाम्। आ गावों अग्मत्रुत भ्द्रमंत्रन्। सीदंन्तु गो्ष्ठे रणयंन्त्वस्मे। प्रजावंतीः पुरुरूपां इह स्युः। इन्द्राय पूर्वीरुषसो दुहांनाः। इन्द्रो यज्वेने पृणते चे शिक्षति। उपेद्दंदाति न स्वं मुंषायति। भूयोभूयो रियमिदंस्य वर्धयन्। अभिन्ने खिल्ले नि दंधाति देवयुम्। न ता नंशन्ति न ता अर्वा॥६९॥ गावो भगो गाव इन्द्रों मे अच्छात्। गावः सोमंस्य प्रथमस्यं भक्षः। इमा या गावः सर्जनास् इन्द्रंः। इच्छामीद्धृदा मनसा चिदिन्द्रम्। यूयं गांवो मेदयथा कृशं चित्। अश्रीलं चित्कृणुथा सुप्रतीकम्। भुद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचः। बृहद्वो वये उच्यते सुभासुं। प्रजावंतीः सूयवंस १ रिशन्तीः। शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबंन्तीः। मा वंः स्तेन ईंशत माऽघश ५ सः। परिं वो हेती रुद्रस्यं वृश्यात्। उपेदमुंपपर्चनम्। आसु गोषूपंपृच्यताम्। उपंर्षभस्य रेतंसि। उपेंन्द्र तवं वीर्ये॥७०॥

व्याम् कर्नायोऽत्यानिया प्रवान् यज्यं हवमहे विद्या लोकाः सुवीर्मवं विवेतीः पद्या———[८]
ता सूर्याचन्द्रमसां विश्वभृत्तंमा मृहत्। तेजो वसुंमद्राजतो दिवि। सामात्माना
चरतः सामचारिणां। ययोर्ष्वतं न मुमे जातुं देवयोः। उभावन्तौ परि यात् अर्म्याः।
दिवो न रुश्मी इस्तंनुतो व्यर्णवे। उभा भुंवन्ती भुवना क्विक्रंतू। सूर्या न चन्द्रा चरतो

ह्तामंती। पतीं चुमिद्वंश्वविदां उभा दिवः। सूर्या उभा चन्द्रमंसा विचक्षणा॥७१॥

विश्ववारा वरिवोभा वरेण्या। ता नोऽवतं मित्मन्ता मिहंव्रता। विश्ववपंरी प्रतरंणा तर्न्ता। सुवर्विदां दृशये भूरिंरश्मी। सूर्या हि चन्द्रा वसुं त्वेषदंर्शता। मनस्विनोभानुंचर्तोनु सन्दिवम्। अस्य श्रवों नद्यः सप्त बिंश्रति। द्यावा क्षामां पृथिवी दंर्शतं वपुः। अस्मे सूर्याचन्द्रमसांऽभिचक्षे। श्रद्धेकिमेन्द्र चरतो विचर्तुरम्॥७२॥

पूर्वाप्रं चरतो माययेतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टैं। ऋतूनन्यो विदधंज्ञायते पुनः। हिरंण्यवर्णाः शुचंयः पावका यासाः राजां। यासां देवाः शिवेनं मा चक्षंषा पश्यत। आपो भद्रा आदित्पंश्यामि। नासंदासीन्नो सदांसीत्तदानींम्। नासीद्रजो नो व्योमा प्रो यत्। किमावंरीवः कुह् कस्य शर्मन्॥७३॥

अम्भः किमांसीद्गहंनं गभीरम्। न मृत्युर्मृतं तर्हि न। रात्रिया अहं

आसीत्प्रकेतः। आनींदवातः स्वधया तदेकम्। तस्माँद्धान्यं न पुरः किश्चनासं। तमं आसीत्तमंसा गूढमग्रे प्रकेतम्। सुलिलः सर्वमा इदम्। तुच्छेनाभ्विपिहितं यदासीत्। तमंसस्तन्मंहिना जांयतैकम्। कामस्तदग्रे समंवर्ततािध॥७४॥

मनंसो रेतः प्रथमं यदासींत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। तिर्श्वीनो वितंतो रिश्मरेषाम्। अधः स्विदासी(३)दुपरि स्विदासी(३)त्। रेतोधा आंसन्मिह्मानं आसन्। स्वधा अवस्तात्प्रयंतिः प्रस्तांत्। को अद्धा वेद क इह प्र वोचत्। कुत् आजांता कुतं इयं विसृष्टिः। अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनाय॥७५॥

अथा को वेंद् यतं आब्भूवं। इयं विसृंष्टि्र्यतं आब्भूवं। यदिं वा द्धे यदिं वा न। यो अस्याध्यक्षः पर्मे व्योमन्। सो अङ्ग वेंद् यदिं वा न वेदं। किङ्स्विद्वनुङ्क उ स वृक्ष आंसीत्। यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनीषिणो मनसा पृच्छतेदुतत्। यद्ध्यतिष्ठद्भुवंनानि धारयन्। ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्॥७६॥ यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः। मनीषिणो मनसा विब्नवीमि वः। ब्रह्माध्यतिष्ठद्भुवनानि धारयन्। प्रातर्गि प्रातरिन्द्र हवामहे। प्रातर्मित्रावरुणा प्रातर्शिना। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिम्। प्रातः सोममुत रुद्र हवेम। प्रातर्जितं भगमुग्र हेवेम। व्यं पुत्रमदितेयी विधर्ता। आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चित्॥७७॥

राजां चिद्यं भगं भृक्षीत्याहं। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यंराधः। भग्मां धियमुदंव ददंन्नः। भग् प्रणो जनय गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। उतेदानीं भगवन्तः स्याम। उत प्रपित्व उत मध्ये अह्नौम्। उतोदिता मघवन्थ्सूर्यस्य। वयं देवानारं सुमृतौ स्योम। भगं पुव भगंवार अस्तु देवाः॥७८॥

तेनं वयं भगंवन्तः स्याम। तं त्वां भग् सर्व इञ्जोहवीमि। स नो भग पुर एता भवेह। समध्वरायोषसो नमन्त। दिधिकावेव शुचंये पदायं। अर्वाचीनं वंसुविदं भगं नः। रथमिवाश्वां वाजिन् आवंहन्तु। अश्वांवतीर्गोमंतीर्न उषासंः। वीरवंतीः सदंमुच्छन्तु भुद्राः। घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीनाः। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां

अष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् २)

नः॥७९॥

विचुक्षणा विंचर्तुर॰ शर्मुत्रिधि विसर्जनाय ब्रह्म वनुं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्तुरिश्चेदेवाः प्रपीना एकं च॥[९] पीवौत्रान्ते शुकासः सोमौ धेनुमिन्द्रस्तरंस्वाञ्छुचिमा

देवो यांतु सूर्यो देवीमृहमंस्मि ता सूँर्याचन्द्रमसा नवं॥९॥

पीर्वौत्रामग्ने त्वं पारयानाधृष्यः शुचिं नु विश्रयमाणो दिवो रुक्तोऽत्रं प्राणमन्नन्ता सूर्याचन्द्रमसा नवंसप्ततिः॥७९॥

पीवौन्नां यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥अष्टकम् ३॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अग्निर्नः पातु कृत्तिकाः। नक्षेत्रं देविमिन्द्रियम्। इदमांसां विचक्षणम्। ह्विरासं जुंहोतन। यस्य भान्तिं र्श्मयो यस्यं कृतवंः। यस्येमा विश्वा भुवंनानि सर्वां। स कृत्तिंकाभिर्भिसंवसानः। अग्निर्नो देवः सुंविते दंधातु। प्रजापंते रोहिणी वेतु पत्नीं। विश्वरूपा बृहती चित्रभानुः॥१॥

सा नों यज्ञस्यं सुविते दंधातु। यथा जीवेंम श्ररदः सवीराः। रोहिणी देव्युदंगात्पुरस्तांत्। विश्वां रूपाणि प्रतिमोदंमाना। प्रजापंति हिवषां वर्धयंन्ती। प्रिया देवानामुपंयातु यज्ञम्। सोमो राजां मृगशीर्षेण आगन्। शिवं नक्षेत्रं प्रियमंस्य धामं। आप्यायंमानो बहुधा जनेषु। रेतः प्रजां यजंमाने दधातु॥२॥ यत्ते नक्षेत्रं मृगशीर्षमस्ति। प्रिय राजन् प्रियतंमं प्रियाणांम्। तस्मै ते सोम

प्रमुश्चमांनौ दुरितानि विश्वां। अपाघश र सन्नुदतामरांतिम्। पुनर्नो देव्यदिंतिः स्पृणोत्। पुनर्वसू नः पुनरेतां यज्ञम्। पुनर्नो देवा अभियन्तु सर्वे। पुनः पुनर्वो हिवषां यजामः। पुवा न देव्यदितिरनुर्वा। विश्वस्य भूत्री जर्गतः प्रतिष्ठा। पुनेर्वसू

हिवर्षा विधेम। शं न एधि द्विपदे शं चतुंष्पदे। आईयां रुद्रः प्रथंमा न एति। श्रेष्ठों

देवानां पतिरिघ्वयानांम्। नक्षेत्रमस्य हविषां विधेम। मा नः प्रजा॰ रीरिष्नमोत

वीरान्। हेती रुद्रस्य परि णो वृणक्तु। आर्द्रा नक्षेत्रं जुषता १ हिवर्नः॥३॥

हविषां वर्धयंन्ती। प्रियं देवानामप्येतु पार्थः॥४॥ बृहस्पतिः प्रथमं जायंमानः। तिष्यं नक्षंत्रमभि सम्बंभूव। श्रेष्ठों देवानां पृतंनासु जिष्णुः। दिशोऽनु सर्वा अभयं नो अस्तु। तिष्यः पुरस्तांदुत मध्यतो नैः। बृहस्पतिर्नः परि पातु पश्चात्। बार्धतां द्वेषो अभयं कृणुताम्। सुवीर्यस्य पत्रंयः स्याम। इद॰ सर्पेभ्यों हिवरंस्तु जुष्टम्। आश्रेषा येषांमनुयन्ति चेतः॥५॥ ये अन्तरिक्षं पृथिवीं क्षियन्ति। ते नंः सूर्पासो हवुमार्गमिष्ठाः। ये रोचने

सूर्यस्यापि सूर्पाः। ये दिवं देवीमनुं स्श्चरंन्ति। येषांमाश्चेषा अनुयन्ति कामम्ं। तेभ्यः सूर्पेभ्यो मधुंमञ्जहोमि। उपंहूताः पितरो ये मुघासुं। मनोजवसः सुकृतः सुकृत्याः। ते नो नक्षेत्रे हवमागंमिष्ठाः। स्वधाभिर्यज्ञं प्रयंतं जुषन्ताम्॥६॥

ये अंग्निदग्धा येऽनंग्निदग्धाः। येऽमुं लोकं पितरंः क्षियन्तिं। याङ्श्चं विद्म याङ्

उं च न प्रंविद्य। म्घास्ं यज्ञ १ स्कृंतं जुषन्ताम्। गवां पितः फल्गुंनीनामस् त्वम्। तदंर्यमन्वरुणिमत्र चारुं। तं त्वां वय १ संनितार १ सनीनाम्। जीवा जीवन्तमुप् संविशेम। येनेमा विश्वा भुवनानि सिक्षिता। यस्यं देवा अनु सं यन्ति चेतः॥७॥ अर्यमा राजाऽजरस्तुविष्मान्। फल्गुंनीनामृष्भो रोरवीति। श्रेष्ठो देवानां भगवो भगसि। तत्त्वां विदुः फल्गुंनीस्तस्यं वित्तात्। अस्मभ्यं क्षत्रमजर १ सुवीर्यम्।

गोमदश्वंवदुप सन्नुंदेह। भगों ह दाता भग इत्प्रंदाता। भगों देवीः फल्गुंनीरा

विवेश। भगस्येत्तं प्रंसवं गंमेम। यत्रं देवैः संधमादं मदेम॥८॥

आयांतु देवः संवितोपंयातु। हिर्ण्ययेंन सुवृता रथेंन। वहुन् हस्तर्रं सुभगंं

विद्यनापंसम्। प्रयच्छंन्तं पपुंरिं पुण्यमच्छं। हस्तः प्रयंच्छत्वमृतं वसीयः। दक्षिणेन् प्रतिगृभ्णीम एनत्। दातारंम्द्य संविता विदेय। यो नो हस्तांय प्रसुवातिं यज्ञम्। त्वष्टा नक्षंत्रमुभ्येति चित्राम्। सुभ संसं युव्ति रोचंमानाम्॥९॥

निवेशयंत्रमृतान्मर्त्या ५ श्राणं पि १ श्रान् भुवंनानि विश्वां। तत्रस्त्वष्टा तदुं चित्रा विचंष्टाम्। तत्रक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तत्रः प्रजां वीरवंती १ सनोत्। गोभिनी अश्वैः समनक्त यज्ञम्। वायुर्नक्षंत्रम्भ्यंति निष्ट्यांम्। तिग्मश्रंङ्गो वृष्भो रोरुंवाणः। सुमीरयन् भुवंना मात्रिश्वां। अप द्वेषा १ सि नुदतामरांतीः॥१०॥

तन्नों वायुस्तद् निष्ट्यां शृणोतु। तन्नक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तन्नों देवासो अनुंजानन्तु कामम्। यथा तरेम दुरितानि विश्वां। दूरमस्मच्छत्रंवो यन्तु भीताः। तदिन्द्राम्नी कृणतां तद्विशांखे। तन्नों देवा अनुंमदन्तु यज्ञम्। पृश्चात् पुरस्तादभंयं नो अस्तु। नक्षंत्राणामधिपत्नी विशांखे। श्रेष्ठांविन्द्राम्नी भुवंनस्य गोपौ॥११॥

विषूंचः शत्रूंनप् बाधंमानौ। अप् क्षुधं नुदतामरातिम्। पूर्णा पृश्चादुत पूर्णा

पुरस्तौत्। उन्मध्यतः पौर्णमासी जिंगाय। तस्यां देवा अधि संवसन्तः। उत्तमे नाकं इह मादयन्ताम्। पृथ्वी सुवर्चा युवृतिः स्जोषाः। पौर्णमास्युदंगाच्छोभंमाना। आप्याययंन्ती दुरितानि विश्वाः। उरुं दुहां यजंमानाय यज्ञम्॥१२॥

क्ष्यास्मं ह्वीनं पायुश्चेतं ज्ञपन्ताञ्चतं मदेम् रोचंमानामरांतीर्गोणे युज्ञम॥———[१] ऋद्यास्मं ह्वीनंसोप्सद्यं। मित्रं देवं मित्र्धेयं नो अस्तु। अनूराधान् ह्विषां

त्रुध्धास्म ह्व्यनमसापुसद्या । मृत्र दुव । मृत्र्यय ना अस्तु। अनूरायान् हावपा वर्धयन्तः। शृतं जीवेम शृरदः सवीराः। चित्रं नक्षेत्रमुदंगात्पुरस्तात्। अनूराधास् इति यद्वदंन्ति। तन्मित्र एति पृथिभिर्देवयानैः। हिर्ण्ययैर्वितंतैर्न्तिरेक्षे। इन्द्रौ ज्येष्ठामनु नक्षेत्रमेति। यस्मिन्वृत्रं वृत्रतूर्ये तृतारं॥१३॥

तस्मिन्वयम्मृतं दुहानाः। क्षुधं तरेम् दुरितिं दुरिष्टिम्। पुर्न्दरायं वृष्भायं धृष्णवें। अषांढाय सहंमानाय मीढुषें। इन्द्राय ज्येष्ठा मधुमृद्दुहाना। उ्रं कृणोतु यजमानाय लोकम्। मूलं प्रजां वीरवंतीं विदेय। पराँच्येतु निर्ऋतिः पराचा। गोभिर्नक्षेत्रं प्रशुभिः समक्तम्। अहंर्भूयाद्यजमानाय मह्यम्॥१४॥

अहंनी अद्य संवित दंधातु। मूलं नक्षंत्रमिति यद्वदंन्ति। परांचीं वाचा निर्ऋतिं नुदामि। शिवं प्रजाये शिवमंस्तु मह्मम्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। यासांमषाढा अनुयन्ति कामम्। ता न आपः शङ् स्योना भवन्तु। याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैशन्तीरुत प्रांसचीर्याः॥१५॥

उपं शृण्वन्तु देवाः। तदंषाढा अभिसंयंन्तु यज्ञम्। तन्नक्षंत्रं प्रथतां पृश्भ्यः। कृषिर्वृष्टिर्यजमानाय कल्पताम्। शुभ्राः कृन्यां युवृतयः सुपेशंसः। कृम्कृतः सुकृतों वीर्यावतीः। विश्वान् देवान् हृविषां वर्धयंन्तीः। अषाढाः काम्मुपं यान्तु यज्ञम्॥१६॥ यस्मिन् ब्रह्माऽभ्यजय्थ्सर्वमेतत्। अमुं चं लोकिमिदमूं च सर्वम्। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विजित्यं। श्रियं दथात्वहंणीयमानम्। उभौ लोकौ ब्रह्मणा सञ्जितेमौ।

तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विचंष्टाम्। तस्मिन्वयं पृतंनाः सञ्जयेम। तन्नों देवासो

यासामषाढा मधुं भक्षयंन्ति। ता न आपः शङ् स्योना भंवन्तु। तन्नो विश्वे

अनुंजानन्तु कामम्। शृण्वन्ति श्रोणाम्मृतंस्य गोपाम्। पुण्यांमस्या उपंश्रणोमि वाचम्॥१७॥

महीं देवीं विष्णुंपत्नीमजूर्याम्। प्रतीचीमेना हिवषां यजामः। त्रेधा विष्णुंरुरुगायो विचंक्रमे। महीं दिवं पृथिवीम्नतिरक्षम्। तच्छ्रोणैतिश्रवं इच्छमाना। पुण्य श्रोकं यजमानाय कृण्वती। अष्टौ देवा वसंवः सोम्यासंः। चतंस्रो देवीरजराः श्रविष्ठाः। ते यज्ञं पान्तु रजंसः प्रस्तात्। संवथ्सरीणममृत स्वस्ति॥१८॥

युज्ञं नेः पान्तु वसंवः पुरस्तांत्। दृक्षिणतोंऽभियंन्तु श्रविष्ठाः। पुण्यं नक्षंत्रम्भि संविशाम। मा नो अरातिरघशु साऽगन्। क्षत्रस्य राजा वर्रुणोऽधिराजः। नक्षंत्राणा श्रातिभेष्ववसिष्ठः। तो देवेभ्यः कृणतो दीर्घमायः। श्रात सहस्रां भेषजानि धत्तः। युज्ञं नो राजा वर्रुण उपयातु। तन्नो विश्वे अभि संयन्तु देवाः॥१९॥

अज

प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

तन्नो नक्षंत्र शतभिषग्जुषाणम्। दीर्घमायुः प्रतिरद्भेषजानि। एकंपादुदंगात्पुरस्तात्। विश्वां भूतानिं प्रति मोर्दमानः। तस्यं देवाः प्रसवं

यंन्ति सर्वे। प्रोष्ठपदासों अमृतंस्य गोपाः। विभाजंमानः समिधान उग्रः।

आऽन्तरिक्षमरुहदगुन्द्याम्। त॰ सूर्यं देवमजमेकपादम्। प्रोष्ठपदासो अन्यन्ति सर्वे॥२०॥ अहिंब्धियः प्रथमान एति। श्रेष्ठों देवानांमुत मानुंषाणाम्। तं ब्राँह्मणाः सोंमुपाः सोम्यासंः। प्रोष्ठपदासों अभि रक्षन्ति सर्वें। चत्वार एकंमभि कर्म देवाः। प्रोष्ठपदास इति यान् वदंन्ति। ते बुध्नियं परिषद्य एक्षिवन्तः। अहि एक्षिन्ति नर्मसोप्सद्यं। पूषा रेवत्यन्वेति पन्थांम्। पृष्टिपतीं पशुपा वाजंबस्त्यौ॥२१॥

इमानि हव्या प्रयंता जुषाणा। सुगैर्नो यानैरुपयातां युज्ञम्। क्षुद्रान् पृशून् रंक्षतु रेवतीं नः। गावों नो अश्वार् अन्वेतु पूषा। अन्नर् रक्षंन्तौ बहुधा विरूपम्। वाजर् सनुतां यजमानाय यज्ञम्। तदिश्वनांवश्वयुजोपंयाताम्। शुभुङ्गिष्ठौ सुयमेभिरश्वैः।

स्वं नक्षंत्र १ हविषा यजंन्तौ। मध्वा सम्पृंक्तौ यजुंषा समंक्तौ॥२२॥

यौ देवानां भिषजौ हव्यवाहौ। विश्वंस्य दूतावृमृतंस्य गोपौ। तौ नक्षंत्रं जुजुषाणोपयाताम्। नमोऽश्विभ्यां कृणुमोऽश्वयुग्भ्यांम्। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। तद्यमो राजा भगंवान् विचंष्टाम्। लोकस्य राजां महतो महान् हि। सुगं नः पन्थामभयं कृणोतु। यस्मिन्नक्षंत्रे यम एति राजां। यस्मिन्नेनम्भ्यषिश्चन्त देवाः। तदंस्य चित्र हिवषां यजाम। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। निवेशंनी यत्ते देवा अदंधः॥२३॥

नवीनवो भवति जायंमानो यमोदित्या अर्शुमौप्याययंन्ति। ये विरूपे समेनसा संव्ययंन्ती। समानं तन्तुं परितातना तैं। विभू प्रभू अनुभू विश्वतों हुवे। ते नो नक्षेत्रे हवमागंमेतम्। व्यं देवी ब्रह्मणा संविदानाः। सुरत्नांसो देववीतिं दर्धानाः। अहोरात्रे हिवषां वर्धयंन्तः। अतिं पाप्मानमितं मुक्त्या गमेम। प्रत्युंवदृश्यायृती॥२४॥

आयत्यंगमध्स्वंष्टम्॥

व्युच्छन्तीं दुहिता दिवः। अपो मही वृंणुते चक्षुंषा। तमो ज्योतिंष्कृणोति सूनरीं। उदुस्रियाः सचते सूर्यः। सचां उद्यन्नक्षंत्रमर्चिमत्। तवेदुंषो व्युषि सूर्यस्य च। सं

उद्गुल्लयाः सयत् सूयः। सया उधन्नक्षत्रमायमत्। तबदुषा व्याप् सूयस्य या स भक्तेनं गमेमहि। तन्नो नक्षंत्रमर्चिमत्। भानुमत्तेजं उचरंत्। उपयुज्ञमिहागंमत्॥२५॥

प्र नक्षंत्राय देवायं। इन्द्रायेन्दु र हवामहे। स नंः सिवृता सुंवथ्सिनम्। पृष्टिदां वीरवंत्तमम्। उदुत्यं चित्रम्। अदितिनं उरुष्यतु महीमू षु मातरम्। इदं विष्णुः प्रतिद्वष्णुः। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुनोऽद्यानुंमित्रिरिन्वदंनुमते त्वम्। हृव्यवाह् इ स्विष्टम्॥२६॥

अग्निर्वा अंकामयत। अन्नादो देवानाई स्यामिति। स एतम् ग्रये कृत्तिंकाभ्यः पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै सौंऽन्नादो देवानांमभवत्। अग्निर्वे देवानांमन्नादः। यथां हु वा अग्निर्देवानांमन्नादः। एवर हु वा एष मनुष्यांणां

देवानामन्नादः। यथा हु वा अग्निदेवानामन्नादः। एव॰ हु वा एष मनुष्याणा भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा कृत्तिंकाभ्यः स्वाहाँ। अम्बाये स्वाहां दुलाये स्वाहां। नितृत्ये स्वाहाऽभ्रयंन्त्ये स्वाहाँ। मेघयंन्त्यै स्वाहां वर्षयंन्त्यै स्वाहाँ। चुपुणीकांयै स्वाहेतिं॥२७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। तासारं रोहिणीम्भ्यंध्यायत्। सोंऽकामयत। उप मा वंर्तेत। समेनया गच्छेयेतिं। स एतं प्रजापंतये रोहिण्ये चुरुं निरंवपत्। ततो वै सा तमुपावंर्तत। समेनयागच्छत। उप हु वा एनं प्रियमावंर्तते। सं प्रियेण गच्छते। य एतेनं हुविषा यजंते। य उंचैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहां रोहिण्ये स्वाहां। रोचंमानाये स्वाहां प्रजाभ्यः स्वाहेतिं॥२८॥

सोमो वा अंकामयत। ओषंधीनार राज्यम्भिजंयेय्मितिं। स एतर सोमांय मृगशीर्षायं श्यामाकं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स ओषंधीनार राज्यम्भ्यंजयत्। समानानारं हु वै राज्यम्भिजंयित। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सोमांय स्वाहां मृगशीर्षाय स्वाहां। इन्वकाभ्यः स्वाहौषंधीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥२९॥ रुद्रो वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामिति। स एतः रुद्रायाऽऽर्द्राये प्रैय्यंङ्गवं चुरुं पर्यसि निर्वपत्। ततो वे स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वे भंवति। य एतेनं हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। रुद्राय स्वाहाऽऽर्द्राये स्वाहाँ।

पिन्वंमानायै स्वाहां पशुभ्यः स्वाहेतिं॥३०॥

ऋक्षा वा इयमंलोमकांऽऽसीत्। साऽकांमयत। ओषंधीभिर्वनस्पतिंभिः प्रजायेयेति। सैतमदित्यै पुनर्वसुभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वा इयमोषंधीभिर्वनस्पतिंभि प्राजांयत। प्रजायते ह वै प्रजयां पृशुभिः। य पृतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं

वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अदित्ये स्वाह्य पुनर्वसुभ्याम्। स्वाह्य भूँत्ये स्वाह्य प्रजाँत्ये स्वाहेतिं॥३१॥
बृह्स्पति्वा अंकामयत। ब्रह्मवर्च्सी स्यामितिं। स एतं बृह्स्पतंये तिष्यांय नैवारं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वे स ब्रह्मवर्चस्यंभवत्। ब्रह्मवर्चसी ह वे

नवार युरु प्यास् ।नरवपत्। तता व स ब्रह्मवयुस्यमवत्। ब्रह्मवयुसा हु व भवति। य पुतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहां तिष्याय स्वाहां। ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेति॥३२॥ प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

पशुभ्यः स्वाहेतिं॥३५॥

देवास्राः संयंत्ता आसन्। ते देवाः सर्पेभ्यं आश्रेषाभ्य आज्यं करम्भं निरंवपन्। तानेताभिरेव देवतांभिरुपांनयन्। एताभिर्ह वै देवतांभिर्द्धिषन्तं भ्रातृंव्यमुपंनयति। य पुतेनं हिवषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सर्पेभ्यः स्वाहाँऽऽश्रेषाभ्यः

स्वाहाँ। दन्दशूकैंभ्यः स्वाहेतिं॥३३॥

पुरोडाश पद्वीपालं निरंवपन्। ततो वै ते पिंतृलोक आधुंवन्। पितृलोके ह वा ऋंध्रोति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सो ऽत्रं जुहोति। पितृभ्यः स्वाहां मघाभ्यः। स्वाहां ऽनघाभ्यः स्वाहां ऽगदाभ्यः। स्वाहां ऽरुन्धतीभ्यः स्वाहेतिं॥३४॥ अर्यमा वा अंकामयत। पशुमान्थस्यामिति। स एतमेर्यम्णे फर्न्युनीभ्यां चरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य पुतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अर्यम्णे स्वाहा फल्गुंनीभ्या इस्वाहाँ।

पितरो वा अंकामयन्त। पितृलोक ऋंध्रुयामेतिं। त एतं पितृभ्यों मघाभ्यः

भगो वा अंकामयत। भगी श्रेष्ठी देवाना ईस्यामिति। स एतं भगाय फल्गुंनीभ्यां

चुरुं निरंवपत्। ततो वै स भूगी श्रेष्ठी देवानांमभवत्। भूगी हु वै श्रेष्ठी संमानानां भवति। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। भगांय स्वाहा फल्गुंनीभ्या स्वाहाँ। श्रेष्ठ्यांय स्वाहेति॥३६॥

स्विता वा अंकामयत। श्रन्में देवा दधीरन्। स्विता स्यामितिं। स एतर संवित्रे हस्ताय पुरोडाशुं द्वादंशकपालं निरंवपदाशूनां व्रीहीणाम्। ततो वै तस्मै श्रद्देवा अदंधत। स्विताऽभंवत्। श्रद्धवा अंस्मै मनुष्यां दधते। स्विता संमानानां भवित। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। स्वित्रे स्वाहां हस्ताय। स्वाहां ददते स्वाहां पृण्ते। स्वाहां प्रयच्छंते स्वाहां प्रतिगृभ्णते स्वाहेतिं॥३७॥

त्वष्टा वा अंकामयत। चित्रं प्रजां विन्देयेति। स एतं त्वष्ट्रं चित्रायै पुरोडाशंम्ष्टा-कंपालं निरंवपत्। ततो वै स चित्रं प्रजामंविन्दत। चित्र ह वै प्रजां विन्दते। य एतेनं ह्विषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। त्वष्ट्रे स्वाहां चित्रायै स्वाहां। चैत्रांय स्वाहां प्रजायै स्वाहेतिं॥३८॥ वायुर्वा अंकामयत। काम्चारंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतद्वायवे निष्ट्यांये गृष्ट्ये दुग्धं पयो निरंवपत्। ततो वै स कांम्चारंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। काम्चारं हु वा एषु लोकेष्वभिजंयित। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वायवे स्वाहा निष्ट्यांये स्वाहाँ। काम्चारांय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥३९॥

ड्रन्द्राग्नी वा अंकामयेताम्। श्रेष्ठ्यं देवानांम्भिजंयेवेतिं। तावेतिमंन्द्राग्निभ्यां विशांखाभ्यां पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपताम्। ततो वै तौ श्रेष्ठ्यं देवानांम्भ्यंजयताम्। श्रेष्ठ्यः हु वै संमानानांम्भि जंयित। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्राग्निभ्याः स्वाहा विशांखाभ्याः स्वाहां। श्रेष्ठ्यांय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४०॥

अथैतत्पौर्णमास्या आज्यं निर्वपति। कामो वै पौर्णमासी। काम आज्यम्। कामेनेव काम् समर्थयति। क्षिप्रमेन् सकाम् उपनमति। येन् कामेन् यजंते। सोऽत्रं जुहोति। पौर्णमास्यै स्वाहा कामाय स्वाहाऽऽगंत्यै स्वाहेति॥४१॥

अग्निः पश्चंदश प्रजापंतिः षोर्डश् सोम् एकांदश कुद्रो दश्केंकांदश् बृह्स्पतिर्दशं देवासुरा नवं पितर् एकांदशार्यमा भगो दशं दश सविता चतुर्दश् त्वष्टां

वायुरिन्द्राम्नी दर्श दुशाथैतत्पौर्णमास्या अष्टौ पश्चंदश॥

–[૪]

मित्रो वा अंकामयत। मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतं मित्रायांनूराधेभ्यंश्चरुं निरंवपत्। ततो वे स मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। मित्रधेयं हृ वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। मित्राय स्वाहांऽनूराधेभ्यः स्वाहां। मित्रधेयांय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४२॥

इन्द्रो वा अंकामयत। ज्यैष्ठ्यं देवानांम्भिजंययमितिं। स एतमिन्द्रांय ज्येष्ठायें पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपन्महाद्रींहीणाम्। ततो वे स ज्यैष्ठ्यं देवानांम्भ्यंजयत्। ज्यैष्ठ्य ह वे संमानानांम्भिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्रांय स्वाहां ज्येष्ठाये स्वाहां। ज्यैष्ठ्यांय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४३॥ प्रजापंतिर्वा अंकामयत। मूलं प्रजां विन्देयेतिं। स एतं प्रजापंतये मूलांय च्रं निरंवपत्। ततो वै स मूलं प्रजामंविन्दत। मूलर्ं हु वै प्रजां विन्दते। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहा मूलांय स्वाहां। प्रजाये स्वाहेतिं॥४४॥

आपो वा अंकामयन्त। समुद्रं कार्मम्भिजंयेमेतिं। ता एतम्ज्योंऽषाढाभ्यंश्चरं निरंवपन्। ततो वै ताः संमुद्रं कार्मम्भ्यंजयन्। समुद्र १ ह वै कार्मम्भिजंयित। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अद्भाः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। समुद्राय स्वाहा कार्माय स्वाहां। अभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४५॥

विश्वे वै देवा अंकामयन्त। अनुपुज्ययं जंयेमेतिं। त एतं विश्वेंभ्यो देवेभ्यों-ऽषाढाभ्यंश्वरुं निरंवपन्। ततो वै तेऽनपज्य्यमंजयन्। अनुपुज्य्य ह वै जंयित। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। अनुपुज्य्याय स्वाहा जित्ये स्वाहेतिं॥४६॥ ब्रह्म वा अंकामयत। ब्रह्मलोकम्भिजंयेय्मितिं। तदेतं ब्रह्मणेऽभिजितें च्रं निरंवपत्। ततो वै तद्भंह्मलोकम्भ्यंजयत्। ब्रह्मलोक॰ ह् वा अभिजंयित। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। ब्रह्मणे स्वाहांऽभिजिते स्वाहां। ब्रह्मलोकाय् स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४७॥

विष्णुर्वा अंकामयत। पुण्यु श्लोक १ शृण्वीय। न मां पापी कीर्तिरागंच्छेदिति। स एतं विष्णंव श्लोणायें पुरोडाशं त्रिकपालं निरंवपत्। ततो व स पुण्यु श्लोकंमशृणुत। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छत्। पुण्य १ ह व श्लोक १ शृणुते। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छत्। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहाँ श्लोणायै स्वाहाँ। श्लोकांय स्वाहाँ श्लुताय स्वाहेति॥४८॥

वसंवो वा अंकामयन्त। अग्रं देवतांनां परीयामिति। त एतं वस्ंभ्यः श्रविष्ठाभ्यः पुरोडाशंमुष्टाकंपालुं निरंवपन्। ततो वै तेऽग्रं देवतांनां पर्यायन्। अग्रं हु वै संमानानां पर्येति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति।

वसुंभ्यः स्वाहा श्रविष्ठाभ्यः स्वाहाँ। अग्रांय स्वाहा परींत्ये स्वाहेतिं॥४९॥

इन्द्रो वा अंकामयत। दृढोऽशिंथिलः स्यामिति। स एतं वर्रुणाय शृतिभिषजे भेषजेभ्यः पुरोडाशं दर्शकपालं निर्वपत्कृष्णानां व्रीहीणाम्। ततो वै स दृढो-ऽशिंथिलोऽभवत्। दृढो हृ वा अशिंथिलो भवति। य एतेनं हृविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहां शृतिभिषजे स्वाहां। भेषजेभ्यः स्वाहेति॥५०॥

अजो वा एकंपादकामयत। तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्च्सी स्यामिति। स एतम्जायैकंपदे प्रोष्ठपदेभ्यंश्चरुं निरंवपत्। ततो वे स तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्च्स्यंभवत्। तेज्ञस्वी हृ वे ब्रंह्मवर्च्सी भवति। य एतेनं हृविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अजायैकंपदे स्वाहाँ प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहाँ। तेजंसे स्वाहाँ ब्रह्मवर्च्साय स्वाहेति॥५१॥

अहिर्वे बुिप्रयोऽकामयत। इमां प्रतिष्ठां विन्देयेति। स पुतमहंये बुिप्रयाय प्रोष्ठपुदेभ्यः पुरोडाशं भूमिकपालं निरंवपत्। ततो वै स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। ड्मा १ हु वै प्रतिष्ठां विन्दते। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अहंये बुध्नियांयु स्वाहां प्रोष्ठपुदेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥५२॥

पूषा वा अंकामयत। पृशुमान्थस्यामिति। स एतं पूष्णे रेवत्यै चुरुं निरंवपत्।

अश्विनौ वा अंकामयेताम्। श्रोत्रस्विनावबंधिरौ स्यावेतिं। तावेतमश्विभ्यांमश्वयुग्भ्य

ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य पृतेनं हिविषा यजंते। य उं

चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पूष्णे स्वाहां रेवत्यै स्वाहां। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥५३॥

पुरोडाशं द्विकपालं निरंवपताम्। ततो वै तौ श्रींत्रस्विनावबंधिरावभवताम्। श्रोत्रस्वी ह् वा अबंधिरो भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अश्विभ्याङ् स्वाहाँऽश्वयुग्भ्याङ् स्वाहाँ। श्रोत्रांय स्वाहा श्रुत्यै स्वाहेतिं॥५४॥

यमो वा अंकामयत। पितृणाः राज्यम्भिजंयेयमितिं। स एतं

यमायांपुभरंणीभ्यश्चरं निरंपवत्। ततो वै स पिंतृणाः राज्यमभ्यंजयत्।

समानाना १ हु वै राज्यम्भि जंयति। य एतेनं हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। यमाय स्वाहांऽप्भरंणीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥५५॥

अथैतदंमावास्यांया आज्यं निर्वपति। कामो वा अमावास्यां। काम आज्यम्। कामेनेव काम् समर्धयति। क्षिप्रमेन् सकाम उपनमति। येन कामेन् यजंते। सोऽत्रं जुहोति। अमावास्यांयै स्वाहा कामांय स्वाहाऽऽगंत्ये स्वाहेति॥५६॥

मित्र इन्द्रंः प्रजापंतिर्दशं दुशापु एकांदश् विश्वे ब्रह्म दशंदश् विष्णुस्त्रयोंदश् वसंव इन्द्रोऽजोऽहिर्वे बुध्नियंः पूषाऽश्विनौं युमो दशं दुशाथैतदंमावास्यांया अष्टौ

पश्चंदश॥■

चन्द्रमा वा अंकामयत। अहोरात्रानंधमासान्मासानृतून्थ्संवथ्यरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्रयामिति। स एतं चन्द्रमंसे प्रतीदृश्यांयै पुरोडाशं पश्चंदशकपालं निरंवपत्। ततो वै सोंऽहोरात्रानंधमासान्मासानृतून्थ्संवथ्यर-मास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्रोत्। अहोरात्रान् हृ वा अर्धमासान्मासानृतून्थ्संवथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सार्युज्यः सलोकतांमाप्नोति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। चन्द्रमंसे स्वाहाँ प्रतीदृश्यांये स्वाहाँ। अहोरात्रेभ्यः स्वाहाँऽर्धमासेभ्यः स्वाहाँ। मासेभ्यः स्वाहृत्भ्यः स्वाहाँ। संवथ्सराय स्वाहेति॥५७॥

अहोरात्रे वा अंकामयेताम्। अत्यंहोरात्रे मुंच्येविह। न नांवहोरात्रे आंप्रुयातामितिं। ते एतमंहोरात्राभ्यां चरुं निरंवपताम्। द्वयानां व्रीहीणाम्। शुक्लानां च कृष्णानां च। स्वात्योर्दुग्धे। श्वेताये च कृष्णाये च। ततो वै ते अत्यंहोरात्रे अमुच्येते। नैने अहोरात्रे आंप्रुताम्। अति ह वा अंहोरात्रे मुंच्यते। नैनेमहोरात्रे आंप्रुतः। य एतेनं ह्विषा यज्ञंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अह्रे स्वाहा रात्रिये स्वाहां। अतिमुक्तये स्वाहेतिं॥५८॥

उषा वा अंकामयत। प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगां स्यामितिं। सैतमुषसं चुरुं निरंवपत्। ततो वै सा प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगोऽभवत्। प्रियो हु वै समानानाः रं सुभगों भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्ये स्वाहाँ। व्यूषुष्ये स्वाहाँ व्युच्छन्त्ये स्वाहाँ। व्यंष्टाये स्वाहेतिं॥५९॥

अथैतस्मै नक्षंत्राय चुरुं निर्वपिति। यथा त्वं देवानामिसं। एवमहं मंनुष्याणां भूयासमिति। यथां ह वा एतद्देवानाम्। एव ह वा एष मंनुष्याणां भवति। य एतेनं हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। नक्षंत्राय स्वाहोदेष्यते स्वाहां। उद्यते स्वाहोदिताय स्वाहां। हरसे स्वाहा भरसे स्वाहां। भ्राजंसे स्वाहा तेजंसे स्वाहां। तपंसे स्वाहां ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेति॥६०॥

सूर्यो वा अंकामयत। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा स्यामिति। स एत र सूर्याय नक्षंत्रभ्यश्चरं निरंवपत्। ततो वै स नक्षंत्राणां प्रतिष्ठाऽभंवत्। प्रतिष्ठा हु वै संमानानां भवति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्याय स्वाहा नक्षंत्रभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥६१॥

अथैतमदिंत्यै चुरुं निर्वपति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। सोऽत्रं

प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

जुहोति। अदिंत्यै स्वाहाँ प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६२॥

अथैतं विष्णंवे चुरुं निर्वपति। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञ एवान्तृतः प्रतिं तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां यज्ञाय स्वाहां। प्रतिष्ठायै स्वाहेति॥६३॥

चन्द्रमाः पश्चंदशाहोरात्रे सप्तदंशोषा एकांद्रशायेतस्मे नक्षंत्राय त्रयांदश् सूर्यो दशायेतमिदित्ये पश्चायेत विष्णंवे पद्यस्म (स्विताऽऽशूनां ब्रीहीणामिन्द्रों महाब्रीहीणामिन्द्रेः कृष्णानौं ब्रीहीणामहोरात्रे द्वयानौं ब्रीहीणाम्। पितरः पद्धंपालर सिवता द्वादंशकपालिमन्द्राग्नी एकांदशकपालिमन्द्र एकांदशकपालिमन्द्रो दशंकपालं विष्णुंक्षिकपालमिन्द्रीने विक्षाने विद्याने विद्याने

अग्निर्न ऋध्यास्म नवीनवोऽग्निर्मित्रश्चन्द्रमाः षट्॥६॥

अग्निर्नुस्तन्नों वायुरिहेर्बुप्नियं ऋक्षा वा इयमथैतत्पौर्णमास्या अजो वा एकंपाथ्सूर्यस्त्रिपंष्टिः॥६३॥

अग्निर्नः पातु प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयुत्र्याऽहंरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पर्णृत्वम्। ब्रह्म वै पूर्णः। यत्पंर्णशाखयां वथ्सानंपाकरोति। ब्रह्मणैवैनान्पाकरोति। गायुत्रो वै पूर्णः। गायुत्राः पृशवंः॥१॥

तस्मात्रीणित्रीणि पूर्णस्यं पलाशानि। त्रिपदां गायत्री। यत्पंर्णशाखया गाः प्रार्पयंति। स्वयैवैनां देवतंया प्रार्पयति। यं कामयंतापशुः स्यादितिं। अपूर्णान्तस्मै शुष्कांग्रामाहंरेत्। अपूश्रुव भवति। यं कामयेत पशुमान्थस्यादितिं। बहुपूर्णान्तस्मै बहुशाखामाहंरेत्। पशुमन्तंमेवैनं करोति॥२॥

यत्प्राचीमा हरेंत्। देवलोकम्भि जयत्। यद्दीचीं मनुष्यलोकम्। प्राचीमुदीचीमा हरित। उभयौर्लोकयोर्भिजित्यै। इषे त्वोर्जे त्वेत्याह। इषेमेवोर्जं यर्जमाने दधाति। वायवः स्थेत्याह। वायुर्वा अन्तरिक्षस्याध्यक्षाः। अन्तरिक्षदेवत्याः खलु वै पशर्वः॥३॥

वायवं एवैनान्परि ददाति। प्र वा एंनानेतदा करोति। यदाहं। वायवः स्थेत्यंपायवः स्थेत्यांह। यजंमानायैव पृशूनुपं ह्वयते। देवो वंः सविता प्रापंयत्वित्यांह प्रसूत्यै। श्रेष्ठंतमाय कर्मण इत्यांह। यज्ञो हि श्रेष्ठंतम् कर्म। तस्मादेवमांह। आप्यायध्वमित्रया देवभागित्यांह॥४॥

वृथ्सेभ्यंश्च वा एताः पुरा मंनुष्येभ्यश्चाप्यांयन्त। देवेभ्यं एवैना इन्द्रायाप्यांययित। ऊर्जस्वतीः पर्यस्वतीरित्यांह। ऊर्ज् हि पर्यः सम्भरंन्ति। प्रजावंतीरनमीवा अयुक्ष्मा इत्यांह प्रजात्ये। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघश्र स् इत्यांह गृष्ट्यै। रुद्रस्यं हेतिः परि वो वृण्कित्यांह। रुद्रादेवैनांस्रायते। ध्रुवा अस्मिन्गोपंतौ स्यात बह्वीरित्यांह। ध्रुवा एवास्मिन्बह्वीः करोति॥५॥

यज्ञंमानस्य पश्चाराहीत्यांह। पश्चां गोपीशार्यः तस्मांश्मारां पश्च

यर्जमानस्य पुशून्पाहीत्याह। पुशूनां गोपीथार्य। तस्माँथ्सायं पुशव उपसमावर्तन्ते। अनेधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्ये॥६॥

लोकस्य समंध्ये॥६॥

पशर्वः करोति पशर्वो देवभागमित्यांह करोति नर्व च॥——————————[१]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इत्यंश्वपुर्शुमादंत्रे प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्ताम्। पूष्णो हस्ताभ्यामित्यांह यत्यै। यो वा ओषंधीः

पर्वशो वेदं। नैनाः स हिनस्ति। प्रजापंतिर्वा ओषंधीः पर्वशो वेद। स एंना न हिनस्ति। अश्वपर्श्वा बर्हिरच्छैति। प्राजापत्यो वा अश्वः सयोनित्वायं॥७॥

ओषंधीनामहिर्स्सायै। यज्ञस्यं घोषद्सीत्यांह। यजंमान एव र्यिं दंधाति। प्रत्युंष्ट्रं रक्षः प्रत्युंष्टा अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। प्रेयमंगाद्धिषणां बर्हिरच्छेत्यांह। विद्या वै धिषणां। विद्ययैवैनदच्छैंति। मनुंना कृता स्वधया वित्षष्टेत्यांह। मानुवी हि पर्शुः स्वधाकृता॥८॥

त आवंहन्ति क्वयंः पुरस्तादित्यांह। शुश्रुवा स्मो वै क्वयंः। युज्ञः पुरस्तांत्।

द्वितीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

मुख्त एव युज्ञमा रंभते। अथो यदेतदुक्का यतः कुतंश्चा हरंति। तत्प्राच्यां एव दिशो भंवति। देवेभ्यो जुष्टंमिह बर्हिरासद इत्यांह। बर्हिषः समृंख्यै। कर्मणो-ऽनंपराधाय। देवानां परिषूतमसीत्यांह॥९॥

यद्वा इदं किं चं। तद्देवानां परिषूतम्। अथो यथा वस्यंसे प्रतिप्रोच्याहेदं कंरिष्यामीति। एवमेव तदंध्वर्युर्देवेभ्यः प्रतिप्रोच्यं बर्हिर्दाति। आत्मनोऽहि रंसायै।

यावंतः स्तम्बान्पंरिदिशेत्। यत्तेषांमुच्छि इष्यात्। अति तद्यज्ञस्यं रेचयेत्। एक ई स्तम्बं परिंदिशेत्। त सर्वं दायात्॥१०॥

यज्ञस्यानंतिरेकाय। वर्षवृद्धमुसीत्यांह। वर्षवृद्धा वा ओषंधयः। देवंबर्हिरित्यांह। देवेभ्यं पुवैनंत्करोति। मा त्वाऽन्वङ्गा तिर्यगित्याहाहि ईसायै। पर्व ते राध्यासमित्याहर्ध्यै। आच्छेत्ता ते मा रिषमित्यांह। नास्याऽऽत्मनों मीयते। य एवं वेदं॥११॥

देवंबर्हिः शृतवंल्शुं विरोहेत्यांह। प्रजा वै बुर्हिः। प्रजानां प्रजनंनाय।

सहस्रंबल्शा वि वय र रहेमेत्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। पृथिव्याः सम्पृचंः पाहीत्यांह् प्रतिष्ठित्ये। अयुंङ्गायुङ्गान्मुष्टीं लुंनोति। मिथुन्त्वाय प्रजाँत्ये। सुसम्भृताँ त्वा सम्भरामीत्यांह। ब्रह्मणैवैनथ्सम्भरति॥१२॥

अदित्यै रास्नाऽसीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या पुवैन्द्रास्नां करोति। इन्द्राण्यै सन्नहंनुमित्यांह। इन्द्राणी वा अग्रें देवतांना समंनह्यत। साऽऽर्ध्रोंत्। ऋख्यै सन्नह्यति। प्रजा वै बर्हिः। प्रजानामपंरावापाय। तस्माथ्स्नावंसन्तताः प्रजाजांयन्ते॥१३॥

पूषा तें ग्रन्थिं ग्रंशात्वित्यांह। पृष्टिंमेव यजंमाने दधाति। स ते मास्थादित्याहाहि स्माये। पृश्चात्प्राश्चमुपंगूहित। पृश्चाद्वे प्राचीन् रेतों धीयते। पृश्चादेवास्में प्राचीन् रेतों दधाति। इन्द्रंस्य त्वा बाहुभ्यामुद्यंच्छु इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। बृहुस्पतें मूर्ध्ना हंग्मीत्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृहुस्पतिं:॥१४॥

ब्रह्मणैवैनंद्धरति। उर्वन्तिरिक्षमिन्वहीत्यांह् गत्यैं। देवङ्गमम्सीत्यांह। देवानेवैनंद्रमयति। अनेधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव नि दंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्टियै॥१५॥

पूर्वेद्युरिध्माब्रहिः करोति। युज्ञमेवारभ्यं गृहीत्वोपंवसति। प्रजापंतिर्युज्ञमं-सृजत। तस्योखे अस्र श्सेताम्। युज्ञो वै प्रजापंतिः। यथ्सांन्नाय्योखे भवंतः।

यज्ञस्यैव तदुखे उपंदधात्यप्रस्ताम्। यज्ञा व प्रजापातः। यय्सान्नाय्याख मवतः। यज्ञस्यैव तदुखे उपंदधात्यप्रस्त्रश्साय। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां पृवैनांनि शुन्धित। मात्तिरश्वंनो घुर्मोऽसीत्यांह॥१६॥

अन्तरिक्षं वै मांतरिश्वंनो घर्मः। एषां लोकानां विधृत्यै। द्यौरंसि पृथिव्यंसीत्यांह। दिवश्च ह्यंषा पृथिव्याश्च सम्भृता। यदुखा। तस्मादेवमाह। विश्वधाया असि पर्मेण धाम्नेत्यांह। वृष्टिर्वे विश्वधायाः। वृष्टिमेवावं रुन्थे। दश्हंस्व मा ह्वारित्यांह धृत्यै॥१७॥

वसूनां प्वित्रम्सीत्यांह। प्राणा वै वसंवः। तेषां वा एतद्भाग्धेयम्। यत्पवित्रम्। तेभ्यं एवैनंत्करोति। शृतधांर सहस्रंधार्मित्यांह। प्राणेष्वेवायुंर्दधाति सर्वत्वायं। त्रिवृत्यंलाशशाखायां दर्भमयं भवति। त्रिवृद्धे प्राणः। त्रिवृतंमेव प्राणं मध्यतो यजमाने दधाति॥१८॥

सौम्यः पूर्णः संयोनित्वायं। साक्षात्पवित्रं दुर्भाः। प्राख्सायमधिनि दंधाति। तत्प्राणापानयो रूपम्। तिर्यक्प्रातः। तद्दर्शस्य रूपम्। दार्श्यक् ह्यंतदहंः। अत्रं वै चन्द्रमाः। अत्रं प्राणाः। उभयंमेवोपैत्यजांमित्वाय॥१९॥

तस्माद्य स्वतः पवते। हुतः स्तोको हुतो द्रफ्स इत्यांह् प्रतिष्ठित्यै। ह्विषो-ऽस्कन्दाय। न हि हुत स्वाहांकृत् स्कन्दित। दिवि नाको नामाग्निः। तस्ये विप्रुषो भाग्धेयम्। अग्नये बृहते नाकायेत्यांह। नाकमेवाग्निः भाग्धेयेन समर्धयित। स्वाहा द्यावांपृथिवीभ्यामित्यांह। द्यावांपृथिव्योरेवैन्त्प्रतिष्ठापयित॥२०॥

दुह्यात्॥२३॥

प्वित्रंवत्यानंयित। अपां चैवौषंधीनां च रस् स्र स्रंजित। अथो ओषंधीष्वेव प्शून्प्रतिष्ठापयित। अन्वारभ्य वाचं यच्छित। यज्ञस्य धृत्यै। धारयंत्रास्ते। धारयंन्त इव हि दुहन्ति। कामंधुक्ष इत्याहातृतीयंस्यै। त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकान् यजंमानो दुहे॥२१॥

अमूमिति नामं गृह्णाति। भद्रमेवासां कर्मा विष्कंरोति। सा विश्वायुः सा

विश्वव्यंचाः सा विश्वकर्मेत्याह। इयं वै विश्वायुः। अन्तरिक्षं विश्वव्यंचाः। असौ

विश्वकर्मा। इमानेवैताभिर्लोकान् यंथापूर्वं दुंहे। अथो यथां प्रदात्रे पुण्यंमाशास्तै। पृवमेवैनां पृतदुपंस्तौति। तस्मात्प्रादादित्युन्नीय वन्दंमाना उपस्तुवन्तः पृशून्दं-हिन्त॥२२॥

बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यों हिविरिति वाचं विसृंजते। यथादेवतमेव प्रसौति। दैव्यंस्य च मानुषस्यं च व्यावृंत्यै। त्रिर्राह। त्रिषंत्या हि देवाः। अवांचं यमोऽनंन्वार्भ्योत्तराः। अपंरिमितमेवावं रुन्थे। न दांरुपात्रेणं दुह्यात्। अग्निवद्वे दांरुपात्रम्। यद्दांरुपात्रेणं

यातयाँम्ना ह्विषां यजेत। अथो खल्वांहुः। पुरोडाशंमुखानि वै ह्वी १षिं। नेत इंतः पुरोडाशं ह्विषो यामोऽस्तीतिं। कामंमेव दांरुपात्रेणं दुद्यात्। शूद्र एव न दुंह्यात्। असंतो वा एष सम्भूतः। यच्छूद्रः। अहंविरेव तदित्यांहुः। यच्छूद्रो दोग्धीतिं॥२४॥

अग्निहोत्रमेव न दुंह्याच्छूद्रः। तिष्ठि नोत्पुनितं। यदा खलु वै प्वित्रंमृत्येतिं। अथ तिष्ठ्वविरितिं। सम्पृंच्यध्वमृतावरीरित्यांह। अपां चैवौषंधीनां च रस् स् सर् सृजिति। तस्मांद्पां चौषंधीनां च रस्मुपंजीवामः। मृन्द्रा धनंस्य सात्य इत्यांह। पृष्टिंमेव यजंमाने दधाति। सोमेन त्वातंनुच्मीन्द्रांय दधीत्यांह॥२५॥

सोमंमेवैनंत्करोति। यो वै सोमं भक्षयित्वा। संवथ्सर सोमं न पिबंति। पुन्भंक्ष्यों ऽस्य सोमपीथो भंवति। सोमः खलु वै साँन्नाय्यम्। य एवं विद्वान्थ्सांन्नाय्यं पिबंति। अपुन्भंक्ष्यों ऽस्य सोमपीथो भंवति। न मृन्मयेनापिं दध्यात्। यन्मृन्मयेनापिद्ध्यात्। पितृदेवत्य ई स्यात्॥२६॥

अयस्पात्रेणं वा दारुपात्रेण वाऽपिं दधाति। तिष्कं सदेवम्। उद्दन्बद्भंवति। आपो वै रक्षोध्रीः। रक्षंसामपहत्ये। अदंस्तमिस् विष्णंवे त्वेत्यांह। यज्ञो वै विष्णुः। यज्ञायैवैनददंस्तं करोति। विष्णों हृव्य १ रक्षस्वेत्यांह गुप्त्यैं। अनिधः सादयित। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाित। उपरीव हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्टियै॥२७॥

असीत्यांह् भृत्ये यजंमाने दथात्यजांमित्वाय स्थापयति दुहे दुहन्ति दुह्याद्दोग्धीति दधीत्यांह स्याथ्सादयति पश्चं च॥■─────────ि् 🕄 📗 💮 👢

कर्मणे वां देवेभ्यः शकेयमित्यांह् शत्त्यैं। यज्ञस्य वे सन्तंतिमनुं प्रजाः प्रश्वो यजमानस्य सन्तायन्ते। यज्ञस्य विच्छिंत्तिमनुं प्रजाः प्रश्वो यजमानस्य विच्छिंद्यन्ते। यज्ञस्य सन्तंतिरिस यज्ञस्य त्वा सन्तंत्यै स्तृणामि सन्तंत्यै त्वा यज्ञस्येत्याहंवनीयाथ्सन्तंनोति। यजमानस्य प्रजाये पशूना सन्तंत्यै। अपः प्रणयति। श्रद्धा वा आपः। श्रद्धामेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरित। अपः प्रणयति। यज्ञो वा आपः॥२८॥

युज्ञमेवारभ्यं प्रणीय प्रचरित। अपः प्रणयित। वज्रो वा आपः। वज्रमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहृत्यं प्रणीय प्रचरित। अपः प्रणयित। आपो वै रेक्षोघ्रीः। रक्षंसामपंहत्ये। अपः प्रणयित। आपो वै देवानां प्रियं धामं। देवानांमेव प्रियं धामं प्रणीय प्रचरित॥२९॥

अपः प्रणंयति। आपो वै सर्वा देवताः। देवतां एवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। वेषाय त्वेत्याह। वेषाय ह्येनदादत्ते। प्रत्युष्ट्र रक्षः प्रत्युष्टा अरातय इत्याह। रक्षंसामपंहत्यै। धूरसीत्यांह। एष वै धुर्योऽग्निः। तं यदनुंपस्पृश्यातीयात्॥३०॥

अध्वर्यं च यर्जमानं च प्रदंहेत्। उपस्पृश्यात्येति। अध्वर्योश्च यर्जमानस्य चाप्रदाहाय। धूर्व तं यौस्मान्धूर्वित तं धूर्व यं वयं धूर्वाम् इत्यांह। द्वौ वाव पुरुषो। यं चैव धूर्वित। यश्चेनं धूर्वित। तावुभौ शुचाऽर्पयित। त्वं देवानांमिस् सिस्नितमं पप्रितमं जुष्टेतमं विह्नितमं देवहूर्तम्मित्यांह। यथायुजुरेवैतत्॥३१॥ अहुंतमिस हिव्धान्मित्याहानौत्ये। दश्हंस्व मा ह्वारित्यांह धृत्यै।

हिश्सिष्मित्याहाहिश्सायै। यहै किं च वातो नाभि वार्ति। तथ्सवं वरुणदेवत्यम्। उरु वातायेत्याह। अवारुणमेवैनंत्करोति। देवस्य त्वा सिवतः प्रम्व इत्याह प्रमूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्याह॥३२॥ अश्विनौ हि देवानांमध्वर्य आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। अग्नये जुष्टं निर्वपामीत्यांह। अग्नयं पुवैनां जुष्टं निर्वपति। त्रिर्यज्ञंषा। त्रयं इमे लोकाः। पृषां लोकानामास्यै। तूष्णीं चंतुर्थम्। अपरिमितमेवावं रुन्थे। स एवमेवानुंपूर्वश्

मित्रस्यं त्वा चक्षुंषा प्रेक्ष इत्याह मित्रत्वायं। मा भेर्मा संविक्था मा त्वां

ह्वी १ षि निर्वपति॥३३॥
इदं देवानांमिदम् नः सहेत्यांह् व्यावृंत्यै। स्फात्यै त्वा नारांत्या इत्यांह् गुप्त्यैं। तमंसीव वा एषों ५ न्तश्चंरति। यः पंरीणहिं। सुवंर्भि वि ख्येषं वैश्वान्रं ज्योतिरित्यांह। सुवंरेवाभि वि पंश्यति वैश्वान्रं ज्योतिंः। द्यावांपृथिवी ह्विषिं गृहीत उदंवेपेताम्। दृश्हंन्तान्दुर्या द्यावांपृथिव्योरित्यांह। गृहाणां द्यावांपृथिव्योधृत्यै। उर्वन्तिरिक्षमिन्विहीत्यांह् गत्यै। अदित्यास्त्वोपस्थे सादयामीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैनंदुपस्थे सादयति। अग्ने ह्व्य॰ रेक्षस्वेत्यांह गृष्ट्यै॥३४॥

युजो वा आणे धामं प्रणीय प्रचरत्यतीयादेतहाहुभ्यामित्यांह हुवीरिष निर्वपति गत्यं चुत्वारि च॥———[४] इन्द्री वृत्रमहन्। सोऽपः। अभ्यम्रियत। तासां यन्मेध्यं यज्ञियर सदेवमासीत्।

तदपोदंत्रामत्। ते दुर्भा अभवन्। यद्दर्भैरुप उंत्पुनाति। या एव मेध्यां यज्ञियाः सर्देवा आपः। ताभिरेवैना उत्पुनाति। द्वाभ्यामृत्पुनाति॥३५॥

द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। देवो वंः सिवतोत्पंनात्वित्यांह। सिवतृप्रंसूत एवैना उत्पंनाति। अच्छिंद्रेण प्वित्रेणेत्यांह। असौ वा आदित्योऽच्छिंद्रं प्वित्रम्। तेनैवैना उत्पंनाति। वसोः सूर्यंस्य रिष्मिभिरित्यांह। प्राणा वा आपंः। प्राणा वसंवः। प्राणा रश्मयंः॥३६॥

प्राणैरेव प्राणान्थ्सं पृंणक्ति। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदितिं।

स्वितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पुच्छो गांयत्रिया त्रिष्यमृद्धत्वायं। आपों देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्यांह। रूपमेवासांमेतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञं नंयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञं नंयन्ति। अग्रं युज्ञपंतिम्॥३७॥

युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रमवृणीध्वं वृत्रतूर्य इत्यांह। वृत्र हं हिन्ष्यित्रिन्द्र आपों वव्रे। आपो हेन्द्रं विव्रेरे। संज्ञामेवासांमेतथ्सामानं व्याचंष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह। तेनाऽऽपः प्रोक्षिताः। अग्नये वो जुष्टं प्रोक्षांम्यग्नीषोमांभ्यामित्यांह। यथादेवतमेवैनान्प्रोक्षंति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥३८॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां पृवैनांनि शुन्धिति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो मेध्यत्वायं। अवंधूत् रक्षोऽवंधूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वग्सीत्यांह। इयं वा अदितिः॥३९॥

अस्या एवैन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वत्यांह् प्रतिंष्ठित्यै। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवृमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चंः पृशवो मेध्मुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्प्रजा मृगं ग्राहुंकाः। यज्ञो देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंध्यवृहन्तिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। हिवेषोऽस्कंन्दाय॥४०॥

अधिषवंणमिस वानस्पृत्यमित्यांह। अधिषवंणमेवैनंत्करोति। प्रति त्वा-ऽदिंत्यास्त्वग्वेत्वित्यांह सयत्वायं। अग्नेस्तुनूरसीत्यांह। अग्नेर्वा एषा तुनूः। यदोषंधयः। वाचो विसर्जनमित्यांह। यदा हि प्रजा ओषंधीनामुश्जन्तिं। अथ वाचं विसृंजन्ते। देववीतये त्वा गृह्णामीत्यांह॥४१॥

देवतांभिरेवैन्थ्समंध्यति। अद्विरिस वानस्पृत्य इत्यांह। ग्रावांणमेवैनंत्करोति। स इदं देवेभ्यों ह्व्य॰ सुशिमं शिमुष्वेत्यांह् शान्त्यैं। हविष्कृदेहीत्यांह। य एव देवाना॰ हविष्कृतंः। तान् ह्वंयति। त्रिर्ह्वयति। त्रिषंत्या हि देवाः। इषुमावदोर्जुमावदेत्यांह॥४२॥

इषमेवोर्जं यर्जमाने दधाति। द्युमद्वेदत व्यश् संङ्घातं जेष्मेत्यांह् भातृंव्याभिभूत्ये। मनौः श्रृद्धादेवस्य यर्जमानस्यासुर्घ्री वाक्। य्ज्ञायुधेषु प्रविष्टाऽऽसीत्। तेऽसुरा यार्वन्तो यज्ञायुधानांमुद्वदेतामुपाशृंण्वन्। ते पराभवन्। तस्माथ्स्वानां मध्येऽवसायं यजेत। यार्वन्तोऽस्य भातृंव्या यज्ञायुधानांमुद्वदेतामुपश्णवन्ति। ते परां भवन्ति। उच्चेः समाहंन्त वा आंह विजित्ये॥४३॥

वृङ्क एषामिन्द्रियं वीर्यम्। श्रेष्ठं एषां भवति। वर्षवृद्धमसि प्रति त्वा वर्षवृद्धं वेत्त्वित्यांह। वर्षवृद्धा वा ओषंधयः। वर्षवृद्धा इषीकाः समृद्धौ। यज्ञ र रक्षा रूस्यनु प्राविंशन्। तान्यस्ना पृशुभ्यों निरवांदयन्त। तुषैरोषंधीभ्यः। परांपूत रक्षः परांपूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥४४॥

रक्षंसां भागोंऽसीत्यांह। तुषैरेव रक्षार्श्स निरवंदयते। अप उपंस्पृशति मेध्यत्वायं। वायुर्वो विविन्तिकत्यांह। पवित्रं वै वायुः। पुनात्येवैनान्। अन्तरिक्षादिव वा एते प्रस्कंन्दन्ति। ये शूर्पांत्। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह् प्रतिष्ठित्यै। हिवषोऽस्कंन्दाय। त्रिष्फ्लीकंर्त्वा आह। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो मेध्यत्वायं॥४५॥

बाभ्यामुत्युंनाति रुश्मयौ नयुन्त्यग्रे युज्ञपंतिं युज्ञोऽदिंतिरस्कंन्दाय गृह्णमीत्यांह वृदेत्यांहु विजित्या अपंहत्या अस्कंन्दाय त्रीणि च॥—————[५]

अवंधूत १ रक्षो ऽवंधूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वगसीत्यांह।

इयं वा अदितिः। अस्या एवैन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वत्यांहु प्रति-ष्ठित्यै। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चंः पृशवो मेधमुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्प्रजा मृगं ग्राहुंकाः। युज्ञो देवेभ्यो निलांयत॥४६॥ कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने हिवरिधिपनिष्टिं। युज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के।

कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंधिपिनष्टिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। ह्विषोऽस्केन्दाय। द्यावांपृथिवी सहास्तांम्। ते शम्यामात्रमेकमह्र्वेता श्रम्यामात्रमेकमह्र्वेता श्रम्यामात्रमेकमहं। दिवः स्कम्भिनरिसे प्रति त्वाऽदित्यास्त्व ग्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योवीत्यै। धिषणांऽसि पर्वत्या प्रति त्वा दिवः स्कम्भिनर्वेत्त्वत्यांह।

द्यावांपृथिव्योर्विधृंत्यै॥४७॥

धिषणांऽसि पार्वतेयी प्रतिं त्वा पर्वतिर्वेत्त्वित्यांह। द्यावांपृथिव्योर्धृत्यैं। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंसव इत्यांह प्रसूत्ये। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्त्यैं। अधिवपामीत्यांह। यथादेवतमेवैनानिधं वपति। धान्यंमिस धिनुहि देवानित्यांह। एतस्य यज्ञंषो वीर्यण॥४८॥

यावदेकां देवतां कामयंते यावदेकां। तावदाहुंतिः प्रथते। न हि तदस्ति। यत्तावदेव स्यात्। यावंज्जुहोति। प्राणायं त्वाऽपानाय त्वेत्यांह। प्राणानेव यजंमाने दधाति। दीर्घामनु प्रसितिमायुंषे धामित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। अन्तरिक्षादिव वा एतानि प्रस्कन्दन्ति। यानि दृषदंः। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रति-गृह्णात्वित्यांह प्रतिष्ठित्ये। हिवषोऽस्कन्दाय। असंवपन्ती पिश्षाणूनि कुरुतादित्यांह मध्यत्वायं॥४९॥

निलायत विधृंत्यै वीर्येण स्कन्दन्ति चत्वारिं च॥

धृष्टिंरिस् ब्रह्मं युच्छेत्यांह् धृत्यैं। अपाँग्रेऽग्निमामादं जिह् निष्क्रव्यादर्शस्पा देवयर्जं वहेत्यांह्न। य एवामात्क्रव्यात्। तमंपहत्यं। मेध्येऽग्रौ कपालमपंद्रधाति।

देवयर्जं वहेत्यांह। य एवामात्क्रव्यात्। तमंपहत्यं। मेध्येऽग्रौ कपालमुपंदधाति। निर्दंग्ध्र रक्षो निर्दंग्धा अरांतय इत्यांह। रक्षा ईस्येव निर्दहित। अग्निवत्युपंदधाति। अस्मिन्नेव लोके ज्योतिर्धत्ते। अङ्गांरमिधं वर्तयति॥५०॥

अन्तरिक्ष एव ज्योतिर्धत्ते। आदित्यमेवामुष्मिं ह्रोके ज्योतिर्धत्ते। ज्योतिष्मन्तो-ऽस्मा इमे लोका भवन्ति। य एवं वेदं। ध्रुवमंसि पृथिवीं दृश्हेत्यांह। पृथिवीमेवैतेनं दश्हति। धर्त्रमंस्यन्तरिक्षं दृश्हेत्यांह। अन्तरिक्षमेवैतेनं दश्हति। ध्रुणंमिस दिवं दश्हेत्यांह। दिवंमेवैतेनं दश्हति॥५१॥

धर्मासि दिशों हुर्हेत्यांह। दिशं एवैतेनं हर्हित। इमानेवैतैर्लीकान्हर्हित। हर्हन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृशुभिः। य एवं वेदं। त्रीण्यग्रें कुपालान्युपंदधाति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यै। एकमग्रें कुपालमुपं

पशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति॥५५॥

दधाति। एकं वा अग्रें कपालं पुरुषस्य सम्भवंति॥५२॥

अथ द्वे। अथ त्रीणि। अर्थ चत्वारि। अथाष्टौ। तस्माद्ष्टाकंपालं पुरुषस्य शिरः। यदेवं कृपालान्युप्दधांति। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यज्ञमेव प्रजापंतिः सङ्स्करोति। आत्मानमेव तथ्सङ्स्करोति। त॰ सङ्स्कृतमात्मानम्॥५३॥

अमुष्मिँ हो केऽनु परैति। यद्ष्यविप्दर्धाति। गायत्रिया तथ्सम्मितम्। यन्नवं। त्रिवृता तत्। यद्दर्श। विराजा तत्। यदेकांदश। त्रिष्टभा तत्। यद्दादंश॥५४॥ जगंत्या तत्। छन्दंः सम्मितानि स उपदर्धत्कपालांनि। इमाँ होकानंनुपूर्वं दिशो विधृत्ये द हति। अथाऽऽयुंः प्राणान्यजां पृशून् यज्ञमाने दधाति। सृजातानंस्मा अभितों बहुलान्करोति। चितः स्थेत्याह। यथायजुरेवैतत्। भृगूंणामङ्गिरसां तपंसा तप्यध्वमित्यांह। देवतांनामेवैनांनि तपंसा तपति। तानि ततः सङ्स्थिते। यानि घर्मे कपालांन्युपचिन्वन्ति वेधस इति चतुंष्यदयर्चा वि मुश्रति। चतुंष्यादः पशवंः।

वर्त्यात् वर्त्वमेवेवने इरहात मुम्भवित् तर सहस्कृतमालानं द्वावंश सहस्थित शिर्ण वा ————[७] देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्तव इत्याह् प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनौ हि देवानामध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्याह यत्यै। सं वंपामीत्याह। यथादेवतमेवैनानि संवंपति। समापो अद्भिरंग्मत समोषंधयो रसेनेत्याह।

आपो वा ओषंधीर्जिन्वन्ति। ओषंधयोऽपो जिन्वन्ति। अन्या वा एतासांमुन्या जिन्वन्ति॥५६॥

तस्मदिवमांह। स॰ रेवतीर्जगंतीभिर्मधुंमतीर्मधुंमतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। आपो वै रेवतीः। पृशवो जगंतीः। ओषंधयो मधुंमतीः। आपु ओषंधीः पृशून्। तानेवास्मा एक्धा स्॰सृज्यं। मधुंमतः करोति। अद्भः परि प्रजांताः स्थ समुद्भिः पृंच्यध्वमितिं पूर्याप्नांवयति। यथा सुवृष्ट इमामंनुविसृत्यं॥५७॥

आप् ओषंधीर्म्हयंन्ति। ताह्येव तत्। जनयत्यै त्वा संयौमीत्यांह। प्रजा एवैतेनं दाधार। अग्नयें त्वाऽग्नीषोमांभ्यामित्यांह व्यावृंत्त्यै। मुखस्य शिरोऽसीत्यांह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्पुंरोडाशंः। तस्मादेवमांह॥५८॥ घुमींऽसि विश्वायुरित्यांह। विश्वमेवायुर्यजंमाने दधाति। उरु प्रथस्वोरु ते यज्ञपंतिः प्रथतामित्यांह। यजंमानमेव प्रजयां पृश्वभिः प्रथयति। त्वचं गृह्णीष्वेत्यांह। सर्वमेवेन् सर्तनुं करोति। अथाऽऽप आनीय परिमार्ष्टि। मार्स एव तत्त्वचं दधाति। तस्मांत्त्वचा मार्सं छन्नम्। घुमी वा पृषोऽशांन्तः॥५९॥

अर्धमासें ऽर्धमासे प्रवृंज्यते। यत्पुंरोडाशः। स ईंश्वरो यजंमान श्रुचा प्रदहः। पर्यग्नि करोति। पृशुमेवेनं मकः। शान्त्या अप्रंदाहाय। त्रिः पर्यग्नि करोति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथो रक्षंसामपंहत्यै। अन्तरिंत रक्षोऽन्तरिंता अर्रातय इत्यांह॥६०॥

रक्षंसाम्नतर्हित्यै। पुरोडाशं वा अधिश्रित्र रक्षा ईस्यजिघा स्मन्। दिवि नाको नामाग्री रक्षोहा। स एवास्माद्रक्षा इस्यपाहन्। देवस्त्वां सिवता श्रंपयत्वित्याह। स्वितृप्रंसूत एवैनई श्रपयति। वर्षिष्ठे अधि नाक इत्याह। रक्षंसामपंहत्यै। अग्निस्तं तुनुवं माऽतिधागित्याहाऽनंतिदाहाय। अग्ने ह्व्य रेक्षस्वेत्याह गुप्त्यै॥६१॥

अविंदहन्तः श्रपयतेति वाचं विसृंजते। यज्ञमेव ह्वी इष्यंभिव्याहृत्य प्रतंनुते। पुरोरुचमविंदाहाय शृत्यं करोति। मस्तिष्को वै पुरोडाशंः। तं यन्नाभिं वासयेत्। आविर्मस्तिष्कंः स्यात्। अभिवांसयति। तस्माद्गृहां मस्तिष्कंः।

भस्मंनाऽभिवांसयति। तस्मांन्मा १ सेनास्थिं छुन्नम्॥६२॥ वेदेनाभिवांसयति। तस्मात्केशैः शिरंश्छुन्नम्। अखंलतिभावुको भवति। य एवं

वेदं। पृशोर्वे प्रतिमा पुरोडाशंः। स नायजुष्कंमिभवास्यः। वृथेव स्यात्। ईश्वरा यजमानस्य पशवः प्रमेतोः। सं ब्रह्मणा पृच्यस्वेत्याह। प्राणा वै ब्रह्मं॥६३॥

प्राणाः प्रावंः। प्राणेरेव प्राव्यस्पृणिक्ति। न प्रमायंका भवन्ति। यजंमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा प्रावः पुरीषम्। यदेवमंभिवासयंति। यजंमानमेव प्रजया प्राभिः समर्थयति। देवा वै ह्विर्भृत्वाऽब्रुंवन्। कस्मिन्निदं म्रेक्ष्यामह् इति। सौऽग्निरंब्रवीत्॥६४॥

मियं तुनूः सं निर्धाध्वम्। अहं वृस्तं जनियिष्यामि। यस्मिन्म्रक्ष्यध्व इति। ते देवा

अग्नौ तुनूः सन्त्र्यंदधत। तस्मादाहुः। अग्निः सर्वा देवता इति। सोऽङ्गारेणाऽऽपः। अभ्यंपातयत्। ततं एकतोऽजायत। स द्वितीयंमुभ्यंपातयत्॥६५॥

ततौं द्वितोंऽजायत। स तृतीयंम्भ्यंपातयत्। ततंस्त्रितोंऽजायत। यद्द्यो-ऽजांयन्त। तदाप्यानांमाप्यत्वम्। यदात्मभ्योऽजांयन्त। तदात्म्यानांमात्म्यत्वम्। ते देवा आप्येष्वंमृजत। आप्या अंमृजत् सूर्यांभ्युदिते। सूर्यांभ्युदितः सूर्याभिनिम्रुक्ते॥६६॥

सूर्याभिनिमुक्तः कुन्खिनि। कुन्खी श्यावदंति। श्यावदंत्रग्रदिधिषौ। अग्रदिधिषुः परिवित्ते। परिवित्तो वीर्हणि। वीर्हा ब्रह्महणि। तद्वेह्महण् नात्येच्यवत। अन्तर्वेदि निन्यत्यवंरुद्धौ। उत्मुकेनाभि गृह्णाति श्रत्त्वायं। श्रुतकामा इव हि देवाः॥६७॥ अन्य जिन्त्यत् विष्युवमाहाशांन आह गुर्वं कुत्रं ब्रह्मांवविद्वितीयंम्यंपातपृथ्यांभिनिमुक्ते देवाः॥

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंसव इति स्फामादंत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। आदंद इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। सहस्रंभृष्टिः श्ततेजा इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। वायुरंसि तिग्मतेजा इत्यांह। तेजो वै वायुः॥६८॥

तेर्ज एवास्मिन्दधाति। विषाद्वे नामांसुर आंसीत्। सोंऽबिभेत्। युज्ञेनं मा देवा अभिभविष्यन्तीतिं। स पृथिवीमभ्यंवमीत्। सा मेध्याऽभवत्। अथो यदिन्द्रों वृत्रमहन्ं। तस्य लोहितं पृथिवीमन् व्यंधावत्। सा मेध्याऽभवत्। पृथिवि देवयजनीत्यांह॥६९॥

मेध्यांमेवैनां देवयर्जनीं करोति। ओषध्यास्ते मूलं मा हिश्सिष्मित्यांह। ओषधीनामहिश्साये। व्रजं गंच्छ गोस्थानमित्यांह। छन्दाश्सि वै व्रजो गोस्थानं। छन्दाश्स्येवास्में व्रजं गोस्थानं करोति। वर्षतु ते द्यौरित्यांह। वृष्टिवें द्यौः। वृष्टिमेवावं रुन्धे। बुधान देव सवितः पर्मस्यां परावतीत्यांह॥७०॥

द्वौ वाव पुरुंषौ। यं चैव द्वेष्टिं। यश्चैनं द्वेष्टिं। तावुभौ बंध्नाति पर्मस्यां परावितं

श्तेन पाशैंः। योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मस्तमतो मा मौगित्याहानिम्नुत्त्वै। अरुक्वें नामांसुर आंसीत्। स पृथिव्यामुपंम्नुप्तोऽशयत्। तं देवा अपंहतोऽरुरुः पृथिव्या इति पृथिव्या अपाँघ्नन्। भ्रातृंव्यो वा अरुरुः। अपंहतोऽरुरुः पृथिव्या इति यदाहं॥७१॥

भ्रातृंव्यमेव पृंथिव्या अपंहन्ति। तेंऽमन्यन्त। दिवं वा अयमितः पंतिष्यतीति। तम्रुकंस्ते दिवं माऽस्कानितिं दिवः पर्यंबाधन्त। भ्रातृंव्यो वा अरुकंः। अरुकंस्ते दिवं मा स्कानिति यदाहं। भ्रातृंव्यमेव दिवः परिंबाधते। स्तम्बयुजुर्हंरति। पृथिव्या एव भ्रातृंव्यमपंहन्ति। द्वितीयर्ं हरित॥७२॥

अन्तरिक्षादेवैन्मपंहन्ति। तृतीय १ हरित। दिव एवैन्मपंहन्ति। तृष्णीं चंतुर्थ १ हरित। अपंरिमितादेवैन्मपंहन्ति। असुराणां वा इयमग्रं आसीत्। यावदासीनः परापश्यति। तावद्देवानाम्। ते देवा अंब्रुवन्। अस्त्वेव नोऽस्यामपीति॥७३॥

कांन्नो दास्यथेति। यावंथ्स्वयं पंरिगृह्णीथेति। ते वसंवस्त्वेति दक्षिणतः पर्यंगृह्णन्।

रुद्रास्त्वेतिं पृश्चात्। आदित्यास्त्वेत्यंत्तर्तः। तेंंऽग्निना प्राञ्चोऽजयन्। वसुंभिर्दक्षिणा। रुद्रैः प्रत्यर्श्चः। आदित्येरुदंश्चः। यस्यैवं विदुषो वेदिं परिगृह्णन्तिं॥७४॥

भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंच्यो भवति। देवस्यं सिवृतुः स्व इत्यांह् प्रसूँत्यै। कर्म कृण्वन्ति वेधस् इत्यांह। इषित १ हि कर्म क्रियतें। पृथिच्यै मेध्यं चामेध्यं च च्युदंक्रामताम्। प्राचीनंमुदीचीनं मेध्यम्। प्रतीचीनं दक्षिणाऽमेध्यम्। प्राचीमुदींचीं प्रवणां करोति। मेध्यांमवैनां देवयजंनीं करोति॥ ७५॥

प्राश्चौ वेद्यश्सावुन्नयिति। आहुवनीयंस्य परिगृहीत्यै। प्रतीची श्रोणीं। गार्हपत्यस्य परिगृहीत्यै। अथों मिथुनत्वायं। उद्धन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। उद्धन्ति। तस्मादोषंधयः पराभवन्ति॥७६॥

मूर्लं छिनत्ति। भ्रातृंव्यस्यैव मूर्लं छिनत्ति। मूलं वा अंतितिष्ठद्रक्षाः स्यन्तिपंपते। यद्धस्तेन छिन्द्यात्। कुन्खिनीः प्रजाः स्युः। स्फोनं छिनत्ति। वज्रो वै स्फाः। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षाः स्यपंहिन्ति। पितृदेवत्याऽतिंखाता। इयंतीं खनति॥७७॥

प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताम्। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां चंतुरङ्गुले-ऽन्वंविन्दन्। तस्मांचतुरङ्गुलं खेयां। चतुरङ्गुलं खंनति। चतुरङ्गुले ह्योषंधयः प्रतितिष्ठंन्ति। आ प्रतिष्ठाये खनति। यज्ञंमानमेव प्रतिष्ठां गंमयति। दक्षिणतो वर्षीयसीं करोति। देवयज्ञंनस्यैव रूपमंकः॥७८॥

पुरीषवतीं करोति। प्रजा वै प्शवः पुरीषम्। प्रजयैवैनं प्शुभिः पुरीषवन्तं करोति। उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। एतावंती वै पृथिवी। यावंती वेदिः। तस्यां एतावंत एव भ्रातृंव्यं निर्भज्यं। आत्मन् उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। ऋतमंस्यृत्सदंनमस्यृत्श्रीर्सीत्यांह। यथायुजुरेवैतत्॥७९॥

क्रूरिमंव वा एतत्कंरोति। यद्वेदिं क्रोतिं। धा असि स्वधा असीतिं योयुप्यते शान्त्यैं। उर्वी चासि वस्वीं चासीत्यांह। उर्वीमेवैनां वस्वीं करोति। पुरा क्रूरस्यं विसृपो विरिष्शिन्नित्यांह मेध्यत्वायं। उदादायं पृथिवीं जीरदांनुर्यामैरंयं चन्द्रमंसि स्वधाभिरित्यांह। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदंपहत्यं। मेध्यां देवयजंनीं कृत्वा॥८०॥

यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यम्। तद्स्यामेरंयित। तां धीरांसो अनुदृश्यं यजन्त् इत्याहानुंख्यात्ये। प्रोक्षंणीरा सांदय। इध्माब्र्हिरुपंसादय। स्रुवं च स्रुचंश्च सम्मृंड्डि। पत्नी सन्नहा। आज्येनोदेहीत्यांहानुपूर्वतांयै। प्रोक्षंणीरा सांदयित। आपो वै रंक्षोघ्नीः॥८१॥

रक्षंसामपंहत्यै। स्फास्य वर्त्मंन्थ्सादयति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। उवाच् हासिंतो दैवलः। एतावंतीर्वा अमुर्ष्मिं ल्लोक आपं आसन्। यावंतीः प्रोक्षंणीरितिं। तस्माँ द्वह्वीरासाद्याः। स्फामुदस्यन्। यं द्विष्यात्तं ध्यायेत्। शुचैवैनंमर्पयति॥८२॥

व न्युर्गह पग्वतीत्याहाहं हितीयरं हर्ताति परिगृह्णि देव्यर्जनी करीत भवनि खनत्यकर्गतकृत्व रक्षेष्रीर्रिपविता ——[९] वज्रो वै स्प्यः। यद्नवर्ञ्चं धारयेत्। वज्रेंऽध्वर्युः क्षंण्वीत। पुरस्तांत्तिर्यश्चं धारयित। वज्रो वै स्प्यः। वज्रेंणेव यज्ञस्यं दक्षिणतो रक्षाङ्स्यपंहन्ति। अग्निभ्यां प्राचंश्च प्रतीचंश्च। स्प्येनोदींचश्चाध्रराचंश्च। स्प्येन वा एष वज्रेंणास्यै पाप्मानं भ्रातृंव्यमपहत्यं। उत्क्रेऽिध प्रवृश्चिति॥८३॥

यथोप्धायं वृश्चन्त्येवम्। हस्ताववं नेनिक्ते। आत्मानंमेव पंवयते। स्फ्यं प्रक्षांलयित मेध्यत्वायं। अथो पाप्मनं एव भ्रातृंव्यस्य न्यङ्गं छिनित्ति। इध्माब्र्हिरुपंसादयित् युक्त्यैं। यज्ञस्यं मिथुन्त्वायं। अथो पुरोरुचंमेवैतां दंधाित। उत्तरस्य कर्मणोऽनुंख्यात्यै। न पुरस्तांत्प्रत्यगुपंसादयेत्॥८४॥

यत्पुरस्तांत्प्रत्यगुंपसादयेंत्। अन्यत्रांऽऽहृतिपथादिध्मं प्रतिंपादयेत्। प्रजा व बर्हिः। अपराध्रयाद्वर्हिषां प्रजानां प्रजनंनम्। पृश्चात्प्रागुपंसादयित। आहुतिपथेनेध्मं प्रतिंपादयित। सम्प्रत्येव बर्हिषां प्रजानां प्रजनंनमुपैति। दक्षिणमिध्मम्। उत्तरं बर्हिः। आत्मा वा इध्मः। प्रजा बर्हिः। प्रजा ह्यांत्मन् उत्तरतरा तीर्थे। ततो मेधंमुपनीयं। यथादेवतमेवेन्त्प्रतिंष्ठापयित। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजमानः॥८५॥

वृश्चित् साद्येदिध्मः पर्श्वं च॥——————[१०

तृतीर्यस्यां युज्ञस्यानंतिरेकाय पुवित्रंवत्यध्वर्युं चांधिपवंणमस्यन्तरिक्ष एव रक्षंसामुन्तरिहत्ये द्वौ वाव पुरुषो यदुदश्चन्द्रमंसि मेध्युं पश्चाशीतिः॥८५॥ तृतीर्यस्यां यज्ञमानः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

प्रत्युंष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्ट्य अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अ्ग्नेर्वस्तेजिष्ठेन् तेजंसा निष्टंपामीत्यांह मेध्यत्वायं। स्रुचः सम्मांष्टिं। स्रुवमग्रें। पुमार्श्समेवाभ्यः सङ्श्यंति मिथुनत्वायं। अथं जुहुम्। अथोपभृतम्। अथं ध्रुवाम्। असौ वै जुहुः॥१॥

अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। इमे वै लोकाः स्रुचः। वृष्टिः सम्मार्जनानि। वृष्टिर्वा इमाँ लोकानेनुपूर्वं केल्पयित। ते ततः क्रुप्ताः समेधन्ते। समेधन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृशिभः। य एवं वेदं। यदिं कामयेत् वर्षुकः पूर्जन्यः स्यादिति। अग्रतः सम्मृंज्यात्॥२॥

वृष्टिंमेव नि यंच्छति। अवाचीनाँग्रा हि वृष्टिः। यदिं कामयेतावंर्षुकः स्यादितिं। मूलतः सम्मृंज्यात्। वृष्टिंमेवोद्यंच्छति। तदु वा आंहुः। अग्रत एवोपरिंष्टाथ्सम्मृं-ज्यात्। मूलतोऽधस्ताँत्। तदंनुपूर्वं कंल्पते। वर्षुंको भवतीतिं॥३॥ प्राचीमभ्याकारम्। अग्रैरन्तर्तः। एविमेव ह्यन्नम् ह्यते। अथो अग्राद्वा ओषंधीनामूर्जं प्रजा उपंजीवन्ति। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। अधस्तांत्प्रतीचींम्। दण्डम्त्तम्तः। मूलेन् मूलुं प्रतिष्ठित्यै। तस्मांदर्बौ प्राञ्च्यपरिष्टाल्लोमांनि। प्रत्यश्च्यधस्तांत्॥४॥

स्रुग्ध्येषा। प्राणो व स्रुवः। जुहूर्दक्षिणो हस्तः। उपभृथ्सव्यः। आत्मा ध्रुवा। अन्नर्शं सम्मार्जनानि। मुख्तो व प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नं प्रविश्यं। बाह्यतस्तन्वर्शं शुभयति। तस्माध्स्रुवमेवाग्रे सम्माधि। मुख्तो हि प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नंमाविशतिं। तौ प्राणापानौ। अव्यर्धकः प्राणापानाभ्यां भवति। य एवं वेदं॥५॥

वृह्र्मृंज्यद्भविति प्रत्यश्र्यस्तांमाष्ट्रं पर्व वा [१] दिवः शिल्पमवंततम्। पृथिव्याः कुकुभिं श्रितम्। तेनं वय र सहस्रंवल्शेन। सपत्रं नाशयामिस स्वाहेतिं सुख्सम्मार्जनान्यग्रौ प्र हंरति। आपो वै दर्भाः।

तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

रूपमेवैषांमेतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। अनुष्टुभूर्चा। आनुष्टुभः प्रजापंतिः। प्राजापत्यो वेदः। वेदस्याग्रईं सुख्सम्मार्जनानि॥६॥

स्वेनैवैनांनि छन्दंसा। स्वयां देवतंया समर्धयति। अथो ऋग्वाव योषां। दुर्भो वृषां। तिन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। प्रजायते प्रजयां पशुभिर्यजमानः। तान्येके वृथैवापांस्यिन्ति। तत्तथा न कार्यम्। आरंब्यस्य यज्ञियंस्य कर्मणः सिवेदोहः॥७॥

यद्यंनानि पृशवोंऽभि तिष्ठंयुः। न तत्पृशुभ्यः कम्। अद्भिर्मांर्जियित्वोत्करे न्यंस्येत्। यद्वै यृज्ञियंस्य कर्मणोऽन्यत्राऽऽहुंतीभ्यः सुन्तिष्ठंते। उत्करो वाव तस्यं प्रतिष्ठा। एता हि तस्मै प्रतिष्ठां देवाः सुमर्भरन्। यद्द्विर्मार्जयंति। तेनं शान्तम्। यदुत्करे न्यस्यति। प्रतिष्ठामेवैनांनि तद्गंमयति॥८॥

प्रति तिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजंमानः। अथौं स्तम्बस्य वा एतद्रूपम्। यथ्स्रुंख्सम्मार्जनानि। स्तम्बुशो वा ओषंधयः। तासौं जरत्कक्षे पृशवो न रंमन्ते। अप्रियो ह्येषां जरत्कक्षः। यावंदप्रियो हु वै जंरत्कक्षः पंशूनाम्। तावंदप्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्यन्यत्राग्नेर्दधंति। नुवदाव्यांसु वा ओषंधीषु पृशवों रमन्ते॥९॥

भंवति। यस्यैतान्यन्यत्राग्नेर्दधिति। नृवदाव्यांसु वा ओषंधीषु पृशवों रमन्ते॥९॥
नृवदावो ह्येषां प्रियः। यावंत्प्रियो हु वै नंवदावः पंशूनाम्। तावंत्प्रियः
पशूनां भंवति। यस्यैतान्यग्नौ प्रहरेन्ति। तस्मांदेतान्यग्नावेव प्रहरेत्।
यत्रस्मिन्थ्सम्मृज्यात्। पृशूनां धृत्यैं। यो भूतानामिधंपितः। रुद्रस्तंन्तिचरो
वृषां। पृशूनस्माकं मा हिर्साः। पृतदंस्तु हुतं तव स्वाहेत्यंग्निस्मार्जनान्यग्नौ
प्रहरिते। पृषा वा पृतेषां योनिः। पृषा प्रतिष्ठा। स्वामेवैनांनि योनिम्। स्वां प्रतिष्ठां
गंमयति। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजमानः॥१०॥

वेदस्याप्रश्च सुरुसुम्मार्जनानि विदोहो गंमयति पृथवी रमन्ते हिश्सीः पद ची। (२) अर्यज्ञो वा पुषः। योऽपुत्तीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्यन्वास्ते। युज्ञमेवाकः।

अयज्ञा वा एषः। याऽपुलाकः। न प्रजाः प्रजायरन्। पल्यन्वास्ता यज्ञम्वाकः। प्रजानां प्रजननाय। यत्तिष्ठन्ती सन्नह्यंत। प्रियं ज्ञाति र रुन्थ्यात्। आसीना सन्नह्यते। आसीना ह्यंषा वीर्यं करोतिं॥११॥ यत्पश्चात्प्राच्यन्वासीत। अनयां समर्दन्दधीत। देवानां पत्निया समर्दन्दधीत। देशाँदक्षिणत उदीच्यन्वाँस्ते। आत्मनों गोपीथायं। आशासांना सौमन्सिमत्यांह। मेध्यांमेवैनां केवंतीं कृत्वा। आशिषा समर्धयिति। अग्नेरनुंव्रता भूत्वा सन्नंह्ये सुकृताय किमत्यांह। पृतद्वे पत्निये व्रतोपनयंनम्॥१२॥

तेनैवैनां व्रतमुपंनयति। तस्मांदाहुः। यश्चैवं वेद् यश्च न। योर्ऋमेव युंते। यम्न्वास्तें। तस्यामुष्मिं ह्योके भंवतीति योर्ऋण। यद्योक्रम्। स योगः। यदास्तें। स क्षेमः॥१३॥

योगक्षेमस्य क्रुप्तैं। युक्तं क्रियाता आशीः कामें युज्याता इतिं। आशिषः समृद्धे। ग्रन्थिं ग्रंथ्राति। आशिषं एवास्यां परिं गृह्णाति। पुमान् वै ग्रन्थिः। स्री पत्नीं। तन्मिथुनम्। मिथुनम्वास्य तद्यज्ञे करोति प्रजनंनाय। प्र जांयते प्रजयां पशुभिर्यजमानः॥१४॥

अर्थो अर्थो वा एष आत्मनः। यत्पत्नीं। यज्ञस्य धृत्या अर्शिथिलं भावाय।

ऊनेऽतिरिक्तं धीयाता इति प्रजात्यै। मुहीनां पयोऽस्योषंधीना १ रस् इत्याह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। तस्य तेऽक्षींयमाणस्य निर्वपामि देवयज्याया इत्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते॥१५॥

घृतं च वै मधुं च प्रजापंतिरासीत्। यतो मध्वांसीत्। ततः प्रजा अंसृजत। तस्मान्मधुंषि प्रजनंनमिवास्ति। तस्मान्मधुंषा न प्रचंरन्ति। यातयांम हि। आज्येन प्रचरन्ति। युज्ञो वा आज्यम्। यज्ञेनैव यज्ञं प्रचरन्त्ययातयामत्वाय। पत्यवें क्षते॥१६॥

मिथुनत्वाय प्रजात्यै। यद्वै पत्नीं यज्ञस्यं करोतिं। मिथुनं तत्। अथो पत्निया पुवैष युज्ञस्यान्वारुम्भोऽनंबच्छित्त्यै। अमेध्यं वा एतत्करोति। यत्पत्यवेक्षंते। गार्हंपत्येऽधि श्रयति मेध्यत्वायं। आहवनीयंमभ्युद्वंवति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। तेजोंऽसि तेजोऽनु प्रेहीत्यांह॥१७॥

तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

तेजो वा अग्निः। तेज आज्यम्। तेजंसैव तेजः समर्धयति। अग्निस्ते तेजो मा

विनैदित्याहाहि ५ सायै। स्फास्य वर्त्मन्थ्सादयति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अग्नेर्जिह्वाऽसिं सुभूर्देवानामित्यांह। यथायजुरेवैतत्। धाम्नेधाम्ने देवेभ्यो यज्ञेषेयज्ञेषे भवेत्याह। आ-

मेवैतामा शास्ते॥१८॥

तद्वा अतः पवित्राभ्यामेवोत्पुनाति। यजंमानो वा आज्यम्। प्राणापानौ पवित्रे। यजमान एव प्राणापानौ देधाति। पुन्राहारम्। एविमेव हि प्राणापानौ स्थरंतः।

शुक्रमंसि ज्योतिरसि तेजोऽसीत्याह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। त्रिर्यज्ञांषा। त्रयं इमे लोकाः॥१९॥

एषां लोकानामार्स्यै। त्रिः। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अथाऽऽज्यंवतीभ्यामप

रूपमेवासांमेतद्वर्णं दधाति। अपि वा उताऽऽहुंः। यथां ह वै योषां सुवर्ण १ हिरंण्यं पेशलं बिभ्रंती रूपाण्यास्तें। एवमेता एतर्हीतिं। आपो वै सर्वा देवताः॥२०॥

एषा हि विश्वेषां देवानां तनूः। यदाज्यम्। तत्रोभयोमीमा स्सा। जामि स्यात्।

यद्यजुषाऽऽज्यं यजुंषाऽप उंत्पुनीयात्। छन्दंसाऽप उत्पुनात्यजांमित्वाय। अथों मिथुनत्वायं। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदिति। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गायित्रिया त्रिष्षमृद्धत्वायं। अद्भिरेवौषंधीः सं नयिति। ओषंधीभिः पशून्। पशुभिर्यजमानम्। शुक्रं त्वां शुक्रायां ज्योतिंस्त्वा ज्योतिंष्यर्चिस्त्वा-ऽर्चिषीत्यांह सर्वत्वायं। पर्यांप्त्या अनंन्तरायाय॥२१॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स पृतिमन्द्र आज्यंस्यावकाशमंपश्यत्। तेनावैक्षत। ततो देवा अभवन्। पराऽसुराः। य एवं विद्वानाज्यंमवेक्षते। भवंत्यात्मनाँ। पराँऽस्य

भ्रातृंच्यो भवति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। यदाज्येनान्यानि ह्वी इष्यंभिघारयंति॥२२॥ अथ केनाऽऽज्यमिति। स्त्येनेति ब्रूयात्। चक्षुर्वे स्त्यम्। स्त्येनैवैनंद्भि घारयति। ईश्वरो वा एषौऽन्यो भवितोः। यश्चक्षुषाऽऽज्यंम्वेक्षंते। निमील्यावैक्षेत। दाधारात्मश्चक्षुंः। अभ्याज्यं घारयति। आज्यं गृह्णाति॥२३॥

छन्दार्शस् वा आज्यम्। छन्दार्शस्येव प्रीणाति। चतुर्जुह्वां गृह्णाति। चतुंष्पादः पृश्वंः। पृश्न्वेवावं रुन्धे। अष्टावंपभृतिं। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रः प्राणः। प्राणमेव पृशुषुं दधाति। चतुर्भुवायाम्॥२४॥

चतुंष्पादः प्रावंः। प्राष्ट्रेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति। यज्ञमान्देवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। चतुर्जुह्वां गृह्णन्भयों गृह्णीयात्। अष्टावुंपभृतिं गृह्णन्कनीयः। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। गौर्वे स्रुचंः। चतुर्जुह्वां गृह्णाति। तस्माचतुंष्पदी॥२५॥

अष्टावेपभृति। तस्माद्ष्टाशंफा। चृतुर्भुवायांम्। तस्माचतुः स्तना। गामेव तथ्स इस्केरोति। साऽस्मै स इस्कृतेष्मूर्जं दुहे। यञ्जुह्वां गृह्णातिं। प्रयाजेभ्यस्तत्। यदंपभृतिं। प्रयाजानूयाजेभ्यस्तत्। सर्वस्मै वा एतद्यज्ञायं गृह्यते। यद्भुवायामाज्यम्॥२६॥

अभिघारयंति गृह्णाति ध्रुवायां चतुंप्पदी प्रयाजानूयाजेभ्यस्तद्वे चं॥

आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्याह। रूपमेवासांमेतन्महिमानं व्याचेष्टे। अग्रे इमं यज्ञं नेयताग्रे यज्ञपंतिमित्याह। अग्रे एव यज्ञं नेयन्ति। अग्रे यज्ञपंतिम्। युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रमवृणीध्वं वृत्रतूर्ये इत्याह। वृत्र हे हिन्ष्यिन्निन्द्र आपो वन्ने। आपो हेन्द्रं विन्नेरे। संज्ञामेवासांमेतथ्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह॥२७॥

तेनाऽऽपः प्रोक्षिंताः। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। स वनस्पतीन्प्राविंशत्। कृष्णो ऽस्याखरेष्ठौ ऽग्नये त्वा स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुष्टं करोति। अथो अग्नेरेव मेधमवं रुन्धे। वेदिरसि ब्र्हिषे त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै बर्हिः। पृथिवी वेदिः॥२८॥

प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। बर्हिरंसि स्रुग्भ्यस्त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै बर्हिः। यजमानः स्रुचंः। यजमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेतिं बर्हिरासाद्य प्रोक्षंति। एभ्य एवैनंश्लोकेभ्यः प्रोक्षंति। अथ ततः तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

सह स्रुचा पुरस्तांत्प्रत्यश्चं ग्रन्थिं प्रत्युंक्षति। प्रजा वै बुर्हिः। यथा सूत्यै काल आपः पुरस्ताद्यन्ति॥२९॥

ताहगेव तत्। स्वधा पितृभ्य इत्यांह। स्वधाकारो हि पिंतृणाम्। ऊर्ग्भवं बर्हिषद्भ्य इति दक्षिणायै श्रोणेरोत्तंरस्यै निनंयित सन्तंत्यै। मासा वै पितरों बर्हिषदं। मासांनेव प्रीणाति। मासा वा ओषंधीर्वर्धयन्ति। मासाः पचन्ति समृद्धै। अनंतिस्कन्दन् ह पूर्जन्यों वर्षिति। यत्रैतदेवं क्रियते॥३०॥

ऊर्जा पृथिवीं गंच्छुतेत्यांह। पृथिव्यामेवोर्जं दधाति। तस्मांत्पृथिव्या ऊर्जा भुंअते। ग्रन्थिं वि स्रश्ंसयित। प्रजनयत्येव तत्। ऊर्ध्वं प्राश्चमुद्गूढं प्रत्यश्चमा यंच्छिति। तस्मांत्प्राचीन्श्रे रेतों धीयते। प्रतीचींः प्रजा जांयन्ते। विष्णोः स्तूपो-ऽसीत्यांह। युज्ञो वै विष्णुं:॥३१॥

युज्ञस्य धृत्यैं। पुरस्तांत्प्रस्त्रं गृंह्णाति। मुख्यंमेवैनं करोति। इयंन्तं गृह्णाति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। एतावद्वे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥३२॥

अपंरिमितं गृह्णाति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धौ। तस्मिन्यवित्रे अपि सृजति। यजमानो वै प्रस्तरः। प्राणापानौ प्वित्रें। यजमान एव प्राणापानौ दंधाति। ऊर्णामदसं त्वा स्तृणामीत्यांह। यथायजुरेवैतत्। स्वास्स्थं देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं पुवैनंथ्स्वास्स्थं करोति॥३३॥

ब्र्हिः स्तृंणाति। प्रजा वै ब्र्हिः। पृथिवी वेदिः। प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। अनंतिदृश्व स्तृणाति। प्रजयैवैनं पृशुभिरनंतिदृश्वं करोति। धारयंन्प्रस्त्रं पंरिधीन्परिं दधाति। यजंमानो वै प्रस्तरः। यजंमान एव तथ्स्वयं पंरिधीन्परिं दधाति। वृश्वावंसुरित्यांह॥३४॥

विश्वमेवायुर्यजमाने दधाति। इन्द्रंस्य बाहुरसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। मित्रावरुंणौ त्वोत्तर्तः परिधत्तामित्यांह। प्राणापानौ मित्रावरुंणौ। प्राणापानावेवास्मिन्दधाति। सूर्यस्ता पुरस्तांत् पात्वित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। कस्यांश्चिदभिशंस्त्या इत्यांह। अपंरिमितादेवैनं पाति॥३५॥

वीतिहाँत्रं त्वा कव इत्यांह। अग्निमेव होत्रेण समर्धयित। द्युमन्त्रं सिमिधीम्हीत्यांह् सिमेंद्ये। अग्ने बृहन्तंमध्वर इत्यांह् वृद्धौं। विशो यन्ने स्थ इत्यांह। विशां यत्यौं। उदीचीनाँग्ने नि दंधाति प्रतिष्ठित्ये। वसूनार रुद्राणांमादित्यानार् सदंसि सीदेत्यांह। देवतांनामेव सदंने प्रस्तुरर सांदयित। जुहूरंसि घृताची नाम्नेत्यांह॥३६॥

असौ वै जुहूः। अन्तिरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। तासांमेतदेव प्रियं नामं। यद्घृताचीतिं। यद्घृताचीत्याहं। प्रियेणैवैना नाम्नां सादयति। एता अंसदन्थ्सुकृतस्यं लोक इत्यांह। सत्यं वै सुंकृतस्यं लोकः। सत्य एवैनाः सुकृतस्यं लोके सादयित। ता विष्णो पाहीत्यांह। यज्ञो वै विष्णुः। यज्ञस्य धृत्यै। पाहि यज्ञं पाहि यज्ञंपतिं पाहि मां यंज्ञनियमित्यांह। यज्ञाय यज्ञंमानायाऽऽत्मनै। तेभ्यं पुवाऽऽशिष्माशास्तेऽनांत्ये॥३७॥

स्थेत्यांह पृथिवी वेदिर्यन्ति क्रियते वीर्णुर्वीर्यसम्मितं करोत्याह पाति नाम्नेत्यांह लोके सांदयति पद चं॥ $lue{f \xi}$

अग्निना वै होत्राँ। देवा असुंरान्भ्यंभवन्। अग्नयं सिम्ध्यमांनायानुंब्रूहीत्यांह् भ्रातृंव्याऽभिभूत्यै। एकंवि॰शतिमिध्मदारूणिं भवन्ति। एकुवि॰शो वै पुरुंषः। पुरुंषस्याऽऽस्यै। पश्चंदशेध्मदारूण्यभ्या दंधाति। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रंयः। अर्धमासुशः संवथ्सर आँप्यते। त्रीन्पंरिधीन्परिं दधाति॥३८॥

ऊर्ध्वे स्मिधावा दंधाति। अन्याजेभ्यः स्मिध्मितं शिनष्टि। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनोपं वाजयित। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यः प्राणः। यजमान आहवनीयः। यजमान एव प्राणं दंधाति॥३९॥

त्रिरुपं वाजयित। त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। वेदेनोप्यत्यं स्रुवेणं प्राजापत्यमाघारमा घारयित। यज्ञो वै प्रजापितः। यज्ञमेव प्रजापितिं मुख्त आरंभते। अथौं प्रजापितिः सर्वा देवताः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। अग्निमंग्नीत्रिस्निः सं मृङ्कीत्याह। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। पुरिधीन्थ्सं मौर्ष्टि। पुनात्येवैनान्। त्रिस्त्रिः सं मौर्ष्टि।

त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अथों एते वै देवाश्वाः। देवाश्वानेव तथ्सं माँष्टिं। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्यै। आसीनोऽन्यमांघारमा घारयति॥४१॥

तिष्ठंत्र्न्यम्। यथाऽनों वा रथं वा युआत्। एवमेव तदेष्वर्युर्यज्ञं युनिक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्याभ्यूँढ्यै। वहंन्त्येनं ग्राम्याः पृशवंः। य एवं वेदं। भुवंनमिस वि प्रथस्वेत्यांह। युज्ञो वै भुवंनम्। युज्ञ एव यजमानं प्रजयां पृश्भिः प्रथयति। अग्रे यष्टरिदं नम इत्यांह॥४२॥

अग्निर्वे देवानां यष्टां। य एव देवानां यष्टां। तस्मां एव नमंस्करोति। जुह्वेह्यग्निस्त्वां ह्वयति देवयुज्याया उपंभृदेहिं देवस्त्वां सिवता ह्वयति देवयुज्याया इत्याह। आग्नेयी वै जुहूः। सावित्र्युप्भृत्। ताभ्यांमेवैने प्रसूत आदंत्ते। अग्नांविष्णू मा वामवं क्रमिष्मित्यांह। अग्निः पुरस्तांत्। विष्णुर्यज्ञः पृश्चात्॥४३॥

ताभ्यांमेव प्रंतिप्रोच्यात्या ऋांमति। विजिंहाथां मा मा सन्तांष्ठमित्याहाहि ५ सायै। लोकं में लोककृतौ कृणुत्मित्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। विष्णोः स्थानंमुसीत्यांह। युज्ञो वै विष्णुंः। पृतत्खलु वै देवानामपंराजितमायतंनम्। यद्यज्ञः। देवानांमेवापंराजित आयतंने तिष्ठति। इत इन्द्रों अकृणोद्वीर्याणीत्यांह॥४४॥

इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति। समारभ्योर्ध्वो अध्वरो दिविस्पृशमित्यांह वृद्धौं। आघारमांघार्यमांणमनुं समारभ्यं। एतस्मिन्काले देवाः सुंवर्गं लोकमांयन्। साक्षादेव यर्जमानः सुवर्गं लोकमेति। अथो समृद्धेनेव य्जेन् यर्जमानः सुवर्गं लोकमेति। अह्यां समृद्धेनेव य्जेन् यर्जमानः सुवर्गं लोकमेति। अह्यंतो य्ज्ञो य्ज्ञपंतिरित्याहानांत्ये। इन्द्रांवान्थ्स्वाहेत्यांह। इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति। बृहद्भा इत्यांह॥४५॥

सुवर्गो वै लोको बृहद्भाः। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्ये। यजमान्देवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। प्राण आंघारः। यथ्म ईस्पर्शयौत्। भ्रातृंव्येऽस्य प्राणं दंध्यात्। अस ईस्पर्शयन्नत्या क्रांमिति। यजमान एव प्राणं दंधाति। पाहि माँऽग्रे दुर्श्वरितादा मा सुचंरिते भ्जेत्यांह॥४६॥

अग्निर्वाव प्वित्रम्। वृजिनमनृतं दुश्चेरितम्। ऋजुकुर्मः सृत्यः सुचेरितम्।

अग्निरेवैनं वृजिनादनृताद्दश्चिरितात्पाति। ऋजुकर्मे सृत्ये सुचरिते भजित। तस्मादेवमा शास्ते। आत्मनों गोपीथायं। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यदांघारः। आत्मा ध्रुवा॥४७॥

आघारमाघार्य ध्रुवा समंनक्ति। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रति दधाति। द्विः समंनक्ति। द्वौ हि प्राणापानौ। तदांहुः। त्रिरेव समंभ्यात्। त्रिधांतु हि शिर् इतिं। शिरं इवैतद्यज्ञस्यं। अथो त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। मुखस्य शिरोऽसि सभ्योतिंषा ज्योतिंरङ्कामित्यांह। ज्योतिंरेवास्मां उपरिष्टाद्दधाति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै॥४८॥

परिदर्भात प्राणं दंभाति हि युज्ञो घारयित नम् इत्यांह पृथ्वाद्वीर्थाणात्यांहु भा इत्यांह भुजेत्यांह धुवेवास्मिन्दभाति त्रीणि चा———[७] धिष्णिया वा एते न्युंप्यन्ते। यद्धृह्मा। यद्धोतां। यदंध्वर्युः। यद्ग्रीत्। यद्यजीमानः। तान् यदंन्तरेयात्। यजीमानस्य प्राणान्थ्सङ्कर्षेत्। प्रमायुंकः स्यात्। प्ररोडाशमपगृह्य सश्चरत्यध्वर्युः॥४९॥

तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३) यर्जमानायैव तल्लोक र शिर्षपति। नास्यं प्राणान्थ्सङ्कंर्षति। न प्रमायुंको भवति। पुरस्तांत् प्रत्यङ्कासीनः। इडाया इडामा दंधाति। हस्त्या १ होत्रें। पृशवो वा इडां। पृशवः पुरुषः। पृशुष्वेव पृशून्प्रतिष्ठापयति। इडांयै वा एषा प्रजांतिः॥५०॥

तां प्रजातिं यजमानोऽनु प्र जायते। द्विरङ्गलावनिक्त पर्वणोः। द्विपाद्यजमानः प्रतिष्ठित्यै। सकृदुपं स्तृणाति। द्विरा दंधाति। सकृदिभ घारयति। चतुः सम्पंद्यते। चत्वारि वै पशोः प्रंतिष्ठानांनि। यावांनेव पशुः। तमुपंह्वयते॥५१॥

मुखंमिव प्रत्युपंह्वयेत। सम्मुखानेव पशूनुपं ह्वयते। पशवो वा इडाँ। तस्माथ्सा-उन्वारभ्यां। अध्वर्युणां च यर्जमानेन च। उपंहृतः पशुमानंसानीत्यांह। उप ह्यंनौ ह्वयंते होतां। इडांये देवतांनामुपहवे। उपंहृतः पशुमान्नंवति। य एवं वेदं॥५२॥

यां वै हस्त्यामिडांमादधांति। वाचः सा भागधेयम्। यामुपह्वयंते। प्राणाना ५ सा। वार्चं चैव प्राणा इश्चावं रुन्धे। अथ वा एतर्ह्युपंहृतायामिडांयाम्। पुरोडाशंस्यैव बंहिषदों मीमा ५ सा। यजमानं देवा अंब्रुवन्। हिवर्नो निर्वपेतिं। नाहमंभागो निर्वपस्यामीत्यंब्रवीत्॥५३॥

न मयांऽभागयाऽनुंबक्ष्यथेति वागंब्रवीत्। नाहमंभागा पुरोनुवाक्यां भविष्यामीतिं पुरोनुवाक्यां। नाहमंभागा याज्यां भविष्यामीतिं याज्यां। न मयांऽभागेन् वषंद्वरिष्यथेतिं वषद्वारः। यद्यंजमानभागं निधायं पुरोडाशं बर्हिषदं करोति। तानेव तद्वागिनंः करोति। चतुर्धा करोति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतिं तिष्ठति। बर्हिषदं करोति॥५४॥

यजमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा ब्रहिः। यजमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयित। तस्माद्स्थ्राऽन्याः प्रजाः प्रतितिष्ठन्ति। मार्सेनान्याः। अथो खल्वांहः। दक्षिणा वा पृता हिवर्यज्ञस्यान्तर्वेद्यवे रुध्यन्ते। यत्पुरोडाशं बर्हिषदं क्रोतीतिं। चतुर्धा करोति। चत्वारो ह्येते हिवर्यज्ञस्यर्त्विजः॥५५॥

ब्रह्मा होताँ ऽध्वर्युर्ग्नीत्। तम्भि मृंशेत्। इदं ब्रह्मणंः। इद होतुंः। इदमंध्वर्योः। इदम्ग्नीध् इतिं। यथैवादः सौम्येँ ऽध्वरे। आदेशंमृत्विग्भ्यो दक्षिणा नीयन्तें। ताहगेव तत्। अग्नीधे प्रथमाया दंधाति॥५६॥

अग्निम्ंखा ह्यद्धिः। अग्निम्ंखामेवर्ष्टिं यजंमान ऋभ्नोति। स्कृद्ंपस्तीर्य् द्विरादधंत्। उपस्तीर्य् द्विर्भि घारयति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनं ब्रह्मणें ब्रह्मभागं परिंहरति। प्राजापत्यो वे वेदः। प्राजापत्यो ब्रह्मा॥५७॥

स्विता यज्ञस्य प्रसूँत्यै। अथ कार्मम्न्येनं। ततो होत्रें। मध्यं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्धोतां। मध्यत एव यज्ञं प्रीणाति। अथाध्वर्यवें। प्रतिष्ठा वा एषा यज्ञस्यं। यदध्वर्युः। तस्माद्धविर्यज्ञस्यैतामेवाऽऽवृतमनुं॥५८॥

अन्या दक्षिणा नीयन्ते। यज्ञस्य प्रतिष्ठित्यै। अग्निमंग्नीथ्सकृथ्संकृथ्सं मृङ्कीत्यांह। परांडिःव ह्येतर्हिं यज्ञः। इषिता दैव्या होतांर इत्यांह। इषित हि कर्म क्रियतें। भुद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुंषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहीत्याह। आमेवैतामा शांस्ते। स्वगा दैव्या होतृंभ्य इत्यांह। यज्ञमेव तथ्स्वगा करोति। स्वस्तिर्मानुंषेभ्य

इत्याह। आमेवैतामा शाँस्ते। शुं योर्ब्रूहीत्याह। शुंयुमेव बार्हस्पृत्यं भागधेयेन समर्धयति॥५९॥

अथ स्रुचांवनुष्टुग्भ्यां वाजंवतीभ्यां व्यूहिति। प्रतिष्ठा वा अनुष्टुक्। अत्रं वाजः प्रतिष्ठित्यै। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। प्राचीं जुहूमूहिति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। प्रतिचीमुप्भृतम्। जिन्ष्यमाणानेव प्रतिनुदते। सविषूच एवापोह्यं सपत्नान् यजंमानः। अस्मिँ होके प्रति तिष्ठति॥६०॥

द्वाभ्यांम्। द्विप्रंतिष्ठो हि। वसुंभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यंस्त्वाऽऽदित्येभ्यस्त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। स्रुक्षु प्रंस्त्रमंनक्ति। इमे वै लोकाः स्रुचंः। यजंमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजंसाऽनक्ति। त्रेधाऽनंक्ति। त्रयं इमे लोकाः॥६१॥

एभ्य एवैनं लोकेभ्योऽनक्ति। अभिपूर्वमंनक्ति। अभिपूर्वमेव यर्जमानं तेर्जसा-ऽनक्ति। अक्त॰ रिहाणा इत्याह। तेजो वा आज्यम्। यर्जमानः प्रस्तुरः। यर्जमानमेव तेर्जसाऽनिक्ता वियन्तु वय इत्याहा वर्य एवैनं कृत्वा। सुवर्गं लोकं गमयति॥६२॥

प्रजां योनिं मा निर्मृक्षमित्यांह। प्रजायै गोपीथायं। आप्यांयन्तामाप ओषंधय इत्यांह। आपं एवौषंधीरा प्यांययित। मुरुतां पृषंतयः स्थेत्यांह। मुरुतो वै वृष्ट्यां ईशते। वृष्टिमेवावं रुन्धे। दिवं गच्छ ततों नो वृष्टिमेर्येत्यांह। वृष्टिवें द्यौः। वृष्टिमेवावं रुन्धे॥६३॥

यावृद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरंति। तावंदस्यायुंमीयते। आयुष्पा अंग्रेऽस्यायुंमें पाहीत्यांह। आयुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। यावृद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरंति। तावंदस्य चक्षुंमीयते। चृक्षुष्पा अंग्रेऽसि चक्षुंमें पाहीत्यांह। चक्षुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। ध्रुवाऽसीत्यांह प्रतिष्ठित्यै। यं परिषिं पूर्यधंत्था इत्यांह॥६४॥

यथायजुरेवैतत्। अग्नें देव पृणिभिर्वीयमाण इत्याह। अग्नयं एवैनं जुष्टं करोति। तन्तं एतमनु जोषं भरामीत्याह। सजातानेवास्मा अनुंकान्करोति। नेदेष त्वदंपचेतयांता इत्याहानुंख्यात्यै। यज्ञस्य पाथ उप समितमित्यांह। भूमानंमेवोपैति। पुरिधीन्प्र हंरति। यज्ञस्य समिष्ट्यै॥६५॥

स्रुचौ सं प्रस्नांवयित। यदेव तत्रं ऋूरम्। तत्तेनं शमयित। जुह्वामुंप्भृतम्। यज्ञमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योप्भृत्। यजंमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। स्र्स्यावभागाः स्थेत्यांह। वसंवो वै रुद्रा आंदित्याः सर्स्र्यावभागाः। तेषां तद्भागधेयम्॥६६॥

तानेव तेनं प्रीणाति। वैश्वदेव्यर्चा। एते हि विश्वें देवाः। त्रिष्टुग्भंवति। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। अग्नेर्वामपंत्रगृहस्य सदिस सादयामीत्यांह। इयं वा अग्निरपंत्रगृहः। अस्या एवैने सदेने सादयति। सुम्नायं सुम्निनी सुम्ने मां धत्तमित्यांह॥६७॥

प्रजा वै पृशवंः सुम्नम्। प्रजामेव पृश्नात्मन्धंत्ते। धुरि धुर्यौ पात्मित्यांह। जायापत्योगींपीथायं। अग्नेऽदब्धायोऽशीततनो इत्यांह। यथायजुरेवैतत्। पाहि माऽद्य दिवः पाहि प्रसिंत्यै पाहि दुरिष्ट्यै पाहि दुंरद्मन्यै पाहि दुर्श्वरितादित्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। अविषन्नः पितुं कृणु सुषदा योनिक् स्वाहेतींध्मस्ंवृश्चनान्यन्वाहार्यपर्चनेऽभ्याधार्य फलीकरणहोमं जुंहोति। अतिरिक्तानि वा इंध्मसं वृश्चनानि॥६८॥

अतिरिक्ताः फर्लीकरणाः। अतिरिक्तमाज्योच्छेषणम्। अतिरिक्त पुवातिरिक्तं दधाति। अथो अतिरिक्तेनैवातिरिक्तमास्वाऽवं रुन्धे। वेदिर्देवेभ्यो निर्लायत। तां वेदेनान्वंविन्दन्। वेदेन् वेदिं विविदुः पृथिवीम्। सा पंप्रथे पृथिवी पार्थिवानि। गर्भं विभर्ति भुवंनेष्वन्तः। ततो यज्ञो जायते विश्वदानिरिति पुरस्ताध्स्तम्बयज्ञुषो वेदेन् वेदि सम्मार्ष्ट्यनुंवित्त्यै॥६९॥

अथो यद्वेदश्च वेदिश्च भवंतः। मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। प्रजापंतेर्वा एतानि श्मश्रूंणि। यद्वेदः। पित्रंया उपस्थ आस्यंति। मिथुनमेव कंरोति। विन्दते प्रजाम्। वेद॰ होताऽऽहंवनीयांथ्स्तृणन्नेति। यज्ञमेव तथ्सन्तंनोत्योत्तंरस्मादर्थमासात्। त॰ सन्तंतमुत्तंरेऽर्धमास आलंभते॥७०॥

तं कालेकांल आगंते यजते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। स त्वा अध्वर्युः स्याँत्। यो यतो यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयतीति। वाताद्वा अध्वर्युर्य्ज्ञं प्रयुङ्के। देवां गातुविदो गातुं वित्वा गातुमितेत्यांह। यतं एव यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयति। प्रति तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजंमानः॥७१॥

तिष्ठतीमे लोका गंमयति द्यौर्वृष्टिमेवावं रुन्धे पूर्वधंत्था इत्यांहु समिष्ट्यै भागुधेर्यन्थत्तमित्यांहु वा ईथ्मसुं वृश्चनान्यन्वित्त्यै लभते यर्जमानः॥======[९]

यो वा अयंथादेवतं युज्ञम्प्पचरित। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवित। यो यंथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृश्च्यते। वसीयान्भवित। वारुणो वै पार्शः। इमं विष्यांमि वर्रणस्य पाश्मित्यांह। वरुणपाशादेवैनां मुश्चित। स्वितृप्रंसूतो यथादेवतम्॥७२॥

न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। धातुश्च योनौ सुकृतस्यं लोक इत्यांह। अग्निर्वे धाता। पुण्यं कर्म सुकृतस्यं लोकः। अग्निरेवैनां धाता। पुण्ये कर्मणि सुकृतस्यं लोके दंधाति। स्योनं में सह पत्यां करोमीत्यांह। आत्मनश्च यर्जमानस्य चानौत्यै सन्त्वायं। समायुंषा सं प्रजयेत्यांह॥७३॥

आमेवैतामा शाँस्ते पूर्णपात्रे। अन्ततोऽनुष्टुभाँ। चतुंष्पद्वा एतच्छन्दः प्रतिष्ठितं पित्नियै पूर्णपात्रे भविति। अस्मिन्नोके प्रति तिष्ठानीति। अस्मिन्नोक लोके प्रति तिष्ठति। अथो वाग्वा अनुष्टुक्। वाङ्किथुनम्। आपो रेतः प्रजननम्। एतस्माद्वै मिथुनाद्विद्योत्तमानः स्तुनयन्वर्षित। रेतः सिश्चन्॥७४॥

पुरिवेषो वा पुष वनस्पतीनाम्। यदुंपवेषः। य पुवं वेदं। विन्दते परिवेष्टारम्।

तमुंत्करे। यं देवा मंनुष्येषु। उपवेषमधारयन्। ये अस्मदपं चेतसः। तानस्मभ्यंमिहा कुरु। उपवेषोपं विड्रि नः॥७६॥

प्रजां पृष्टिमथो धनम्। द्विपदो नृश्चतुंष्पदः। ध्रुवाननंपगान्कुर्वितिं पुरस्तांत्प्रत्यश्चमुपं गृहति। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः शूद्रा अवस्यन्ति। स्थविमृत उपंगूहति। अप्रंतिवादिन एवैनांन्कुरुते। धृष्टि्वा उपवेषः। शुचर्तो वज्रो ब्रह्मणा सश्चितः। योपंवेषे शुक्। साऽमुमृंच्छतु यं द्विष्म इति॥७७॥

अथाँस्मै नाम् गृह्य प्रहंरित। निर्मुन्नुंद ओकंसः। सपत्नो यः पृंतन्यितं। निर्बाध्येन हिविषां। इन्द्रं एणं परांशरीत्। इहि तिस्रः पंरावतः। इहि पश्च जना अति। इहि तिस्रोऽतिं रोचनायावंत्। सूर्यो असंद्विव। पुरमान्त्वां परावतम्॥७८॥

इन्द्रों नयतु वृत्रहा। यतो न पुन्रायंसि। शृश्वतीभ्यः समाभ्य इतिं। त्रिवृद्वा एष वज्रो ब्रह्मणा स॰शितः। शुचैवैनंं विध्वा। एभ्यो लोकेभ्यों निर्णुद्यं। वज्रेण ब्रह्मणा स्तृणुते। हृतोंऽसाववंधिष्मामुमित्यांहु स्तृत्यैं। यं द्विष्यात्तं ध्यांयेत्। तृतीयः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

शुचैवैनंमर्पयति॥७९॥

प्रत्युष्टं दिवः शिल्पमर्यज्ञो घृतं चं देवासुराः स पुतिमन्द्र आपौं देवीर्श्विना धिर्णिया अथु सुचौ यो वा अर्यथादेवतं परिवेषो वा एकांदश॥११॥
प्रत्युष्टमर्यज्ञ पुषा हि विश्वेषां देवानामूर्जा पृथिवीमथो रक्षसान्तां प्रजातिं द्वाभ्यां तं कालेकांले नवसप्ततिः॥७९॥
प्रत्युष्टमर्पयति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

ब्रह्मणे ब्राह्मणमालंभते। क्षुत्रायं राज्जन्यम्। मुरुद्भो वैश्यम्। तपंसे शूद्रम्। तमंसे तस्करम्। नारंकाय वीर्हणम्। पाप्मने क्रीबम्। आक्रयायांयोगूम्। कामांय पुङ्श्चलूम्। अतिंकुष्टाय मागुधम्॥१॥

गीतायं सूतम्। नृत्तायं शैलूषम्। धर्माय सभाचरम्। नुर्मायं रेभम्। निरंष्ठायै भीमुलम्। हसाय कारिम्। आनुन्दायं स्त्रीषुखम्। प्रमुदं कुमारीपुत्रम्। मेधायैं रथकारम्। धैर्याय तक्षाणम्॥२॥

श्रमांय कौलालम्। मायायैं कार्मारम्। रूपायं मणिकारम्। शुभें वपम्। शुर्व्याया इषुकारम्। हेत्यै धंन्वकारम्। कर्मणे ज्याकारम्। दिष्टायं रञ्जसर्गम्। मृत्यवे मृगुयुम्। अन्तंकाय श्वनितम्॥३॥ स्न्थयं जारम्। गेहायोपपतिम्। निर्ऋंत्यै परिवित्तम्। आर्त्यं परिविविदानम्। अराध्यै दिधिषूपतिम्। पवित्राय भिषजम्। प्रज्ञानाय नक्षत्रद्र्शम्। निष्कृत्यै पेशस्कारीम्। बलायोपदाम्। वर्णायानूरुधम्॥४॥

न्दीभ्यः पौञ्जिष्टम्। ऋक्षीकाँभ्यो नैषांदम्। पुरुष्ट्याघ्रायं दुर्मदम्। प्रयुद्ध उन्मत्तम्। गुन्धुर्वाफ्सुराभ्यो ब्रात्यम्। सुर्पदेवजनभ्योऽप्रतिपदम्। अवेभ्यः कित्वम्। इर्यतांया अकितवम्। पिशाचेभ्यो बिदलकारम्। यातुधानैभ्यः कण्टककारम्॥५॥

उथ्मादेभ्यः कुङ्मा। प्रमुदे वामनम्। द्वाभ्यः स्नामम्। स्वप्नायान्थम्। अर्थर्माय बिधरम्। संज्ञानाय स्मरकारीम्। प्रकामोद्यायोपसदम्। आशिक्षायै प्रश्जिनम्। उपशिक्षायां अभिप्रश्जिनम्। मुर्यादाये प्रश्जविवाकम्॥६॥

ऋत्यैं स्तेनहृंदयम्। वैरंहत्याय् पिशुंनम्। विवित्त्यै क्षृत्तारम्। औपंद्रष्टाय सङ्गृहीतारम्। बलांयानुचरम्। भूम्ने पंरिष्कुन्दम्। प्रियायं प्रियवादिनम्। अरिष्ट्या अश्वसादम्। मेधांय वासः पल्पूलीम्। प्रकामायं रजयित्रीम्॥७॥ भायै दार्वाहारम्। प्रभायां आग्नेन्थम्। नार्कस्य पृष्ठायांभिषेक्तारम्। ब्रध्नस्यं विष्टपाय पात्रनिर्णेगम्। देवलोकायं पेशितारम्। मनुष्यलोकायं प्रकरितारम्। सर्वेभ्यो लोकभ्यं उपसेक्तारम्। अवंत्ये वधायोपमन्थितारम्। सुवर्गायं लोकायं भागद्घम्। वर्षिष्ठाय नार्काय परिवेष्टारम्॥८॥

अर्मेभ्यो हस्तिपम्। ज्वायांश्वपम्। पुष्ट्यें गोपालम्। तेजंसेऽजपालम्। वीर्यायाविपालम्। इरांयै कीनाशम्। कीलालांय सुराकारम्। भुद्रायं गृहुपम्। श्रेयंसे वित्तधम्। अध्यंक्षायानुक्षुत्तारम्॥९॥

मृन्यवेऽयस्तापम्। क्रोधाय निस्रम्। शोकायाभिस्रम्। उत्कूलविकूलाभ्यां त्रिस्थिनम्। योगाय योक्तारम्। क्षेमाय विमोक्तारम्। वपुषे मानस्कृतम्। शीलायाञ्जनीकारम्। निर्ऋत्यै कोशकारीम्। यमायासूम्॥१०॥

यम्यै यमुसूम्। अर्थर्वभ्योऽवंतोकाम्। संवथ्सरायं पर्यारिणीम्। परिवथ्सराया-विजाताम्। इदावथ्सरायांपुस्कद्वंरीम्। इद्वथ्सरायातीत्वंरीम्। वथ्सराय विजंर्जराम्। संवथ्सराय पलिक्नीम्। वनाय वनपम्। अन्यतोरण्याय दावपम्॥११॥

सरोभ्यो धैवरम्। वेशंन्ताभ्यो दाशम्। उपस्थावंरीभ्यो बैन्दम्। नुङ्गलाभ्यः शौष्कुलम्। पार्याय कैवर्तम्। अवार्याय मार्गारम्। तीर्थेभ्यं आन्दम्। विषंमेभ्यो मैनालम्। स्वनेभ्यः पर्णकम्। गुहाँभ्यः किरातम्। सानुभ्यो जम्भकम्। पर्वतेभ्यः किम्पूंरुषम्॥१२॥

प्रतिश्रुत्काया ऋतुलम्। घोषाय भूषम्। अन्ताय बहुवादिनम्। अनुन्ताय मूकम्। महंसे वीणावादम्। क्रोशांय तूणवध्मम्। आक्रन्दायं दुन्दुभ्याघातम्। अवरस्परायं शङ्ख्यमम्। ऋभुभ्योजिनसन्धायम्। साध्येभ्यंश्चर्मम्णम्॥१३॥

बीभुथ्सायै पौल्कुसम्। भूत्यै जागरुणम्। अभूत्यै स्वपुनम्। तुलायै वाणिजम्। वर्णाय हिरण्यकारम्। विश्वेभ्यो देवेभ्यः सिध्मलम्। पृश्चाद्दोषायं ग्लावम्। ऋत्यै जनवादिनम्। व्यृंद्धा अपगुल्भम्। सुरुशुरायं प्रच्छिदम्॥१४॥

हसाय पु श्रुश्रुलूमा लेभते। वीणावादं गणेकं गीतायं। यादंसे शाबुल्याम्। नुर्मायं

भद्रवृतीम्। तूण्वध्मं ग्रांमृण्यं पाणिसङ्घातं नृत्तायं। मोदायानुक्रोशंकम्। आन्नदायं तल्वम्॥१५॥

अक्षराजायं कित्वम्। कृतायं सभाविनम्। त्रेतांया आदिनवदुर्शम्। द्वाप्रायं बिहुः सदम्। कलंये सभास्थाणुम्। दुष्कृतायं चरकांचार्यम्। अध्वंने ब्रह्मचारिणम्। पिशाचेभ्यः सैलुगम्। पिपासायं गोव्यच्छम्। निर्ऋत्ये गोघातम्। क्षुधे गोविकृतम्। क्षुत्तृष्णाभ्यान्तम्। यो गां विकृन्तंन्तं मार्सं भिक्षंमाण उपतिष्ठंते॥१६॥

भूम्यै पीठस्पिणमा लेभते। अग्नयेऽर्स्सलम्। वायवे चाण्डालम्। अन्तरिक्षाय वश्यनिर्तिनम्। दिवे खेलतिम्। सूर्याय हर्यक्षम्। चन्द्रमंसे मिर्मिरम्। नक्षेत्रेभ्यः किलासम्। अहे शुक्रं पिङ्गलम्। रात्रियै कृष्णं पिङ्गाक्षम्॥१७॥

वाचे पुरुषमा लेभते। प्राणमंपानं व्यानमुंदानः संमानं तान् वायवैं। सूर्याय चक्षुरा लेभते। मनंश्चन्द्रमंसे। दिग्भ्यः श्रोत्रम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१८॥ अथैतानरूपेभ्य आलेभते। अतिहस्वमितदीर्घम्। अतिकृशमत्यः सलम्। चतुर्थः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

अतिंशुक्कमितिंकृष्णम्। अतिंश्वक्षणमितिंलोमशम्। अतिंकिरिटमितिंदन्तुरम्। अतिंमिर्मिर्मितेमेमिषम्। आशायैं जामिम्। प्रतीक्षायैं कुमारीम्॥१९॥

ब्रह्मणे गीताय श्रमाय सुन्धर्ये नुदीभ्यं उथ्सादेभ्य ऋत्यै भाया अमैँभ्यो मुन्यवे युम्ये दशदशु सरौँभ्यो द्वादंश प्रतिश्रुत्काये वीभृथ्सायै दशदशु हसाय सप्ताक्षराजाय त्रयोदश भुम्ये दशं वाचे पडथ नवैकान्नविर्शातिः॥१९॥

ब्रह्मणे यम्यै नवंदश॥१९॥

ब्रह्मणे कुमारीम्॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

स्तयं प्रपंद्ये। ऋतं प्रपंद्ये। अमृतं प्रपंद्ये। प्रजापंतेः प्रियां त्नुव्मनाँताँ प्रपंद्ये। इदम्हं पंश्चद्येन् वर्जेण। द्विषन्तं भ्रातृंव्यमवं क्रामामि। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। भूर्भुवः स्वंः। हिम्॥१॥

सुत्यं दर्श**ा————[**१]

प्र वो वाजां अभिद्यंवः। ह्विष्मंन्तो घृताच्यां। देवाञ्जिंगाति सुम्नयुः। अग्न आयांहि वीतयें। गृणानो ह्व्यदांतये। नि होतां सिथ्स बर्हिषिं। तं त्वां सिमिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामिस। बृहच्छोंचा यविष्ठ्य। स नः पृथः श्रवाय्यम्॥२॥

अच्छां देव विवासिस। बृहदंग्ने सुवीर्यम्। ईडेन्यों नम्स्यंस्तिरः। तमार्श्सि दर्शतः। सम्ग्रिरिध्यते वृषां। वृषों अग्निः सिमध्यते। अश्वो न देववाहंनः। तर ह्विष्मंन्त ईडते। वृषंणं त्वा व्यं वृषन्। वृषांणः सिमधीमहि॥३॥

सुऋतुम्। समिध्यमानो अध्वरे। अग्निः पांवक ईड्यः। शोचिष्केशस्तमीमहे। समिद्धो अग्न आहुत। देवान् यंक्षि स्वध्वर। त्वर हि हंव्यवाडसिं। आ जुंहोत दुवस्यतं। अग्निं प्रयत्येध्वरे। वृणीध्वर हंव्यवाहंनम्। त्वं वर्रुण उत मित्रो अंग्ने। त्वां वंधन्ति मृतिभिवसिष्ठाः। त्वे वसुं सुषणनानि सन्तु। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥४॥ अग्ने महा अंसि ब्राह्मण भारत। असावसौं। देवेद्धो मन्विंद्धः। ऋषिष्टुतो विप्रांनुमदितः। कुविशस्तो ब्रह्मंस शितो घृताहंवनः। प्रणीर्यज्ञानांम्। र्थारेध्वराणांम्। अतूर्तो होतां। तूर्णिर्हव्यवाट्। आस्पात्रं जुहूर्देवानांम्॥५॥

अग्ने दीर्घतं बृहत्। अग्निं दूतं वृंणीमहे। होतांरं विश्ववंदसम्। अस्य यज्ञस्यं

चमसो देवपानः। अरार इंवाग्ने नेमिर्देवाङ्स्त्वं परिभूरसि। आ वंह देवान् यजमानाय। अग्निमंग्न आवंह। सोममावंह। अग्निमावंह। प्रजापितिमावंह। अग्नीषोमावावंह। इन्द्राग्नी आवंह। इन्द्रमावंह। महेन्द्रमावंह। देवार आज्यपार पश्चमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

आवंह। अग्नि होत्रायाऽऽवंह। स्वं मंहिमानुमावंह। आ चौग्ने देवान् वहं। सुयजां च यज जातवेदः॥६॥

देवानामिन्द्रमा वंह षट् चं॥∎ अग्निर्होता वेत्वग्निः। होत्रं वैत्तु प्रावित्रम्। स्मो वयम्। साधु ते यजमान देवताँ।

घृतवंतीमध्वर्यो सुचमास्यंस्व। देवायुवं विश्ववाराम्। ईडामहै देवा ईडेन्यान्। नमस्यामं नमस्यान्। यजांम यज्ञियान्॥७॥

अग्निरहोता नवं॥ समिधों अग्न आज्यंस्य वियन्तु। तनूनपांदग्न आज्यंस्य वेतु। इडो अंग्न आज्यंस्य वियन्तु। बुर्हिरंग्नु आज्यंस्य वेतु। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहा सोमम्। स्वाहा-ऽग्निम्। स्वाहाँ प्रजापंतिम्। स्वाहाऽग्नीषोमौँ। स्वाहेँन्द्राग्नी। स्वाहेन्द्रम्ँ। स्वाहां महेन्द्रम्। स्वाहां देवा ४ औंज्यपान्। स्वाहाऽग्नि ४ होत्राञ्जुंषाणाः। अग्न आज्यंस्य वियन्तु॥८॥

इन्द्राग्नी पर्श्व च।

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनत्। द्रविणस्युर्विपन्ययां। सिमंद्धः शुक्र आहुंतः। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। त्व॰ सोमासि सत्पंतिः। त्व॰ राजोत वृंत्रहा। त्वं भद्रो असि कर्तुः। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषों वेतु। अग्निः प्रवेन जन्मंना। शुम्भानस्त्नुवृङ् स्वाम्। क्विविप्रेण वावृधे। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। सोमं गीर्भिष्ट्वां व्यम्। वर्धयांमो वचोविदः। सुमृडीको न आविंश। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषों वेतु॥९॥

अग्निर्मूर्धा दिवः कुकुत्। पतिः पृथिव्या अयम्। अपार रेतारेसि जिन्वति। भुवो युज्ञस्य रजंसश्च नेता। यत्रां नियुद्धिः सर्चसे शिवाभिः। दिवि मूर्धानं दिधषे

सुवर्षाम्। जिह्वामंग्ने चकृषे हव्यवाहम्। प्रजांपते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जहुमस्तं नो अस्तु॥१०॥

वय इस्याम् पतंयो रयीणाम्। स वेंद पुत्रः पितर् समातरम्। स सूनुर्भुवथ्स

भुंवत्पुनंर्मघः। स द्यामौर्णोद्नतिरिक्ष्यः स सुवंः। स विश्वा भुवो अभव्थस आभंवत्। अग्नीषोमा सवेदसा। सहूंती वनत्ङ्गिरंः। सन्देवत्रा बंभूवथुः। युवमेतानि दिवि रोचनानि। अग्निश्चं सोम् सर्ऋतू अधत्तम्॥११॥

युव सिन्धू रे र्भिशंस्तेरवद्यात्। अग्नीषोमावमुंश्चतं गृभीतान्। इन्द्रौंग्नी रोचना दिवः। परि वाजेषु भूषथः। तद्वौश्चेति प्रवीर्यम्। श्र्ञथंद्वृत्रमुत संनोति वाजम्। इन्द्रा यो अग्नी सहुंरी सप्यात्। इर्ज्यन्तां वस्व्यंस्य भूरैः। सहंस्तमा सहंसा वाजयन्तां। एन्द्रं सानसि रियम्॥१२॥

स्जित्वांन १ सदासहम्। वर्षिष्ठमूतये भर। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रून्। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिणेना वसूंनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतींनाम्। महा १ इन्द्रो य ओजंसा। पूर्जन्यो वृष्टिमा १ इंव। स्तोमैंर्वथ्सस्यं वावृधे। महा १ इन्द्रो नृवदाचंर्षणिप्राः॥१३॥

उत द्विबर्हां अमिनः सहोभिः। अस्मृद्रियंग्वावृधे वीर्याय। उरुः पृथुः सुकृतः

कर्तृभिर्भूत्। पिप्रीहि देवा र उंश्तो यंविष्ठ। विद्वा र ऋतू र र्ऋतुपते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज् स्तेभिरग्ने। त्वर होतृंणाम् स्यायंजिष्ठः। अग्नि र स्विष्टकृतम्। अयांडग्निरग्नेः प्रिया धामांनि। अयादथ्सोमस्य प्रिया धामांनि॥१४॥

अयांड्ग्नेः प्रिया धामांनि। अयांद्वजापंतेः प्रिया धामांनि। अयांड्ग्नीषोमंयोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्राग्नियोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्रस्य प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्रस्य प्रिया धामांनि। अयांड्वानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुंः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं मंहिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवंदाः। जुषता हिवः। अग्ने यद्द्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्वर हि यज्वा। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। ह्व्या वंह यविष्ठ या ते अद्या१५॥

उपहूत रथन्तर सह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर सह पृथिव्या ह्वं मा उपंहृत वामदेव्य सहान्तरिक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तरिक्षेण। ह्यताम्।

उपहूतं बृहथ्सह दिवा। उपं मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्राः। उपं मा सप्त होत्रां ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥१६॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सरखां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपो अस्मा इडां ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। मानुवी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृतुमुपंहृतम्॥१७॥

दैव्यां अध्वर्यव उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंतिं वर्धान्। उपंहूते द्यावांपृथिवी। पूर्वजे ऋतावरी। देवी देवपुंत्रे। उपंहूतोऽयं यजमानः। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूतः। भूयंसि हिव्षष्करंण उपंहूतः। दिव्ये धामृन्नुपंहूतः। इदं में देवा हिवर्जुषन्तामिति तस्मिन्नुपंहूतः। विश्वंमस्य प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहूतस्योपंहूतः॥१८॥

देवं बर्हिः। वसुवनं वसुधयंस्य वेतु। देवो नराशरसंः। वसुवनं वसुधयंस्य वेतु। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मन्द्रः कविः। सत्यमन्मायजी होतां। होतुंरहोतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयांट। यार अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमध्सत। तार संसनुषीर होत्रान्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होता-ऽमूः। वसुवनं वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि॥१९॥

इदं द्यांवापृथिवी भुद्रमंभूत्। आर्ध्मं सूक्तवाकम्। उत नंमोवाकम्। ऋध्यास्मं सूक्तोच्यंमग्ने। त्वश् सूक्तवागंसि। उपंश्रितो दिवः पृथिव्योः। ओमंन्वती तेऽस्मिन्

युज्ञे यंजमान् द्यावांपृथिवी स्तांम्। शृङ्गये जीरदांन्। अत्रंस्रू अप्रवेदे। उरुगंव्यूती अभयं कृतौ॥२०॥

वृष्टिद्यांवा रीत्यांपा। शम्भुवौं मयोभुवौं। ऊर्जस्वती च पयंस्वती च। सूप्चरणा चं स्वधिचरणा चं। तयोराविदिं। अग्निरिद॰ ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोऽकृत। सोमं इद श्ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्निरिदश् हविरंजुषत॥२१॥

अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। प्रजापंतिरिदः ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। अग्नीषोमांविदः ह्विरंजुषताम्। अवींवृधेतां महो ज्यायोंऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदः ह्विरंजुषेताम्। अवींवृधेतां महो ज्यायोंऽकाताम्। इन्द्रं इदः ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। महेन्द्र इदः हविरंजुषत॥२२॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। देवा आँज्यपा आज्यंमजुषन्त। अवीवृधन्त् महो ज्यायोऽक्रत। अग्निरहोत्रेणेद॰ ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अस्यामृध्द्धोत्रांयान्देवङ्गमायांम्। आशांस्तेऽयं यजंमानोऽसौ। आयुरा शांस्ते। सुप्रजास्त्वमा शांस्ते। सुजात्वन्स्यामा शांस्ते॥२३॥

उत्तरान्देवयुज्यामा शाँस्ते। भूयों हिव्ष्करंणमा शाँस्ते। दिव्यं धामा शाँस्ते। विश्वं प्रियमा शाँस्ते। यद्नेनं हिविषाऽऽशाँस्ते। तदंश्यात्तदंध्यात्। तदंस्मै देवा रांसन्ताम्। तद्ग्रिर्देवो देवेभ्यो वनंते। वयम्ग्रेर्मानुषाः। इष्टं च वीतं च। उभे च नो द्यावांपृथिवी अरहंसस्पाताम्। इह गतिर्वामस्येदं च। नमो देवेभ्यः॥२४॥

अभ्युं कृतांवकृताग्निरिद॰ ह्विरंजुषत महेन्द्र हुद॰ ह्विरंजुषत सजातवन्स्यामा शाँस्ते वीतं च त्रीणिं च॥————[१०]

आप्यायस्व सन्तें। इह त्वष्टांरमग्रियं तन्नंस्तुरीपम्ं। देवानां पत्नीरुश्तीरंवन्तु नः। प्रावंन्तु नस्तुजये वाजंसातये। याः पार्थिवासो या अपामिषं व्रते। ता नों देवीः सुहवाः शर्म यच्छत। उत ग्ना वियन्तु देवपंतीः। इन्द्राण्यंग्नाय्यश्विनी राट्। आ रोदंसी वरुणानी श्रंणोतु। वियन्तुं देवीर्य ऋतुर्जनीनाम्॥२६॥

अग्निर्होतां गृहपंतिः स राजां। विश्वां वेद् जिनेमा जातवेदाः। देवानांमुत यो मर्त्यानाम्। यिजेष्टः स प्र यंजतामृतावां। व्यमुं त्वा गृहपते जनांनाम्। अग्ने अर्कर्म समिधां बृहन्तम्। अस्थूरि णो गार्हंपत्यानि सन्तु। तिग्मेनं नुस्तेर्जसा सःशिंशाधि॥२७॥

उपहूत १ रथन्तर १ सह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर १ सह पृथिव्या ह्वंयताम्।

उपहूतं वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहृतं बृहथ्मह दिवा। उपं मा बृहथ्मह दिवा ह्वंयताम्। उपंहृताः सप्त होत्राः। उपं मा सप्त होत्रां ह्वयन्ताम्। उपंहृता धेनुः सहर्षभा। उपं मा धेनुः सहर्षभा ह्वयताम्॥२८॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सर्खां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपो अस्मा॰ इडां ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। मानुवी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृत्मुपंहूतम्॥२९॥

दैव्यां अध्वर्यव उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः। य इमं युज्ञमवान्। ये युज्ञपंत्रीं

सुत्यं प्रवोऽग्ने महानुग्निरहोतां समिधोऽग्निर्वृत्राण्यग्निर्मूर्धोपहूतं देवं बुरहिरिदं द्यावापृथिवी तच्छुं योरा प्यायस्वोपहूतऋयीदश॥१३॥

स्तयं वयः स्याम वृष्टिद्यांवा त्रिर्शत्॥३०॥

सत्यमुपंहता॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अञ्जन्ति त्वामंध्वरे देवयन्तः। वनस्पते मधुना दैव्येन। यदूर्ध्वस्तिष्ठाद्वविणेह धंत्तात्। यद्वा क्षयो मातुर्स्या उपस्थै। उच्छ्रंयस्व वनस्पते। वर्ष्मन्पृथिव्या अधि। सुमिती मीयमानः। वर्चोधा यज्ञवाहसे। समिद्धस्य श्रयंमाणः पुरस्तात्। ब्रह्मं वन्वानो अजर्र सुवीरम्॥१॥

आरे अस्मदमंतिं बाधंमानः। उच्छ्रंयस्व मह्ते सौभंगाय। ऊर्ध्व ऊषुणं ऊतयें। तिष्ठां देवो न संविता। ऊर्ध्वो वाजंस्य सर्निता यद्श्विभिः। वाघद्विर्विह्वयांमहे। ऊर्ध्वो नः पाह्यश्हंसो नि केतुनां। विश्वश् समृत्रिणंन्दह। कुधी न ऊर्ध्वां च रथांय जीवसें। विदा देवेषुं नो दुवंः॥२॥

जातो जांयते सुदिनत्वे अह्नाँम्। समयं आ विदथे वर्धमानः। पुनन्ति धीरां अपसो मनीषा। देवया विप्र उदियर्ति वाचम्। युवां सुवासाः परिवीत् आगाँत्। स उ श्रेयांन्भवित जायंमानः। तं धीरांसः क्वय उन्नंयन्ति। स्वाधियो मनसा देवयन्तः। पृथुपाजा अमर्त्यः। घृतिनिर्णिख्स्वांहुतः। अग्निर्यज्ञस्यं हव्यवाद। तः स्वाधो यतः स्रुंचः। इत्था धिया यज्ञवंन्तः। आचं ऋरिग्नमूतयें। त्वं वर्रुण उत मित्रो अंग्ने। त्वां वर्धन्ति मृतिभिर्वसिष्ठाः। त्वे वस् सुषण्नानि सन्तु। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥३॥

होतां यक्षदग्नि समिधां सुषमिधा समिद्धं नाभां पृथिव्याः संङ्गथे वामस्यं। वर्ष्मन्दिव इडस्पदे वेत्वाऽऽज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षुत्तनूनपांतुमदितेुर्गर्भं भुवंनस्य गोपाम्। मध्वाद्य देवो देवेभ्यों देवयानांन्पुथो अंनक्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षन्नराश रसंं नृशस्त्रं नृशः प्रंणेत्रम्। गोभिर्वपावान्थस्याद्वीरैः शक्तीवान्नथैंः प्रथमया वा हिरंण्येश्चन्द्री वेत्वाऽऽज्यंस्य होतर्यजे। होतां यक्षद्गिमिड ईंडितो देवो देवा अवंक्षदूतो हंव्यवाडमूरः। उपेमं यज्ञमुपेमां देवो देवहूंतिमवतु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्धर्हिः सुष्टरीमोर्णम्रदा अस्मिन् युज्ञे वि च प्र चं प्रथताः स्वास्स्थं देवेभ्यः। एमेनदुद्य वसंवो रुद्रा आंदित्याः संदन्तु प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं॥४॥

होतां यक्षद्वरं ऋष्वाः कंवष्यो कोषधावनीरुदातांभीर्जिहेतां विपक्षोंभिः श्रयन्ताम्। सुप्रायणा अस्मिन् युज्ञे विश्रयन्तामृतावृधो वियन्त्वाज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षदुषासानक्तां बृहती सुपेशंसा नृइः पतिंभ्यो योनिं कृण्वाने। सङ्स्मर्यमाने इन्द्रेण देवैरेदं बर्हिः सींदतां वीतामाज्यंस्य होतर्यजी। होतां यक्षद्दैव्या होतारा मन्द्रा पोतारा कवी प्रचेतसा। स्विष्टमुद्यान्यः करिंदुषा स्वंभिगूर्तम्न्य ऊर्जा सत्वसेमं यज्ञं दिवि देवेषुं धत्तां वीतामाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीरपसामपस्तमा अच्छिंद्रमद्येदमपंस्तन्वताम्। देवेभ्यों देवीर्देवमपो वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्त्वष्टांरमचिष्टुमपांक रतोधां विश्रवसं यशोधाम्। पुरुरूपमकामकर्शन सुपोषः पोषैः स्याथ्सुवीरो वीरैर्वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिमुपावंस्रक्षद्धियो जोष्टार श्रिशम्त्ररंः। स्वदाथ्स्विधितर्ऋतुथाद्य देवो देवेभ्यो ह्व्यावाङ्वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्ग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्वाहा मेदंसः स्वाहां स्तोकानाः स्वाहा स्वाहांकृतीनाः स्वाहां ह्व्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवाः आंज्यपान्थ्स्वाहा-ऽग्निः होत्राञ्चंषाणा अग्न आज्यंस्य वियन्तु होत्र्यंजं॥५॥

प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं सुवीरों वीरेर्वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं चत्वारिं च (अग्निन्तनूनपांतृत्रराश॰संमृग्निमिड ईंडितो बुर्हिर्द्रं उषासानक्ता दैव्यां

समिद्धो अद्य मनुषो दुरोणे। देवो देवान् यंजिस जातवेदः। आ च वहं मित्रमहश्चिकित्वान। त्वं दतः कविरिस प्रचेताः। तननपात्पथ ऋतस्य यानानं।

मित्रमहिश्चिकित्वान्। त्वं दूतः क्विरेसि प्रचेताः। तनूनपात्पथ ऋतस्य यानान्। मध्यां समुञ्जन्थस्वंदया सुजिह्व। मन्मांनि धीभिरुत युज्ञमृन्धन्। देवत्रा चं कृणुह्यध्वरं नंः। नराशरसंस्य महिमानंमेषाम्। उपं स्तोषाम यज्ञतस्यं युज्ञैः॥६॥

ते सुऋतंवः शुचंयो धियन्थाः। स्वदंन्तु देवा उभयांनि ह्व्या। आजुह्वांन् ईड्यो वन्द्यंश्च। आयाँह्यग्ने वसुंभिः सजोषाः। त्वं देवानांमिस यह्व होताः। स एनान् यक्षीषितो यजीयान्। प्राचीनं बर्हिः प्रदिशां पृथिव्याः। वस्तोरस्या वृंज्यते अग्रे अहाँम्। व्युं प्रथते वित्रं वरीयः। देवेभ्यो अदितये स्योनम्॥७॥

व्यचंस्वतीरुर्विया विश्रंयन्ताम्। पतिंभ्यो न जनंयः शुम्भंमानाः। देवींद्वरिरो बृहतीर्विश्वमिन्वाः। देवेभ्यों भवथ सुप्रायणाः। आसुष्वयंन्ती यज्ते उपांके। उषासानक्तां सदतां नि योनौं। दिव्ये योषंणे बृहती सुंरुक्मे। अधि श्रियर्थ शुक्रपिशं दर्धाने। दैव्या होतांरा प्रथमा सुवाचां। मिमाना युज्ञं मनुषो यज्ञंध्ये॥८॥

प्रचोदयंन्ता विदर्थेषु कारू। प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशां दिशन्तां। आ नो यज्ञं भारती तूर्यमेत्। इडां मनुष्वदिह चेतयंन्ती। तिस्रो देवीर्बर्हिरेद स्योनम्। सरस्वती स्वपंसः सदन्तु। य इमे द्यावापृथिवी जिनेत्री। रूपैरिप शुद्भवनानि विश्वां। तम्द्य होतिरिषितो यजीयान्। देवं त्वष्टांरिमेह यक्षि विद्वान्॥९॥

उपावंसृज्तमन्यां सम्अन्। देवानां पार्थ ऋतुथा ह्वी॰िषं। वन्स्पितिः शिमता देवो अग्निः। स्वदंन्तु ह्व्यं मधुंना घृतेनं। सुद्यो जातो व्यंमिमीत युज्ञम्। अग्निर्देवानांमभवत्पुरोगाः। अस्य होतुः प्रदिश्यृतस्यं वाचि। स्वाहांकृत १ हविरंदन्तु देवाः॥१०॥

युक्ते स्थोनं युक्तेये विद्वानको चे। ————[३] अग्निर्होतां नो अध्वरे। वाजी सन्परिणीयते। देवो देवेषुं यज्ञियः।

परित्रिविष्ट्यंध्वरम्। यात्युग्नी र्थीरिव। आ देवेषु प्रयो दर्धत्। परि वाजपितः क्विः। अग्निर्ह्व्यान्यंक्रमीत्। दध्द्रलांनि दाशुषे॥११॥

अग्निर्होतां नो नवं॥————[४]

अजैंद्गिः। असंनुद्वाज्ञिन्नि। देवो देवेभ्यों हुव्यावाँट्। प्राञ्जोभिर्हिन्वानः। धेनांभिः कर्ल्पमानः। युज्ञस्यायुः प्रतिरन्। उप् प्रेष्यं होतः। हुव्या देवेभ्यः॥१२॥

दैव्याः शमितार उत मंनुष्या आरंभध्वम्। उपनयत् मेध्या दुरंः। आशासांना मेधंपतिभ्यां मेधम्। प्रास्मां अग्निं भंरत। स्तृणीत ब्रहिः। अन्वेनं माता मन्यताम्। अर्नु पिता। अनु भ्राता सर्गर्भ्यः। अनु सखा सर्यूंथ्यः। उदीचीनार् अस्य पदो निधंत्तात्॥१३॥

सूर्यं चक्षुंर्गमयतात्। वातं प्राणम्नववंसृजतात्। दिशः श्रोत्रम्। अन्तिरिक्षमसुम्। पृथिवी शरीरम्। एक्धाऽस्य त्वचमाच्छांतात्। पुरा नाभ्यां अपिशसों वपामृत्खिंदतात्। अन्तरेवोष्माणं वारयतात्। श्येनमंस्य वक्षः कृणुतात्। प्रशसां बाह॥१४॥

श्रुला दोषणीं। कृश्यपेवारसां। अच्छिंद्रे श्रोणीं। कृवषोरू स्रेकपंणिष्ठीवन्तां। षड्विरेशतिरस्य वङ्कयः। ता अनुष्ठ्योच्यांवयतात्। गात्रं गात्रम्स्यानूंनं कृणुतात्। ऊव्ध्यगोहं पार्थिवं खनतात्। अस्रा रक्षः सर्मृजतात्। वृनिष्ठमंस्य मा राविष्ट॥१५॥

उर्रूकं मन्यमानाः। नेद्वस्तोके तनये। रवितारवंच्छमितारः। अधिगो शमीध्वम्। सुशमि शमीध्वम्। शुमीध्वमंध्रिगो। अधिगुश्चापापश्च। उभौ देवानारं शमितारौ। ताविमं पशू श्रंपयतां प्रविद्वा सौं। यथांयथा ऽस्य श्रपंणन्तथांतथा॥१६॥

जुषस्वं स्प्रथंस्तमम्। वचों देवफ्संरस्तमम्। ह्व्या जुह्वांन आ्सिनं। इमं नों यज्ञम्मृतेषु धेहि। इमा हव्या जांतवेदो जुषस्व। स्तोकानांमग्ने मेदंसो घृतस्यं।

युज्ञम्भृतेषु धाहा इमा हूव्या जातवदा जुषस्वा स्ताकानामभ्र मदसा धृतस्या होतः प्राशान प्रथमो निषद्यं। घृतवन्तः पावक ते। स्तोकाः श्लोतन्ति मेदंसः। स्वधंमं देववीतये॥१७॥

श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम्। तुभ्य ईस्तोका घृंतश्चतंः। अग्ने विप्रांय सन्त्य। ऋषिः श्रेष्ठः सिर्मध्यसे। यज्ञस्यं प्राविता भव। तुभ्य ईश्चोतन्त्यिष्ठगो शचीवः। स्तोकासो अग्ने मेदंसो घृतस्यं। कृविश्वस्तो बृंहृता भानुनागाः। ह्व्या जुंषस्व मेधिर। ओजिंष्ठन्ते मध्यतो मेद उद्गृतम्। प्र ते व्यं दंदामहे। श्चोतंन्ति ते वसो स्तोका अधित्वचि। प्रति तान्देवशोविहि॥१८॥

देववींतय उद्भंतत्रीणिं च॥

आवृंत्रहणा वृत्रहभिः शुष्मैंः। इन्द्रं यातन्नमोभिरग्ने अर्वाक्। युव॰ राधोभिरकंवेभिरिन्द्र। अग्ने अस्मे भंवतमुत्तमेभिः। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागस्य वपाया मेदंसः। जुषेता १ हिविः। होतर्यजे। विह्यख्यन्मनंसा वस्यं इच्छन्। इन्द्रौग्नी ज्ञास उत वो सजातान्॥१९॥

नान्या युवत्प्रमंतिरस्ति मह्यम्। स वां धियं वाजयन्तींमतक्षम्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। पुरोडाशंस्य जुषेता १ हिवः। होतुर्यजं। त्वामीडते अजिरं दूत्याय। हिवष्मंन्तः सद्मिन्मानुषासः। यस्यं देवैरासंदो बुर्हिरंग्ने। अहाँन्यस्मै सुदिनां भवन्तु। होतां यक्षदुग्निम्। पुरोडाशंस्य जुषता १ हिवः। होतर्यजं॥२०॥

गीर्भिर्विपः प्रमंतिमिच्छमानः। ईट्टे र्यिं यशसं पूर्वभाजम्। इन्द्रांग्नी वृत्रहणा सुवजा। प्रणो नव्येभिस्तिरतं देष्णैः। माच्छैदा रश्मी शरिति नार्धमानाः। पितृणा श

शक्तीरनुयच्छीमानाः। इन्द्राग्निभ्यां कं वृषीणो मदन्ति। ताह्यद्री धिषणाया उपस्थै।

अग्नि॰ सुंदीति॰ सुदर्शं गृणन्तंः। नुमस्यामुस्त्वेड्यं जातवेदः। त्वां दूतमंर्ति॰ हंव्यवाहम्। देवा अंकृण्वन्नमृतंस्य नाभिम्॥२१॥

त्व इंग्ने प्रथमो मनोता। अस्या धियो अभेवो दस्महोता। त्व सीं वृषन्नकृणोर्दृष्टरीतु। सहो विश्वंस्मै सहंसे सहंध्यै। अधा होता न्यंसीदो यजीयान्। इडस्पद इषयुत्रीड्यः सन्। तं त्वा नरंः प्रथमं देवयन्तंः। महो राये चितयंन्तो अनुंग्मन्। वृतेव यन्तं बहुर्भिर्वसव्यैः। त्वे रियं जांगृवा १सो अनुंग्मन्॥२२॥

रुशन्तमृग्निं देर्शृतं बृहन्तम्। वृपावन्तं विश्वहां दीदिवा सम्। पदं देवस्य नमंसा वियन्तंः। श्रवस्यवः श्रवं आपन्नमृंक्तम्। नामांनि चिद्दिधरे यज्ञियांनि। भद्रायां ते रणयन्त सन्दंष्टौ। त्वां वंर्धन्ति क्षितयंः पृथिव्याम्। त्व र रायं उभयांसो जनानाम्। त्वं त्राता तरणे चेत्योऽभूः। पिता माता सदिमिन्मानुंषाणाम्॥२३॥ सपर्येण्यः स प्रियो विक्ष्वंग्निः। होतां मन्द्रो निषंसादा यजीयान्। तं त्वां वयं दम् आ दींदिवा सम्। उपंज्ञुबाधो नर्मसा सदेम। तं त्वां वय स्पृधियो नव्यंमग्ने। सुम्रायवं ईमहे देवयन्तंः। त्वं विशो अनयो दीद्यांनः। दिवो अंग्ने बृह्ता रोचनेनं। विशां कृविं विश्पति शर्श्वतीनाम्। नितोशंनं वृष्भं चंर्षणीनाम्॥२४॥

प्रेतीषणि मिषयंन्तं पावकम्। राजंन्तमृग्निं यंज्ञत र्रयीणाम्। सो अंग्न ईजे शशमे च मर्तः। यस्त आनंदथ्समिधां ह्व्यदांतिम्। य आहुंतिं पिर् वेदा नमोंभिः। विश्वेथ्सवामा दंधते त्वोतः। अस्मा उं ते मिहं मृहे विधेम। नमोंभिरग्ने समिधोत ह्व्यैः। वेदीसूनो सहसो गीर्भिरुक्थैः। आ ते भुद्राया र्र सुमृतौ यंतेम॥२५॥

आ यस्ततन्थ रोदंसी विभासा। श्रवोभिश्च श्रवस्यंस्तरुंत्रः। बृहद्भिर्वाजैः स्थिविरेभिर्स्मे। रेवद्भिरग्ने वित्रं वि भांहि। नृवद्धंसो सद्मिद्धेंह्यस्मे। भूरितोकाय तनयाय पृश्वः। पूर्वीरिषो बृह्तीरारे अंघाः। अस्मे भृद्रा सौश्रवसानि सन्तु। पुरूण्यंग्ने पुरुधा त्वाया। वसूंनि राजन्वसुतांते अश्याम्। पुरूणि हि त्वे पुरुवार सन्ति। अग्ने वसूं विधते राजनित्वे॥२६॥

जागुबारसो अर्तुगम्मार्त्पणाश्चरपणीनां यतिमाश्यादे चे॥———[१०] आर्भरत १ शिक्षतं वज्रबाह्। अस्मा १ ईन्द्राग्नी अवत् १ शर्चीभिः। इमे नु ते

र्श्मयः सूर्यस्य। येभिः सिपृत्वं पितरों न आयन्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य हिवषु आत्तांमुद्य। मध्यतो मेद् उद्गृतम्। पुरा द्वेषौभ्यः। पुरा पौरुषेय्या गृभः। घस्तांन्नूनम्॥२७॥

घासे अंज्ञाणां यवंसप्रथमानाम्। सुमत्क्षंराणाः शतरुंद्रियाणाम्। अग्निष्वात्तानां पीवोपवसनानाम्। पार्श्वतः श्रोणितः शिंतामृत उथ्साद्तः। अङ्गादङ्गादवंत्तानाम्। करंत एवेन्द्राग्नी। जुषेताः हिवंः। होत्र्यजं। देवेभ्यो वनस्पते ह्वीः हिरंण्यपणं प्रदिवंस्ते अर्थम्॥२८॥

प्रदक्षिणिद्रशनयां निययं। ऋतस्यं विश्व पृथिभी रिजेष्ठैः। होतां यक्षद्धनस्पितंमभिहि। पिष्टतंमया रिभेष्ठया रश्नयाधित। यत्रैन्द्राग्नियोश्छागंस्य हिवषं प्रिया धामांनि। यत्र वनस्पतें प्रिया पाथार्सेस। यत्रं देवानांमाज्यपानां

नूनमर्थं कृत्वी पाथा रसि सप्त चं॥

प्रिया धार्मानि। यत्राग्नेर्होतुंः प्रिया धार्मानि। तत्रैतं प्रस्तुत्येवोपस्तुत्ये वोपावंस्रक्षत्। रभीया समिव कृत्वी॥ २९॥

करंदेवं देवो वनस्पतिः। जुषता हिवः। होत्र्यजं। पिप्रीहि देवा उंश्तो यंविष्ठ। विद्वा ऋतू र् ऋतू र ऋतु पते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विजस्तेभिरग्ने। त्व होतृणामस्यायंजिष्ठः। होतां यक्षदिग्न स्विष्टकृतम्। अयांडिग्निरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य हिवषंः प्रिया धामांनि। अयाङ्वनस्पतेः प्रिया पाथा सि। अयाङ्वेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंदग्नेरहोतुः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवंदाः। जुषता हिवः। होत्र्यजं॥३०॥

उपों ह् यद्विदर्थं वाजिनो गूः। गीर्भिर्विप्राः प्रमंतिमिच्छमानाः। अर्वन्तो न काष्ठान्नक्षंमाणाः। इन्द्राग्नी जोहुंवतो नर्स्ते। वनस्पते रश्नयांऽभिधायं। पिष्टतंमया

धार्मानि भूरेकं च॥

वयुनांनि विद्वान्। वहं देवत्रा दिधिषो ह्वी १ षिं। प्र चंदातारंम्मृतेषु वोचः। अग्नि १ स्विष्टकृतम्। अयांड्ग्निरिन्द्राग्नियोश्छागस्य ह्विषंः प्रिया धामांनि॥३१॥

अयाङ्गन्स्पतेंः प्रिया पाथारेसि। अयाँड्वानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्रग्नेर्होतुंः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषतारे ह्विः। अग्ने यद्द्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्वर हि यज्वा। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। ह्व्या वंह यविष्ठ या तें अद्या३२॥

देवं बर्हिः सुंदेवं देवैः स्याथ्सुवीरं वीरैर्वस्तौंवृज्येताक्तोः प्रभ्रियेतात्यन्यात्राया बर्हिष्मंतो मदेम वसुवनं वसुधयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारं सङ्घाते विङ्वीर्यामंञ्छिथिरा ध्रुवा देवहूंतौ वथ्स ईमेनास्तरुण आमिंमीयात्कुमारो वा नवंजातो मैना अर्वा रेणुकंकाटः पृणंग्वसुवनं वसुधयंस्य वियन्तु यजं।

देवी उषासानकाऽद्यास्मिन् यज्ञे प्रयत्यह्वेतामपि नूनं दैवीर्विशः प्रायासिष्टा ध सुप्रींते सुधिंते वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री वसुंधिती ययोरन्या-ऽघाद्वेषा ५सि युयवदान्यावंक्षुद्वसु वार्याणि यजंमानाय वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहंती इषमूर्जमन्यावंक्षथ्सग्धिः सपींतिमन्या नवेन पूर्वन्दयंमानाः स्यामं पुराणेन् नवन्तामूर्जमूर्जाहुंती ऊर्जयंमाने अधातां वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवा दैव्या होतांरा नेष्टांरा पोतांरा हताघंश श्सावाभ्रद्धंसू वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्जा। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरिडा सर्रस्वती भारती द्यां भारत्यादित्यैरंस्पृक्षथ्सरंस्वतीम र रुद्रैर्यज्ञमांवीदिहैवेडंया वसुंमत्या सधमादं मदेम वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देवो नराशश्संस्त्रिशीर्षा षंड्क्षः शतमिदंन श्शितिपृष्ठा आदंधति सहस्रंमीं प्रवंहन्ति मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हतो बृहस्पतिः स्तोत्रमृश्विनाऽऽध्वर्यवं वसुवने वसुधेयस्यं वेतु यजं। देवो वनस्पतिर्वर्षप्रांवा घृतिनिर्णिग्द्यामग्रेणास्पृक्षदान्तरिक्षुं मध्येनाप्राः

पृथिवीमुपंरेणाद १ ही द्वस्वनं वसुधेयंस्य वेतु यर्जा। देवं ब्र्हिवारितीनां निधेधांऽसि प्रच्यंतीनामप्रंच्युतिन्नकामधरंणं पुरुस्पार्हं यशंस्वदेना ब्र्हिषाऽन्या ब्र्ही १ ष्याम वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यर्जा। देवो अग्निः स्विष्टकृष्सुद्रविणा मन्द्रः कविः सत्यमंन्माऽऽय्जी होता होतुंर्होतुरायंजीयानग्ने यान्देवानयाड्या अपिप्रेयें ते होत्रे अमंथ्यत् ता १ संस्नुषी १ होत्रां देवङ्गमान्दिवि देवेषुं यज्ञमेरयेम १ स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूवंसुवनं वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि यर्जा। ३३॥

देवं ब्रहिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवीर्द्वारंः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवी उषासानक्तां। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवी जोष्ट्रीं। वसुवनं वसुधेयंस्य

वीताम्। देवी ऊर्जाहुंती। वसुवनें वसुधेयस्यं वीताम्॥३४॥
देवा दैव्या होतांरा। वसुवनें वसुधेयंस्य वीताम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः।
वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु। देवो नराश्रश्संः। वसुवनें वसुधेयंस्य वेतु। देवो

वन्स्पतिः। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु। देवं ब्र्हिर्वारितीनाम्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु॥३५॥

देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मृन्द्रः कृविः। सृत्यमेनमायजी होताँ। होतुंर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयाँट्। या अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमेथ्सत। ता संसुनुषी होत्रान्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि॥३६॥

अग्निम्द्य होतांरमवृणीतायं यजंमानः पर्चन्यक्तीः पर्चन्युरोडाशंं ब्रध्निन्द्राग्निभ्यां छागं स्तान्तं मेंदस्तः प्रतिपचताग्रंभीष्टामवीवृधेतां पुरोडाशंन त्वाम्द्यर्षं आर्षेय ऋषीणान्नपादवृणीतायं यजंमानो बहुभ्य आ सङ्गंतेभ्य एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति ता या देवा देवदानान्यदुस्तान्यंस्मा आ च शास्वा चं गुरस्वेषितश्चं होत्रिसं भद्रवाच्यांय

प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहि॥३७॥

अुन्निमुद्येकम्ँ॥—————————————————[१५]

अञ्जन्ति होता यक्षथ्सिर्मिद्धो अद्याग्निरजैद्दैर्व्या जुपस्वा वृत्रहणा गीर्भिस्त्वः ह्याभरतुमुर्गोहु यद्देवं बुर्हिः सुंदेवं देवं बुर्हिरग्निमुद्य पर्श्वदश॥१५॥

अञ्जन्त्यग्निर्होतां नो गीर्भिरुपों हु यद्विदर्थं वाजिनः सप्तित्रिर्श्यत्॥३७॥

अञ्जन्तिं सूक्ताब्रूंहि॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

सर्वान् वा एषों ऽग्नौ कामान्प्रवेशयित। यों ऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। सयदिनिष्ठा प्रयायात्। अकांमप्रीता एनं कामा नानुप्रयायुः। अतेजा अवीर्यः स्यात्। स जुंहुयात्। तुभ्यं ता अङ्गिरस्तम। विश्वाः सुिक्षतयः पृथंक्। अग्ने कामांय येमिर् इतिं। कामांनेवास्मिन्दधाति॥१॥

कामंप्रीता एनं कामा अनु प्रयाँन्ति। तेज्ञस्वी वीर्यावान्भवति। सन्तंतिर्वा एषा यज्ञस्यं। योंऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। स यदुद्वायंति। विच्छिंत्तिरेवास्य सा। तं प्राश्चंमुद्धृत्यं। मन्सोपंतिष्ठेत। मनो वै प्रजापंतिः। प्राजापत्यो यज्ञः॥२॥

मनंसैव युज्ञ र सन्तंनोति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः। भूतिंमेवोपैति। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्ग्निरंपृक्षायंति। यावुच्छम्यंया प्रविध्येत्। यदि तावंदपृक्षायेत्। तर सम्भरेत्। इदं तु एकं पुर उं तु एकम्॥३॥

तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तनुवै चार्रुरेधि। प्रिये देवानां पर्मे जनित्र इतिं। ब्रह्मणैवैन् सम्भिरति। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यदि परस्तरामपृक्षायेत्। अनुप्रयायावस्येत्। सो एव ततः प्रायंश्चित्तः। ओषंधीर्वा एतस्यं पृश्न्ययः प्रविशति। यस्यं ह्विषं वृथ्सा अपाकृता धर्यन्ति॥४॥ तान् यदुद्यात्। यातयामा ह्विषां यजेत। यत्र दुद्यात्। यज्ञपुरुर्न्तरियात्। वायव्यां यवागूत्रिवंपत्। वायुर्वे पर्यसः प्रदापियता। स एवास्मै पयः प्रदापियति। पयो वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे॥५॥

अथोत्तंरस्मै ह्विषे वृथ्सान्पार्कुर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अन्यत्रान् वा एष देवान्भाग्धेयेन् व्यर्धयिति। ये यजंमानस्य सायं गृहमा गच्छंन्ति। यस्यं सायं दुग्धः ह्विरार्तिमार्च्छतिं। इन्द्रांय ब्रीहीन्निरुप्योपं वसेत्। पयो वा ओषंधयः। पयं प्वारभ्यं गृहीत्वोपं वसति। यत्प्रातः स्यात्। तच्छृतं कुर्यात्॥६॥ अथेतंर ऐन्द्रः पुरोडाशंः स्यात्। इन्द्रिये एवास्मैं समीचीं दधाति। पयो

वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे। अथोत्तंरस्मै ह्विषं वथ्सान्पाकुर्यात्। सैव ततः प्रायश्चित्तिः। उभयान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयिति। ये यज्ञंमानस्य सायं चं प्रातश्चं गृहमा गच्छंन्ति। यस्योभयर् ह्विरार्तिमाुर्च्छतिं॥७॥

पुन्द्रं पश्चेशरावमोदनं निर्वपेत्। अग्निं देवतानां प्रथमं येजेत्। अग्निम्खा एव देवताः प्रीणाति। अग्निं वा अन्वन्या देवताः। इन्द्रमन्वन्याः। ता एवोभर्याः प्रीणाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे। अथोत्तंरस्मै हृविषं वथ्सानपार्कुर्यात्॥८॥

सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अर्धो वा एतस्यं यज्ञस्यं मीयते। यस्य व्रत्ये-ऽह्न्यत्यंनालम्भुका भवंति। तामंपुरुध्यं यजेत। सर्वेणैव यज्ञेनं यजते। तामिष्ट्वोपं ह्वयेत। अमूहमस्मि। सा त्वम्। द्यौर्हम्। पृथिवी त्वम्। सामाहम्। ऋक्तम्। तावेहि सम्भवाव। सह रेतों दधावहै। पुर्से पुत्राय वेत्तंवै। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्यायेतिं। अर्ध एवैनामुपं ह्वयते। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥९॥

दुधाति यज्ञ उंतु एक-धर्यन्ति रुन्धे कुर्यादार्च्छत्युपाकुर्यात्पृथिवी त्वमृष्टौ चं (सर्वान् वि वै यदि परस्तुरामोपंधीरन्यतुरानुभयानुर्धो वै॥)॥————[१]

यद्विष्यंण्णेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनर्यंत्। अनायतनः स्यात्। प्राजापत्यय्चां वंल्मीकवृपायामवं नयेत्। प्राजापत्यो वै वल्मीकः। यज्ञः प्रजापतिः। प्रजापतावेव यज्ञं प्रतिष्ठापयति। भूरित्याह। भूतो वै प्रजापतिः॥१०॥

भूतिंमेवोपैति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्कीटावंपन्नेन जुहुयात्। अप्रजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेत। अनायतनः स्यात्। मध्यमेनं पूर्णेनं द्यावापृथिव्यंयूर्चाऽन्तः पिर्धि निनयेत्। द्यावापृथिव्योर्वेन्त्प्रतिष्ठापयति॥११॥

तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यदवंवृष्टेन जुहुयात्। अपंरूपमस्याऽऽत्मञ्जायेत। किलासों वास्यादंर्श्वसो वाँ। यत्प्रत्येयात्। युज्ञं विच्छिन्द्यात्। स जुंहुयात्। मित्रो जनौन्कल्पयति प्रजानन्॥१२॥

मित्रो दांधार पृथिवीमुत द्याम्। मित्रः कृष्टीरिनंमिषाऽभि चंष्टे। सृत्यायं ह्व्यं घृतवंज्जहोतेति। मित्रेणैवैनंत्कल्पयित। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्वित्तः। यत्पूर्वस्यामाहृत्या हृतायामृत्तराऽऽहृंतिः स्कन्देंत्। द्विपाद्भिः पशुभिर्यजंमानो व्यृध्येत। यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥१३॥

चतुंष्पाद्भिः पृशुभिर्यजंमानो व्यृध्येत। यत्र वेत्थं वनस्पते देवानां गृह्या नामांनि। तत्रं ह्व्यानिं गाम्येतिं वानस्पत्ययुर्चा समिधंमाधायं। तूष्णीमेव पुनंजींह्यात्। वनस्पतिनेव यज्ञस्यातां चानांतां चाऽऽहंती वि दांधार। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारः स्कन्देत्। अध्वर्यवे च यजंमानाय चाक इं स्यात्॥१४॥

यदंक्षिणा। ब्रह्मणे च यर्जमानाय चाक ई स्यात्। यत्प्रत्यक्। होत्रे च पित्रियै च यर्जमानाय चाक ई स्यात्। यदुदर्इं। अग्नीधे च पृशुभ्यश्च यर्जमानाय चाक ई स्यात्। यदंभिजुहुयात्। रुद्रौऽस्य पुशून्धातुंकः स्यात्। यन्नाभिजुहुयात्। अशौन्तुः प्रह्नियेत॥१५॥

सुवस्य बुध्नेनाभिनिदंध्यात्। मा तमो मा यज्ञस्तम्नमा यजमानस्तमत्। नमस्ते अस्त्वायते। नमों रुद्र परायते। नमो यत्रं निषीदंसि। अमुं मा हि ईसीरमुं मा हि ईसीरिति येन स्कन्देंत्। तं प्रहंरेत्। सहस्रंशृङ्गो वृषभो जातवेदाः। स्तोमंपृष्ठो घृतवान्थ्सुप्रतीकः। मा नो हासीन्मेत्थितो नेत्त्वा जहाम। गोपोषं नो वीरपोषं चे यच्छेतिं। ब्रह्मणैवैनं प्र हंरति। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥१६॥

वै प्रजापतिः स्थापयति प्रजानन्नभि जुंहुयाथस्याँद्धियेत जहांम् त्रीणिं च (यद्विष्यण्णेन प्राजापृत्यया यत्कीटा मध्यमेन् यदवंवृष्टेन् यत्पूर्वस्यां यत्पुरा प्रयाजेभ्यः

प्राङङ्गारो यद्देक्षिणा यत्प्रत्यग्यदुदङ्कं॥)॥

वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यस्याऽऽहिंताग्नेरग्निर्मथ्यमानो न जायंते। यत्रान्यं पश्येत्। ततं आहृत्यं होत्व्यम्। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भंवति। यद्यन्यन्न विन्देत्। अजायार् होत्व्यम्। आुग्नेयी वा पुषा। यदुजा।

सप्तमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

अजस्य तु नाश्जीयात्। यद्जस्याँश्जीयात्। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामंद्यात्। तस्मांद्जस्य नाश्यम्। यद्यजान्न विन्देत्। ब्राह्मणस्य दक्षिणे हस्तें होत्व्यम्। एष वा अग्निर्वैश्वान्रः। यद्ग्राह्मणः। अग्नावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भंवति॥१८॥

ब्राह्मणं तु वंस्त्ये नापं रुन्ध्यात्। यद्वाँह्मणं वंस्त्या अंपरुन्ध्यात्। यस्मिन्नेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तं भागधेयेन् व्यर्धयेत्। तस्माँद्वाह्मणो वंस्त्ये नाप्रध्येः। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। दुर्भस्तम्बे होत्व्यम्। अग्निवान् वै दंर्भस्तम्बः। अग्नावेवास्याँग्निहोत्र हुतं भवति। दुर्भा स्तु नाध्यांसीत॥१९॥

यद्दर्भान्ध्यासीत। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामध्यांसीत। तस्माँद्दर्भा नाध्यांसित्व्याः। यदिं दुर्भान्न विन्देत्। अपसु होत्व्यम्। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांस्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भविति। आपुस्तु न परिचक्षीत। यदापः

परिचक्षीत॥२०॥

यामेवाफ्स्वाहुंतिं जुहुयात्। तां परिचक्षीत। तस्मादापो न परिचक्ष्याः। मेध्यां च वा एतस्यांमेध्या च तन्वौ स॰ सृज्येते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्न्यैर्ग्निभिर्ग्नयः स॰सृज्यन्ते। अग्नये विविचये पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। मेध्यां चैवास्यांमेध्यां च तन्वौ व्यावंतियति। अग्नये व्रतपंतये पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। अग्निमेव व्रतपंति इस्वनं भाग्धेयेनोपं धावति। स एवैनं व्रतमा लम्भयति॥२१॥

गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंकः। अग्निरिन्द्रस्त्वष्टा बृह्स्पतिः। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतत्। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैः। रेतो वा एतद्वाजिनमाहिताग्नेः। यदिग्निहोत्रम्। तद्यथ्स्रवेत्। रेतो उस्य वाजिन्ड् स्रवेत्। गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंकरित्यांह। रेतं एवास्मिन्वाजिनं दधाति॥२२॥

अग्निरित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। इन्द्र इत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। त्वष्टेत्यांह। त्वष्टा वै पंशूनां मिथुनानार् रूपुकृत्। रूपमेव पशुषुं दधाति। बृहस्पतिरित्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृहस्पतिंः। ब्रह्मणैवास्मैं प्रजाः प्र जनयति। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतदित्यांह। अस्यामेवैनत्प्रतिष्ठापयति। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैरित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥२३॥

अजाऽग्रावेवास्यांग्रिहोत्र हतं भंवति भवत्यासीत परिचक्षींत लम्भयति दधाति देवानां बृहस्पतिः पश्चं च (वि वै यद्यन्यमजार्यां ब्राह्मणस्यं दर्भस्तम्बँऽफ्स्

होतव्यम्॥)

याः पुरस्तौत्प्रस्रवंन्ति। उपरिष्टाथ्सर्वतंश्च याः। ताभी रश्मिपंवित्राभिः। श्रद्धां यज्ञमा रंभे। देवां गात्विदः। गातुं यज्ञायं विन्दत। मनसस्पतिना देवेनं। वातां युज्ञः प्र युंज्यताम्। तृतीयंस्यै दिवः। गायत्रिया सोम आभृंतः॥२४॥

सोमपीथाय सन्नियितुम्। वर्कलमन्तरमा दंदे। आपों देवीः शुद्धाः स्थं। इमा पात्रांणि शुन्धत। उपातङ्क्यांय देवानांम्। पूर्णवल्कमुत शुंन्धत। पयों गृहेषु पयों अघ्नियासुं। पयों वथ्सेषु पय इन्द्रांय हिवषें ध्रियस्व। गायत्री पंर्णवल्केनं। पयः सोमं करोत्विमम्॥२५॥

अभिं गृह्णामि सुरथं यो मयोभः। य उद्यन्तंमारोहंति सूर्यमहें। आदित्यं ज्योतिषां ज्योतिंरुत्तमम्। श्वो यज्ञायं रमतां देवतांभ्यः। वसूत्रुद्रानांदित्यान्। इन्द्रेण सह देवतांः। ताः पूर्वः परि गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इमामूर्जं पश्चद्शीं ये प्रविष्टाः। तान्देवान्परि गृह्णामि पूर्वः॥२६॥

अग्निर्हं व्यवाडिह ताना वंहतु। पौर्णमास हिविरिदमेषां मियं। आमावास्य हिविरिदमेषां मियं। अन्तराऽग्नी पृशवंः। देवस स्मदमा गमन्। तान्पूर्वः पिरं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इह प्रजा विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। ताः पूर्वः पिरं गृह्णामि॥२७॥

स्व आयतंने मनीषयाँ। इह पृशवों विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। तान्पूर्वः परिं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयाँ। अयं पितृणामग्निः। अवाँङ्ख्या पितृभ्य आ। तं पूर्वः परिं गृह्णामि। अविषन्नः पितुं केरत्। अजस्रं त्वा संभापालाः॥२८॥ विज्ञयभांगु समिन्धताम्। अग्ने दीदांय मे सभ्य। विजित्यै श्ररदेः श्तम्। अन्नमावस्थीयम्। अभि हंराणि श्ररदेः श्तम्। आवस्थे श्रियं मन्नम्। अहिं बुंध्रियो नि यंच्छत्। इदम्हम्ग्निज्येष्ठभ्यः। वस्भ्यो यज्ञं प्रब्रंवीमि। इदम्हमिन्द्रंज्येष्ठभ्यः॥२९॥

रुद्रेभ्यों युज्ञं प्र ब्रंवीमि। इदमहं वर्रणज्येष्ठेभ्यः। आदित्येभ्यों युज्ञं प्र ब्रंवीमि। पर्यस्वतीरोषंधयः। पर्यस्वद्वीरुधां पर्यः। अपां पर्यसो यत्पर्यः। तेन् मामिन्द्र सः सृज। अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायौ व्रतपत् आदित्य व्रतपते॥३०॥

व्रतानां व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। इमां प्राचीमुदींचीम्। इष्मूर्जमि सङ्स्कृंताम्। बहुपूर्णामशुंष्काग्राम्। हरांमि पशुपामहम्। यत्कृष्णों रूपं कृत्वा। प्राविंशस्तवं वनस्पतीन्। ततस्त्वामेंकविश्शतिधा। सम्भेरामि सुसम्भृतां॥३१॥

भेरामि सुसम्भृतां। या जाता ओषंधयः। देवेभ्यंस्त्रियुगं पुरा। तासां पर्व राध्यासम्। परिस्तरमाहरन्। अपां मेध्यं यज्ञियम्। सदेव शिवमंस्तु मे॥३२॥ आच्छेत्ता वो मा रिषम्। जीवांनि श्ररदेः श्तम्। अपेरिमितानां परिमिताः। सन्नेह्ये सुकृताय कम्। एनो मा निगांङ्कतमचनाहम्। पुनेकृत्थायं बहुला भेवन्तु।

त्रीन्परिधी इस्तिम्नः सुमिर्धः। युज्ञायुरनुसश्चरान्। उपवेषं मेक्षणं धृष्टिम्। सं

पितर्रः सोम्याः। पितामहाः प्रपितामहाश्चानुगैः सह॥३३॥ त्रिवृत्पंलाशे दर्भः। इयाँन्प्रादेशसंम्मितः। यज्ञे पवित्रं पोतृंतमम्। पयो हृव्यं करोतु मे। इमौ प्रांणापानौ। यज्ञस्याङ्गांनि सर्वशः। आप्याययंन्तौ सर्श्चरताम्।

सकृदाच्छिन्नं बर्हिरूणांमृदु। स्योनं पितृभ्यंस्त्वा भराम्यहम्। अस्मिन्थ्सींदन्तु मे

प्वित्रें हव्यशोधंने। प्वित्रें स्थो वैष्ण्वी। वायुर्वां मनंसा पुनातु॥३४॥ अयं प्राणश्चांपानश्चं। यजंमानमपिं गच्छताम्। यज्ञे ह्यभूंतां पोतांरौ। प्वित्रें हव्यशोधंने। त्वया वेदिं विविदुः पृथिवीम्। त्वयां यज्ञो जांयते विश्वदानिः।

अच्छिंद्रं युज्ञमन्वेषि विद्वान्। त्वया होता सन्तंनोत्यर्धमासान्। त्रयस्त्रिष्शोंऽसि तन्तूनाम्। पवित्रेण सहागंहि॥३५॥

शिवय रज्जुंरिभधानीं। अघ्नियामुपं सेवताम्। अप्रस्न स्साय यज्ञस्यं। उखे उपंदधाम्यहम्। पृशुभिः सन्नीतं बिभृताम्। इन्द्रांय शृतं दिधं। उपवेषोऽसि यज्ञायं। त्वां परिवेषमधारयन्। इन्द्रांय हिवः कृण्वन्तः। शिवः शग्मो भवासि नः॥३६॥

अमृन्मयन्देवपात्रम्। यज्ञस्याऽऽयुंषि प्र युंज्यताम्। तिरः प्वित्रमितनीताः। आपो धारय मातिगः। देवेनं सिवत्रोत्पूताः। वसोः सूर्यस्य रिश्मिभिः। गां दोहपिवत्रे रज्जम्। सर्वा पात्राणि शुन्धत। एता आ चंरन्ति मधुंमद्दहानाः। प्रजावंतीर्यशसो विश्वरूपाः॥३७॥

बह्वीर्भवन्तीरुप्जायमानाः। इह व इन्द्रो रमयतु गावः। पूषा स्थं। अयक्ष्मा वेः प्रजया स॰ सृंजामि। रायस्पोषेण बहुलाभवन्तीः। ऊर्जं पयः पिन्वमाना घृतं चे। जीवो जीवन्तीरुपंवः सदेयम्। द्यौश्चेमं यृज्ञं पृंथिवी च सन्दुंहाताम्। धाृता सोमेन

सप्तमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

उथ्सं दुहन्ति कुलश्ं चतुंर्बिलम्। इडां देवीं मधुंमती स्पुवर्विदम्। तिदेन्द्राग्नी जिन्वत स्पूनृतांवत्। तद्यजंमानममृतृत्वे देधातु। कामधुक्षः प्र णौ ब्रूहि। इन्द्रांय ह्विरिन्द्रियम्। अमूं यस्यां देवानाम्। मृनुष्याणां पयो हितम्। बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यः। हव्यमा प्यायतां पुनः॥३९॥

वृथ्सेभ्यो मनुष्येभ्यः। पुनर्दोहायं कल्पताम्। यज्ञस्य सन्तंतिरसि। यज्ञस्यं त्वा सन्तंतिमनु सन्तंनोमि। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वा। यज्ञायापि दधाम्यहम्। अद्भिरिक्तेन पात्रेण। याः पूताः परिशेरते। अयं पयः सोमं कृत्वा। स्वां योनिमपि गच्छतु॥४०॥

पूर्णवुल्कः प्वित्रम्। सौम्यः सोमाद्धि निर्मितः। इमौ पूर्णं चं दुर्भं चं। देवानार्थं हव्यशोधंनौ। प्रातुर्वेषायं गोपाय। विष्णों ह्व्यर्थ हि रक्षंसि। उभावग्नी उंपस्तृणते। देवता उपवसन्तु मे। अहं ग्राम्यानुपं वसामि। मह्यं गोपंतये पृशून्॥४१॥

आर्भृत इमं गृंह्णाम् पूर्वस्ताः पूर्वः परिंगृह्णामे सभापाला इन्द्रंज्येष्ठेभ्य आदिंत्य व्रतपते सुसम्भृतां मे सह पुंनातु गिह नो विश्वरूपा दधातु पुनर्गच्छतु पृश्न्
(याः पुरस्तादिमामूर्जिम्ह प्रजा इह पृश्वोऽयं पिंतृणामृग्निः।)॥

देवां देवेषु पराँक्रमध्वम्। प्रथंमा द्वितीयंषु। द्वितीयास्तृतीयंषु। त्रिरेकादशा इह मांऽवत। इद शकेयं यदिदं करोमिं। आत्मा करोत्वात्मनें। इदं करिष्ये भेषजम्। इदं में विश्वभेषजा। अश्विना प्रावंतं युवम्। इदमह सेनाया अभीत्वंर्ये॥४२॥

मुख्मपोहामि। सूर्यं ज्योतिर्वि भांहि। मृह्त इंन्द्रियायं। आ प्यांयतां घृतयोनिः। अग्निर्ह्व्याऽनुं मन्यताम्। खर्मङ्क्षा त्वचंमङ्का। सुरूपं त्वां वसुविदम्। पृशूनां तेजंसा। अग्नये जुष्टंमभि घांरयामि। स्योनं ते सदेनं करोमि॥४३॥

घृतस्य धारंया सुशेवं कल्पयामि। तस्मिन्थ्सीदामृते प्रति तिष्ठ। ब्रीहीणां मेध सुमन्स्यमानः। आर्द्रः प्रथसुर्भुवंनस्य गोपाः। शृत उथ्स्नांति जनिता मतीनाम्। यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। देवानां विष्ठामन् यो वित्रस्थे। आत्मन्वान्थ्सोम घृतवान् हि भूत्वा। देवानांच्छ् सुवंविन्द् यजमानाय मह्यम्। इरा भूतिः पृथिव्यै

रसो मोर्त्क्रमीत्॥४४॥

देवाः पितरः पितंरो देवाः। योऽहमंस्मि स सन् यंजे। यस्यांस्मि न तम्न्तरेमि। स्वं मं इष्टइ स्वं दत्तम्। स्वं पूर्तइ स्वइ श्रान्तम्। स्वर हुतम्। तस्यं मेऽग्निरुपद्रष्टा। वायुरुपश्रोता। आदित्योऽनुख्याता। द्यौः पिता॥४५॥

पृथिवी माता। प्रजापंतिर्बन्धुः। य एवास्मि स सन् यंजे। मा भेर्मा संविक्था मा त्वां हिश्सिषम्। मा ते तेजोऽपं क्रमीत्। भ्रतमुद्धेरेमनुंषिश्च। अवदानांनि ते प्रत्यवंदास्यामि। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। यदंवदानांनि तेऽवद्यन्। विलोमाकांर्षमात्मनंः॥४६॥

आज्येन् प्रत्येनज्म्येनत्। तत्त् आ प्यायतां पुनेः। अज्यायो यवमात्रात्। आव्याधात्कृत्यतामिदम्। मा रूरुपाम यज्ञस्ये। शुद्धः स्विष्टमिदः हुविः। मनुना दृष्टां घृतपंदीम्। मित्रावरुणसमीरिताम्। दृक्षिणार्धादसंम्भिन्दन्। अवद्याम्येकृतोमुंखाम्॥४७॥ इडें भागं जुंषस्व नः। जिन्व गा जिन्वार्वतः। तस्याँस्ते भिक्षवाणः स्याम। सूर्वात्मानः सूर्वगंणाः। ब्रध्न पिन्वस्व। ददंतो मे मा क्षायि। कुर्वतो मे मोपंदसत्। दिशां क्रिपिरसि। दिशों मे कल्पन्ताम्। कल्पन्तां मे दिशः॥४८॥

दैवींश्च मानुंषिश्च। अहोरात्रे में कल्पेताम्। अर्धमासा में कल्पन्ताम्। मासां में कल्पन्ताम्। ऋतवों में कल्पन्ताम्। संवृथ्सरो में कल्पताम्। क्रुप्तिरिस् कल्पेतां मे। आशानां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चृतुभ्यों अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यक्षेभ्यः॥४९॥

विधेमं ह्विषां वयम्। भजंतां भागी भागम्। मा भागोऽभंक्ता निरंभागं भंजामः। अपस्पिन्व। ओषंधीर्जिन्व। द्विपात्पाहि। चतुंष्पादव। दिवो वृष्टिमेरंय। ब्राह्मणानांमिद॰ ह्विः॥५०॥

सोम्याना रे सोमपीथिनाम्। निर्भक्तो ब्राह्मणः। नेहा ब्राह्मणस्यास्ति। समंङ्कां बर्हिर्ह्विषां घृतेनं। समादित्यैर्वसुंभिः सं मुरुद्धिः। सिमन्द्रेण विश्वेभिर्देविभिरङ्काम्। दिव्यं नभो गच्छतु यथ्स्वाहाँ। इन्द्राणीवांविधवा भूयासम्। अदितिरिव सुपुत्रा।

अस्थूरि त्वां गार्हपत्य॥५१॥

उपनिषंदे सुप्रजास्त्वायं। सं पत्नी पत्यां सुकृतेनं गच्छताम्। युज्ञस्यं युक्तौ धुर्यावभूताम्। सञ्जानानौ विजंहतामरांतीः। दिवि ज्योतिंर्जर्मा रंभेताम्। दशंते तनुवो यज्ञ युज्ञियाः। ताः प्रीणातु यजमानो घृतेनं। नारिष्ठयौः प्रशिषमीडंमानः। देवानां दैव्येऽपि यजमानोऽमृतोंऽभूत्। यं वां देवा अंकल्पयन्॥५२॥

ऊर्जो भाग १ शंतऋत्। एतद्वां तेनं प्रीणानि। तेनं तृप्यतम १ हहौ। अहं देवाना १ सुकृतांमस्मि लोके। ममेदिमृष्टं न मिथुंभवाति। अहं नारिष्ठावनुं यजामि विद्वान्। यदांभ्यामिन्द्रो अदंधाद्भाग्धेयम्। अदारसृद्भवत देवसोम। अस्मिन् युज्ञे मंरुतो मृडता नः। मा नों विदद्भिभामो अशंस्तिः॥ ५३॥

मा नो विदद्वुजना द्वेष्या या। ऋष्भं वाजिनं वयम्। पूर्णमांसं यजामहे। स नो दोहता र सुवीर्यम्। रायस्पोष र सहस्रिणम्। प्राणायं सुराधंसे। पूर्णमांसाय स्वाहां। अमावास्यां सुभगां सुशेवां। धेनुरिंव भूयं आप्यायंमाना। सा नो दोहता र सुवीर्यम्। रायस्पोष सहस्रिणम्। अपानायं सुराधंसे। अमावास्यांये स्वाहाँ। अभि स्तृंणीहि परि धेहि वेदिम्। जामिं मा हि सीरमुया शयाना। होतृषदंना हिरताः सुवर्णाः। निष्का इमे यर्जमानस्य ब्रुप्रे॥५४॥

अभीलंवें करोमि कमीत्पिताऽऽत्मनं एक्तो मुंखां में दिशोऽध्यंक्षेभ्यो ह्विगीर्हपत्या कल्पयुत्रशंस्तिः सा नी वोहतार सुवीर्यरं सुप्त चं॥——[५] परिस्तृणीत् परिधत्ताग्निम्। परिहितोऽग्निर्यजीमानं भुनक्तु। अपार रस् ओषंधीनार सुवर्णः। निष्का इमे यजीमानस्य सन्तु कामृदुर्घाः। अमुत्रामुष्मिं ह्योके।

भूपंते भुवंनपते। मृह्तो भूतस्यं पते। ब्रह्माणं त्वा वृणीमहे। अहं भूपंतिरहं भुवंनपतिः। अहं महतो भूतस्य पतिः॥५५॥

देवनं सिवता प्रसूत आर्त्विज्यं करिष्यामि। देवं सिवतरेतं त्वां वृणते। बृहस्पितं दैव्यं ब्रह्माणम्। तदहं मनसे प्र ब्रंवीमि। मनों गायित्रयै। गायत्री त्रिष्टुभैं। त्रिष्टुज्ञगंत्यै। जगंत्यनुष्टुभैं। अनुष्टुक्पृङ्ग्यै। पृङ्किः प्रजापंतये॥५६॥

प्रजापंतिर्विश्वेभ्यो देवेभ्यः। विश्वे देवा बृह्स्पतंये। बृह्स्पतिर्ब्रह्मणे। ब्रह्म भूर्भुवः

सुवंः। बृहस्पतिर्देवानां ब्रह्मा। अहं मनुष्याणाम्। बृहंस्पते युज्ञं गोपाय। इदं तस्मै हर्म्यं करोिम। यो वो देवाश्चरित ब्रह्मचर्यम्। मेधावी दिक्षु मनसा तपस्वी॥५७॥

अन्तर्दूतश्चरित मानुषीषु। चतुंः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्यै। मर्मृज्यमाना महते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। भूमिर्भूत्वा मंहिमानं पुपोष। ततों देवी वर्धयते पया रसि। यज्ञियां यज्ञं वि च यन्ति शं च। ओषंधीरापं इह शक्करिश्च। यो मां हृदा मनसा यश्चं वाचा॥५८॥

यो ब्रह्मणा कर्मणा द्वेष्टिं देवाः। यः श्रुतेन हृदयेनेष्णुता चं। तस्येन्द्र वज्रेणु शिरंश्छिनिद्या ऊर्णामृदु प्रथंमान इस्योनम्। देवेभ्यो जुष्ट इसदंनाय ब्रहिः। सुवर्ग लोके यर्जमान् १ हि धेहि। मां नाकस्य पृष्ठे पर्मे व्योमन्। चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः। घृतप्रतीका वयुनानि वस्ते। साँऽऽस्तीर्यमाणा महते सौभंगाय॥५९॥ सा में धुक्ष्व यर्जमानाय कामान्। शिवा चं मे शग्मा चैंधि। स्योना चं मे

सुषदां चैधि। ऊर्जस्वती च मे पर्यस्वती चैधि। इष्मूर्जं मे पिन्वस्व। ब्रह्म तेजों मे पिन्वस्व। क्षुत्रमोजों मे पिन्वस्व। विश्ं पुष्टिं मे पिन्वस्व। आयुंर्न्नाद्यं मे पिन्वस्व। प्रजां पश्नमे पिन्वस्व॥६०॥

अस्मिन् यज्ञ उप भूय इन्नु में। अविक्षोभाय परिधीं देधामि। धर्ता धरुणो धरीयान्। अग्निर्द्वेषार्रसे निरितो नुंदाते। विच्छिनिद्धे विधृतीभ्यार सपत्नान्। जातान्त्रातृंच्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। विशो यन्नाभ्यां विधंमाम्येनान्। अहरू स्वानांमृत्तमोऽसानि देवाः। विशो यन्ने नुदमांने अरांतिम्। विश्वं पाप्मान्ममंतिं दुर्मरायुम्॥६१॥

सीर्दन्ती देवी सुंकृतस्यं लोके। धृतीं स्थो विधृती स्वधृती। प्राणान्मयिं धारयतम्। प्रजां मियं धारयतम्। पुशून्मियं धारयतम्। अयं प्रस्तर उभयंस्य धृता। धृतां प्रयाजानांमुतानूयाजानांम्। स दांधार सुमिधों विश्वरूपाः। तस्मिन्थ्सुचो अध्या सांदयामि। आ रोह पृथो जुंहु देवयानान्॥६२॥ यत्रर्षयः प्रथम्जा ये पुराणाः। हिरण्यपक्षाऽजिरा सम्भृताङ्गा। वहांसि मा सुकृतां यत्रं लोकाः। अवाहं बांध उपभृतां सपत्नान्। जातान्त्रातृंव्यान् ये चं जिन्व्यमाणाः। दोहैं यज्ञ स्सुद्धांमिव धेनुम्। अहमुत्तरो भूयासम्। अधेर मध्सपत्नाः। यो मां वाचा मनसा दुर्मरायुः। हृदाऽरांतीयादंभिदासंदग्ने॥६३॥

इदमंस्य चित्तमधंरं ध्रुवायाः। अहमुत्तरो भूयासम्। अधंरे मथ्सपत्नाः। ऋषभोऽसि शाक्वरः। घृताचीना स्नूनः। प्रियेण नाम्नां प्रिये सदंसि सीद। स्योनो में सीद सुषदः पृथिव्याम्। प्रथंयि प्रजयां पृशुभिः सुवर्गे लोके। दिवि सीद पृथिव्याम्नतरिक्षे। अहमुत्तरो भूयासम्॥६४॥

अर्थरे मथ्सपत्नाः। इयः स्थाली घृतस्यं पूर्णा। अच्छिन्नपयाः शृतधार् उथ्सः। मारुतेन शर्मणा दैव्येन। यज्ञोऽसि सर्वतः श्रितः। सर्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। शृतं में सन्त्वाशिषः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। प्रजापंतिरसि सर्वतः श्रितः॥६५॥ इरांवतीः पशुमतीः। इदिमिन्द्रियम्मृतं वीर्यम्। अनेनेन्द्रांय पृशवोऽचिकिथ्सन्। तेनं देवा अवतोप् माम्। इहेष्मूर्जं यशः सह ओर्जः सनेयम्। शृतं मियं श्रयताम्। यत्पृंथिवीमचर्त्तत्प्रविष्टम्॥६६॥ यनासिश्रुद्धलुमिन्द्रे प्रजापंतिः। इदं तच्छुकं मधुं वाजिनीवत्। येनोपरिष्टादिधनोन्म

दिध मां धिनोत्। अयं वेदः पृथिवीमन्वंविन्दत्। गुहां सतीं गहने गह्वरेषु।

सर्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। शतं में सन्त्वाशिषंः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः।

स विन्दत् यर्जमानाय लोकम्। अच्छिद्रं युज्ञं भूरिकर्मा करोत्। अयं युज्ञः समसदद्धविष्मान्। ऋचा साम्रा यर्जुषा देवताभिः॥६७॥
तेनं लोकान्थ्सूर्यवतो जयेम। इन्द्रंस्य सुख्यमंमृत्त्वमंश्याम्। यो नः कनीय इह
कामयाते। अस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय मह्यम्। अप तिमन्द्राग्नी भुवनान्नुदेताम्। अहं
प्रजां वीरवंतीं विदेय। अग्ने वाजित्। वाजं त्वा सिर्ष्यन्तम्। वाजं जेष्यन्तम्। वाजिनं वाजितम्॥६८॥

वाज्जित्यायै सं माँजिर्म। अग्निमंत्रादमृत्राद्यांय। उपंहूतो द्यौः पिता। उप मां द्यौः पिता ह्वंयताम्। अग्निराग्नींधात्। आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। उपंहूता पृथिवी माता। उप मां माता पृथिवी ह्वंयताम्। अग्निराग्नींधात्॥६९॥

आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। मनो ज्योतिंर्जुषतामाज्यम्। विच्छिन्नं युज्ञश् सिम्मिमं देधातु। बृह्स्पतिंस्तनुतािम्ममं नः। विश्वे देवा इह मादयन्ताम्। यन्ते अग्न आवृश्चािमे। अहं वा क्षिपितश्चरन्। प्रजां च तस्य मूलं च। नीचैर्देवा नि वृश्चत॥७०॥

अग्ने यो नोंऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यः। इध्मस्येंव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदः। यं चाऽऽहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वाङ्स्तानंग्ने सन्दंह। याङ्श्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। अग्ने वाजजित्। वाजं त्वा ससृवा॰सम्॥७१॥

वार्जं जिगिवा रसम्। वाजिनं वाजितम्। वाजिजित्यायै सम्मार्जिम।

अग्निमंत्रादम्त्राद्यांय। वेदिंर्क्रिः शृत र ह्विः। इध्मः पंरिधयः सुर्चः। आज्यं यज्ञ ऋचो यजुः। याज्यांश्च वषद्वाराः। सं मे सन्नंतयो नमन्ताम्। इध्मसन्नहंने हुते॥७२॥

दिवः खीलोऽवंततः। पृथिव्या अध्युत्थितः। तेनां सहस्रंकाण्डेन। द्विषन्तर्श् शोचयामिस। द्विषन्मं बहु शोचतु। ओषंधे मो अहर शुंचम्। यज्ञ नमस्ते यज्ञ। नमो नमश्च ते यज्ञ। शिवेनं मे सन्तिष्ठस्व। स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व॥७३॥

सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व। ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व। यज्ञस्यर्ध्धिमनु सन्तिष्ठस्व। उपं ते यज्ञ नमः। उपं ते नमः। उपं ते नमः। त्रिष्फलीक्रियमाणानाम्। यो न्यङ्गो अविशिष्यते। रक्षंसां भाग्धेयम्। आपुस्तत्प्र वहतादितः॥७४॥

उलूखेले मुसेले यच्च शूर्पे। आशिश्लेषं दृषिद यत्कपालें। अवप्रुषों विप्रुषः संयंजािम। विश्वे देवा हिविरिदं जुंषन्ताम्। यज्ञे या विप्रुषः सन्ति बह्धीः। अग्नौ ताः सर्वाः स्विष्टाः सुहुंता जुहोिम। उद्यन्नद्यमित्र महः। सुपत्नौन्मे अनीनशः।

दिवैनान् विद्युतां जिहा निम्रोचन्नर्धरान्कृधि॥७५॥

उद्यन्नद्य वि नो भज। पिता पुत्रेभ्यो यथाँ। दीर्घायुत्वस्यं हेशिषे। तस्यं नो देहि सूर्य। उद्यन्नद्य मित्रमहः। आरोह्नुत्तंरां दिवम्ं। हृद्रोगं ममं सूर्य। हृरिमाणं च नाशय। शुकेषु मे हरिमाणम्ं। रोपणाकांसु दध्मसि॥७६॥

अथों हारिद्रवेषुं मे। हृरिमाणं नि दंध्मिस। उदंगाद्यमांदित्यः। विश्वेन सहंसा सह। द्विषन्तं ममं रन्धयन्। मो अहं द्विषतो रंधम्। यो नः शपादशंपतः। यश्चे नः शपंतः शपात। उषाश्च तस्मै निम्नुक्रं। सर्वं पाप॰ समूहताम्॥७७॥

यो नंः सपत्नो यो रणंः। मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। अवसृष्टः परापत। शरो ब्रह्मंस॰शितः। गच्छाऽमित्रान्प्र विंश। मैषां कश्चनोच्छिषः॥७८॥

पतिः प्रजापंतये तपुस्वी वाचा सौभंगाय पुशून्में पिन्वस्व दुर्मरायुं देवयानांनग्नेऽन्तरिक्षेऽहमुत्तरो भूयासं प्रजापंतिरसि सुर्वतः श्रितः प्रविष्टं देवतांभिर्वाजुजितं पृथिवी

ह्रंयतामृग्निराग्नींप्राद्वश्चत ससृवाश्सर्थ हुते स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्वेतः कृंधि दध्यस्यूहतामृष्टौ चं॥ $lue{oldsymbol{\xi}}$

सक्षेदं पंश्य। विधंतिर्दं पंश्य। नाकेदं पंश्य। रमितः पनिष्ठा। ऋतं वर्षिष्ठम्। अमृतायान्याहुः। सूर्यो वरिष्ठो अक्षमिर्विभाति। अनु द्यावापृथिवी देवपुत्रे। दीक्षाऽसि तपंसो योनिः। तपोऽसि ब्रह्मणो योनिः॥७९॥

ब्रह्मांसि क्ष्रत्रस्य योनिः। क्ष्रत्रमंस्यृतस्य योनिः। ऋतमंसि भूरा रंभे। श्रद्धां मनंसा। दीक्षां तपंसा। विश्वंस्य भुवंनस्याधिपत्नीम्। सर्वे कामा यजंमानस्य सन्तु। वातं प्राणं मनंसाऽन्वा रंभामहे। प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नों मृत्योस्त्रांयतां पात्व १ हंसः॥८०॥

ज्योग्जीवा ज्रामंशीमिह। इन्द्रं शाकर गायत्रीं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकर त्रिष्टुभं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकर् जर्गतीं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकरानुष्टुभं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकर पृङ्किः प्रपंद्ये॥८१॥

तान्ते युनज्मि। आऽहं दीक्षामंरुहमृतस्य पत्नीम्। गायत्रेण छन्दंसा ब्रह्मणा च। ऋतः सत्येऽधायि। सत्यमृतेऽधायि। ऋतं चं मे सत्यं चांभूताम्। ज्योतिरभूवः

सप्तमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

सुवंरगमम्। सुवर्गं लोकं नाकस्य पृष्ठम्। ब्रध्नस्यं विष्टपंमगमम्। पृथिवी दीक्षा॥८२॥

तयाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। ययाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। अन्तरिक्षं दीक्षा। तया वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। ययां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। द्यौर्दीक्षा। तयांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः। ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः॥८३॥

तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। दिशों दीक्षा। तयां चन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। ययां चन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। आपों दीक्षा। तया वर्रणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया वर्रणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। ओषंधयो दीक्षा॥८४॥

तया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। वाग्दीक्षा। तयाँ प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। ययाँ प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। पृथिवी त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्।

अन्तरिक्षं त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। द्यौस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्॥८५॥

दिशंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। आपंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। ओषंधयस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। वाक्का दीक्षंमाण्मनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। सामांनि त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। यजूरंषि त्वा दीक्षंमाण्मनुं दीक्षन्ताम्। अहंश्च रात्रिश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च॥८६॥

आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्व सूनृतां च। तास्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। स्वे दक्षे दक्षंपितेह सींद। देवानारं सुम्नो महते रणाय। स्वास्थस्तनुवा संविशस्व। पितेवैधि सूनव आ सुशेवंः। शिवो मां शिवमा विश। स्त्यं मं आत्मा। श्रृद्धा मेऽक्षिंतिः॥८७॥

तपों मे प्रतिष्ठा। स्वितृप्रंसूता मा दिशों दीक्षयन्तु। सत्यमंस्मि। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममासि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोककुञ्जातवेदः। आजुह्वानः सुप्रतीकः पुरस्तात्। अग्ने स्वां योनिमा सीद साध्या। अस्मिन्थ्सधस्थे अध्युत्तंरस्मिन्॥८८॥

विश्वं देवा यजंमानश्च सीदत। एकंमिषे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। त्रीणि व्रताय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। चृत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। पश्चं पृशुभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। षड्रायस्पोषांय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सप्ताभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सर्वायः सप्तपंदा अभूम। सख्यं ते गमेयम्॥८९॥

स्ख्यात्ते मा योषम्। स्ख्यान्मे मा योष्ठाः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते पृथिवी पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्तेऽन्तिरिक्षं पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते द्यौः पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते दिशः पादः॥९०॥

प्रोरंजास्ते पश्चमः पादंः। सा न् इष्मूर्जं धुक्ष्व। तेजं इन्द्रियम्। बृह्मवर्च्सम्न्नाद्यम्। वि मिमे त्वा पर्यस्वतीम्। देवानां धेनु र सुद्धामनंपस्फुरन्तीम्। इन्द्रः सोमं पिबत्। क्षेमो अस्तु नः। इमान्नंराः कृणुत् वेदिमेत्यं। वस्मतीर रुद्रवंतीमादित्यवंतीम्॥९१॥

वर्ष्मन्दिवः। नाभां पृथिव्याः। यथाऽयं यजंमानो न रिष्येत्। देवस्यं सिवतुः स्वे। चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्ये। तस्याः सुपणांविध्यो निविष्टो। तयोदिवानामिधं भाग्धेयम्। अप जन्यं भ्यं नुंद। अपं चुकाणि वर्तय। गृह सोमंस्य गच्छतम्। न वा उ वेतन्प्रियसे न रिष्यसि। देवा इदेषि पृथिभिः सुगेभिः। यत्र यन्तिं सुकृतो नापिं दुष्कृतः। तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु॥९२॥

ब्रह्मणो योनिर॰हंसः पृङ्किं प्रपंद्ये दीक्षा ययाऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितस्तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयाम्योपंधयो दीक्षा द्यौस्तवा दीक्षमाणमन् दीक्षतामपंचितिश्चाक्षिति्रुत्तरस्मिन्गमेयुं

दिशः पादं आदित्यवंतीं वर्तय पश्चं च॥

यद्स्य पारे रजंसः। शुक्रं ज्योतिरजांयत। तन्नः पर्षदित द्विषः। अग्ने वैश्वानर् स्वाहाँ। यस्माद्भीषाऽवांशिष्ठाः। ततों नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वांभ्यो मृड।

प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमो रुद्रायं मीदुषें। उद्ग्रंस्न तिष्ठ प्रतिं तिष्ठ मारिषः।

नमों रुद्रायं मीढुषें। यस्माद्भीषा न्यषंदः। ततों नो अभयं कृधि॥९३॥

मेमं युज्ञं यजमानं च रीरिषः। सुवुर्गे लोके यजमान् हे हि धेहि। शन्नं एधि द्विपदे

शं चतुंष्पदे। यस्माँद्भीषाऽवेंपिष्ठाः पुलायिष्ठाः सुमज्ञाँस्थाः। ततों नो अभेयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीढुषें॥९४॥

य इदमकः। तस्मै नमः। तस्मै स्वाहाँ। न वा उंवेतन्प्रियसे। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। यज्ञस्य हि स्थ ऋत्वियौं। इन्द्रांग्री चेतंनस्य च। हुताहुतस्यं तृप्यतम्। अहुंतस्य हुतस्यं च। हुतस्य चाहुंतस्य च। अहुंतस्य हुतस्यं च। इन्द्रांग्री अस्य सोमंस्य। वीतं पिंबतं जुषेथांम्। मा यजंमानं तमो विदत्। मर्त्विजो मो इमाः प्रजाः। मा यः सोमंमिमं पिबात्। स॰सृष्टमुभयं कृतम्॥९५॥

अनागसंस्त्वा वयम्। इन्द्रेण् प्रेषिता उपं। वायुष्टं अस्त्व श्याभूः। मित्रस्ते अस्त्व श्याभूः। वर्रुणस्ते अस्त्व श्याभूः। अपाङ्क्षया ऋतंस्य गर्भाः। भुवनस्य गोपाः श्येनां अतिथयः। पर्वतानां ककुभः प्रयुतो नपातारः। वृग्नुनेन्द्र ह्रियत। घोषेणामीवा श्र्वातयत॥ ९६॥

युक्ताः स्थ वहंत। देवा ग्रावांण् इन्दुरिन्द्र इत्यंवादिषुः। एन्द्रंमचुच्यवुः पर्मस्याः परावतः। आऽस्माथ्स्थस्थांत्। ओरोर्न्तरिक्षात्। आ सुंभूतमंसुषवुः। ब्रह्मवर्चसं म् आसुंषवुः। समरे रक्षाः स्यविषयुः। अपहतं ब्रह्मज्यस्यं। वाक्रं त्वा मनिश्च श्रीणीताम्॥९७॥

प्राणश्चं त्वाऽपानश्चं श्रीणीताम्। चक्षुंश्च त्वा श्रोत्रं च श्रीणीताम्। दक्षंश्चत्वा बर्लं च श्रीणीताम्। ओजंश्च त्वा सहंश्च श्रीणीताम्। आयुंश्च त्वाऽज्र्रा चं श्रीणीताम्। आत्मा चं त्वा त्नूश्चं श्रीणीताम्। शृतोंऽसि शृतं कृतः। शृतायं त्वा शृतेभ्यंस्त्वा। यिनन्द्रंमाहुर्वरुणं यमाहुः। यं मित्रमाहुर्यमुं स्त्यमाहुः॥९८॥

यो देवानां देवतंमस्तपोजाः। तस्मैं त्वा तेभ्यंस्त्वा। मिय् त्यदिन्द्रियं महत्। मिय् दक्षो मिय् ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो वि भातु मे। आकूँत्या मनंसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। तस्य दोहंमशीमिह॥९९॥ तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भक्षमंशीमिह। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। मित्रो सप्तमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

जनान्त्र स मित्र। यस्मान्न जातः परों अन्यो अस्ति। य आंविवेश भुवनानि विश्वां। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। त्रीणि ज्योती १षि सचते स षोडशी। एष ब्रह्मा य ऋत्वियः। इन्द्रो नामं श्रुतो गणे॥१००॥

प्र ते महे विदर्थे शश्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्र ते वन्वे। वनुषों हर्यतं मदम्। इन्द्रो नामं घृतं नयः। हरिंभिश्चार् सेचंते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु। हरिंवर्पसङ्गिरं। इन्द्राधिपतेऽधिपतिस्तवं देवानांमिस। अधिपतिं माम्। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तं मनुष्येषु कुरु॥१०१॥

इन्द्रंश्च सम्राङ्गरुणश्च राजाँ। तौ तें भृक्षं चंऋतुरग्रं एतम्। तयोरनुं भृक्षं भंक्षयामि। वार्ग्जुषाणा सोमंस्य तृप्यतु। प्रजापंतिर्विश्वकंमा। तस्य मनो देवं यज्ञेनं राध्यासम्। अर्थेगा अस्य जंहितः। अवसानंपतेऽवसानं मे विन्द। नमो रुद्रायं वास्तोष्पतंये। आयंने विद्रवंणे॥१०२॥

उद्याने यत्परायंणे। आवर्तने विवर्तने। यो गोंपायित त॰ हुंवे।

यान्यंपामित्यान्यप्रंतीत्तान्यस्मि। यमस्यं बुलिना चरामि। इहैव सन्तः प्रति तद्यांतयामः। जीवा जीवेभ्यो नि हंराम एनत्। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परस्मिन्। तृतीयं लोके अनृणाः स्यांम। ये देवयानां उत पितृयाणाः॥१०३॥

सर्वांन्पथो अंनृणा आक्षीयम। इदमून श्रेयोऽवसानमा गंन्म। शिवे नो द्यावांपृथिवी उभे इमे। गोम्द्धनंवदश्वंवदूर्जस्वत्। सुवीरां वीरैरन् सश्चरेम। अर्कः पवित्र र जंसो विमानः। पुनाति देवानां भुवंनानि विश्वां। द्यावांपृथिवी पर्यसा संविदाने। घृतं दुहाते अमृतं प्रपीने। पवित्रमको रजंसो विमानः। पुनाति देवानां भुवंनानि विश्वां। सुवर्ज्योतिर्यशो महत्। अशीमिहं गाधमुत प्रतिष्ठाम्॥१०४॥ च्यावया श्रेणीयः सत्यमहंशीमिह गणे के विद्रवंण पितृयाणां अर्को रजंसो विमानशीण वा [१]

उदंस्ताम्पसीथ्सविता मित्रो अंर्यमा। सर्वानिमत्रांनवधीद्युगेनं। बृहन्तं मामंकरद्वीरवंन्तम्। रथन्तरे श्रंयस्व स्वाहां पृथिव्याम्। वामदेव्ये श्रंयस्व स्वाहाऽन्तरिक्षे। बृहति श्रंयस्व स्वाहां दिवि। बृहता त्वोपंस्तभ्रोमि। आ त्वां ददे यशंसे वीर्याय च। अस्मास्वंिघ्रया यूयं दंधाथेन्द्रियं पर्यः। यस्ते द्रफ्सो यस्तं उदर्षः॥१०५॥

दैव्यः केतुर्विश्वं भुवंनमाविवेशं। स नः पाह्यरिष्ट्यै स्वाहाँ। अनुं मा सर्वो यज्ञोऽयमेतु। विश्वे देवा मुरुतः सामार्कः। आप्रियश्छन्दा १सि निविदो यजू १षि। अस्यै पृथिव्यै यद्यज्ञियम्। प्रजापंतेर्वर्तनिमन् वर्तस्व। अनुवीरेरन् राध्याम गोभिः।

अन्वश्वेरनु सर्वेरु पुष्टैः। अनुं प्रजयाऽन्विन्द्रियेणं॥१०६॥ देवा नो युज्ञमृंजुधा नयन्तु। प्रतिक्ष्त्रे प्रति तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्वेषु प्रति

तिष्ठामि गोषुं। प्रति प्रजायां प्रति तिष्ठामि भव्यै। विश्वंमन्याऽभिं वावृधे। तदन्यस्यामधिश्रितम्। दिवे च विश्वकंर्मणे। पृथिव्यै चांकरं नमंः। अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कानृष्यो युवागाः॥१०७॥

स्कन्नेमा विश्वा भुवंना। स्कन्नो यज्ञः प्र जंनयतु। अस्कानजंनि प्राजंनि। आ स्कन्नाज्ञायते वृषां। स्कन्नात्प्र जंनिषीमहि। ये देवा येषांमिदं भागधेयं बुभूवं। येषां प्रयाजा उतानूंयाजाः। इन्द्रंज्येष्ठेभ्यो वर्रुणराजभ्यः। अग्निहोतृभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। उत त्या नो दिवां मृतिः॥१०८॥

अदितिरूत्या गंमत्। सा शन्तांची मयंस्करत्। अप स्निधंः। उत त्या दैव्यां भिषजां। शन्नंस्करतो अश्विनां। यूयातांम्स्मद्रपंः। अप स्निधंः। शम्प्रिर्ग्निभिस्करत्। शन्नंस्तपतु सूर्यः। शं वातों वात्वरुपाः॥१०९॥

अप स्निधंः। तदित्पदं न विचिकेत विद्वान्। यन्मृतः पुनंरप्येतिं जीवान्। त्रिवृद्यद्भुवंनस्य रथ्वृत्। जीवो गर्भो न मृतः स जीवात्। प्रत्यंस्मै पिपीषते। विश्वांनि विदुषे भर। अर्ङ्गमाय जग्मेवे। अपश्चाद्दघ्वने नरें। इन्दुरिन्दुमवांगात्। इन्दोरिन्द्रो-ऽपात्। तस्यं त इन्द्विन्द्रंपीतस्य मधुंमतः। उपहूत्स्योपहूतो भक्षयामि॥११०॥

उदरप इंद्रियेण ग मितरिया अंगाशिष च॥

[१०]

ब्रह्मं प्रतिष्ठा मनंसो ब्रह्मं वाचः। ब्रह्मं यज्ञाना हे ह्विषामाज्यंस्य। अतिरिक्तं कर्मणो यचं हीनम्। यज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु

देवान्। आश्रांवितम्त्याश्रांवितम्। वर्षद्गृतमृत्यनूँक्तं च यज्ञे। अतिंरिक्तं कर्मणो यर्च हीनम्। यज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्॥१११॥

यद्वो देवा अतिपादयांनि। वाचा चित्प्रयंतं देवहेर्डनम्। अरायो अस्मार अभिदुंच्छुनायतें। अन्यत्रास्मन्मरुत्स्तिन्निधेतन। तृतं म् आप्स्तदुं तायते पुनः। स्वादिष्ठा धीतिरुचथांय शस्यते। अयर संमुद्र उत विश्वभेषजः। स्वाहाकृतस्य समुतृण्णुतर्भुवः। उद्वयं तमस्स्पिरं। उदुत्यं चित्रम्॥११२॥

ड्मं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासि प्रजांपते। ड्मं जीवेभ्यः परिधिं दंधामि। मैषान्नुंगादपंरो अर्धमेतम्। शृतं जीवन्तु श्ररदेः पुरूचीः। तिरो मृत्युं दंधतां पर्वतेन। ड्रष्टेभ्यः स्वाहा वष्डिनेष्टेभ्यः स्वाहाँ। भेषुजं दुरिष्ट्यै स्वाहा निष्कृंत्यै स्वाहाँ। दौराँध्यै स्वाहा दैवीँभ्यस्त्नूभ्यः स्वाहाँ॥११३॥

ऋद्धै स्वाहा समृद्धै स्वाहाँ। यतं इन्द्र भयामहे। ततों नो अभयं कृधि। मघंवञ्छुग्धि तव तन्नं ऊतयें। वि द्विषो वि मृधों जिह। स्वस्तिदा विशस्पतिः। वृत्रहा वि मृधों वृशी। वृषेन्द्रेः पुर एंतु नः। स्वस्तिदा अभयङ्करः। आभिर्गीर्भिर्यदतों न ऊनम्॥११४॥

आप्यायय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो मिहं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। अनौज्ञातं यदाज्ञांतम्। यज्ञस्यं क्रियते मिथुं। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व॰ हि वेत्थं यथात्थम्। पुरुषसम्मितो यज्ञः। यज्ञः पुरुषसम्मितः। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व॰ हि वेत्थं यथात्थम्। यत्पांकृत्रा मनंसा दीनदंक्षा न। यज्ञस्यं मन्वते मर्तासः। अग्निष्टद्धोतौ ऋतुविद्विजानन्। यजिष्ठो देवा॰ ऋतुशो यंजाति॥११५॥

यद्देवा देव्हेडंनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्चत। ऋतस्युर्तेन् मामुत। देवां जीवनकाम्या यत्। वाचाऽनृंतमूदिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानिं चकृम। करोतु मामनेनसम्॥११६॥ ऋतेनं द्यावापृथिवी। ऋतेन त्व॰ संरस्वति। ऋतान्मां मुश्चता॰हंसः।

देवाइश्चित्रं तुनूभ्यः स्वाहोनं पुर्रुषसम्मितोऽग्ने तर्दस्य कल्पय पर्श्वं च॥

निशसा यत्पंराशसां॥११९॥

यद्न्यकृतमारिम। स्जात्श्र्सादुत वां जामिश्र्सात्। ज्यायंसः शश्सांदुत वा कनीयसः। अनौज्ञातं देवकृतं यदेनेः। तस्मात्त्वम्स्माञ्जातवेदो मुमुग्धि। यद्वाचा यन्मनसा। बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवज्ञांम्॥११७॥

शिश्ञैर्यदर्नृतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यद्धस्ताभ्यां

चकर किल्बिषाणि। अक्षाणां वुग्नुमुंपुजिघ्नमानः। दूरेपुश्या चं राष्ट्रभृचं।

तान्यंपस्रसावनंदत्तामृणानिं। अदीं व्यत्रृणं यद्हं चकारं। यद्वादां स्यन्थ्सञ्जगारा जनेंभ्यः। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यन्मियं माता गर्भे स्ति॥११८॥ एनंश्चकार् यत्पता। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदां पिपेषं मातरं पितरम्। पुत्रः प्रमुंदितो धयन्। अहि रेसितौ पितरौ मया तत्। तदंग्ने अनृणो भंवामि। यदन्तरिक्षं पृथिवीमृत द्याम्। यन्मातरं पितरं वा जिहि रसिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदाशसां

यदेनश्चकृमा नूर्तनं यत्पुराणम्। अग्निर्मा तस्मादेनसः। अति क्रामामि दुरितं

यदेनंः। जहांमि रिप्रं पर्मे स्थस्थैं। यत्र यन्तिं सुकृतो नापिं दुष्कृतः। तमा रोहामि सुकृतां नु लोकम्। त्रिते देवा अमृजतैतदेनः। त्रित एतन्मनुष्येषु मामृजे। ततों मा यदि किश्चिदानशे। अग्निर्मा तस्मादेनसः॥१२०॥

गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानि चकुम। कुरोतु मामनेनसम्। दिवि जाता अफ्सु जाताः। या जाता ओषंधीभ्यः। अथो या अंग्रिजा आपंः। ता नंः शुन्धन्तु शुन्धंनीः। यदापो नक्तं दुरितं चराम। यद्वा दिवा नूतंनं यत्पुंराणम्। हिरंण्यवर्णास्तत उत्पुनीत नः। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं॥१२१॥

अनेनसंमधीवन्द्यारं सति पंराशसांऽऽनुशेंऽग्निर्मा तस्मादेनंसः पुनीत नुस्नीणिं च (यहंवा देवां ऋतेनं सजातशृर्साद्यद्वाचा यद्धस्तांभ्यामदींव्यं यन्मयिं माता यदां पिपेष यदुन्तरिक्षं यदाशसाऽति कामामि त्रिते देवा दिवि जाता अपसु जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने त्वमंग्ने अयासिं।

यत्ते ग्राव्णां चिच्छिदुः सोम राजन्। प्रियाण्यङ्गानि स्वधिता परूर्षेष।

तथ्सन्ध्रथ्याज्येनोत वर्धयस्व। अनागसो अधिमध्सङ्क्ष्येम। यत्ते ग्रावां बाहुच्युंतो अचुंच्यवुः। नरो यत्ते दुदुहुर्दक्षिणेन। तत्त् आप्यायतां तत्ते। निष्ट्यायतां देव सोम। यत्ते त्वचं विभिदुर्यच्च योनिम्। यदास्थानात्प्रच्युंतो वेनिस् त्मनां॥१२२॥ त्वया तथ्सोम गुप्तमस्तु नः। सा नः सन्धासंत्पर्मे व्योमन्। अहाच्छरीरं पर्यसा समेत्यं। अन्योन्यो भवति वर्णो अस्य। तस्मिन्वयमुपहूतास्तवं स्मः। आ नो भज् सदिसि विश्वरूपे। नृचक्षाः सोमं उत शुश्रुगंस्तु। मा नो वि हांसीदिरं आवृणानः।

अनांगास्तन्त्रवो वावृधानः। आ नो रूपं वंहतु जायंमानः॥१२३॥
उपं क्षरन्ति जुह्वो घृतेनं। प्रियाण्यङ्गांनि तवं वर्धयंन्तीः। तस्मै ते सोम नम् इद्वषंद्व। उपं मा राजन्थ्सुकृते ह्वंयस्व। सं प्रांणापानाभ्या सम् चक्षुंषा त्वम्। सः श्रोत्रेण गच्छस्व सोम राजन्। यत्त आस्थित् शम् तत्ते अस्तु। जानीतान्नः सङ्गमंने पथीनाम्। पृतं जानीतात्पर्मे व्योमन्। वृकाः सधस्था विद रूपमंस्य॥१२४॥ यदागच्छांत्पथिभिर्देवयानैः। इष्टापूर्ते कृंणुतादाविरंस्मै। अरिष्टो राजन्नगदः

त्मना जायंमानोऽस्य दधत्पश्चं च॥

परेहि। नमंस्ते अस्तु चक्षंसे रघूयते। नाकमारोह सह यर्जमानेन। सूर्यं गच्छतात्परमे व्योमन्। अभूँद्देवः संविता वन्द्योनु नंः। इदानीमह्नं उपवाच्यो नृभिः। वि यो रत्ना भर्जिति मानवेभ्यः। श्रेष्ठं नो अत्र द्रविणं यथा दर्धत्। उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिहं नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिर्हेतिः। उग्रा शतापाष्ठा घविषा परि णो वृणक्तु। आप्यायस्व सन्तै॥१२५॥

यिददिक्षे मनस् यर्च वाचा। यद्वा प्राणैश्चर्ध्वषा यर्च श्रोत्रंण। यद्रतंसा मिथुनेनाप्यात्मनां। अद्भो लोका दंधिरे तेर्ज इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीर्मिय तेर्ज इन्द्रियम्। यदचा साम्रा यर्जुषा। पशूनां

चर्मन् हविषां दिदीक्षे। यच्छन्दोंभिरोषंधीभिर्वनस्पतौं। अद्धो लोका दंधिरे तेर्ज

इन्द्रियम्॥१२६॥

शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोचंनीः। आपों विमोक्रीर्मिय तेजं इन्द्रियम्। येन ब्रह्म

आपो विमोक्रीर्मिय तेजं इन्द्रियम्। अपां पुष्पंमस्योषंधीना् रसंः। सोमंस्य प्रियं धामं॥१२७॥
अग्नेः प्रियतंम हिवः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना् रसंः। सोमंस्य प्रियं धामं। इन्द्रंस्य प्रियतंम हिवः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना् रसंः। सोमंस्य प्रियं धामं। विश्वेषां देवानां प्रियतंम हिवः स्वाहाँ। व्य सोम व्रते तवं। मनंस्तनूषु पिप्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमिह॥१२८॥
देवेभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। सोम्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। क्रव्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ।

देवांस इह मादयध्वम्। सोम्यांस इह मादयध्वम्। कव्यांस इह मादयध्वम्।

अनंन्तरिताः पितरंः सोम्याः सोमपीथात्। अपैतु मृत्युरमृतंं न आगन्। वैवस्वतो

नो अभेयं कृणोतु। पर्णं वनस्पतेरिव॥१२९॥

येनं क्षत्रम्। येनेंन्द्राग्नी प्रजापंतिः सोमो वर्रुणो येन राजां। विश्वे देवा ऋषंयो येनं

प्राणाः। अन्द्यो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः।

अभि नेः शीयता र र्यिः। सर्चतां नः शचीपितिः। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थांम्। यस्ते स्व इतंरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते तें ब्रवीमि। मा नेः प्रजा र रीरिषो मोत वीरान्। इदमूनु श्रेयोवसानमार्गन्म। यद्गोजिद्धनजिदंश्वजिद्यत्। पूर्णं वनस्पतेरिव। अभि नेः शीयता र र्यिः। सर्चतां नः शचीपितिः॥१३०॥

वनुस्पतांबुद्धो लोका देधिरे तेजं इन्द्रियं धामांशीमहीवाभिनः शीयतार रियेरकं च॥—————————————————[१४]

सर्वान् यद्विष्यंण्णेन वि वै याः पुरस्ताद्देवां देवेषु परिस्तृणीत सक्षेदं यदस्य पारेऽनागस उदस्ताम्पसीद्वह्यं प्रतिष्ठा यद्देवा यत्ते ग्राव्णा यद्दिवीक्षे चतुर्दशा(१४॥

सर्वान्भूतिंमेव यामेवापस्वाहुंतिं ब्रतानां पर्णवुल्कः सोम्यानांमस्मिन् युज्ञेऽग्रे यो नो ज्योग्जीवाः पुरोरंजाः प्रतेमहे ब्रह्मं प्रतिष्ठा गार्हंपत्यश्चिर्शद्त्तरशतम्॥१३०॥ सर्वाञ्छवीपतिंः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

साङ्ग्रहण्येष्ट्यां यजते। इमाञ्चनता सङ्ग्रह्णानीति। द्वादंशारत्नी रश्ना भवति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरमेवावं रुन्धे। मौञ्जी भवति। ऊर्ग्वे मुञ्जाः। ऊर्जमेवावं रुन्धे। चित्रा नक्षेत्रं भवति। चित्रं वा एतत्कर्म॥१॥

यदंश्वमेधः समृद्धौ। पुण्यंनाम देवयजंनम्ध्यवंस्यति। पुण्यांमेव तेनं कीर्तिम्भि जंयित। अपंदातीनृत्विजंः समावहन्त्या सुंब्रह्मण्यायाः। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्यौ। केश्वश्मश्रु वंपते। नखानि नि कृन्तते। दतो धांवते। स्नाति। अहंतं वासः परिंधत्ते। पाप्मनोऽपंहत्यौ। वाचं यत्वोपं वसित। सुवर्गस्यं लोकस्य गृष्ट्यौ। रात्रिं जाग्रयंन्त आसते। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्यौ॥२॥

चतुंष्टय्य आपों भवन्ति। चतुंः शफो वा अर्श्वः प्राजापत्यः समृद्धौ। ता दिग्भ्यः

स्मार्भृता भवन्ति। दिक्षु वा आपंः। अत्रं वा आपंः। अद्भो वा अत्रं जायते। यदेवाद्योऽत्रं जायते। तदवं रुन्धे। तासुं ब्रह्मौद्नं पंचिति। रेतं एव तद्दंधाति॥३॥ चतुंः शरावो भवति। दिक्ष्वंव प्रतिं तिष्ठति। उभ्यतोर्क्भौ भंवतः। उभ्यतं

चतुः शरावा भवाता दिक्ष्वव प्रांत तिष्ठाता उभयतारुका भवतः। उभयत प्वास्मिन्नुचं दधाति। उद्धरित शृतत्वायं। सूर्पिष्वांन्भवित मेध्यत्वायं। चत्वारं आर्षेयाः प्राश्चंन्ति। दिशामेव ज्योतिषि जुहोति। चत्वारि हिरण्यानि ददाति। दिशामेव ज्योती्र्ष्यवं रुन्थे॥४॥

यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तस्मिन्नश्नान्युंनत्ति। प्रजापंतिर्वा ओंद्नः। रेत् आज्यम्। यदाज्यं रश्नान्युनत्तिं। प्रजापंतिमेव रेतंसा समर्थयिति। दुर्भमयीं रश्ना भविति। बहु वा एष कुंचरों मेध्यमुपंगच्छति। यदश्वः। प्वित्रं वै दुर्भाः॥५॥

यद्दंभ्मयी रश्ना भवंति। पुनात्येवैनम्। पूतमेनं मेध्यमा लंभते। अश्वंस्य वा आलंब्यस्य महिमोदंक्रामत्। स महर्त्विजः प्राविंशत्। तन्महर्त्विजां महर्त्विक्तम्। यन्महर्त्विजः प्राश्वन्ति। महिमानंमेवास्मिन्तद्दंधित। अश्वंस्य वा आलंब्यस्य रेत्

दधाति रुन्धे दर्भा अभवथ्वट् चं॥

उदंक्रामत्। तथ्सुवर्णं हरंण्यमभवत्। यथ्सुवर्णं हिरंण्यं ददांति। रेतं एव तद्वंधाति। ओदने दंदाति। रेतो वा ओदनः। रेतो हिरंण्यम्। रेतंसैवास्मिन्नेतों

दधाति॥६॥

यो वै ब्रह्मणे देवेभ्यः प्रजापंतयेऽप्रंतिप्रोच्याश्वं मेध्यं बध्नाति। आ देवताभ्यो वृथ्यते। पापीयान्भवति। यः प्रतिप्रोच्यं। न देवतांभ्य आवृंश्यते। वसीयान्भवति।

यदाहं। ब्रह्मन्नश्वं मेध्यं भन्थस्यामि देवेभ्यः प्रजापंतये तेनं राध्यासमिति। ब्रह्म वै ब्रह्मा। ब्रह्मण एव देवेभ्यः प्रजापंतये प्रतिप्रोच्याश्वं मेध्यं बध्नाति॥७॥

न देवतांभ्य आ वृंश्यते। वसीयान्भवति। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंसव इतिं रशनामादत्ते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्याह यत्यै। व्यृद्धं वा एतद्यज्ञस्यं। यदंयजुष्केण क्रियतें। इमामंगृभ्णत्रशनामृतस्येत्यिधं वदित यजुंष्कृत्यै। यज्ञस्य समृंद्धौ॥८॥

तदांहुः। द्वादंशारती रश्ना कंर्त्व्या(३) त्रयोंदशार्त्ती(३)रितिं। ऋष्भो वा एष ऋंतूनाम्। यथ्संवथ्सरः। तस्यं त्रयोदशो मासों विष्टपम्ं। ऋष्भ एष यज्ञानाम्। यदंश्वमेधः। यथा वा ऋष्भस्यं विष्टपम्ं। एवमेतस्यं विष्टपम्ं। त्रयोदशमंर्तिः रंशनायांमुपा दंधाति॥९॥

यथंर्ष्भस्यं विष्टपर्ं सङ्स्करोतिं। ताहगेव तत्। पूर्व आयुंषि विदर्थेषु कृव्येत्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। तयां देवाः सुतमा बंभूवुरित्यांह। भूतिंमेवोपावंतिते। ऋतस्य सामैन्थ्सरमारपन्तीत्यांह। सत्यं वा ऋतम्। सत्येनैवैनंमृतेनारंभते। अभिधा असीत्यांह॥१०॥

तस्मांदश्वमेधयाजी सर्वाणि भूतान्यभि भंवति। भुवंनम्सीत्यांह। भूमानंमेवोपैति। युन्ताऽसीत्यांह। युन्तारंमेवेनं करोति। धूर्ताऽसीत्यांह। धूर्तारंमेवेनं करोति। सौंऽग्निं वैश्वानरमित्यांह। अग्नावेवेनं वेश्वानरे जुंहोति। सप्रथस्मित्यांह॥११॥

प्रजयैवेनं पश्भिः प्रथयति। स्वाहांकृत इत्याह। होमं एवास्यैषः। पृथिव्यामित्यांह। अस्यामेवैनं प्रतिष्ठापयति। यन्ता राड्यन्ताऽसि यमंनो धर्ताऽसिं धरुण इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। कृष्ये त्वा क्षेमांय त्वा रय्ये त्वा पोषांय त्वेत्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। स्वगा त्वां देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं एवैनई स्वगा करोति। स्वाहाँ त्वा प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अर्थः। यस्यां एव देवतांया आलभ्यतें। तयैवैन समर्धयति॥१२॥

यः पितुरंनुजायाः पुत्रः। स पुरस्तांन्नयति। यो मातुरंनुजायाः पुत्रः। स पश्चान्नयति। विष्वंश्चमेवास्मांत्पाप्मानं विवृहतः। यो अर्वन्तं जिघा ५ सति तमभ्यंमीति वर्रुण इति श्वानं चतुरक्षं प्रसौति। परो मर्तः परः श्वेति शुनश्चतुरक्षस्य

प्रहेन्ति। श्वेव वै पाप्मा भ्रातृंव्यः। पाप्मानंमेवास्य भ्रातृंव्यः हन्ति। सैभ्रकं मुसंलं भवति॥१३॥

बुध्राति समृद्धा उपादंधात्यसीत्यांह सप्रंथसमित्यांह देवेभ्य इत्यांह पश्चं च॥

कर्मकर्मेवास्में साधयति। पौ्ड्श्चलेयो हंन्ति। पुड्श्चल्वां वै देवाः शुच्ं न्यंदधुः। शुचैवास्य शुच्रं हन्ति। पाप्मा वा एतर्मीपस्तित्यांहुः। योऽश्वमेधेन यजंत इतिं। अश्वंस्याधस्पदमुपौस्यति। वृज्ञी वा अश्वः प्राजापृत्यः। वज्रेणेव पाप्मानं भ्रातृंव्यमवंत्रामति। दक्षिणाऽपं प्रावयति॥१४॥

पाप्मानंमेवास्माच्छमंलमपं प्लावयति। ऐषीक उंदूहो भंवति। आयुर्वा इषीकाः। आयुर्वेवास्मिन्दधित। अमृतं वा इषीकाः। अमृतंमेवास्मिन्दधित। वेत्सशाखोपसम्बद्धा भवति। अपसुर्योनिर्वा अर्थः। अपसुजो वेत्सः। स्वादेवेनं योनेर्निर्मिते। पुरस्तांत्प्रत्यश्चंमभ्युद्देहित। पुरस्तांदेवास्मिन्प्रतीच्यमृतं दधाति। अहं च त्वं च वृत्रहृन्नितिं ब्रह्मा यजंमानस्य हस्तं गृह्णाति। ब्रह्मक्षत्रे एव सन्दंधाति। अभिक्रत्वेन्द्र भूरधज्मन्नित्यंध्वर्युर्यजंमानं वाचयत्यभिजित्ये॥१५॥

चत्वारं ऋत्विजः समृक्षन्ति। आभ्य एवैनं चतुसृभ्यो दिग्भ्योऽभि समीरयन्ति।

श्तेनं राजपुत्रैः सहाध्वर्युः। पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन् मेध्यंनेष्ट्वा। अयर राजां वृत्रं वंध्यादितिं। राज्यं वा अध्वर्युः। क्षत्रर राजपुत्रः। राज्येनैवास्मिन्क्षत्रं दंधाति। श्तेनां राजभिंरुग्रैः सह ब्रह्मा॥१६॥

दक्षिणत उदङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्यंनेष्ट्वा। अय र राजाँप्रतिधृष्यों-ऽस्त्वितिं। बलं वै ब्रह्मा। बलंमराजोग्रः। बलंनेवास्मिन्बलं दधाति। शतेनं सूतग्रामणिभिः सह होताँ। पृश्चात्प्राङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्येनेष्ट्वा। अय र राजाऽस्यै विशः॥१७॥

बहुग्वे बंह्नश्वाये बहुजाविकायैं। बहुब्रीहियवाये बहुमाषितिलायैं। बहुहिर्ण्यायें बहुहिस्तकांये। बहुदासपूरुषायें रियमत्ये पृष्टिंमत्ये। बहुरायस्पोषाये राजास्त्विति। भूमा वे होतां। भूमा सूतग्रामण्यः। भूम्नेवास्मिन्भूमानं दधाति। श्तेने क्षत्तसङ्ग्रहीतृभिः सहोद्गाता। उत्तर्तो देक्षिणा तिष्ठन्त्रोक्षंति॥१८॥

अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वा। अयर राजा सर्वमायुरेत्विति। आयुर्वा उद्गाता। आयुः

क्षत्तसङ्ग्रहीतारंः। आयुंषैवास्मिन्नायुंर्दधाति। शृत १ शंतं भवन्ति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। चृतुः शृता भवन्ति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतिं तिष्ठति॥१९॥

बुह्मा विश उंक्षति दिश एकं च॥———[५]

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दित। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दित। यिन्निक्तमनांलब्धमुथ्मृजन्ति। यथ्स्तोक्यां अन्वाहं। सूर्वृहुतंमेवेनं करोत्यस्कन्दाय। अस्कन्नु हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दित। सहस्रुमन्वाह। सहस्रंसिम्मितः सुवृगीं लोकः। सुवृगस्यं लोकस्याभिजित्यै॥२०॥

यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित् मवं रुन्धीत। अपिरिमिता अन्वांह। अपिरिमितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्टिये। स्तोक्यां जुहोति। या एव वर्ष्या आपः। ता अवं रुन्धे। अस्यां जुहोति। इयं वा अग्निवैश्वानरः॥२१॥

अस्यामेवैनाः प्रतिष्ठापयति। उवाचं ह प्रजापंतिः। स्तोक्यांसु वा अहमंश्वमेधः

सङ्स्थांपयामि। तेन् ततः सङ्स्थिंतेन चर्मिति। अग्नये स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुहोति। सोमांय स्वाहेत्यांह। सोमांयैवैनं जुहोति। स्वित्रे स्वाहेत्यांह। स्वित्र एवैनं जुहोति॥२२॥

सरंस्वत्यै स्वाहेत्यांह। सरंस्वत्या एवैनंं जुहोति। पूष्णे स्वाहेत्यांह। पूष्ण एवैनं जुहोति। बृहस्पतंये स्वाहेत्यांह। बृहस्पतंय एवैनं जुहोति। अपां मोदांय स्वाहेत्यांह। अन्ध्र एवैनं जुहोति। वायवे स्वाहेत्यांह। वायवं एवैनं जुहोति॥२३॥ मित्राय स्वाहेत्यांह। मित्रायैवैनं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहेत्यांह। वर्रुणायैवैनं जुहोति। एताभ्यं एवैनं देवताभयो जुहोति। दर्शदश सम्पादं जुहोति। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। प्र वा एषों उस्माल्लोकाच्यंवते। यः परांचीराहुंतीर्जुहोतिं। पुनः पुनरभ्यावर्तं जुहोति। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। पुता र हु वाव सौं ऽश्वमेधस्य सङ्स्थितिमुवाचास्कन्दाय। अस्केन्न र हि तत्। यद्यज्ञस्य सङ्स्थितस्य स्कन्दिति॥२४॥

प्रजापंतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीतिं पुरस्तात्प्रत्यङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। प्रजापंतिर्वे

देवानांमन्नादो वीर्यावान्। अन्नाद्यंमेवास्मिन्वीर्यं दधाति। तस्मादश्वः पशूनामन्नादो वीर्यावत्तमः। इन्द्राग्निभ्यां त्वेतिं दक्षिणतः। इन्द्राग्नी वै देवानामोजिष्ठौ बिर्लष्ठौ। ओजं एवास्मिन्बलं दधाति। तस्मादश्वः पशूनामोजिष्ठौ बलिष्ठः। वायवे त्वेतिं पश्चात्। वायवे देवानांमाशः सारसारितंमः॥२५॥

ज्वमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामाशः सारसारितंमः। विश्वैभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युंत्तर्तः। विश्वे वै देवा देवानां यशस्वितंमाः। यशं पुवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनां यशस्वितंमः। देवेभ्यस्त्वेत्यधस्तौत्। देवा वै देवानामपंचिततमाः। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामपंचिततमः॥२६॥

सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युपरिष्टात्। सर्वे वै देवास्त्विषमन्तो हर्स्विनः। त्विषिमेवास्मिन् हरो दधाति। तस्मादश्वः पशूनां त्विषिमान् हर्स्वितमः। दिवे

त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेत्यांह। एभ्य एवैनं लोकेभ्यः प्रोक्षंति। सते त्वाऽसंते त्वाऽज्यस्त्वौषंधीभ्यस्त्वा विश्वैभ्यस्त्वा भूतेभ्य इत्याह। तस्मादश्वमेधयाजिन १ सर्वाणि भूतान्युपंजीवन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यत्प्रांजापृत्योऽश्वंः। अथ् कस्मादिनमन्याभ्यो देवताभ्योऽपि प्रोक्षतीतिं। अश्वे वै सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः। तं यद्विश्वैभ्यस्त्वा भूतेभ्य इति प्रोक्षति। देवतां एवास्मिन्नन्वा यांतयति। तस्मादश्वे सर्वा देवतां अन्वायंताः॥२७॥ सारसारितमोऽपंचिततमः प्राजापत्योऽश्वः पश्चं च॥ यथा वै हविषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यत्प्रोक्षितमनालब्धमुथ्मृजन्ति। यदंश्वचरितानिं जुहोतिं। सर्वहतंमेवैनं करोत्यस्केन्दाय। अस्केन्न् हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। ईङ्काराय स्वाहेङ्कंताय्

स्वाहेत्यांह। एतानि वा अश्वचिर्तानिं। चरितरेवैन् समंध्यति॥२८॥ तदांहुः। अनांहुतयो वा अश्वचिर्तानिं। नैता होत्व्यां इतिं। अथो खल्वांहुः। होत्व्यां एव। अत्र वावेवं विद्वानंश्वमेध सङ्स्थांपयति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। तस्माँ द्वोत्व्यां इतिं। बृहि्धां वा एनमेतदायतंनाद्दधाति। भ्रातृंव्यमस्मै जनयति॥२९॥

यस्यांनायत्नें उन्यत्राग्नेराहुंतीर्जुहोतिं। सावित्रिया इष्ट्याः पुरस्तां थ्स्वष्टकृतः। आहुवनीयें उश्वचिर्तानिं जुहोति। आयतंन एवास्याऽऽहुंतीर्जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। तदांहुः। यृज्ञमुखेयंज्ञमुखे होत्व्याः। यृज्ञस्य क्रुप्त्यें। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्या इतिं। अथो खल्वांहुः॥३०॥

लोकस्यानुंख्यात्या इति। अथो खल्वांहुः॥३०॥
यद्यंज्ञमुखेयंज्ञमुखे जुहुयात्। पृशुभिर्यजंमानं व्यर्धयेत्। अवं सुवृगां लोकात्पंद्येत।
पापीयान्थ्स्यादिति। स्कृदेव होत्व्याः। न यजंमानं पृशुभिर्व्यर्धयति। अभि सुवृगं लोकं जंयति। न पापीयान्भवति। अष्टाचंत्वारि शतमश्वरूपाणि जुहोति। अष्टाचंत्वारि शदक्षरा जगंती। जाग्तोऽश्वः प्राजापृत्यः समृद्धे। एक्मितिरिक्तं जुहोति। तस्मादेकः प्रजास्वर्धंकः॥३१॥

पश्ना ५ श्रेष्ठ्यं गच्छति॥३२॥

विभूमीत्रा प्रभूः पित्रेत्याह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवैनं परिददाति। अश्वोऽसि हयोऽसीत्याह। शास्त्येवैनंमेतत्। तस्माँच्छिष्टाः प्रजा जांयन्ते। अत्योऽसीत्याह। तस्मादश्वः सर्वेषां

प्रयशः श्रेष्ठ्यंमाप्नोति। य पृवं वेदं। नरोऽस्यवांऽिस सितंरिस वाज्यंसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। ययुर्नामाऽसीत्यांह। एतद्वा अश्वंस्य प्रियं नांमधेयम्। प्रियेणैवैनं नामधेयेनाभि वंदित। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्रा चेद्ध्वयेते। मित्रमेव भंवतः॥३३॥

आदित्यानां पत्वाऽन्विहीत्यांह। आदित्यानेवैनं गमयति। अग्नये स्वाहा स्वाहेंन्द्राग्निभ्यामितिं पूर्वहोमां जुंहोति। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। भूरंसि भुवे त्वा भव्याय त्वा भविष्यते त्वेत्युथ्मृजित सर्वत्वायं। देवां आशापाला पृतं देवेभ्योऽश्वं मेधांय प्रोक्षितं गोपायतेत्यांह। श्वतं वै तल्प्यां राजपुत्रा देवा आशापालाः। तेभ्यं पृवैनं परिं ददाति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतं गन्तोः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमितः स्वाहेतिं चतृषु पथ्म जुंहोति॥३४॥

पुता वा अश्वंस्य बन्धंनम्। ताभिरेवैनं बध्नाति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनमा गंच्छति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनं न जंहाति। राष्ट्रं वा अश्वमेधः। राष्ट्रे खलु वा पुते व्यायंच्छन्ते। येऽश्वं मेध्यू रक्षंन्ति। तेषां य उद्दवं गच्छंन्ति। राष्ट्रादेव ते राष्ट्रं गंच्छन्ति। अथ् य उद्दवं न गच्छंन्ति॥३५॥

राष्ट्रादेव ते व्यवंच्छिद्यन्ते। परा वा एष सिंच्यते। योऽब्लोंऽश्वमेधेन् यजंते। यदमित्रा अश्वं विन्देरन्। हुन्येतांस्य यज्ञः। चतुः शता रेक्षन्ति। यज्ञस्याघांताय। अथान्यमानीय प्रोक्षेयुः। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः॥३६॥

प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं यजेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। तस्यं तेपानस्यं। स्प्तात्मनों देवता उदंक्रामन्। सा दीक्षाऽभंवत्। स एतानिं वैश्वदेवान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स दीक्षामवांरुन्थ। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। दीक्षामेव तैर्यजंमानोऽवं रुन्थे॥३७॥

सप्त जुंहोति। सप्त हि ता देवतां उदक्रांमन्। अन्वहं जुंहोति। अन्वहमेव दीक्षामवं रुन्धे। त्रीणिं वैश्वदेवानिं जुहोति। चृत्वार्यौद्भहुणानिं। सप्त सम्पंद्यन्ते। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्धे॥३८॥

एकंविश्शतिं वैश्वदेवानिं जुहोति। एकंविश्शितवें देवलोकाः। द्वादेश् मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एंकविश्शः। एष सुंवर्गो लोकः। तहैव्यं क्षत्रम्। सा श्रीः। तद्वप्नस्यं विष्टपम्। तथ्स्वाराज्यमुच्यते॥३९॥

त्रिष्शतंमौद्भह्णानिं जुहोति। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। त्रेधा विभज्यं देवतां जुहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत अष्टमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

इमे लोकाः। एषां लोकानामार्स्यै। एषां लोकानां क्रुस्यै। अप वा एतस्मौत्प्राणाः ऋांमन्ति॥४०॥

यो दीक्षामंतिरेचयंति। सप्ताहं प्रचंरन्ति। सप्त वै शीर्षणयाः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणैरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्धे। पूर्णाहुतिमुत्तमां जुहोति। सर्वं वै पूर्णाहुतिः। सर्वमेवाप्नोति। अथों इयं वै पूँर्णाहुतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति॥४१॥

रुन्धे प्राणान्दीक्षामवं रुन्ध उच्यते क्रामन्ति तिष्ठति॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। तर सृष्टं न किश्चनोदंयच्छत्। तं वैश्वदेवान्येवोदंयच्छन्। यद्वैश्वदेवानि जुहोति। यज्ञस्योद्यत्यै। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहाँ। स्वाहाऽधीतुं मनेसे स्वाहाँ। स्वाहा मनेः प्रजापंतये स्वाहाँ। काय स्वाहा कस्मै स्वाहां कत्मस्मै

स्वाहेतिं प्राजापत्ये मुख्यें भवतः। प्रजापंतिमुखाभिरेवैनंं देवतांभिरुद्यंच्छते॥४२॥ अदित्यै स्वाहाऽदित्यै मह्यै स्वाहाऽदित्यै सुमृडीकायै स्वाहेत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैनं प्रतिष्ठायोद्यंच्छते। सरंस्वत्ये स्वाहा सरंस्वत्ये बृहत्यैं

-[88]

युच्छुते पुरुरूपांय स्वाहेत्यांहाष्टौ चं॥

स्वाह्य सरंस्वत्यै पाव्कायै स्वाहेत्यांह। वाग्वै सरंस्वती। वाचैवैन्मुद्यंच्छते। पूष्णे स्वाहां पूष्णे प्रपृथ्याय स्वाहां पूष्णे न्रन्धिषाय स्वाहेत्यांह। पृश्वो वै पूषा। पृश्विनेत्वेन्मुद्यंच्छते। त्वष्टे स्वाह्य त्वष्टे तुरीपाय स्वाह्य त्वष्टे पुरुरूपाय स्वाहेत्यांह। त्वष्ट्य वै पंशूनां मिथुनाना रूपकृत्। रूपमेव पृश्वं दधाति। अथों रूपैरेवैन्मुद्यंच्छते। विष्णंवे स्वाह्य विष्णंवे निखुर्यपाय स्वाह्य विष्णंवे निभूयपाय स्वाहेत्यांह। यज्ञो वै विष्णंः। यज्ञायैवैन्मुद्यंच्छते। पूर्णाहुतिमुंत्तमां जुंहोति। प्रत्युत्तंब्य्यै सयत्वायं॥४३॥

सावित्रमृष्टाकंपालं प्रातिर्निवंपति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रं प्रांतः सवनम्। प्रातः सवनादेवेनं गायित्रयाश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते। अथौ प्रातः सवनमेव तेनौऽऽप्रोति। गायत्रीं छन्दंः। सवित्रे प्रसवित्र एकांदशकपालं मध्यन्दिने।

एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रैष्टुंभुं माध्यं दिनु सर्वनम्। माध्यं दिनादेवैनु ध

सर्वनात्रिष्टुभश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते॥४४॥

अथो मार्ध्यं दिनमेव सर्वनं तेनांऽऽप्नोति। त्रिष्टुमं छन्दंः। सुवित्र आंसिवत्रे द्वादंशकपालमपराह्ने। द्वादंशाक्षरा जगंती। जागंतं तृतीयसवनम्। तृतीयसवनादेवैनं जगत्याश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते। अथौ तृतीयसवनमेव तेनाँ ऽऽप्रोति। जर्गतीं छन्दंः। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुक्तः पराँ परावतं गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमंतिः स्वाहेति चतंस्र आहुंतीर्जुहोति॥४५॥

चर्तस्रो दिशंः। दिग्भिरेवैनं परिगृह्णाति। आश्वंत्थो व्रजो भंवति। प्रजापंतिर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सो ऽश्वत्थे संवथ्सरमंतिष्ठत्। तदेश्वत्थस्या श्वत्यत्वम्। यदाश्वंत्थो व्रजो भवंति। स्व एवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥४६॥

त्रिष्टुभश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते जुहोति नवं च आ ब्रह्मेन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामित्यांह। ब्राह्मण एव ब्रह्मवर्चसं दंधाति।

तस्मौत्पुरा ब्रौह्मणो ब्रेह्मवर्चस्यंजायत। आऽस्मित्राष्ट्रे रांजन्यं इष्व्यः शूरो महार्थो जांयतामित्यांह। राजन्यं एव शौर्यं मंहिमानं दधाति। तस्मौत्पुरा रांजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थोऽजायत। दोग्ध्री धेनुरित्यांह। धेन्वामेव पयो दधाति। तस्मौत्पुरा दोग्ध्री धेनुरंजायत। वोढांऽनङ्गानित्यांह॥४७॥

अनुडुह्येव वीर्यं दधाति। तस्मौत्पुरा वोढांऽनुङ्गानंजायत। आशुः सिप्तिरत्यांह। अश्वं एव ज्वं दंधाति। तस्मौत्पुराऽऽशुरश्वोऽजायत। पुरेन्धिर्योषेत्यांह। योषित्येव रूपं दंधाति। तस्माथ्स्री युंवतिः प्रिया भावंका। जिष्णू रंथेष्ठा इत्यांह। आ ह् वै तत्रं जिष्णू रंथेष्ठा जांयते॥४८॥

यत्रैतेनं यज्ञेन यजन्ते। सभेयो युवेत्यांह। यो वै पूर्ववयसी। स सभेयो युवाँ। तस्माद्युवा पुमाँन्प्रियो भावुंकः। आऽस्य यजमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आह् वै तत्र यजमानस्य वीरो जांयते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजन्ते। निकामेनिकामे नः पुर्जन्यो वर्षित्वत्यांह। निकामेनिकामे ह वै तत्र पुर्जन्यो वर्षित्वत्यांह। निकामेनिकामे ह वै तत्र पुर्जन्यो वर्षित। यत्रैतेनं

यज्ञेन यजंन्ते। फुलिन्यों न ओषंधयः पच्यन्तामित्यांह। फुलिन्यों हु वै तत्रौषंधयः पच्यन्ते। यत्रैतेन यज्ञेन यजंन्ते। योगक्षेमो नंः कल्पतामित्यांह। कल्पंते हु वै तत्रे प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेन यज्ञेन यजंन्ते॥४९॥

प्रजापंतिर्देवेभ्यो युज्ञान्व्यादिंशत्। स आत्मन्नंश्वमेधमंधत्त। तं देवा अंब्रुवन्।

पुष वाव युज्ञः। यदंश्वमेधः। अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं पुतानंत्रहोमान्प्रायंच्छत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स देवानंप्रीणात्। यदंत्रहोमां जुहोतिं॥५०॥

देवानेव तैर्यजंमानः प्रीणाति। आज्यंन जुहोति। अग्नेर्वा एतद्रूपम्। यदाज्यम्। यदाज्यंन जुहोति। अग्निमेव तत्प्रींणाति। मधुंना जुहोति। महत्यै वा एतद्देवतांयै रूपम्। यन्मधुं। यन्मधुंना जुहोति॥५१॥

मृह्तीमेव तद्देवतां प्रीणाति। तृण्डुलैर्जुहोति। वसूनां वा एतद्रूपम्। यत्तंण्डुलाः। यत्तंण्डुलैर्जुहोतिं। वसूनेव तत्प्रीणाति। पृथुंकैर्जुहोति। रुद्राणां वा एतद्रूपम्। यत्पृथुंकाः। यत्पृथुंकैर्जुहोतिं॥५२॥

रुद्रानेव तत्प्रीणाति। लाजैर्जुहोति। आदित्यानां वा प्रतद्रूपम्। यल्लाजाः। यल्लाजैर्जुहोतिं। आदित्यानेव तत्प्रीणाति। क्रम्बैर्जुहोति। विश्वेषां वा पृतद्देवानार्थं रूपम्। यत्क्रम्बाः। यत्क्रम्बैर्जुहोतिं॥५३॥

विश्वांनेव तद्देवान्प्रींणाति। धानाभिर्जुहोति। नक्षंत्राणां वा एतद्रूपम्। यद्धानाः। यद्धानाभिर्जुहोतिं। नक्षंत्राण्येव तत्प्रींणाति। सक्तुंभिर्जुहोति। प्रजापतेर्वा एतद्रूपम्। यथ्मक्तंवः। यथ्मक्तुंभिर्जुहोतिं॥५४॥

प्रजांपतिमेव तत्प्रीणाति। म्सूस्यैंर्जुहोति। सर्वांसां वा एतद्देवतांना रूपम्। यन्म्सूस्यांनि। यन्म्सूस्यैंर्जुहोतिं। सर्वां एव तद्देवताः प्रीणाति। प्रियङ्गुत्णडुलैर्जुहोति। प्रियङ्गां हु वै नामैते। एतैर्वे देवा अश्वस्याङ्गांनि समंदधुः। यत्प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोतिं। अश्वंस्यैवाङ्गांनि सन्दंधाति। दशान्नांनि जुहोति। दशाक्षरा

विराट्। विराद्गृथ्सस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥५५॥

चुहोति मधुना जुहोति पृथुंकैर्जुहोति क्रम्बैर्जुहोति सक्तंभिर्जुहोति प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोति चृत्वारिं च (अन्नहोमानाऽऽज्येनाभ्रेमधुना तण्डुलैः पृथुंकैर्लाजैः क्रम्बैर्धानाभिः

सक्तुंभिर्मुसूर्यैः प्रियङ्गुतण्डुलैर्द्शान्नांनि द्वादंश।)॥••••••

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। त॰ सृष्ट॰ रक्षाईंस्यजिघा॰सन्। स एतान्प्रजापंतिर्नृक्त होमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षाङ्स्यपाहन्। यन्नक्त॰ होमां जुहोतिं। यज्ञादेव तैर्यजंमानो रक्षाङ्स्यपं हन्ति। आज्येन जुहोति। वज्रो वा आज्यम्। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षाङ्स्यपं हन्ति॥५६॥

आज्यंस्य प्रतिपदं करोति। प्राणो वा आज्यम्। मुख्त एवास्यं प्राणं दंधाति। अन्नहोमाञ्जहोति। शरीरवदेवावं रुन्धे। व्यत्यासं जुहोति। उभयस्यावंरुद्धै। नक्तं जुहोति। रक्षंसामपहत्यै। आज्यंनान्ततो जुहोति॥५७॥

प्राणो वा आज्यम्। उभयतं एवास्यं प्राणं दंधाति। पुरस्तां चोपरिष्टाच। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। द्वाभ्याः स्वाहेत्यांह। अमुष्मिन्नेव

लोके प्रति तिष्ठति। उभयोरेव लोकयोः प्रति तिष्ठति। अस्मिश्श्चामुष्मिश्र्या श्वाय स्वाहेत्यांह। श्वायुर्वे पुरुषः श्वतवीर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्थे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्थे। सर्वस्मै स्वाहेत्यांह। अपिरिमितमेवावं रुन्थे॥५८॥

प्रजापितं वा एष ईं फ्स्तीत्यांहः। यो ऽश्वमेधेन यर्जत इति। अथो आहुः। सर्वाणि भूतानीति। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। प्रजापितिवी एकंः। तमेवाऽऽप्नोति। एकंस्मै स्वाहा

भूतानाति। एकस्म स्वाहत्याहै। प्रजापात्वा एकः। तम्वाऽऽप्राति। एकस्म स्वाह्य द्वाभ्या्ड् स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। अभिपूर्वमेव सुंवर्गं लोकमेति। एकोत्तरं जुंहोति॥५९॥

एकवदेव सुंवर्गं लोकमेति। सन्तंतं जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। शताय स्वाहेत्यांह। शतायुर्वे पुरुषः शतवींर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्थे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्थे। अयुतांय स्वाहां नियुतांय स्वाहां प्रयुतांय स्वाहेत्यांह॥६०॥

त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकानवं रुन्थे। अर्बुदाय स्वाहेत्यांह। वाग्वा अर्बुदम्। वाचंमेवावं रुन्थे। न्यंर्बुदाय स्वाहेत्यांह। यो वै वाचो भूमा। तन्न्यंर्बुदम्। वाच एव भूमानमवं रुन्थे। सुमुद्राय स्वाहेत्यांह॥६१॥

समुद्रमेवाऽऽप्नोति। मध्यांय स्वाहेत्यांह। मध्यंमेवाऽऽप्नोति। अन्तांय स्वाहेत्यांह। अन्तंमेवाऽऽप्नोति। पुरार्धाय स्वाहेत्यांह। पुरार्धमेवाऽऽप्नोति। उषसे स्वाहा व्युष्ट्ये स्वाहेत्याह। रात्रिर्वा उषाः। अहर्व्युष्टिः। अहोरात्रे एवावं रुन्धे। अथों अहोरात्रयोंरेव प्रतिं तिष्ठति। ता यदुभयीर्दिवां वा नक्तं वा जुहुयात्। अहोरात्रे मोहयेत्। उषसे स्वाहा व्युष्ट्ये स्वाहोदेष्यते स्वाहोँ द्यते स्वाहेत्यनुंदिते जुहोति। उदिताय स्वाहां सुवर्गाय स्वाहां लोकाय स्वाहेत्युदिते जुहोति। अहोरात्रयोरव्यंतिमोहाय॥६२॥

पुकोत्तरं जुहोति प्रयुताय स्वाहेत्यांह समुद्राय स्वाहेत्याहाहुर्व्युष्टिः सप्त चं॥______[१६]

जुहोत्यनंन्तरित्यै॥६४॥

गमयति। आयंनाय स्वाहा प्रायंणाय स्वाहेत्युंद्रावाञ्जंहोति। सर्वमेवैनमस्कंन्न १ सुवुर्गं लोकं गंमयति। अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेतिं पूर्वहोमाञ्जंहोति। पूर्व एवं द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तिरंक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अग्नये स्वाहा सोमांय स्वाहेतिं पूर्वदीक्षा जुंहोति। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित॥६३॥ पृथिव्यै स्वाहाऽन्तरिक्षाय स्वाहेत्येंकवि॰शिनीं दीक्षां जुंहोति। एकंवि॰शतिर्वे देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एंकवि १ शः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्यै। भुवो देवानां

विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यंश्वनामानि जुहोति। उभयोरेवैनं लोकयौर्नामधेयं

अर्वाङ्यज्ञः सङ्कांमृत्वित्याप्तींर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याप्त्यैं। भूतं

कर्मणेत्यृंतुदीक्षा जुंहोति। ऋतूनेवास्मैं कल्पयति। अग्नये स्वाहां वायवे स्वाहेतिं

भव्यं भिवष्यदिति पर्यांप्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य पर्याप्त्ये। आ में गृहा भवन्त्वत्याभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याभूत्ये। अग्निना तपो-ऽन्वंभवदित्यंनुभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंभूत्ये। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहेति समस्तानि वैश्वदेवानि जुहोति। समस्तमेव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित॥६५॥

दुद्धः स्वाह्य हर्नूभ्या् स्वाहेत्यं इहोमाञ्जहोति। अङ्गंअङ्ग वै पुरुषस्य पाप्मोपंश्लिष्टः। अङ्गांदङ्गादेवैनं पाप्मन्स्तेनं मुञ्जति। अञ्चेताय स्वाहां कृष्णाय स्वाहां श्वेताय स्वाहेत्यंश्वरूपाणि जुहोति। रूपेरेवैन् समंध्यति। ओषधीभ्यः स्वाह्य मूलैभ्यः स्वाहेत्यंषिधहोमाञ्जहोति। द्वय्यो वा ओषंधयः। पुष्पेभ्योऽन्याः फलं गृह्णन्ति। मूलैभ्योऽन्याः। ता पुवोभयी्रवं रुन्धे॥६६॥

वनस्पतिभ्यः स्वाहेतिं वनस्पतिहोमाञ्जंहोति। आर्ण्यस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धै। मेषस्त्वां पचतैरंवृत्वित्यपाँच्यानि जुहोति। प्राणा वै देवा अपाँच्याः। प्राणानेवावं रुन्थे। कूप्याँभ्यः स्वाहाऽद्धः स्वाहेत्यपा होमाँ आहोति। अपसु वा आपः। अत्रं वा आपः। अद्भो वा अत्रं जायते। यदेवाद्भोऽत्रं जायते। तदवं रुन्थे॥६७॥

पूर्वदीक्षा जुंहोति पूर्व ष्ट्रिषन्तं भ्रातृंब्युमितं कामृत्यनंन्तरित्ये कामित रुन्धे जायंत एकं च॥

[१७]

अम्भार्श्स जुहोति। अयं वै लोकोऽम्भार्श्स। तस्य वस्वोऽधिपतयः। अग्निज्योतिः। यदम्भार्श्स जुहोतिं। इममेव लोकमवं रुन्धे। वसूनार्श्व सायुंज्यं गच्छति। अग्निं ज्योतिरवं रुन्धे। नभार्श्स जुहोति। अन्तरिक्षं वै नभार्श्स॥६८॥

तस्यं रुद्रा अधिपतयः। वायुर्ज्योतिः। यन्नभारंसि जुहोतिं। अन्तरिक्षमेवावं रुन्थे। रुद्राणार् सायुंज्यं गच्छति। वायुं ज्योतिरवं रुन्थे। महारंसि जुहोति। असौ वै लोको महारंसि। तस्यांदित्या अधिपतयः। सूर्यो ज्योतिः॥६९॥

यन्महा रेसि जुहोति। अमुमेव लोकमवं रुन्थे। आदित्यानार् सायुंज्यं गच्छति। सूर्यं ज्योतिरवं रुन्थे। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेति यव्यानि जुहोति। अन्नाद्यस्यावरुद्धे। मृयोभूर्वातो अभि वातूस्रा इति गव्यानि जुहोति। पृशूनामवंरुद्धै। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेतिं सन्ततिहोमाञ्जंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै॥७०॥

सिताय स्वाहाऽसिताय स्वाहेति प्रमुंक्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रमुंक्तौ। पृथिव्यै स्वाहाऽन्तिरक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। दत्वते स्वाहांऽदन्तकांय स्वाहेतिं शरीरहोमाञ्जंहोति। पितृलोकमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्धे। कस्त्वां युनिक्ति स त्वां युनिक्तिं परिधीन् युनिक्ति। इमे वै लोकाः परिधयः। इमानेवास्मै लोकान् युनिक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्यै॥७१॥

यः प्राणतो य आत्मदा इति मिह्मानौ जुहोति। सुवर्गो वै लोको महं।
सुवर्गमेव ताभ्यां लोकं यजमानोऽवं रुन्धे। आ ब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रंह्मवर्चसी
जायतामिति समंस्तानि ब्रह्मवर्चसानि जुहोति। ब्रह्मवर्चसमेव तैर्यजमानोऽवं
रुन्धे। जिज्ञ बीज्मिति जुहोत्यनन्तिरत्यै। अग्नये समनमत्पृथिव्ये समनमदिति
सन्नतिहोमाञ्जंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्नत्यै। भूताय स्वाहां भिवष्यते स्वाहेति
भूताभ्व्यौ होमौ जुहोति। अयं वै लोको भूतम्॥७२॥

सर्वस्यावंरुद्धै। यदऋंन्दः प्रथमं जायंमान इत्यंश्वस्तोमीयं जुहोति। सर्वस्याऽऽह्यैं।

सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनाँ ऽऽप्नोति। सर्वं जयति। योँ ऽश्वमेधेन यजंते॥७३॥ य उं चैनमेवं वेदं। यज्ञ रक्षा ईस्यजिघा रसन्। स एतान्प्रजापंतिर्नक्त रहोमानंपश्य तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षा इस्यपांहन्। यन्नं क १ होमा अहोति। यज्ञादेव तैर्यजंमानो रक्षाङ्स्यपंहन्ति। उषसे स्वाहा व्युष्ट्यै स्वाहेत्यंन्तुतो जुंहोति। सुवृर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्यै॥७४॥ वै नभार्रसि सूर्यो ज्योतिः सन्तंत्यै समंष्ट्यै भूतं यजंते नवं च॥= एकयूपो वैकादशिनीं वा। अन्येषां यज्ञानां यूपां भवन्ति। एकवि शिन्यंश्वमेधस्यं।

सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। बैल्वो वां खादिरो वां पालाशो वां। अन्येषां यज्ञऋतूनां यूपां भवन्ति। राज्जुंदाल एकंवि श्रात्यरिवरश्वमेधस्यं। सुवुर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्यै। नान्येषां पशूनां तेजन्या अवद्यन्ति। अवद्यन्त्यश्वंस्य॥७५॥

पाप्मा वै तेजनी। पाप्मनोऽपंहत्यै। प्रुक्षशाखायांमृन्येषां पशूनामंव्द्यन्ति। वेत्सशाखायामश्वंस्य। अपसुयोनिवा अश्वः। अपसुजो वेत्सः। स्व एवास्य योनाववं द्यति। यूपेषु ग्राम्यान्पशून्नियुञ्जन्ति। आरोकेष्वांरण्यान्धांरयन्ति। पृशूनां व्यावृत्त्यै। आ ग्राम्यान्पशूङ्गंनते। प्रार्ण्यान्ध्यंजन्ति। पाप्मनोऽपंहत्ये॥७६॥

राञ्जंदालमग्निष्ठं मिंनोति। भ्रूणहृत्याया अपंहत्यै। पौतुंद्रवावृभितों भवतः। पुण्यंस्य गुन्थस्यावंरुद्धै। भ्रूणहृत्यामेवास्मांदपहत्यं। पुण्यंन गुन्थेनोंभ्यतः परि

गृह्णाति। षड्वैल्वा भेवन्ति। ब्रह्मवर्चसस्यावंरुख्ये। षद्धांदिराः। तेज्ञसोऽवंरुख्ये॥७७॥ षद्धांलाशाः। सोमुपीथस्यावंरुद्धे। एकंविश्शतिः सम्पंद्यन्ते। एकंविश्शतिर्वे

षद्वांलाशाः। सोमपीथस्यावंरुद्धै। एकविश्शितिः सम्पंद्यन्ते। एकविश्शितिवै देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्यै। शृतं पृशवो भवन्ति॥७८॥ शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सर्वं वा अश्वमेध्याप्नोति। अपंरिमिता भवन्ति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धौ। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्माध्यत्यात्। दक्षिणतौंऽन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। उत्तर्तोऽश्वस्येति। वारुणो वा अश्वः॥७९॥

पुषा वै वर्रणस्य दिक्। स्वायांमेवास्यं दिश्यवंद्यति। यदितंरेषां पशूनामंवद्यति। शृतदेवत्यं तेनावं रुन्धे। चितेंऽग्नाविधं वैत्से कटेऽश्वं चिनोति। अपसुयोनिर्वा अश्वः। अपसुजो वेत्सः। स्व एवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति। पुरस्तांत्प्रत्यश्चं तूपरं चिनोति। पश्चात्प्राचीनं गोमृगम्॥८०॥

प्राणापानावेवास्मिन्थ्सम्यश्चौ दधाति। अश्वै तूपरं गोमृगमितिं सर्वहुतं पृताञ्जेहोति। एषां लोकानांमभिजित्यै। आत्मनाऽभि जुहोति। सात्मानमेवेन् स् सर्तनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं लोके भवति। य एवं वेदे। अथो वसोरेव धारां तेनावं रुन्थे। इलुवर्दाय स्वाहां बलिवर्दाय स्वाहेत्यांह। संवथ्सरो वा इलुवर्दः। परिवथ्सरो बंलिवर्दः। संवथ्सरोदेव परिवथ्सरादायुरवं रुन्थे।

आयुरेवास्मिन्दधाति। तस्मोदश्वमेधयाजी जुरसो विस्नसामुं लोकमेति॥८१॥

तेजुसोऽवंरुद्धौ भवुन्त्यश्वौ गोमृगर्मिलुवर्दश्चत्वारि च॥————[२०]

पुक्वि १ शोँ ऽग्निर्भवित। पुक्वि १ शः स्तोमंः। एकंवि १ शित्यूपाँः। यथा वा अश्वां वर्षमा वा वृषांणः स १ स्फुरेरन्ं। पुवमेव तथ्स्तोमाः स १ स्फुरेरन्ते। यदेकि वि १ शाः। ते यथ्संमृच्छेरन्ं। हुन्येताँस्य युज्ञः। द्वादृश पुवाग्निः स्यादित्यांहुः। द्वादृशः स्तोमंः॥८२॥

एकांदश् यूपाः। यद्वांदशौंऽग्निर्भवंति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्थे। यद्दश् यूपा भवंन्ति। दशौक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। य एकाद्शः। स्तनं एवास्यै सः॥८३॥

दुह एवैनां तेनं। तदांहुः। यद्बांदुशौंऽग्निः स्यौद्बाद्शः स्तोम् एकांदश् यूपौः। यथा स्थूरिणा यायात्। तादक्तत्। एकविश्श एवाग्निः स्यादित्यांहुः। एकविश्शः स्तोमः। एकविश्शतिर्यूपौः। यथा प्रष्टिभिर्यातिं। तादगेव तत्॥८४॥ यो वा अंश्वमेधे तिस्रः क्कुभो वेदे। क्कुद्ध राज्ञाँ भवति। एक्वि १ शौँऽग्निर्भवति। एक्वि १ शाँ एक्वि १ शित्रं। य एवं वेदे। क्कुद्ध राज्ञाँ भवति। यो वा अंश्वमेधे त्रीणि शीर्षाणि वेदे। शिरों ह राज्ञाँ भवति। एक्वि १ शौँऽग्निर्भवति। एक्वि १ शाँ एक्वि १ शित्रं। एक्वि १ शित्र

देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यदंश्वमेधेऽश्वेन मेध्येनोदंश्चो बहिष्पवमानः सर्पन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञांत्यै। न वै मंनुष्यः सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। अश्वो वै सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। यदुंद्गातोद्गार्थेत्। यथा क्षेत्रज्ञोऽन्येनं पृथा प्रतिपादयेत्। तादक्तत्॥८६॥

उद्गातारंमपुरुध्यं। अश्वंमुद्गीथायं वृणीते। यथां क्षेत्रज्ञोऽश्वंसा नयंति। एवमेवैनमश्वंः सुवृगं लोकमश्वंसा नयति। पुच्छंमुन्वा रंभन्ते। सुवृगंस्यं लोकस्य सम्ष्ट्यै। हिं करोति। सामैवाकः। हिं करोति। उद्गीथ एवास्य सः॥८७॥

वर्डबा उपं रुन्थन्ति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। अथो यथोपगातारं उपगायंन्ति। ताहगेव तत्। उदंगासीदश्वो मेध्य इत्यांह। प्राजापत्यो वा अश्वंः। प्रजापंतिरुद्गीथः। उद्गीथमेवावं रुन्थे। अथो ऋख्सामयोरेव प्रति तिष्ठति। हिरंण्येनोपाकंरोति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेव मुंखतो दंधाति। यजंमाने च प्रजासुं च। अथो हिरंण्यज्योतिरेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेति॥८८॥

तथ्स उपार्करोति चुत्वारिं च॥————[२२]

पुरुषो वै यज्ञः। यज्ञः प्रजापितिः। यदश्वे प्रशून्नियुञ्जन्ति। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुक्के। अर्श्वे तूप्रं गोमृगम्। तानिग्निष्ठ आलंभते। सेनामुखमेव तथ्सङ्श्यंति। तस्मौद्राजमुखं भीष्मं भावुंकम्। आग्नेयं कृष्णग्रीवं पुरस्तौक्षलाटै। पूर्वाग्निमेव तं कुंरुते॥८९॥

तस्मौत्पूर्वाग्निं पुरस्तौथ्स्थापयन्ति। पौष्णमुन्वश्चमै। अत्रं वै पूषा।

तस्मौत्पूर्वाग्नावांहार्यमा हंरन्ति। ऐन्द्रापौष्णमुपरिष्टात्। ऐन्द्रो वै रांजन्योऽन्नं पूषा। अन्नाद्येनैवैनंमुभ्यतः परि गृह्णाति। तस्मौद्राजन्यौऽन्नादो भावुंकः। आग्नेयौ कृष्णग्रीवौ बाहुवोः। बाहुवोरेव वीर्यं धत्ते॥९०॥

तस्मौद्राज्न्यो बाहुब्लीभावुंकः। त्वाष्ट्रौ लोमशस्क्थौ स्कथ्योः। स्कथ्योर्व वीर्यं धत्ते। तस्मौद्राज्न्यं ऊरुब्लीभावुंकः। शितिपृष्ठौ बांर्हस्पृत्यौ पृष्ठे। ब्रह्मवर्चसमेवोपिरिष्टाद्धत्ते। अथो क्वचे एवेते अभितः पर्यूहते। तस्मौद्राज्न्यः सन्नद्धो वीर्यं करोति। धात्रे पृंषोद्रम्धस्तौत्। प्रतिष्ठामेवेतां कुरुते। अथो इयं वै धाता। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। सौर्यं बलक्षं पुच्छै। उथ्सेधमेव तं कुरुते। तस्मौद्ध्सेधं भ्ये प्रजा अभिसङ्श्रंयन्ति॥९१॥

कुरुते धुत्ते कुरुते पश्चं च॥━────────ि २३]

साङ्ग्रहुण्या चतुष्टय्यो यो वै यः पितुश्रृत्वारो यथा निक्तं प्रजापंतये त्वा यथा प्रोक्षितं विभूराह प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं प्रजापंतिर किञ्चन सावित्रमा

ब्रह्मंत्र्यजापंतिर्देवैभ्यः प्रजापंती रक्षारंसि प्रजापंतिमीफ्सति विभूरंश्वनामान्यम्भाईस्येकयूपो राज्ज्ञंदालमेकविश्शो देवाः पुरुंपस्रयोविश्शतिः॥२३॥

साङ्गहुण्या तस्मादश्वमेधयाजी यत्परिमिता यद्यंज्ञमुखे यो दीक्षां देवानेव त्रयं इमे सितायं प्राणापानावेवास्मिन्तस्माँद्राजन्यं एकंनवितः॥९१॥

साङ्ग्रहण्या सङ्श्रंयन्ति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ नवमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। सोंऽस्माथ्सृष्टोऽपांकामत्। तमंष्टाद्शिभि्रनु प्रायुंङ्क। तमाप्तोत्। तमाप्ताऽष्टांद्शिभि्रवांरुन्थ। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्ते। यज्ञमेव तैराखा यजमानोऽवं रुन्थे। संव्थ्सरस्य वा एषा प्रतिमा। यदंष्टाद्शिनंः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः॥१॥

संवथ्सरौंऽष्टाद्शः। यदंष्टाद्शिनं आलभ्यन्तें। संवथ्सरमेव तैराह्वा यजंमानो-ऽवं रुन्थे। अग्निष्ठेंऽन्यान्पशूनुंपाक्ररोति। इतरेषु यूपेष्वष्टाद्शिनोऽजांमित्वाय। नवन्वालभ्यन्ते सवीर्यत्वायं। यदांरुण्यैः सर्इस्थापयेत्। व्यवंस्येतां पितापुत्रौ। व्यथ्वानः क्रामेयुः। विदूरं ग्रामयोर्ग्रामान्तौ स्याताम्॥२॥

ऋक्षीकाः पुरुषव्याघाः पंरिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरंण्येष्वाजांयेरन्। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदांरण्याः। यदांरण्यैः सर्इस्थापर्यंत्। क्षिप्रे यर्जमानुमरंण्यं मृत १ हंरेयुः। अरंण्यायतना ह्यांर्ण्याः पृशव इति। यत्पृशून्नालभेत। अनेवरुद्धा अस्य पशर्वः स्युः। यत्पर्यम्निकृतानुथ्मृजेत्॥३॥

यज्ञवेशसं कुर्यात्। यत्पश्नालभेते। तेनैव पश्नवं रुन्धे। यत्पर्यग्निकृतानुथ्मृजत्ययं

अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न यंज्ञवेश्वसम्भवति। न यजंमान्मरंण्यं मृतः हंरन्ति। ग्राम्येः सङ् स्थांपयति। एते वे पृशवः क्षेमो नामं। सं पितापुत्राववंस्यतः। समध्वांनः क्रामन्ति। समन्तिकं ग्रामंयोर्ग्रामान्तौ भंवतः। नर्क्षीकाः पुरुषव्याघ्राः परिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरंण्येष्वाजांयन्ते॥४॥

क्रातः स्यातपुरुष्यंत्रस्यांणे वा

प्रजापंतिरकामयतोभौ लोकाववं रुन्धीयेतिं। स एतानुभयाँन्पशूनंपश्यत्। ग्राम्याङ्श्चांरुण्याङ्श्चं। तानालंभता तैर्वे स उभौ लोकाववांरुन्धा ग्राम्यैरेव पशुभिरिमं लोकमवांरुन्धा आरुण्यैर्मुम्। यद्ग्राम्यान्पशूनालभंते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्धे। यदांरुण्यान्॥५॥

अमुं तैः। अनंवरुद्धो वा पृतस्यं संवध्मर इत्याहुः। य इतर्डतश्चातुर्मास्यानिं संवध्मरं प्रयुङ्क इतिं। पृतावान् वे संवध्मरः। यचांतुर्मास्यानिं। यदेते चांतुर्मास्याः पृशवं आलुभ्यन्तें। पृत्यक्षंमेव तैः संवध्मरं यजमानोऽवं रुन्धे। वि वा पृष पृजयां पृश्मिर्ऋध्यते। यः संवध्मरं प्रयुङ्के। संवध्मरः सुवर्गो लोकः॥६॥

सुवर्गं तु लोकं नापंराध्नोति। प्रजा वै पृशवं एकाद्शिनीं। यदेत ऐकादशिनाः पृशवं आलुभ्यन्तें। साक्षादेव प्रजां पृशून् यजमानोऽवं रुन्धे। प्रजापंतिर्विराजम-सृजत। सा सृष्टाऽश्वंमेधं प्राविशत्। तान्द्शिभिरनु प्रायंङ्कः। तामाप्तोत्। तामाप्ता दिशिभिरवारन्ध। यद्दिशनं आलभ्यन्ते॥७॥

विराजमेव तैरास्वा यजमानोऽवं रुन्थे। एकांदश द्शत् आलंभ्यन्ते। एकांदशाक्षरा त्रिष्ठुप्। त्रैष्टुंभाः पृशवंः। पृश्नेवावं रुन्थे। वैश्वदेवो वा अर्थः। नानादेवत्याः पृशवों भवन्ति। अर्श्वस्य सर्वत्वायं। नानांरूपा भवन्ति। तस्मान्नानांरूपाः पृशवंः। बहुरूपा भवन्ति। तस्मान्नहरूपाः पृशवः समृंद्धौ॥८॥

अपूर्णों होको दिश्तन आकृत्यन्ते नार्नारूपाः पुशवे हे चे॥—————[२]
अस्मै वै लोकार्य ग्राम्याः पुशव् आलभ्यन्ते। अमुष्मा आरुण्याः।

यद्ग्राम्यान्पशूनालभेते। इममेव तैर्लोकमर्व रुन्थे। यदांरुण्यान्। अमुं तैः। उभयांन्पशूनालभेते। गाम्या ५ श्चांरुण्या ५ श्चं। उभयों लीकयोरवंरु स्त्री। उभयांन्पशूना-लभेते॥ ९॥

ग्राम्या इश्चारण्या इश्ची उभयंस्यान्ना द्यस्यावं रुद्धै। उभयाँ न्यशूना लंभते। ग्राम्या इश्चारण्या इश्ची उभयंषां पशूना मवं रुद्धै। त्रयं स्त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। पुषां लोकाना माध्यै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्माँ थ्यत्यात्॥१०॥

अस्मिँ होके बहुवः कामा इति। यथ्सेमानीभ्यो देवताभ्योऽन्येऽन्ये पृशवं आलुभ्यन्ते। अस्मिन्नेव तह्नोके कामान्दधाति। तस्मादस्मिँ होके बहुवः कामाः। त्रयाणां त्रयाणाः सह वपा जुंहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यै। एषां लोकानां क्रुस्यै। पर्यग्निकृतानार्ण्यानुथ्मृंजन्त्यहि १ सायै॥११॥

अवंरुद्धा उभयाँ-युश्नालंभते सुत्यादिहिर्श्साये॥————[3]

युञ्जन्तिं ब्रुध्नमित्यांह। असौ वा आंदित्यो ब्रुधः। आदित्यमेवास्मैं युनक्ति। अरुषमित्यांह। अग्निर्वा अंरुषः। अग्निमेवास्मै युनक्ति। चरंन्त्रमित्यांह। वायुर्वे चरन्। वायुमेवास्मै युनक्ति। परितस्थुष इत्यांह॥१२॥

ड्मे वै लोकाः परितस्थुषंः। इमानेवास्मैं लोकान् युनिक्ति। रोचन्ते रोचना दिवीत्यांह। नक्षंत्राणि वै रोचना दिवि। नक्षंत्राण्येवास्मैं रोचयित। युअन्त्यंस्य काम्येत्यांह। कामानेवास्मैं युनिक्त। हरी विपंक्षसेत्यांह। इमे वै हरी विपंक्षसा। इमे एवास्मैं युनिक्त॥१३॥

शोणां धृष्णू नृवाह्सेत्यांह। अहोरात्रे वै नृवाहंसा। अहोरात्रे एवास्में युनिक्त। एता एवास्में देवतां युनिक्त। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्टियै। केतुं कृण्वन्नंकेतव इतिं ध्वजं प्रतिमुश्चित। यशं एवैन् राज्ञां गमयित। जीमूतंस्येव भवित प्रतीक्मित्यांह। यथायजुरेवैतत्। ये ते पन्थांनः सवितः पूर्व्यास् इत्यंध्वर्युर्यजंमानं वाचयत्यभिजिंत्यै॥१४॥

नवमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

परा वा एतस्यं यज्ञ एति। यस्यं पशुरुपाकृतोऽन्यत्र वेद्या एति। पुत इस्तोतरेतेनं पथा पुनरश्वमावर्तयासि न इत्याह। वायुर्वे स्तोता। वायुमेवास्यं पुरस्तां इधात्यावृत्त्ये। यथा वै हिवषों गृहीतस्य स्कन्दिति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यदंस्योपाकृतस्य लोमांनि शीयंन्ते। यद्वालेषु काचानावयंन्ति। लोमाँन्येवास्य तथ्सम्भंरन्ति॥१५॥

भूर्भुवः सुवरितिं प्राजापत्याभिरावंयन्ति। प्राजापत्यो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतया समर्थयन्ति। भूरिति महिषी। भुव इति वावाता। सुवरिति परिवृक्ती। एषां लोकानांमुभिजिंत्यै। हिरण्ययाः काचा भवन्ति। ज्योतिर्वे हिरण्यम्। राष्ट्रमंश्वमेधः॥१६॥

ज्योतिंश्चेवास्मैं राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। सहस्रं भवन्ति। सहस्रंसिम्मतः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। अप वा एतस्मात्तेजं इन्द्रियं पशवः श्रीः ऋामन्ति। यो ऽश्वमेधेन यजंते। वसंवस्त्वाऽञ्जन्तु गायत्रेण छन्दसेति महिष्यभ्यंनक्ति। तेजो वा आज्यम्। तेजों गायत्री। तेजंसैवास्मै तेजोऽवं रुन्धे॥१७॥

रुद्रास्त्वां अन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्द्रसेतिं वावातां। तेजो वा आज्यम्ं। इन्द्रियं त्रिष्टुप्। तेजंसैवास्मां इन्द्रियमवं रुन्धे। आदित्यास्त्वां ऽअन्तु जागंतेन् छन्द्रसेतिं परिवृक्ती। तेजो वा आज्यम्। पृशवो जगंती। तेजंसैवास्में पृशूनवं रुन्धे। पत्नंयोऽभ्यंअन्ति। श्रिया वा एतद्रूपम्॥१८॥

यत्प्रत्नयः। श्रियंमेवास्मिन्तद्दंधित। नास्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीरपं क्रामिन्त। लाजी(३)ञ्छाची(३)न् यशोममाँ(४) इत्यतिरिक्तमन्नमश्वायोपाहरिन्त। प्रजामेवान्नादीं कुर्वते। एतद्देवा अन्नमत्तैतदन्नमिद्ध प्रजापत् इत्याह। प्रजायामेवान्नाद्यं दधते। यदि नाविजिध्नेत्। अग्निः पृशुरांसीदित्यवंघ्रापयेत्। अवं हैव जिंघ्रति। आक्रान् वाजी क्रमैरत्यंक्रमीद्वाजी द्यौस्ते पृष्ठं पृथिवी स्थस्थमित्यश्वमनुमन्नयते। एषां लोकानांम्भिजित्यै। समिद्धो अञ्चन्कृदंरं मतीनामित्यश्वस्याप्रियो भवन्ति सरूपत्वायं॥१९॥

परिंतुस्थुषु इत्याहिमे एवास्मै युनक्त्व्यभिजित्यै भरन्त्यश्वमेषो रुन्धे रूपश्चिम्नति त्रीणि च॥————————————[४]

तेर्जसा वा एष ब्रह्मवर्चसेन् व्यृंद्धते। यों ऽश्वमेधेन् यर्जते। होतां च ब्रह्मा चं ब्रह्मोद्यं वदतः। तेर्जसा चैवैनं ब्रह्मवर्चसेनं च समर्धयतः। दक्षिणतो ब्रह्मा भंवति। दक्षिणत आंयतनो व ब्रह्मा। बार्ह्स्पत्यो व ब्रह्मा। ब्रह्मवर्चसमेवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्मादक्षिणोऽधौ ब्रह्मवर्चसितंरः। उत्तर्तो होतां भवति॥२०॥

उत्तर्त आंयतनो वै होताँ। आग्नेयो वै होताँ। तेजो वा अग्निः। तेजं एवास्यौत्तरतो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽर्धस्तेजस्वितंरः। यूपंमभितों वदतः। यज्मानदेवत्यों वै यूपंः। यजंमानमेव तेजंसा च ब्रह्मवर्चसेनं च समर्धयतः। किङ स्विदासीत्पूर्विचित्तिरित्यांह। द्यौर्वे वृष्टिः पूर्विचित्तिः॥२१॥

दिवंमेव वृष्टिमवं रुन्थे। किङ् स्विंदासीद्भृहद्वय इत्यांह। अश्वो वै बृहद्वयः। अश्वमेवावं रुन्थे। किङ् स्विंदासीत्पिशङ्गिलेत्यांह। रात्रिवै पिशङ्गिला। रात्रिमेवावं रुन्थे। किङ् स्विंदासीत्पिलिप्पिलेत्यांह। श्रीवै पिलिप्पिला। अन्नाद्यमेवावं रुन्थे॥२२॥

कः स्विदेकाकी चंरतीत्यांह। असौ वा आंदित्य एंकाकी चंरति। तेजं एवावं रुन्धे। क उस्विज्ञायते पुनिरत्यांह। चन्द्रमा वै जांयते पुनः। आयुरेवावं रुन्धे। किङ् स्विद्धिमस्यं भेषजमित्यांह। अग्निर्वे हिमस्यं भेषजम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। किङ् स्विदावपनं महदित्यांह॥२३॥

अयं वै लोक आवर्पनं महत्। अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। पृच्छामि त्वा पर्मन्तं पृथिव्या इत्यांह। वेदिवै परोऽन्तः पृथिव्याः। वेदिमेवावं रुन्धे। पृच्छामि त्वा भुवनस्य नाभिमित्यांह। यज्ञो वै भुवनस्य नाभिः। यज्ञमेवावं रुन्धे। पृच्छामि त्वा वृष्णो अश्वंस्य रेत् इत्यांह। सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतः। सोमपीथमेवावं रुन्धे। पृच्छामि वाचः पर्मं व्योमत्यांह। ब्रह्म वै वाचः पर्मं व्योम। ब्रह्मवर्च्समेवावं रुन्धे॥२४॥

अप वा एतस्मात्प्राणाः क्रांमन्ति। यौऽश्वमेधेन यजंते। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेति संज्ञप्यमान आहुतीर्जुहोति। प्राणानेवास्मिन्दधाति।

नवमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

नास्मांत्प्राणा अपंक्रामन्ति। अवंन्तीः स्थावंन्तीस्त्वाऽवन्तु। प्रियं त्वां प्रियाणांम्। वर्षिष्ठमाप्यांनाम्। निधीनां त्वां निधिपति हवामहे वसो मुमेत्यांह। अपैवास्मै तद्धंवते॥२५॥

अथों धुवन्त्येवैनम्ं। अथो न्येंवास्मैं हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य पृवैनं लोकभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अप वा एतेभ्यंः प्राणाः क्रांमन्ति॥२६॥

ये यज्ञे धुवंनं तन्वतें। न्वकृत्वः परियन्ति। नव् वै पुरुषे प्राणाः। प्राणान्वाऽऽत्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। अम्बे अम्बाल्यम्बिक इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवनाम्। सुभगे काम्पीलवासिनीत्यांह। तपं पृवेनामुपंनयति। सुवर्गे लोके सम्प्रोर्ण्वांथामित्यांह॥२७॥

सुवृर्गमेवैनां लोकं गंमयति। आऽहमंजानि गर्भधमा त्वमंजाऽसि गर्भधमित्यांह। प्रजा वै पृशवो गर्भः। प्रजामेव पृशूनात्मन्धंत्ते। देवा नवमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवृगं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यथ्सूचीभिरसिप्थान्कल्पर्यन्ति। सुवृगंस्यं लोकस्य प्रज्ञांत्ये। गायत्री त्रिष्टुज्ञगृतीत्यांह॥२८॥ यथायजुरेवैतत्। त्रय्यः सूच्यों भवन्ति। अयुस्मय्यों रज्तता हरिण्यः। अस्य

वै लोकस्यं रूपमंयस्मय्यंः। अन्तरिक्षस्य रज्ञताः। दिवो हरिण्यः। दिशो वा अयस्मय्यंः। अवान्तरिद्धा रंज्ञताः। ऊर्ध्वा हरिण्यः। दिशं एवास्मै कल्पयित। कस्त्वा छाति कस्त्वा विशास्तीत्याहाहि रंसाये॥२९॥

हुव्वे कामन्त्यूण्वंश्वामित्यंह जग्वीत्यंह कल्पय्येकं चा——[६]

अप वा एतस्माच्छी राष्ट्रं क्रांमित। यो ऽश्वमेधेन यजंते। ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रंयतादित्याह श्रीवै राष्ट्रमेश्वमेधः। श्रियमेवास्मै राष्ट्रमूर्ध्वमुच्छ्रंयित। वेणुभारङ्गिराविवेत्याह। राष्ट्रं वै भारः। राष्ट्रमेवास्मै पर्यूहिति। अथास्या मध्यमेधतामित्याह। श्रीवै राष्ट्रस्य मध्यम्॥३०॥ श्रियंमेवावं रुन्धे। शीते वातं पुनित्रवेत्यांह। क्षेमो वै राष्ट्रस्यं शीतो वातंः। क्षेममेवावं रुन्धे। यद्धंरिणी यवमत्तीत्यांह। विश्वं हेरिणी। राष्ट्रं यवंः। विशं चैवास्मै राष्ट्रं चं स्मीचीं दधाति। न पुष्टं पृशु मन्यत् इत्यांह। तस्माद्राजां पृशूत्र पृष्यंति॥३१॥

शूद्रा यदर्यंजारा न पोषांय धनायतीत्यांह। तस्माँद्वेशीपुत्रं नाभिषिश्चन्ते। इयं यका शंकुन्तिकेत्यांह। विड्वे शंकुन्तिका। राष्ट्रमश्चमेधः। विश्वं चैवास्मैं राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आहलमिति सर्पतीत्यांह। तस्माँद्राष्ट्राय विश्वंः सर्पन्ति। आहंतं गुभे पस् इत्यांह। विड्वे गर्भः॥३२॥

राष्ट्रं पर्सः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्मौद्राष्ट्रं विशं घातुंकम्। माता चं ते पिता चं तु इत्याह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवैनं परिंददाति। अग्रं वृक्षस्यं रोहतु इत्याह। श्रीवै वृक्षस्याग्रम्। श्रियंमेवावं रुन्धे॥३३॥

प्रसुंलामीति ते पिता गुभे मुष्टिमंत १ सयुदित्यां ह। विड्वै गर्भः। राष्ट्रं मुष्टिः।

राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विश् घातुंकम्। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति। ये यज्ञेऽपूतं वदंन्ति। द्रधिकाव्यणो अकारिष्मितिं सुरिम्मतीमृचं वदन्ति। प्राणा वै स्रुर्भयः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। आपो हि ष्ठा मयोभुव इत्यद्भिर्मार्जयन्ते। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांभिरेवाऽऽत्मानं पवयन्ते॥३४॥

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा प्रेणाऽनु प्राविंशत्। ताभ्यः पुनः सम्भवितुं नाशंक्रोत्। सौंऽब्रवीत्। ऋप्रवृदिथ्सः। यो मेतः पुनः सम्भरदितिं। तं देवा अश्वमेधेनैव सम्भरन्। ततो वै त आर्ध्रवन्। योऽश्वमेधेन् यजंते। प्रजापंतिमेव सम्भरत्यृध्नोतिं। पुरुष्मालंभते॥३५॥

वैराजो वै पुरुषः। विराजमेवालंभते। अथो अन्नं वै विराट्। अन्नमेवावं रुन्धे। अश्वमालंभते। प्राजापत्यो वा अश्वः। प्रजापंतिमेवालंभते। अथो श्रीर्वा एकंशफम्। श्रियमेवावं रुन्धे। गामालंभते॥३६॥

लभते गामालंभते परमों ऽष्टौ चं॥

युज्ञो वै गौः। युज्ञमेवार्लभते। अथो अत्रुं वै गौः। अत्र्रमेवार्व रुन्धे। अजावी आर्लभते भूम्ने। अथो पृष्टिर्वे भूमा। पृष्टिमेवार्व रुन्धे। पर्यमिकृतं पुरुषं चारण्या अधे ध्रमेजन्त्यहि एसायै। उभौ वा एतौ पृशू आर्लभ्येते। यश्चांवमो यश्चं पर्मः। तैं उस्योभयें युज्ञे बुद्धाः। अभीष्टां अभिप्रीताः। अभिजिता अभिहिता भवन्ति। नैनं दुङ्क्ष्वंः पृश्ववें युज्ञे बुद्धाः। अभीष्टां अभिप्रीताः। अभिजिता अभिजिता अभिहिता हि एसन्ति। यो उश्वमेधेन यज्ञते। य उं चैनमेवं वेदं॥३७॥

प्रथमेन वा एष स्तोमेन राध्वा। चतुष्टोमेन कृतेनायांनामुत्तरेहन्। एकविर्शे प्रतिष्ठायां प्रति तिष्ठति। एकविर्शात्प्रतिष्ठायां ऋतूनन्वारोहित। ऋतवो वै पृष्ठानि। ऋतवंः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिष्ठायं। देवतां अभ्यारोहित। शक्वरयः

पृष्ठं भेवन्त्यन्यदेन्यच्छन्देः। अन्यैंऽन्ये वा एते पृशवं आलेभ्यन्ते॥३८॥ उतेवं ग्राम्याः। उतेवांरुण्याः। अहंरेव रूपेण समर्धयति। अथो अहं एवैष बुलिर्ह्हियते। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदंजावयंश्वार्ण्याश्चं। एते वै सर्वे पृशवंः। यद्गव्या इतिं। गव्यान्पशूनुंत्तमेऽहं नालंभते॥३९॥

तेनैवोभयांन्पशूनवं रुन्धे। प्राजापत्या भंवन्ति। अनंभिजितस्याभिजिंत्यै। सौरीर्नवं श्वेता वशा अनूबन्ध्यां भवन्ति। अन्तत एव ब्रंह्मवर्चसमवं रुन्धे। सोमाय स्वराज्ञें ऽनोवाहावंनङ्वाहावितिं द्वन्द्विनंः पशूनालंभते। अहोरात्राणांमभिजिंत्यै। पश्भिर्वा एष व्यृध्यते। यो ऽश्वमेधेन यजंते। छगलं कल्मार्षं किकिदीविं विदीगयमिति त्वाष्ट्रान्पशूना लंभते। पशुभिरेवाऽऽत्मान समर्थयति। ऋतुभिर्वा एष व्यृध्यते। यौँऽश्वम्धेन यजंते। पिशङ्गास्त्रयो वास्नता इत्यृतुपशूनालंभते। ऋतुभिरेवाऽऽत्मान समर्धयति। आ वा एष पशुभ्यों वृश्च्यते। योंऽश्वमेधेन यजेते। पर्यम्रिकृता उथ्मृजन्त्यनावस्काय॥४०॥

प्रजापंतिरकामयत महानंत्रादः स्यामिति। स पुतावंश्वमेधे महिमानांवपश्यत्।

तावंगृह्णीत। ततो वै स महानंत्रादों उभवत्। यः कामयेत महानंत्रादः स्यामिति। स एतावंश्वमेधे महिमानौ गृह्णीत। महानेवात्रादो भवति। यज्ञमानदेवत्यां वै वपा। राजां महिमा। यद्वपां महिम्रोभ्यतः पिर्यजंति। यज्ञमानमेव राज्येनोभ्यतः पिरंगृह्णाति। पुरस्तांथ्स्वाहाकारा वा अन्ये देवाः। उपिरंष्टाथ्स्वाहाकारा अन्ये। ते वा एतेऽश्वं एव मेध्यं उभयेऽवंरुध्यन्ते। यद्वपां महिम्रोभ्यतः पिर्यजंति। तानेवोभयांन्त्रीणाति॥४१॥

वैश्वदेवो वा अर्थः। तं यत्प्रांजापृत्यं कुर्यात्। या देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन व्यर्धयेत्। देवताभ्यः समदं दध्यात्। स्तेगान्दश्ष्ट्राभ्यां मण्डूकां

भाग्धयन् व्यधयत्। द्वताभ्यः समद दध्यात्। स्तृगान्दः ष्ट्राभ्या मृण्डूका जम्भ्येभिरितिं। आज्यंमवदानं कृत्वा प्रतिसङ्ख्यायमाहुतीर्जुहोति। या एव देवता अपिभागाः। ता भाग्धेयेन् समर्धयति। न देवताभ्यः समदं दधाति॥४२॥

चतुंर्दशैतानंनुवाका अंहोत्यनंन्तरित्यै। प्रयासाय स्वाहेतिं पश्चदशम्। पश्चंदश् वा

अर्धमासस्य रात्रयः। अर्धमास्याः संवथ्सर आप्यते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते ऽब्रुवन्नग्नयः स्विष्टकृतः। अर्श्वस्य मेध्यंस्य वयमुंद्धारमुद्धरामहै। अथैतान्भि भंवामेति। ते लोहितमुदंहरन्त। ततो देवा अभवन्॥४३॥

पराऽसुंराः। यथ्स्वंष्टकृद्धो लोहितं जुहोति भ्रातृंव्याऽभिभूत्यै। भवंत्यात्मनाँ। पराँऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। गोमृग्कुण्ठेनं प्रथमामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वै गोमृगः। रुद्रौऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृशून्नर्त्थाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः पशूनभिमंन्यते॥४४॥

अश्वश्रफेनं द्वितीयामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वा एकंशफम्। रुद्रोंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृश्नन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः पृश्ननिमेन्यते। अयुस्मयेन कमण्डलुंना तृतीयाम्। आहुंतिं जुहोत्यायास्यों वै प्रजाः। रुद्रोंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव प्रजा अन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः प्रजा अभिमंन्यते॥४५॥

उथालभंबसको प्रजा अन्तर्वधाति हे चं । [११]
अर्श्वस्य वा आलंब्धस्य मेध् उदंक्रामत्। तदंश्वस्तोमीयंमभवत्। यदंश्वस्तोमीयं
जहोति। समेधमेवैनमालंभते। आज्यंन जहोति। मेधो वा आज्यमा मेधौ-

जुहोतिं। समेंधमेवैनमार्लभते। आज्येंन जुहोति। मेधो वा आज्यम्। मेधौं-ऽश्वस्तोमीयम्। मेधेनैवास्मिन्मेधं दधाति। षद्गिर्श्शतं जुहोति। षद्गिर्श्शदक्षरा बृहती॥४६॥

बार्ह्ताः पृशवंः। सा पंशूनां मात्रां। पृशूनेव मात्रंया समेध्यति। तायद्भूयंसीर्वा कनींयसीर्वा जुहुयात्। पृशून्मात्रंया व्यर्धयेत्। षद्भिरंशतं जुहोति। षद्भिरंशदक्षरा बृह्ती। बार्ह्ताः पृशवंः। सा पंशूनां मात्रां। पृशूनेव मात्रंया समेध्यति॥४७॥

अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। द्विपाद्वै पुरुषो द्विप्रंतिष्ठः। तदेनं प्रतिष्ठया समर्धियति। तदांहुः। अश्वस्तोमीयं पूर्व होत्व्याँ(३)न्द्विपदा(३) इतिं। अश्वो वा अश्वस्तोमीयम्। पुरुषो द्विपदाः। अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। तस्माँद्विपा चतुंष्पादमत्ति। अथौं द्विपदोव चतुंष्पदः प्रतिष्ठापयति। द्विपदां हुत्वा।

नान्यामुत्तंरामाहंतिं जुहुयात्। यद्न्यामुत्तंरामाहंतिं जुहुयात्। प्र प्रंतिष्ठायाँश्चयवेत। द्विपदां अन्ततो जुंहोति प्रतिष्ठित्यै॥४८॥

बृहुत्यंर्धयति स्थापयति पश्चं च॥—————[१२]

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। सोंऽस्माथ्सृष्टोऽपांत्रामत्। तं यंज्ञऋतुभि्रन्वैंच्छत्। तं यंज्ञऋतुभि्र्नांन्वंविन्दत्। तिमिष्टिंभि्रन्वैंच्छत्। तिमिष्टिंभि्रन्वंविन्दत्। तिदिष्टींनामिष्टित्वम्। यथ्संवथ्स्रिमिष्टिंभि्र्यजंते। अश्वमेव तदन्विंच्छति। सावित्रियों भवन्ति॥४९॥

इयं वै संविता। यो वा अस्यान्नश्यंति यो निलयंते। अस्यां वाव तं विन्दन्ति। न वा इमां कश्चनेत्यांहुः। तिर्यङ्गोर्ध्वोत्यंतुमर्ह्तीतिं। यथ्सांवित्रियो भवंन्ति। स्वितृ-प्रंसूत एवैनंमिच्छति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः पर्गं परावतं गन्तौः। यथ्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्य यत्ये धृत्यैं।॥५०॥

यत्प्रातरिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदन्विच्छति। यथ्सायं धृतींर्जुहोतिं।

अश्वंस्यैव यत्यै धृत्यैं। तस्मांथ्सायं प्रजाः क्षेम्यां भवन्ति। यत्प्रातिरिष्टिभिर्यजंते। अश्वंमेव तदन्विच्छति। तस्माद्दिवां नष्टैष एति। यत्प्रातिरिष्टिभिर्यजंते सायं धृतींर्जुहोतिं। अहोरात्राभ्यांमेवैनमन्विच्छति। अथो अहोरात्राभ्यांमेवास्मै योगक्षेमं कंल्पयति॥५१॥

अप वा एतस्माच्छी राष्ट्रं क्रांमति। यौंऽश्वमेधेन यजंते। ब्राह्मणौ वीणागाथिनौ

गायतः। श्रिया वा एतद्रूपम्। यद्वीणां। श्रियंमेवास्मिन्तद्धंत्तः। यदा खलु वै पुरुषः श्रियंमश्जुते। वीणांऽस्मै वाद्यते। तदांहुः। यदुभौ ब्राह्मणौ गायंताम्॥५२॥

प्रभ्रश्रंकास्माच्छीः स्यात्। न वै ब्राँह्मणे श्री रंमत् इतिं। ब्राह्मणाँऽन्यो गायेत्। राजन्योंऽन्यः। ब्रह्म वै ब्राँह्मणः। क्षत्र राजन्यः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतः श्रीः परिगृहीता भवति। तदांहुः। यदुभौ दिवा गायेताम्। अपाँस्माद्राष्ट्रं क्रांमेत्॥५३॥

गार्यताङ्गामेद्वाह्मणस्यं कल्पयतश्चत्वारिं

न वै ब्राँह्मणे राष्ट्र रंमत् इतिं। यदा खलु वै राजां कामयंते। अथं ब्राह्मणं जिनाति। दिवां ब्राह्मणो गायेत्। नक्त रं राजन्यः। ब्रह्मणो वै रूपमहंः। क्षत्रस्य रात्रिः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतो राष्ट्रं परिगृहीतं भवति। इत्यंददा इत्यंयजथा इत्यंपच इतिं ब्राह्मणो गायेत्। इष्टापूर्तं वै ब्राँह्मणस्यं॥५४॥

इष्टापूर्तेनैवेन् स समर्धयित। इत्यंजिना इत्यंयुध्यथा इत्यमु संङ्गाममंहिन्नितिं राजन्यः। युद्धं वै रांजन्यंस्य। युद्धेनैवेन् स समर्धयित। अक्रृंप्ता वा एतस्यर्तव् इत्यांहुः। योऽश्वमेधेन् यजंत इति। तिस्रोंऽन्यो गायंति तिस्रोंऽन्यः। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेवास्में कल्पयतः। ताभ्या स् स्र्स्थायाम्। अनोयुक्ते चं शते चं ददाति। शतायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति॥५५॥

सर्वेषु वा एषु लोकेषुं मृत्यवोऽन्वार्यत्ताः। तेभ्यो यदाहुंतीर्न जुंहुयात्।

लोकलोक एनं मृत्युर्विन्देत्। मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति।

लोकाल्लोकादेव मृत्युमवंयजते। नैनं लोकेलोंक मृत्युर्विन्दति। यद्मुष्मै स्वाहा-ऽमुष्मै स्वाहेति जुह्वंथ्स्अक्षीत। बहुं मृत्युम्मित्रं कुर्वीत। मृत्यवे स्वाहेत्येकंस्मा एवैकां जुहुयात्। एको वा अमुष्मिलोके मृत्युः॥५६॥

अश्नया मृत्युरेव। तमेवाम् ि होकेऽवंयजते। भ्रूणहृत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोति। भ्रूणहृत्यामेवावं यजते। तदांहुः। यद्भूणहृत्या पात्र्याऽथं। कस्मां द्यज्ञेऽपि क्रियत् इतिं। अमृत्युर्वा अन्यो भ्रूणहृत्याया इत्यांहुः। भ्रूणहृत्या वाव मृत्युरितिं। यद्भूणहत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोतिं॥५७॥

मृत्युमेवाऽऽहुंत्या तर्पयित्वा पंरिपाणं कृत्वा। भ्रूणघ्ने भेष्जं करोति। एता ह वै मुंण्डिभ औदन्यवः। भ्रूणहृत्याये प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार। यो हास्यापिं प्रजायां ब्राह्मण हिन्ते। सर्वस्मे तस्मै भेषजं करोति। जुम्बकाय स्वाहेत्यंवभृथ उत्तमामाहुंतिं जुहोति। वर्रुणो वै जुम्बकः। अन्तृत एव वर्रुणमवयजते।

खुलतेर्विक्रिधस्यं शुक्रस्यं पिङ्गाक्षस्यं मूर्धं जुंहोति। एतद्वै वर्रणस्य रूपम्। रूपेणैव वर्रणमवयजते॥५८॥

लोके मृत्युर्जुहोति मूर्धं जुंहोति द्वे चं॥

वारुणो वा अर्थः। तं देवतंया व्यर्धयति। यत्प्रांजापृत्यं करोतिं। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेत्याह। वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽश्वांय नमः प्रजापंतय इत्याह। प्राजापत्यो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽिधंपतय इत्याह॥५९॥

धर्मो वा अधिपतिः। धर्ममेवावं रुन्थे। अधिपतिर्स्यधिपतिं मा कुर्वधिपतिर्हं प्रजानां भूयास्मित्यांह। अधिपतिमेवेन समानानां करोति। मां धेहि मियं धेहीत्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। उपाकृताय स्वाहेत्युपाकृते जुहोति। आलंब्याय स्वाहेति नियुक्ते जुहोति। हुताय स्वाहेतिं हुते जुंहोति। एषां लोकानांमभिजिंत्ये॥६०॥

प्रवा एष एभ्यो लोकेभ्यंश्च्यवते। योंऽश्वमेधेन् यजंते। आ्रग्नेयमैंन्द्राग्नमांश्विनम्। तान्पशूनालंभते प्रतिष्ठित्यै। यदांग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतां एवावं रुन्थे। ब्रह्म वा अग्निः। क्षत्रमिन्द्रः। यदैंन्द्राग्नो भवंति॥६१॥

ब्रह्मक्षत्रे एवावं रुन्थे। यदाँश्विनो भवंति। आशिषामवंरुद्धै। त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। अग्नयेऽ रहोमुचेऽष्टाकंपाल इति दशंहविष्मिष्टिं निर्वपति। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। अग्नेर्मन्वे प्रथमस्य प्रचेतस् इतिं याज्यानुवाक्यां भवन्ति सर्वत्वायं॥६२॥

यद्यश्वं मुप्तपंद्विन्देत्। आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपत्। सौम्यं चरुम्। सावित्रमृष्टा-कंपालम्। यदांग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वां देवताः। देवतांभिरेवैनं भिषज्यति। यथ्मौम्यो भवंति। सोमो वा ओषंधीना र राजाः। याभ्यं पृवैनं विन्दितः॥६३॥ ताभिरेवैनं भिषज्यति। यथ्मांवित्रो भवंति। यथ्मांवित्रो भवंति। सिषज्यति। यथ्मांवित्रो भवंति। सिवतृप्रंसूत एवैनं भिषज्यति।

पुताभिरेवैनं देवतांभिर्भिषज्यति। अगदो हैव भंवति। पौष्णं चुरुं निर्वपेत्। यदिं श्लोणः स्यात्। पूषा वै श्लौण्यंस्य भिषक्। स पुवैनं भिषज्यति। अश्लोणो हैव भंवति॥६४॥

रौद्रं चुरुं निर्विपत्। यदिं मह्ती देवतांऽभिमन्येत। एत्द्देवत्यों वा अश्वः। स्वयैवैनं देवत्या भिषज्यति। अगदो हैव भेवति। वैश्वान्रं द्वादंशकपालं निर्विपेन्मृगाख्रे यदि नाऽऽगच्छैंत्। इयं वा अग्निवैश्वान्रः। इयमेवैनंमुर्चिभ्यां परिरोधमानंयति। आहेव सुत्यमहंगच्छति। यद्यंधीयात्॥६५॥

अग्नयेऽ रहोमुचेऽष्टाकंपालः। सौर्यं पर्यः। वायव्यं आज्यंभागः। यजंमानो वा अश्वः। अर्श्हसा वा एष गृहीतः। यस्याश्वो मेधाय प्रोक्षितोऽध्येति। यदर्श्होमुचे निर्वपंति। अर्श्हस एव तेन मुच्यते। यजंमानो वा अश्वः। रेतंसा वा एष व्यृध्यते॥६६॥

यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येतिं। सौर्यं रतः। यथ्सौर्यं पयो भवंति। रतंसैवैन् र

स समंध्यति। यजंमानो वा अश्वंः। गर्भैर्वा एष व्यृध्यते। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षिंतो-ऽध्येतिं। वायव्यां गर्भाः। यद्वांयव्यं आज्यंभागो भवंति। गर्भैर्वेन् १ स समंध्यति। अथो यस्यैषाऽश्वंमेधे प्रायंश्चित्तिः क्रियतें। इष्ट्वा वसीयान्भवति॥६७॥

तदांहुः। द्वादंश ब्रह्मौद्नान्थ्स इस्थिते निर्वपेत्। द्वाद्शिभिर्वजेतेतिं। यदिष्टिंभिर्यजेत। उपनामुंक एनं युज्ञः स्यात्। पापीया इस्तु स्यात्। आप्तानि वा एतस्य छन्दा स्सि। य ईजानः। तानि क एतावंदाशु पुनः प्रयुं श्रीतेतिं। सर्वा वै सङ्स्थिते यज्ञे वागांप्यते॥६८॥

साप्ता भंवति यातयाँम्नी। ऋूरीकृतेव हि भवत्यरुंष्कृता। सा न पुनः प्रयुज्येत्यांहुः। द्वादंशैव ब्रंह्मौद्नान्थ्सङ्स्थिते निर्वपत्। प्रजापंतिर्वा ओद्नः। यज्ञः प्रजापंतिः। उपनाम्क एनं यज्ञो भंवति। न पापीयान्भवति। द्वादंश भवन्ति। द्वादंशमासाः संवथ्सरः। संवथ्सर एव प्रतिं तिष्ठति॥६९॥

पृष वै विभूनीमं युज्ञः। सर्वर्श हु वै तत्रं विभु भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यजंन्ते। पृष वै प्रभूनीमं युज्ञः। सर्वर्श हु वै तत्रं प्रभु भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यजंन्ते। पृष

वा ऊर्जस्वान्नामं युज्ञः। सर्वर्षे हु वै तत्रोर्जस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै पर्यस्वान्नामं युज्ञः॥७०॥

सर्वर्ष हु वै तत्र पर्यस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै विधृंतो नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्र विधृंतं भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै व्यावृंतो नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्र व्यावृंत्तं भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वै प्रतिष्ठितो नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्र प्रतिष्ठितं भवति॥७१॥

यत्रैतेनं यज्ञेन यजन्ते। एष वै तेंज्स्वी नामं य्ज्ञः। सर्व ह वै तत्रं तेज्स्वि भंवति। यत्रैतेनं यज्ञेन यजन्ते। एष वै ब्रह्मवर्च्सी नामं य्ज्ञः। आ ह वै तत्रं ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयते। यत्रैतेनं य्ज्ञेन यजन्ते। एष वा अंतिव्याधी नामं य्ज्ञः। आ ह वै तत्रं राज्न्योंऽतिव्याधी जांयते। यत्रैतेनं य्ज्ञेन यजन्ते। एष वै

दीर्घो नामं यज्ञः। दीर्घायुंषो ह वै तत्रं मनुष्यां भवन्ति। यत्रैतेनं यज्ञेन यजन्ते। एष वै क्रुप्तो नामं यज्ञः। कल्पंते ह वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते॥७२॥

पर्यस्वान्नामं यज्ञः प्रतिष्ठितं भवति यत्रैतनं यज्ञेन यर्जन्ते षट्वं (एष वै विभूः प्रभृरूर्जस्वान्ययंस्वान् विधृतो व्यावृत्तः प्रतिष्ठितस्तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्यतिव्याधी दीर्घः

द्वादंश॥)॥

तार्प्येणाश्वर संज्ञंपयन्ति। युज्ञो वै तार्प्यम्। युज्ञेनैवैनुर समर्धयन्ति। यामेन साम्ना प्रस्तोताऽनूपंतिष्ठते। यमलोकमेवैनं गमयति। तार्प्ये चं कृत्यधीवासे चाश्व र संज्ञंपयन्ति। एतद्वै पंशूना र रूपम्। रूपेणैव पशूनवं रुन्थे। हिरण्यकशिपु भंवति। तेजसोऽवंरुद्धै॥७३॥

रुक्मो भवति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै। अश्वों भवति। प्रजापंतेरास्यैं। अस्य वै लोकस्यं रूपं तार्प्यम्। अन्तरिक्षस्य कृत्यधीवासः। दिवो हिरण्यकशिप्। आदित्यस्यं रुकाः। प्रजापंतरर्श्वः। इममेव लोकं तार्प्येणां ऽऽप्रोति॥ ७४॥

अन्तरिक्षं कृत्यधीवासेनं। दिवर्ं हिरण्यकशिपुनां। आदित्यर रुक्नेणं। अश्वेनैव मेध्येन प्रजापेतेः सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। एतासांमेव देवतांनार् सायुंज्यम्। सार्षितारं समानलोकतांमाप्नोति। योंऽश्वमेधेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥७५॥

अवंख्या आप्रोत्युष्टो ची।———————[२०] आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। तेऽङ्गिरस आदित्येभ्यः।

जाद्त्याश्वाङ्गरसञ्च सुवृग लाकऽस्पवन्ता तऽङ्गरस आद्त्यम्यः। अमुमादित्यमश्वर्थं श्वेतं भूतं दक्षिणामनयन्। तैंऽब्रुवन्। यन्नो नेष्ट। स वर्यो भूदितिं। तस्मादश्वर् सवर्येत्याह्वंयन्ति। तस्माँ द्युज्ञे वरो दीयते। यत्प्रजापंतिरा-लब्योऽश्वोऽभंवत्। तस्मादश्वो नामं॥७६॥

यच्छ्वयदरुरासींत्। तस्मादर्वा नामं। यथ्सद्यो वाजाँन्थ्समजंयत्। तस्माँद्वाजी नामं। यदसुराणां लोकानादंत्त। तस्मांदादित्यो नामं। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधेंऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिमुंपवपंति। योनिमन्तमेवेनमायतंनवन्तं करोति॥७७॥ योनिमानायतंनवान्भवति। य पृवं वेदं। प्राणापानौ वा पृतौ देवानाँम्। यदंकिश्वमेधौ। प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलुं वा पृतौ देवानाँम्। यदंकिश्वमेधौ। ओजो बलुंमेवावं रुन्धे। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधैंऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिं चिनोति। तावंकिश्वमेधौ। अर्काश्वमेधावेवावं रुन्धे। अर्थो अर्काश्वमेधयोरेव प्रति तिष्ठति॥७८॥

प्रातर्यष्टौस्मह् इति। एकं वा एतद्देवानामहीः। यथ्संवथ्सरः। तस्मादर्शः पुरस्तौथ्संवथ्सर आलेभ्यते। यत्प्रजापंतिरालुब्धोऽश्वोऽभवत्। तस्मादर्शः। यथ्सुद्यो मेधोऽभवत्॥७९॥

तस्मादश्वमेधः। वेदुकोऽश्वमाशुं भविति। य एवं वेदं। यद्वै तत्प्रजापंतिरालुब्धो-ऽश्वोऽभवत्। तस्मादश्वः प्रजापेतेः पशूनामनुरूपतमः। आऽस्यं पुत्रः प्रतिरूपो जायते। य एवं वेदं। सर्वाणि भूतानिं सम्भृत्यालंभते। समेनं देवास्तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं भरन्ति। योंऽश्वमेधेन यजंते॥८०॥

य उं चैनमेवं वेदं। एतद्वै तद्देवा एतान्देवताम्। पृशुं भूतं मेधायाऽऽऽलंभन्त। युज्ञमेव। युज्ञेनं युज्ञमंयजन्त देवाः। कामुप्रं युज्ञमंकुर्वत। तेंऽमृतुत्वमंकामयन्त। तेऽमृतत्वमंगच्छन्। योंऽश्वमेधेन यजंते। देवानांमेवायंनेनैति॥८१॥

प्राजापत्येनैव यज्ञेनं यजते काम्प्रेणं। अपुंनर्मारमेव गंच्छति। एतस्य वै रूपेणं पुरस्तांत्प्राजापत्यमृष्मं तूपरं बंहुरूपमालंभते। सर्वेभ्यः कामेंभ्यः। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनांऽऽप्नोति। सर्वं जयति। योंऽश्वमेधेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥८२॥

यो वा अश्वस्य मेध्यस्य लोमनी वेदं। अश्वस्यैव मेध्यस्य लोमं लोमं जुहोति।

अहोरात्रे वा अर्थस्य मेध्यस्य लोमनी। यथ्सायं प्रांतर्जुहोति। अर्थस्यैव मेध्यस्य

लोमं लोमं जुहोति। एतदंनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमं लोमं जुह्वति। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य पुदे वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य पुदेपंदे जुहोति। दर्शपूर्णमासौ वा अश्वंस्य मेध्यंस्य पदे॥८३॥

यद्दं रशपूर्णमासौ यजंते। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य प्रदेपंदे जुहोति। एतदंनुकृति ह
सम् वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य प्रदेपंदे जुह्वति। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य विवर्तनं
वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। असौ वा आंदित्योऽश्वंः।
स आंहवनीयमागंच्छति। तद्विवंतिते। यदंग्निहोत्रं जुहोतिं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुह्वति॥८४॥

पुदे अंग्रिहोत्रं जुहोति त्रीणिं च॥—————————[२३]

प्रजापंतिस्तमंष्टादशिभिः प्रजापंतिरकामयतोभावस्मै युञ्जन्ति तेजसाऽपंप्राणा अपुश्रीरूध्याँ प्रजापंतिः प्रेणाऽनुं प्रथमेनं प्रजापंतिरकामयत महान्वैश्वदेवो वा अश्वोऽश्वंस्य

प्रजापंतिस्तं यंज्ञकृतुभिरपुश्रीब्रांह्मणो सर्वेषु वारुणो यद्यश्वन्तदाहुरेष वै विभूस्तार्प्येणादित्याः प्रजापंतिं पितर् यो वा अश्वस्य मेध्यस्य लोर्मनी त्रयोवि॰शतिः॥२३॥

प्रजापंतिर्स्मिक्षोक उत्तरतः श्रियंमेव प्रजापंतिरकामयत महान्यत्प्रातः प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यः सर्वर्ष हु वै तत्र पर्यः स्वद्य उं चैनमेवं वेदं चृत्वार्यशींतिः॥८४॥ प्रजापंतिरश्वमेषं जुंह्वति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥तैत्तिरीय आरण्यकम्॥

॥ प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः॥

ॐ भद्रं कर्णंभिः शृणुयामं देवाः। भद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरैरङ्गैंस्तुष्टुवाश् संस्तुनूभिः। व्यशेम देविहतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नंः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यो अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षिभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टुवार् संस्तुनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यो अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पितिर्दधातु। आपमापाम्पः सर्वौः। अस्मादस्मादितोऽमुतः॥१॥

अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्ररिद्धंया। वाय्वश्वां रिष्म्पतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। मृहुसो महसः स्वंः। देवीः पंर्जन्यसूवंरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत॥२॥

अपाश्चीष्णम्पा रक्षः। अपाश्चीष्णम्पा रघमै। अपौघ्रामपं चावर्तिमै। अपेदेवीरितो हित। वर्ज्नं देवीरजीता इश्च। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत। शिवा नः शन्तमा भवन्तु। दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सुन्दिशि॥३॥

स्मृतिः प्रत्यक्षंमैतिह्यम्। अनुमानश्चतुष्ट्यम्। एतैरादित्यमण्डलम्। सर्वेरेवृ विधास्यते। सूर्यो मरीचिमादत्ते। सर्वस्माद्भवनाद्धि। तस्याः पाकविशेषेण। स्मृतं कालविशेषंणम्। नदीव प्रभवात्काचित्। अक्षय्याध्स्यन्दते यथा॥४॥

तां नद्योऽभि संमायन्ति। सोरुः सतीं न निवंति। एवं नानासंमुत्थानाः। कालाः संवथ्सर् श्रिंताः। अणुशश्च महश्रश्च। सर्वे समव्यन्त्रितम्। सतैः सर्वेः संमाविष्टः। ऊरुः सन्न निवर्तते। अधिसंवथ्सरं विद्यात्। तदेवं लक्षणे॥५॥

अणुभिश्च महिद्धिश्च। स्मार्रूढः प्रदृश्येते। संवथ्सरः प्रत्यक्षेण। नाधिसंत्वः प्रदृश्येते। पृटरो विक्लिधः पिङ्गः। एतद्वरुण्लक्षणम्। यत्रैतंदुपृदृश्येते। सृहस्रं तत्र नीयेते। एक १ हि शिरो नाना मुखे। कृथ्स्नं तंदतुलक्षणम्॥६॥

उभयतः सप्तैन्द्रियाणि। जिल्पतं त्वेव दिह्यते। शुक्ककृष्णे संवंथ्सर्स्य। दक्षिणवामयोः पार्श्वयोः। तस्यैषा भवंति। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्। विष्रं रूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भद्रा ते पूषित्रह रातिरस्त्विति। नात्र भवंनम्। न पूषा। न पृशवंः। नाऽऽदित्यः संवथ्सर एव प्रत्यक्षेण प्रियत्नमं विद्यात्। एतद्वे संवथ्सरस्य प्रियत्नमः रूपम्। योऽस्य महानर्थ उत्पथ्स्यमानो भवति। इदं पुण्यं कुरुष्वेति। तमाहर्रणं द्यात्॥७॥

———[२]
साकुआनारं सप्तथंमाहुरेकजम्। षडुंद्यमा ऋषंयो देवजा इतिं। तेषांमिष्टानि विहिंतानि धामुशः। स्थात्रे रेजन्ते विकृतानि रूपुशः। को नुं मर्या अमिथितः। सखा सखांयमब्रवीत्। जहांको अस्मदींषते। यस्तित्याजं सखिविद्र सखांयम्। न तस्यं वाच्यपिं भागो अस्ति। यदी ई शृणोत्यलक ई शृणोति॥८॥

न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति। ऋतुर्ऋतुना नुद्यमानः। विनंनादाभिधांवः। षष्टिश्च त्रिश्शंका वृत्याः। शुक्रकृष्णौ च षाष्टिंकौ। साराग्वस्रेर्ज्रदेक्षः। वसन्तो वसुंभिः सह। संवथ्सरस्यं सवितुः। प्रैषकृत्प्रंथमः स्मृतः। अमूनादयंतेत्यन्यान्॥९॥ अमू इश्चं परिरक्षंतः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। एतदेव

विजानीयात्। प्रमाणं कालपर्यये। विशेषणं तुं वक्ष्यामः। ऋतूनां तित्रबोधंत। शुक्रवासां रुद्रगणः। ग्रीष्मेणांऽऽवर्तते सह। निजहंन पृथिवी स्वाम्॥१०॥

ज्योतिषाँ ऽप्रतिख्येनं सः। विश्वरूपाणिं वासार्सा। आदित्यानां निबोधंत। संवध्मरीणं कर्मफलम्। वर्षाभिदेदतार् सह। अदुःखो दुःखचेक्षुरिव। तद्मांऽऽपीत इव दश्येते। शीतेनां व्यथंयित्रव। रुरुदेक्ष इव दश्येते। ह्लादयतें ज्वलंतश्चेव। शाम्यतंश्चास्य चक्षुंषी। या वै प्रजा भ्रंइश्यन्ते। संवध्मरात्ता भ्रंइश्यन्ते। याः प्रतितिष्ठन्ति। संवध्मरे ताः प्रतितिष्ठन्ति। वर्षाभ्यं इत्यर्थः॥११॥

_[3]

अक्षिदुःखोत्थितस्यैव। विप्रसंत्रे क्नीनिके। आङ्के चार्द्गणं नास्ति। ऋभूणां तित्रबोधेत। कनकाभानि वासार्श्स। अहतांनि निबोधेत। अन्नमश्रीतं मृज्मीत। अहं वो जीवनप्रदः। एता वाचः प्रयुज्यन्ते। श्रारद्यंत्रोपदृश्यंते॥१२॥

अभिधून्वन्तोऽभिघ्नंन्त इव। वातवंन्तो म्रुइंणाः। अमुतो जेतुमिषुमुंखिम्व। सन्नद्धाः सह दंदशे ह। अपध्वस्तैर्वस्तिवंर्णीर्व। विशिखासंः कपूर्दिनः। अनुद्धस्य योथ्स्यंमान्स्य। कुद्धस्यंव लोहिनी। हेमतश्चक्षुंषी विद्यात्। अक्ष्णयौः क्षिपणोरिव॥१३॥

दुर्भिक्षं देवेलोकेषु। मनूनांमुद्कं गृहे। एता वाचः प्रवदन्तीः। वैद्युतों यान्ति शैशिरीः। ता अग्निः पवंमना अन्वैक्षत। इह जीविकामपंरिपश्यन्। तस्यैषा भवंति। इहेहंवः स्वतपसः। मरुतः सूर्यत्वचः। शर्म सुप्रथा आवृंणे॥१४॥

[8]

अतिंताम्राणि वासार्श्स। अष्टिवंजिशतिष्ठिं च। विश्वे देवा विप्रहर्गता। अष्टिवंजिशतिष्ठिं च। विश्वे देवा विप्रहर्गता। अष्टिवंजिशतिष्ठिं च। विश्वे देवा विप्रहर्गता। अष्टिवंजिशतिष्ठिं। न राजा वंरुणो विभुः। नाग्निर्नेन्द्रो न पंवमानः। मातृक्कंचन् विद्यंते। दिव्यस्यैका धनुरार्त्तिः। पृथिव्यामपरा श्रिता॥१५॥

तस्येन्द्रो विम्निंरूपेण। धनुर्ज्यांमिछिनथ्स्वंयम्। तिदेन्द्रधनुंरित्युज्यम्। अभवंर्णेषु चक्षंते। एतदेव शंयोर्बार्हस्पत्यस्य। एतद्रुंद्रस्य धनुः। रुद्रस्यं त्वेव धनुंरार्तिः। शिर् उत्पिपेष। स प्रवग्योऽभवत्। तस्माद्यः सप्रवग्येणं यज्ञेन यज्ञंते। रुद्रस्य स शिरः प्रतिदधाति। नैन र् रुद्र आरुंको भवति। य एवं वेदं॥१६॥

अत्यूर्ध्वाक्षोऽतिरश्चात्। शिशिरः प्रदृश्यते। नैव रूपं नं वासार्धाः न चक्षुः प्रतिदृश्यते। अन्योन्यं तु नं हिङ्स्रातः। सृतस्तंद्देवलक्षणम्। लोहितोऽक्ष्णि शारशीष्णिः। सूर्यस्योदयनं प्रति। त्वं करोषि न्यञ्जलिकाम्। त्वं करोषि निजानुकाम्॥१७॥

निजानुका में न्यञ्जलिका। अमी वाचमुपासंतामिति। तस्मै सर्व ऋतवों नमन्ते। मर्यादाकरत्वात्प्रंपुरोधाम्। ब्राह्मणं आप्नोति। य एवं वेद। स खलु संवथ्सर एतैः सेनानींभिः सह। इन्द्राय सर्वान्कामानंभिवहति। स द्रप्सः। तस्यैषा भवंति॥१८॥ अवंद्रफ्सो अर्श्शुमतींमतिष्ठत्। इयानः कृष्णो दशिमेः सहस्रैः। आवर्तमिन्द्रः शच्या धर्मन्तम्। उपसुहि तं नृमणामर्थद्रामिति। एतयैवेन्द्रः सलावृंक्या सह। असुरान् पंरिवृश्चति। पृथिव्यु १ शुर्मती। तामुन्ववंस्थितः संवथ्सुरो दिवं चं। नैवं विद्षाऽऽचार्यान्तेवासिनौ। अन्योन्यस्मैं द्रुह्याताम्। यो द्रुह्यति। भ्रश्यते स्वंगिष्ठोकात्। इत्यृतुर्मण्डलानि। सूर्यमण्डलाँन्याख्यायिकाः। अत ऊर्ध्वर संनिर्वचनाः॥१९॥

आरोगो भ्राजः पटरंः पत्ङ्गः। स्वर्णरो ज्योतिषीमान् विभासः। ते अस्मै सर्वे दिवमातपुन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। कश्यंपोऽष्टमः। स महामेरुं

तिष्रितपाः॥२२॥

नं जहाति। तस्यैषा भवंति। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कुलं चित्रभानाः यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्॥२०॥

तस्मिन् राजानमधिविश्रयेमिमिति। ते अस्मै सर्वे कश्यपाञ्चोतिर्लभन्ते।

तान्थ्सोमः कश्यपादधिनिर्धमित। भ्रस्ताकर्मकृदिवैवम्। प्राणो जीवानीन्द्रियंजीवानि।

सप्त शीर्षंण्याः प्राणाः। सूर्या इंत्याचार्याः। अपश्यमहमेतान्थ्सप्त सूर्यानिति। पश्चकर्णो वाथ्स्यायनः। सप्तकर्णश्च प्राक्षिः॥२१॥ आनुश्रविक एव नौ कश्यंप इति। उभौ वेद्यिते। न हि शेकुमिव महामेरं गन्तुम्। अपश्यमहमेथ्सूर्यमण्डलं परिवर्तमानम्। गार्ग्यः प्राणत्रातः। गच्छन्त

मंहामेरुम्। एकं चाजहतम्। भ्राजपटरपतंङ्गा निहने। तिष्ठन्नांतपन्ति। तस्मांदिह

अमुत्रेतरे। तस्मांदिहातिष्ठितपाः। तेषांमेषा भवंति। सप्त सूर्या दिवमनुप्रविष्टाः। तानुन्वेतिं पृथिभिदिक्षिणावान्। ते अस्मै सर्वे घृतमांतपुन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। सप्तर्त्विजः सूर्या इंत्याचार्याः। तेषांमेषा भवंति। सप्त दिशो नानांसूर्याः॥२३॥

स्प्त होतांर ऋत्विजंः। देवा आदित्यां ये स्प्ता तेभिः सोमाभी रक्षंण इति। तदंप्याम्नायः। दिग्भाज ऋतूँन् करोति। एतंयैवावृता सहस्रसूर्यताया इति वैशम्पायनः। तस्यैषा भवंति। यद्यावं इन्द्र ते शृत शृतं भूमीः। उतस्युः। नत्वां विज्ञन्थ्सहस्र सूर्याः॥२४॥

अनु न जातमष्ट रोदंसी इति। नानालिङ्गत्वादृत्नां नानांसूर्यत्वम्। अष्टौ तु व्यवसिता इति। सूर्यमण्डलान्यष्टांत ऊर्ध्वम्। तेषांमेषा भवंति। चित्रं देवानामुदंगादनीकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुंषश्चेति॥२५॥

केदमभ्रं निविशते। क्वाय ५ संवथ्सरो मिथः। क्वाहः क्वेयं देव रात्री। क्व मासा

र्ऋतवः श्रिताः। अर्धमासां मुहूर्ताः। निमेषास्त्रंटिभिः सह। क्वेमा आपो निविश्नन्ते।

यदीतों यान्ति सम्प्रंति। काला अफ्सु निंविशन्ते। आपः सूर्ये सुमाहिंताः॥२६॥

अभ्राण्यपः प्रंपद्यन्ते। विद्युथ्सूर्ये समाहिता। अनवर्णे इंमे भूमी। इयं चांऽसौ च रोदंसी। किङ्स्विदत्रान्तरा भूतम्। येनेमे विधृते उभे। विष्णुना विधृते भूमी। इति

वंध्सस्य वेदंना। इरांवती धेनुमती हि भूतम्। सूयवसिनी मनुषे दशस्यै॥२७॥ व्यष्टभाद्रोदंसी विष्णंवेते। दाधर्थं पृथिवीम्भितीं मुयूखैंः। किं तिद्वष्णोर्बल-

व्यष्टभ्राद्रोदसी विष्णवृते। दाधर्थ पृथिवीम्भिती मृयूखः। कि तद्विष्णविल-माहुः। का दीप्तिः किं प्रायणम्। एको युद्धारयद्देवः। रेजती रोदसी उभे। वाताद्विष्णोर्बलमाहुः। अक्षराद्दीप्तिरुच्यते। त्रिपदाद्धारयद्देवः। यद्विष्णोरेकमुत्तमम्॥२८

अग्नयो वायंवश्चैव। एतदंस्य प्रायंणम्। एच्छामि त्वा पंरं मृत्युम्। अवमं मध्यमश्चंतुम्। लोकं च पुण्यंपापानाम्। एतत्पृंच्छामि सम्प्रंति। अमुमाहुः पंरं मृत्युम्। प्वमानं तु मध्यंमम्। अग्निरेवावंमो मृत्युः। चन्द्रमांश्चतुरुच्यंते॥२९॥

अनाभोगाः पेरं मृत्युम्। पापाः संयन्ति सर्वदा। आभोगास्त्वेवं संयन्ति। यत्र पुंण्यकृतो जनाः। ततो मध्यममायन्ति। चतुमंग्निं च सम्प्रति। पृच्छामि त्वां पापकृतः। यत्र यातयते यमः। त्वं नस्तद्वह्मंन् प्रब्रूहि। यदि वैत्थाऽसतो गृहान्॥३०॥ कश्यपांदुदिताः सूर्याः। पापान्निप्निन्ति सर्वदा। रोदस्योन्तंर्देशेषु। तत्र न्यस्यन्ते

वासवैः। तेऽशरीराः प्रंपद्यन्ते। यथाऽपुंण्यस्य कर्मणः। अपांण्यपादंकेशासः। तत्र तेंऽयोनिजा जंनाः। मृत्वा पुनर्मृत्युमांपद्यन्ते। अद्यमांनाः स्वकर्मभिः॥३१॥ आशातिकाः क्रिमंय इव। ततः पूयन्ते वासवैः। अपैतं मृत्युं जयति। य एवं

वेदं। स खल्वैवं विद्वाह्मणः। दीर्घश्रुंत्तमो भवंति। कश्यंपस्यातिंथिः सिद्धगंमनः

सिद्धार्गमनः। तस्यैषा भवंति। आयस्मिन्थ्सप्त वांसवाः। रोहंन्ति पूर्व्यां रुहंः॥३२॥ ऋषिंर्ह दीर्घृश्रुत्तंमः। इन्द्रस्य घर्मो अतिंथिरिति। कश्यपः पश्यंको भवति। यथ्सर्वं परिपश्यतीति सौक्ष्म्यात्। अथाग्नेरष्टपुंरुषस्य। तस्यैषा भवंति। अग्ने नयं सुपर्था राये अस्मान्। विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहराणमेनः।

भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेमेति॥३३॥

्राप्तिश्च जातंवेदाश्च। सहोजा अंजिराप्रभुः। वैश्वानरो नर्यापाश्च।

पङ्किराधाश्च सप्तमः। विसर्पेवाऽष्टंमोऽग्रीनाम्। एतेऽष्टौ वसवः, क्षिंता इति। यथर्त्वेवाग्नेरर्चिर्वर्णविशेषाः। नीलार्चिश्च पीतकाँचिश्चेति। अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैका दशंस्रीकस्य। प्रभाजमाना व्यवदाताः॥३४॥

याश्च वासुंकिवैद्युताः। रजताः पर्रुषाः श्यामाः। कपिला अंतिलोहिताः। ऊर्ध्वा अवपंतन्ताश्च। वैद्युत इंत्येकादश। नैनं वैद्युतों हिन्स्ति। य एवं वेद। स होवाच व्यासः पाराश्चर्यः। विद्युद्वधमेवाहं मृत्युमैंच्छिमिति। न त्वकाम हिन्ता। ३५॥ य एवं वेद। अथ गन्धर्वगणाः। स्वानुभ्राट्। अङ्घारिक्म्भारिः। हस्तः सुहंस्तः। कृशानुर्विश्वावंसुः। मूर्धन्वान्थ्सूर्यवृचाः। कृतिरित्येकादश गन्धर्वगणाः। देवाश्च महादेवाः। रश्मयश्च देवां गरिगरः॥३६॥

नैनं गरों हिन्स्ति। य एवं वेद। गौरी मिंमाय सलिलानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा परमे व्योमन्निति। वाचो विशेषणम्। अथ निगदंव्याख्याताः। ताननुर्क्रमिष्यामः। व्राहवंः स्वतुपसः॥३७॥

विद्युन्मंहसो धूपंयः। श्वापयो गृहमेधाँश्चेत्येते। ये चेमेऽशिंमिविद्विषः। पर्जन्याः सप्त पृथिवीमभिवंर्षन्ति। वृष्टिंभिरिति। एतयैव विभक्तिविंपरीताः। सप्तिभविं तैरुदीरिताः। अमूँल्लोकानभिवंर्षन्ति। तेषांमेषा भवंति। सुमानमेतदुदंकम्॥३८॥

उचैत्यंवचाहंभिः। भूमिं पूर्जन्या जिन्वंन्ति। दिवं जिन्वन्त्यग्नंय इति। यदक्षरं भूतकृतम्। विश्वं देवा उपासंते। मृहर्षिमस्य गोप्तारम्। जुमदंग्निमकुंर्वत। जुमदंग्निराप्यांयते। छन्दोंभिश्चतुरुत्त्ररेः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः॥३९॥

ब्रह्मणा वीर्यावता। शिवा नंः प्रदिशो दिशंः। तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवींः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। सोमपा (३) असोमपा (३) इति

निगदंव्याख्याताः॥४०॥

सहस्रवृदियं भूमिः। प्रं व्योम सहस्रवृत्। अश्विनां भुज्यूंनास्त्या। विश्वस्यं जगतस्पंती। जाया भूमिः पंतिर्व्योम। मिथुनंन्ता अतुर्यथः। पुत्रो बृहस्पंती रुद्रः। स्रमां इतिं स्रीपुमम्। शुक्रं वांम्न्यद्यंज्तं वांम्न्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिव स्थः॥४१॥

विश्वा हि माया अवंथः स्वधावन्तौ। भुद्रा वाँ पूषणाविह रातिरंस्तु। वासाँत्यौ चित्रौ जगंतो निधानौँ। द्यावांभूमी च्रथः सुरू सखायौ। ताविश्वनां रासभाँश्वा हवंं मे। शुभस्पती आगतर् सूर्ययां सह। त्युग्रोह भुज्युमंश्विनोदमेघे। र्यिं न कश्चिन्ममृवां (२) अवाहाः। तमूंहथुनौंभिरात्मन्वतींभिः। अन्तिरिक्षप्रिक्किरपोदकाभिः॥४२॥

तिसः, क्षपस्त्रिरहांतिव्रजिद्धिः। नासंत्या भुज्युमूहिथुः पत्ङ्गैः। समुद्रस्य

धन्वंन्नार्द्रस्यं पारे। त्रिभीरथैंः शृतपंद्भिः षडंश्वैः। सृवितारं वितंन्वन्तम्। अनुंबध्नाति शाम्बरः। आपपूर्षम्बंरश्चैव। सृवितारेपुसोऽभवत्। त्य सृतृप्तं विंदित्वैव। बहुसोम गिरं वंशी॥४३॥

अन्वेति तुग्रो वंक्रियान्तम्। आयसूयान्थ्सोमंतृपसुषु। स सङ्ग्रामस्तमों द्योऽत्योतः। वाचो गाः पिंपाति तत्। स तद्गोभिः स्तवाँ ऽत्येत्यन्ये। रक्षसानिन्वताश्चं ये। अन्वेति परिवृत्याऽस्तः। एवमेतौ स्थों अश्विना। ते एते द्युंः पृथिव्योः। अहंरहर्गर्भं दधाथे॥४४॥

तयोरितौ वृथ्सावंहोरात्रे। पृथिव्या अहं। दिवो रात्रिः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोरितौ वृथ्सौ। अग्निश्चांऽऽदित्यश्चं। रात्रेर्वृथ्सः। श्वेत आंदित्यः। अह्नोऽग्निः॥४५॥

ताम्रो अंरुणः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोर्तौ वृथ्सौ। वृत्रश्चं वैद्युतश्चं। अुग्नेर्वृत्रः। वैद्युतं आदित्यस्यं। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोर्तौ वथ्सौ॥४६॥

उष्मा चं नीहारश्चं। वृत्रस्योष्मा। वैद्युतस्यं नीहारः। तौ तावेव प्रतिंपद्येते। सेयः रात्रीं गुर्भिणीं पुत्रेण संवंसित। तस्या वा एतदुल्बणम्ं। यद्रात्रौं रृश्मयः। यथा गोर्गिभिण्यां उल्बणम्ं। एवमेतस्यां उल्बणम्ं। प्रजियष्णुः प्रजया च पशुभिश्च भवति। य एवं वेद। एतमुद्यन्तमिपयंन्तं चेति। आदित्यः पुण्यंस्य वृथ्सः। अथ पवित्राङ्गिरसः॥४७॥

प्वित्रंवन्तः परिवाज्ञमासंते। प्रितेषां प्रत्नो अभिरंक्षिति व्रतम्। मृहः संमुद्रं वर्रणस्तिरोदंधे। धीरां इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम्। प्वित्रं ते वितंतं ब्रह्मणस्पतें। प्रभुगीत्रांणि पर्येषिविश्वतः। अतंप्ततनूर्न तदामो अंश्रुते। शृतास् इद्वहंन्तस्तथ्समांशत। ब्रह्मा देवानाम्। असंतः सुद्ये ततंक्षुः॥४८॥ ऋषंयः सुप्तात्रिश्च यत्। सर्वेऽत्रयो अंगस्त्यश्च। नक्षंत्रैः शङ्कंतोऽवसन्। अथं

सवितुः श्यावाश्वस्याऽवर्तिकामस्य। अमी य ऋक्षा निहितास उचा। नक्तं दहंश्रे कुहंचिद्दिवेयुः। अदंब्धानि वर्रणस्य व्रतानिं। विचाकशंचन्द्रमा नक्षंत्रमेति। तथ्संवितुर्वरेण्यम्। भर्गो देवस्यं धीमहि॥४९॥

धियो यो नंः प्रचोदयाँत्। तथ्संवितुर्वृणीमहे। वयं देवस्य भोजंनम्। श्रेष्ठ र सर्वधातंमम्। तुरं भगंस्य धीमहि। अपांगूहत सविता तृभीन्। सर्वांन्दिवो अन्धंसः। नक्तं तान्यंभवन्दशे। अस्थ्यस्थ्रा सम्भंविष्यामः। नाम नामैव नाम मै॥५०॥

नपुरसंकं पुमा्र्स्र्यंस्मि। स्थावंरोऽस्म्यथ् जङ्गंमः। युजेऽयिक्ष् यष्टाहे चं। मयां भूतान्यंयक्षत। पृशवों ममं भूतानि। अनूबन्ध्योऽस्म्यंहं विभुः। स्त्रियंः सृतीः। ता उमे पुर्स आहुः। पश्यंदक्षण्वान्नविचेतद्न्यः। कृविर्यः पुत्रः स इमा चिकेत॥५१॥

यस्ता विजानाथ्संवितुः पितासंत्। अन्धो मणिमंविन्दत्। तमंनङ्गुलिरावंयत्। अग्रीवः प्रत्यंमुञ्चत्। तमजिंह्वा असश्चंत। ऊर्ध्वमूलमंवाक्छाखम्। वृक्षं यो वेद् सम्प्रंति। न स जातु जनः श्रद्धध्यात्। मृत्युर्मा मार्यादितिः। हसितः रुदितं गीतम्॥५२॥

वीणांपणवलासितम्। मृतं जीवं चं यत्किश्चित्। अङ्गानिं स्नेव विद्धिं तत्। अतृंष्युङ्स्तृष्यंध्यायत्। अस्माञ्जाता में मिथू चरत्रं। पुत्रो निर्ऋत्यां वैदेहः। अचेतां यश्च चेतनः। स तं मणिमंविन्दत्। सोऽनङ्गिलुरावंयत्। सोऽग्रीवः प्रत्यंमुञ्चत्॥५३॥

सोऽजिंह्वो असश्चंत। नैतमृषिं विदित्वा नगंरं प्रविशेत्। यंदि प्रविशेत्। मिथौ चरित्वा प्रविशेत्। तथ्सम्भवंस्य व्रतम्। आतमंग्ने रथं तिष्ठ। एकांश्वमेक्योजनम्। एकचक्रमेक्धुरम्। वातध्रांजिगतिं विभो। न रिष्यतिं न व्यथते॥५४॥

नास्याक्षो यातु सर्ज्ञति। यच्छ्वेताँन् रोहिंताङ्श्चाग्नेः। र्थे युंक्काऽधितिष्ठंति। एकया च दशभिश्चं स्वभूते। द्वाभ्यामिष्टये विर्श्शत्या च। तिसृभिश्च वहसे त्रिर्श्शता च। नियुद्भिर्वायविह तां विमुश्च॥५५॥

आतंनुष्व प्रतंनुष्व। उद्धमाऽऽधंम् सन्धंम। आदित्ये चन्द्रंवर्णानाम्। गर्भमाधेहि

यः पुमान्। इतः सिक्त र सूर्यगतम्। चन्द्रमंसे रसं कृधि। वारादं जनयाग्रेऽग्निम्। य एको रुद्र उच्यते। असङ्ख्याताः संहस्राणि। स्मर्यते न च दश्यते॥५६॥

पुवमेतं निंबोधत। आम्न्द्रैरिंन्द्र हरिंभिः। याहि म्यूरेरोमभिः। मा त्वा केचिन्नियेमुरिंन्न पाशिनः। द्धन्वेव ता इहि। मा म्न्द्रैरिंन्द्र हरिंभिः। यामि म्यूरेरोमभिः। मा मा केचिन्नियेमुरिंन्न पाशिनः। नि्धन्वेव तां (२) इमि। अणुभिश्च महद्भिश्च॥५७॥

निघृष्वैरस्मायुंतैः। कालैर्हरित्वमापृत्रेः। इन्द्राऽऽयांहि स्हस्रयुक्। अग्निर्विभ्राष्टिंवसनः। वायुः श्वेतिसिकद्रुकः। स्वथ्सरो विषूवर्णैः। नित्यास्तेऽनुचेरास्तव सुब्रह्मण्यो स्मुब्रह्मण्यो स्मुब्या स्मुब्ये स्मुब्रह्मण्यो स्मुब्रह्मण्यो स्मुब्ये स्मुब्रह्मण्यो

मेष वृषणश्चंस्य मेने॥५८॥
गौरावस्कन्दिन्नहल्यांयै जार। कौशिकब्राह्मण गौतमंब्रुवाण। अ्रुणश्चां

इहागंताः। वसंवः पृथिविक्षितंः। अष्टौदिग्वासंसोऽग्नयंः। अग्निश्च जातवेदाश्चेत्येते।

ताम्राश्वांस्ताम्रुरथाः। ताम्रवर्णांस्तथाऽसिताः। दण्डहस्ताः खाद्ग्दतः। इतो रुद्राः पराङ्गताः॥५९॥

उक्त इस्थानं प्रमाणं चं पुर् इत। बृह्स्पतिश्च सिवता चं। विश्वरूंपैरिहाऽऽगंताम्। रथेनोदक्वर्त्मना। अपसुषां इति तद्वंयोः। उक्तो वेषों वासार्धि च। कालावयवानामितः प्रतीच्या। वासात्यां इत्यश्विनोः। कोऽन्तिरक्षे शब्दं कंरोतीति। वासिष्टो रौहिणो मीमार्स्सां चुक्ते। तस्यैषा भवंति। वाश्रेवं विद्युदितिं। ब्रह्मण उदर्गणमिस। ब्रह्मण उदीरणंमिस। ब्रह्मण उपस्तरंणमिस। ब्रह्मण उपस्तरंणमिस। ब्रह्मण उपस्तरंणमिस। ब्रह्मण

[अपंक्रामत गर्भिण्यंः] अष्टयोनीमष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीमिमां महींम्। अहं वेद न में मृत्युः। न

अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीमिमां महींम्। अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयौन्युष्टपुंत्रम्। अष्टपंदिदम्न्तरिक्षम्। अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयोनीमुष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीमुमूं दिवम्॥६१॥

अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। सुत्रामांणं महीमू षु। अदितिर्द्यौरदितिर्न्तिरेक्षम्। अदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पश्चजनाः। अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्। अष्टौ पुत्रासो अदितेः। ये जातास्तन्वः परि। देवां (२) उपप्रैथ्सप्तभिः॥६२॥

प्रा मार्ताण्डमास्यंत्। सप्तिभिः पुत्रेरिदितिः। उप्रैत्पूर्व्यं युगम्। प्रजायं मृत्यवे तंत्। प्रा मार्ताण्डमाभरदितिं। ताननुक्रंमिष्यामः। मित्रश्च वर्रुणश्च। धाता चार्यमा चं। अश्राश्च भगश्च। इन्द्रश्च विवस्वाईश्चेत्येते। हिर्ण्यग्भी ह्रसः शुंचिषत्। ब्रह्मंजज्ञानं तदित्पदिमितिं। गुर्भः प्रांजापत्यः। अथु पुरुषः सप्त पुरुषः॥६३॥ [यथास्थानं गीर्भिण्यः]

योऽसौ तुपन्नुदेतिं। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायोदेतिं। मा में प्रजाया मा

पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायोदंगाः। असौ यौऽस्तमेति। स सर्वेषां भूतानौं प्राणानादायाऽस्तमेति। मा मैं प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायाऽस्तङ्गाः। असौ य आपूर्यति। स सर्वेषां भूतानौं प्राणैरापूर्यति॥६४॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरापूरिष्ठाः। असौ योऽपक्षीयंति। स सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंक्षीयति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंक्षेष्ठाः। अमूनि नक्षंत्राणि। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृपत् मोथ्सृंपत॥६५॥

ड्मे मासाँश्चार्थमासाश्चं। सर्वेषां भूतानाँ प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोथ्संपत। इम ऋतवंः। सर्वेषां भूतानाँ प्राणैरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोथ्संपत। अय॰ संवथ्सरः। सर्वेषां भूतानाँ प्राणैरपंप्रसर्पति चोथ्मंपीति च॥६६॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। इदमहंः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोथ्संपित च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। इय॰ रात्रिः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोथ्संपिति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। ॐ भूर्भुवः स्वंः। एतद्वो मिथुनं मा नो मिथुन॰ रीद्वम्॥६७॥

अथाऽऽदित्यस्याष्टपुंरुषस्य। वसूनामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रुद्राणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। आदित्यानामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। सताः सत्यानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अभिधून्वतांमभिष्नताम्। वातवंतां मुरुताम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अभिधून्वतांमभिष्नताम्। वातवंतां मुरुताम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। ऋभूणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाः

स्थाने स्वतेजंसा भानि। संवथ्सरंस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। रश्मयो वो मिथुनं मा नो मिथुंन रीद्वम्॥६८॥

आरोगस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। भ्राजस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। पटरस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। स्वर्णरस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। ज्योतिषीमतस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। विभासस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। कश्यपस्य स्थाने स्वतेर्जसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। आपो वो मिथुनं मा नो मिथुनं रिद्वम्॥६९॥

अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशंस्त्रीक्स्य। प्रभ्राजमानानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वासुिकवैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। श्यामानाः

रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। कपिलानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। ऊर्ध्वानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि॥७०॥

अवपतन्ताना र रुद्राणा इस्थाने स्वते जंसा भानि। वैद्युताना र रुद्राणा इ स्थाने स्वतेजंसा भानि। प्रभ्राजमानीना रुप्राणीना स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जमा भानि। वासुिकवैद्युतीनाः रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। रजताना इरुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। परुषाणा १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वते जंसा भानि। श्यामाना १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वतेर्ज्ञंसा भानि। कपिलानाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्ज्ञंसा भानि। अतिलोहितीना र रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। ऊर्ध्वाना र रुद्राणीना इ स्थाने स्वतेजंसा भानि। अवपतन्तीना र रुद्राणीना इस्थाने स्वतेजंसा भानि। वैद्युतीना र रुद्राणीना इस्थाने स्वते जंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। रूपाणि वो मिथुनं मा नो मिथुन र रीढ्वम्॥७१॥

अथाग्नेरष्टपुंरुष्स्य। अग्नेः पूर्विदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। जातवेदस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। सहोजसो दक्षिणदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा

उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। सहोजसो दक्षिणदिश्यस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। अजिराप्रभव उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। वैश्वानरस्यापरदिश्यस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। नर्यापस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। पङ्किराधस उदिश्यस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। विसर्पिण उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। दिशो वो मिथुनं मा नो मिथुंन रीढ्वम्॥७२॥

दक्षिणपूर्वस्यां दिशि विसंपीं नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। दक्षिणापरस्यां दिश्यविसंपीं नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरपूर्वस्यां दिशि विषादी नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरपूर्वस्यां दिशि विषादी नुरकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। आ

यस्मिन्थ्सप्त वासवा इन्द्रियाणि शतऋतंवित्येते॥७३॥

[१९]

इन्द्रघोषा वो वसुंभिः पुरस्तादुपंदधताम्। मनोजवसो वः पितृभिंदिक्षिणृत उपंदधताम्। प्रचेता वो रुद्रैः पृश्चादुपंदधताम्। विश्वकंमा व आदित्यैरुत्तरत उपंदधताम्। त्वष्टां वो रूपैरुपरिष्टादुपंदधताम्। संज्ञानं वः पंश्चादिति। आदित्यः सर्वोऽग्निः पृथिव्याम्। वायुर्न्तरिक्षे। सूर्यो दिवि। चन्द्रमा दिक्षु। नक्षंत्राणि स्वलोके। पुवा ह्यंव। पुवा ह्यंग्ने। पुवा हि वायो। पुवा हीन्द्र। पुवा हि पूषन्। पुवा हि देवाः॥७४॥

आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽम्तः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्ररिद्धंया। वाय्वश्वां रिम्पितयः। मरींच्यात्मानो अद्गेहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। मृहुसो महसः स्वः॥७५॥

देवीः पंर्जन्यसूवंरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। अपार्श्युष्णिम्पा रक्षः। अपार्श्युष्णि-मपा रघम्। अपाष्ट्रामपंचावर्तिम्। अपंदेवीरितो हित। वर्ज्यं देवीरजीताङ्श्च। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदिंतिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत॥७६॥

भृद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरैरङ्गैंस्तुष्टुवाश् संस्तुनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। केतवो अर्रुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठाश् श्रतधां हि। समाहितासो सहस्रधायसम्। शिवा नः शन्तमा भवन्तु। दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका सर्रस्वित। मा ते व्योम सन्दिशि॥७७॥

योऽपां पुष्पं वेदे। पुष्पंवान् प्रजावान् पशुमान् भविति। चन्द्रमा वा अपां पुष्पम्। पुष्पंवान् प्रजावान् पशुमान् भविति। य एवं वेदे। योऽपामायतेनं वेदे। आयतेनवान् भविति। अग्निर्वा अपामायतेनम्। आयतेनवान् भविति। यौऽग्नेरायतेनं वेदे॥७८॥ आयतेनवान् भविति। आपो वा अग्नेरायतेनम्। आयतेनवान् भविति। य एवं वेदे।

योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। वायुर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो वायोरायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति॥७९॥

आपो वै वायोरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। असौ वै तपंत्रपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽमुष्य तपंत आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वा अमुष्य तपंत आयतंनम्॥८०॥

आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। चन्द्रमा वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यश्चन्द्रमंस आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै चन्द्रमंस आयतंनम्। आयतंनवान् भवति॥८१॥

य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। नक्षंत्राणि वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो नक्षंत्राणामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै नक्षंत्राणामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं॥८२॥ योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। पूर्जन्यो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः पूर्जन्यंस्याऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै पूर्जन्यंस्याऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं॥८३॥

आयतंनवान् भवति। संवथ्सरो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः संवथ्सरस्याऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै संवथ्सरस्याऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। यौऽपसु नावं प्रतिष्ठितां वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥८४॥

ड्मे वै लोका अपसु प्रतिष्ठिताः। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। अपार रस्मुदंयरसन्। सूर्ये शुक्रर समाभृतम्। अपार रसंस्य यो रसः। तं वो गृह्णाम्युत्तममितिं। इमे वै लोका अपार रसः। तेऽमुष्मिन्नादित्ये समाभृताः। जानुद्व्रीम्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरियत्वा गुल्फद्व्रम्॥८५॥ पुष्करपर्णैः पुष्करदण्डैः पुष्करैश्चं सङ्स्तीर्य। तस्मिन्बिह्यसे। अग्निं प्रणीयोपसमाधार्य। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मौत्प्रणीतेऽयम्ग्निश्चीयतें। साप्रणीतेऽयम्पस् ह्ययं चीयतें। असौ भुवंनेऽप्यनांहिताग्निरेताः। तम्भितं पृता अबीष्टंका उपदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयोः। पृशुबन्धे चांतुर्मास्येषु॥८६॥

अथो आहुः। सर्वेषु यज्ञकृतुष्विति। एतद्धे स्म वा आहुः शण्डिलाः। कम्भिं चिनुते। स्त्रियम्भिं चिन्वानः। संवथ्सरं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिनुते। सावित्रम्भिं चिन्वानः। अमुमादित्यं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिनुते॥८७॥

नाचिकेतम् ग्निं चिन्वानः। प्राणान्प्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिन्ते। चातुर्होत्रियम् ग्निं चिन्वानः। ब्रह्मं प्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिन्ते। वैश्वसृजम् ग्निं चिन्वानः। शरीरं प्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिन्ते। उपानुवाक्यमाशुम् ग्निं चिन्वानः॥८८॥

ड्माँ श्लोकान्प्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिंनुते। ड्ममां रूणकेतुकम् ग्निं चिंन्वान इतिं। य पुवासौ। ड्तश्चा ऽमुतंश्चा ऽव्यतीपाती। तमितिं। यौं ऽग्नेर्मिथूया वेदं। मिथुन्वान्भवित। आपो वा अग्नेर्मिथ्याः। मिथुनवान्भवति। य एवं वेदं॥८९॥

कामुस्तदग्रे समवर्तताधि। मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्॥९०॥

आपो वा इदमांसन्थ्मिलिमेव। स प्रजापंतिरेकः पुष्करपूर्णे समेभवत्। तस्यान्तुर्मनंसि कामः समेवर्तत। इदः सृजेयमितिं। तस्माद्यत्पुरुषो मनसाऽभिगच्छंति। तद्वाचा वंदति। तत्कर्मणा करोति। तदेषाऽभ्यनूँक्ता।

स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनी्षेतिं। उपैनन्तदुपंनमित। यत्कांमो भवति। य एवं वेदं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तृत्वा। शरीरमधूनुत। तस्य यन्मा १ समासींत्। ततोंऽरुणाः केतवो वातंरशना ऋषंय उदंतिष्ठन्॥९१॥

ये नर्खाः। ते वैखानुसाः। ये वालाः। ते वालखिल्याः। यो रसः। सोऽपाम्। अन्तरतः कूर्मं भूतर सर्पन्तम्। तमंब्रवीत्। मम् वैत्वङ्गार्सा। समंभूत्॥९२॥

नेत्यंब्रवीत्। पूर्वमेवाहमिहासमितिं। तत्पुरुषस्य पुरुषत्वम्। स सहस्रंशीर्षा

पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। भूत्वोदंतिष्ठत्। तमंब्रवीत्। त्वं वै पूर्वर् समंभूः। त्विमदं पूर्वः कुरुष्वेति। स इत आदायाऽऽपः॥९३॥

अञ्चलिनां पुरस्तांदुपादंधात्। एवाह्येवेतिं। ततं आदित्य उदंतिष्ठत्। सा प्राची दिक्। अथांरुणः केतुर्दक्षिणत उपादंधात्। एवाह्यग्र इतिं। ततो वा अग्निरुदंतिष्ठत्। सा दंक्षिणा दिक्। अथांरुणः केतुः पृश्चादुपादंधात्। एवा हि वायो इतिं॥९४॥

ततों वायुरुदंतिष्ठत्। सा प्रतीची दिक्। अथांरुणः केतुरुत्तर्त उपादंधात्। एवाहीन्द्रेति। ततो वा इन्द्र उदंतिष्ठत्। सोदींची दिक्। अथांरुणः केतुर्मध्यं उपादंधात्। एवा हि पूषित्रिति। ततो वै पूषोदंतिष्ठत्। सेयं दिक्॥९५॥

अथांरुणः केतुरुपरिष्टादुपादंधात्। एवा हि देवा इति। ततों देवमनुष्याः पितरंः। गन्धर्वापसरस्श्रोदंतिष्ठन्। सोध्वां दिक्। या विप्रुषों विपरांपतन्। ताभ्योऽसुंरा रक्षार्श्स पिशाचाश्रोदंतिष्ठन्। तस्मात्ते परांभवन्। विप्रुङ्ग्यो हि ते समंभवन्। तदेषाऽभ्यनूक्ता॥९६॥ आपो ह् यहृंहृतीर्गर्भमायत्र्ं। दक्ष्वं दर्धाना जन्यंन्तीः स्वयम्भुम्। ततं इमेध्यसृंज्यन्त सर्गाः। अज्ञो वा इदः समंभूत्। तस्मादिदः सर्वं ब्रह्मं स्वयम्भिवतिं। तस्मादिदः सर्वं श्रिथिलमिवाऽध्रुवंमिवाभवत्। प्रजापतिवांव तत्। आत्मनाऽऽत्मानं विधायं। तदेवानुप्राविंशत्। तदेषाऽभ्यनूंक्ता॥९७॥

विधायं लोकान् विधायं भूतानि। विधाय सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। आत्मनाऽऽत्मानंम्भि संविवेशेति। सर्वमेवेदमा्ष्वा। सर्वमवुरुद्धां। तदेवानुप्रविंशति। य एवं वेदं॥९८॥

चतुंष्टय्य आपों गृह्णाति। चत्वारि वा अपार रूपाणि। मेघों विद्युत्। स्तुन्यित्वर्वृष्टिः। तान्येवावंरुन्थे। आतपंति वर्ष्यां गृह्णाति। ताः पुरस्तादुपंदधाति। पुता वै ब्रह्मवर्चस्या आपंः। मुख्त एव ब्रह्मवर्चसमवंरुन्थे। तस्मान्मुख्तो ब्रह्मवर्च्सितंरः॥९९॥

कूप्यां गृह्णाति। ता दंक्षिण्त उपंदधाति। एता वै तेंज्स्विनी्रापंः। तेजं एवास्यं दक्षिण्तो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽर्धस्तेज्स्वितंरः। स्थाव्रा गृंह्णाति। ताः पृश्चादुपंदधाति। प्रतिष्ठिता वै स्थांव्राः। पृश्चादेव प्रतितिष्ठति। वहंन्तीर्गृह्णाति॥१००॥

ता उत्तर्त उपंदधाति। ओजंसा वा एता वहंन्तीरिवोद्गंतीरिव आकूजंतीरिव धावंन्तीः। ओजं एवास्यौत्तरतो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽर्ध ओज्स्वितंरः। सम्भार्या गृह्णाति। ता मध्य उपंदधाति। इयं वै संम्भार्याः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। पुल्वल्या गृह्णाति। ता उपरिष्टादुपादंधाति॥१०१॥

असौ वै पंत्व्याः। अमुष्यांमेव प्रतितिष्ठति। दिक्षूपंदधाति। दिक्षु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्नं वा अन्नं जायते। यदेवान्चोऽन्नं जायते। तदवंरुन्धे। तं वा एतमंरुणाः केतवो वातंरश्ना ऋषंयोऽचिन्वन्। तस्मांदारुणकेतुकंः॥१०२॥ तदेषाऽभ्यनूंक्ता। केतवो अरुणासश्च। ऋषयो वातंरशनाः। प्रतिष्ठा श्रातधां हि।

समाहिंतासो सहस्रधायंसमितिं। शतशंश्चेव सहस्रंशश्च प्रतिंतिष्ठति। य एतमग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०३॥

जानुद्धीमुंत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरयति। अपार संवृत्वायं। पुष्करपर्णर रुकां पुरुषमित्युपद्धाति। तपो वै पुष्करपर्णम्। सत्य र रुकाः। अमृतं पुरुषः। पुताबुद्धा वाँऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति॥१०४॥

तदवंरुन्धे। कूर्ममुपंदधाति। अपामेव मेधुमवंरुन्धे। अथौ स्वृर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्रो। आपंमापामपः सर्वाः। अस्मादस्मादितोऽमुतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्रस्करर्द्धिया इति। वाय्वश्वां रश्मिपतयः। लोकं पृणच्छिद्रं पृण॥१०५॥

यास्तिस्रः पंरमजाः। इन्द्रघोषा वो वसुंभिरेवाह्यवेतिं। पश्चचितंय उपंदधाति। पाङ्कोऽग्निः। यावानेवाग्निः। तं चिनुते। लोकं पृणया द्वितीयामुपंदधाति। पश्चं पदा वै विराट्। तस्या वा इयं पादंः। अन्तरिक्षं पादंः। द्यौः पादंः। दिशः पादंः। परोरंजाः

पार्दः। विराज्येव प्रतितिष्ठति। य एतमग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०६॥

अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। तम्भित एता अबीष्टका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयौः। पृशुबन्धे चांतुर्मास्येषुं। अथो आहुः। सर्वेषुं यज्ञऋतुष्विति। अथं

ह स्माहारुणः स्वायम्भुवंः। सावित्रः सर्वोऽग्निरित्यनंनुषङ्गं मन्यामहे। नाना वा एतेषां वीर्याणि। कमग्निं चिनुते॥१०७॥

स्त्रियम्प्रिं चिन्वानः। कम्प्रिं चिन्ते। सावित्रम्प्रिं चिन्वानः। कम्प्रिं चिन्ते। नाचिकेतम्प्रिं चिन्वानः। कम्प्रिं चिन्ते। चातुर्होत्रियम्प्रिं चिन्वानः। कम्प्रिं चिन्ते। वैश्वसृजम्प्रिं चिन्वानः। कम्प्रिं चिन्ते॥१०८॥

उपानुवाक्यंमाशुम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिनुते। इममारुणकेतुकम्भिं चिन्वान इति। वृषा वा अभिः। वृषाणौ सङ्स्फालयेत्। हुन्येतास्य यज्ञः। तस्मान्नानुषज्यः। सोत्तंरवेदिषुं ऋतुषुं चिन्वीत। उत्तर्वेद्याङ् ह्यंभिश्चीयतें। प्रजाकांमश्चिन्वीत॥१०९॥ प्राजापत्यो वा एषों ऽग्निः। प्राजापत्याः प्रजाः। प्रजावां न भवति। य एवं वेदे। पृशुकां मश्चिन्वीत। स्ंज्ञान्ं वा एतत् पंशूनाम्। यदापंः। पृशूनामेव स्ंज्ञाने ऽग्निं चिनुते। पृशुमान् भवति। य एवं वेदे॥११०॥

वृष्टिंकामिश्चन्वीत। आपो वै वृष्टिंः। पूर्जन्यो वर्षुंको भवति। य एवं वेदं। आमयावी चिन्वीत। आपो वै भेषजम्। भेषजम्वासमै करोति। सर्वमायुरिति। अभिचर १ श्चिन्वीत। वज्रो वा आपः॥१११॥

वर्ज्रमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहंरित। स्तृणुत एनम्। तेर्ज्ञस्कामो यशंस्कामः। ब्रह्मवर्च्यसकामः स्वर्गकामश्चिन्वीत। एतावृद्वा वाऽस्ति। यावदेतत्। यावदेवास्ति। तदवंरुन्थे। तस्यैतद्वतम्। वर्षिति न धांवेत्॥११२॥

अमृतं वा आपंः। अमृत्स्यानंन्तिरत्यै। नाफ्सु मूत्रंपुरीषं कुंर्यात्। न निष्ठीवेत्। न विवसंनः स्नायात्। गुह्यो वा एषौंऽग्निः। एतस्याग्नेरनंतिदाहाय। न पुंष्करपूर्णानि हिरंण्यं वाऽधितिष्ठेंत्। एतस्याग्नेरनंभ्यारोहाय। न कूर्मस्याश्नीयात्। नोद्कस्याघातुंकान्येनंमोद्कानिं भवन्ति। अघातुंका आपंः। य एतमृग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥११३॥

इमानुंकं भुंवना सीषधेम। इन्द्रेश्च विश्वें च देवाः। यज्ञं चं नस्तन्वं चं प्रजां चं। आदित्यैरिन्द्रः सह सीषधातु। आदित्यैरिन्द्रः सर्गणो मुरुद्भिः। अस्माकं भूत्विवता तुनूनाम्। आप्नंवस्व प्रप्नंवस्व। आण्डीभंवज् मा मुहुः। सुखादीन्दुःखनिधनाम्। प्रतिमुश्चस्व स्वां पुरम्॥११४॥

मरीचयः स्वायम्भुवाः। ये शंरीराण्यंकल्पयन्। ते ते देहं केल्पयन्तु। मा चे ते ख्यारमं तीरिषत्। उत्तिष्ठत मा स्वंप्त। अग्निमिंच्छध्वं भारताः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः। सूर्येण स्युजोषसः। युवां सुवासाः। अष्टाचेऋा नवंद्वारा॥११५॥

देवानां पूर्रयोध्या। तस्यार् हिरण्मयः कोशः। स्वर्गो लोको ज्योतिषाऽऽवृंतः। यो वै तां ब्रह्मणो वेद। अमृतेनाऽऽवृतां पुरीम्। तस्मै ब्रह्म चं ब्रह्मा च। आयुः कीर्तिं प्रजां देदुः। विभ्राजमाना १ हरिणीम्। यशसां सम्परीवृताम्। पुर १ हिरण्मेयीं ब्रह्मा॥११६॥

विवेशांऽप्राजिता। पराङेत्यंज्याम्यी। पराङेत्यंनाश्की। इह चांमुत्रं चान्वेति। विद्वान्दंवासुरानुंभ्यान्। यत्कुंमारी मन्द्रयंते। यद्योषिद्यत्पंतिव्रतां। अरिष्टं यत्किं चे क्रियतें। अग्निस्तदनुंवेधति। अशृतांसः शृंतासश्च॥११७॥

युज्वानो येऽप्यंयुज्वनंः। स्वंयन्तो नापेंक्षन्ते। इन्द्रंमृग्निं चं ये विदुः। सिकंता इव संयन्ति। रिश्मिभिः समुदीरिताः। अस्माल्लोकादंमुष्माच। ऋषिभिरदातपृश्निभिः। अपेत् वीत् वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुंराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिर्त्तुः। भिर्व्यक्तम्॥११८॥

यमो दंदात्ववसानंमस्मै। नृ मुंणन्तु नृपात्वर्यः। अकृष्टा ये च कृष्टंजाः। कुमारीषु कुनीनीषु। जारिणीषु च ये हिताः। रेतः पीता आण्डंपीताः। अङ्गरिषु च ये हुताः। उभयान पुत्रंपौत्रकान्। युवेऽहं यमराजंगान्। शतिमन्नु श्रदंः॥११९॥

अदो यद्वर्ह्म विलुबम्। पितृणां च यमस्यं च। वर्रुणस्याश्विनोर्ग्नेः। मुरुतां च

प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

विहायंसाम्। काम्प्रयवंणं मे अस्तु। स ह्यंवास्मिं स्नातंनः। इति नाको ब्रह्मिश्रवों रायो धनम्। पुत्रानापों देवीरिहाऽऽहिंत॥१२०॥

विशींर्ष्णीं गृधंशीर्ष्णीं च। अपेतों निर्ऋति हैथः। परिबाध है श्वेतकुक्षम्। निजङ्क रेशवलोदंरम्। स् तान् वाच्यायंया सह। अग्ने नाशंय सन्हर्शः। ईर्ष्यासूये बुंभुक्षाम्। मृन्युं कृत्यां चं दीधिरे। रथेन कि श्रुकावंता। अग्ने नाशंय सन्हर्शः॥१२१॥

पूर्जन्याय प्रगायत। दिवस्पुत्रायं मीढुषें। स नों यवसंमिच्छतु। इदं वर्चः पूर्जन्याय स्वराजें। हृदो अस्त्वन्तंरन्तद्यंयोत। मृयोभूर्वातो विश्वकृष्टयः सन्त्वस्मे। सुपिप्पला ओषंधीर्देवगोपाः। यो गर्भमोषंधीनाम्। गर्वां कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्॥१२२॥

पुनंमांमैत्विन्द्रियम्। पुन्रायुः पुन्भंगः। पुन्र्ब्राह्मंणमेतु मा। पुन्द्रविंणमेतु मा। यन्मेऽद्य रेतः पृथिवीमस्कान्। यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापः। इदं तत्पुन्रादंदे। दीर्घायुत्वाय वर्चसे। यन्मे रेतः प्रसिंच्यते। यन्म आजांयते पुनः। तेनं माम्मृतं कुरु। तेनं सुप्रजसं कुरु॥१२३॥

अद्यस्तिरोऽधाऽजांयत। तवं वैश्रवणः संदा। तिरोंऽधेहि सप्त्रान्नंः। ये अपोऽश्नन्तिं केच्न। त्वाष्ट्रीं मायां वैश्रवणः। रथर्ं सहस्रवन्धुंरम्। पुरुश्चऋरं सहस्राश्वम्। आस्थायायाहि नो बिलिम्। यस्मै भूतानिं बिलिमावंहन्ति। धनं गावो हस्ति हिरंण्यमश्वान्॥१२४॥

असाम सुमृतौ युज्ञियंस्य। श्रियं बिश्रृतोऽन्नंमुखीं विराजम्। सुदुर्शने चे ऋौश्रे चं। मैनागे चं महागिरौ। शृतद्वाट्टारंगमुन्ता। सुरहार्यं नगरं तवं। इति मन्नाः। कल्पोंऽत ऊर्ध्वम्। यदि बलि॰ हरेंत्। हिर्ण्यनाभयें वितुदयें कौबेरायायं बंलिः॥१२५॥

ब्राह्मणां वयु स्मः। नमस्ते अस्तु मा मां हि स्सीः। अस्मात्प्रविश्यान्नमद्धीति। अथ तमग्निमांदधीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रंयुश्चीत। तिरोऽधा भूः। तिरोऽधा भुवंः॥१२६॥ तिरोऽधाः स्वंः। तिरोऽधा भूर्भवः स्वंः। सर्वेषां लोकानामाधिपत्यं सीदेति। अथ

सर्वभृताधिपतये नंम इति। अथ बलि॰ हत्वोपंतिष्ठेत। क्षत्रं क्षत्रं वैश्ववणः।

तिराऽधाः स्वः। तिराऽधा भूभुवः स्वः। सवषा लाकानामाधिपत्य सादात। अथ तमग्निमिन्धीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः स्वाहाँ। तिरोऽधा भुवः स्वाहाँ। तिरोऽधाः स्वंः स्वाहाँ। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः स्वाहाँ। यस्मिन्नस्य काले सर्वा आहुतीर्हुतां भवेयुः॥१२७॥

अपि ब्राह्मणंमुखीनाः। तस्मिन्नहः काले प्रयुश्चीत। परंः सुप्तजंनाद्वेपि। मास्म प्रमाद्यन्तंमाध्यापयेत्। सर्वार्थाः सिद्धान्ते। य एवं वेद। क्षुध्यन्निदंमजानताम्। सर्वार्था नं सिद्धान्ते। यस्ते विघातुंको भ्राता। ममान्तर्हृंदये श्रितः॥१२८॥ तस्मां इममग्रपिण्डं जुहोमि। स मैंऽर्थान्मा विवंधीत्। मिय् स्वाहाँ। राजाधिराजायं प्रसह्यसाहिनें। नमों वयं वैंश्रवणायं कुर्महे। स मे कामान्कामकामाय मह्यम्। कामेश्वरो वैंश्रवणो दंदात्। कुबेरायं वेश्रवणायं। महाराजाय नमंः। केतवो अरुंणासश्च। ऋष्यो वातंरशनाः। प्रतिष्ठाः शत्यां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमुडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दिशी॥१२९॥

संवथ्सरमेतंद्वतं चरेत्। द्वौं वा मासौ। नियमः संमासेन। तस्मिन्नियमंविशेषाः। त्रिषवणमुदकोपस्पूर्शी। चतुर्थकालपानंभक्तः स्यात्। अहरहर्वा भैक्षंमश्रीयात्। औदुम्बरीभिः समिद्धिरग्निं परिचरेत्। पुनर्मामैत्त्विन्द्रियमित्येतेनानुंवाकेन। उद्धृतपरिपूताभिरद्भिः कार्यं कुर्वीत॥१३०॥

अंसश्चयवान्। अग्नये वायवे सूर्याय। ब्रह्मणे प्रंजापृतये। चन्द्रमसे नंक्षत्रेभ्यः।

ऋत्भ्यः संवंध्सराय। वरुणायारुणायेति व्रतहोमाः। प्रवर्ग्यवंदादेशः। अरुणाः काँण्डऋषयः। अरण्यें ऽधीयीरन्। भद्रं कर्णेभिरिति द्वे जिपत्वा॥१३१॥

महानाम्नीभिरुदक र संइस्पर्श्य। तमाचाँर्यो दद्यात्। शिवा नः शन्तमेत्योषधीरालभ सुमृडीकेंति भूमिम्। एवमंपवर्गे। धेनुदक्षिणा। क॰सं वासंश्च क्षौमम्। अन्यंद्वा शुक्रम्। यथाशक्ति वा। एव इस्वाध्यायधर्मण। अरण्येऽधीयीत। तपस्वी पुण्यो

भवति तपस्वी पुंण्यो भवति॥१३२॥

भुद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भुद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरैरङ्गैंस्तुष्टुवा । संस्तनूभिः। व्यशेम देवहितं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः। स्वस्ति नः पूषा

विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यो अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृहस्पतिंर्दधातु॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृहते कंरोमि॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥

सह वै देवानां चासुराणां च यज्ञौ प्रतंतावास्तां वय सवर्गं लोकमें ष्यामो वयमें प्याम इति तेऽसुंराः सन्नह्य सहंसैवाचंरन् ब्रह्मचर्येण तपंसैव देवास्तेऽसुंरा अमुह्य इस्ते न प्राजान इस्ते परांऽभवन्ते न स्वर्गं लोकमांयन् प्रसृतेन वै यज्ञेन देवाः स्वर्गं लोकमायन्न प्रसृतेनासुरान् पराभावयन् प्रसृतो ह वै यंज्ञोपवीतिनों यज्ञोऽप्रंसृतोऽन्पवीतिनो यत्किं चं ब्राह्मणो यंज्ञोपवीत्यधींते यजंत एव तत्तस्मां द्यज्ञोपवीत्येवाधीयीत याजयेद्यजेत वा यज्ञस्य प्रसृत्या अजिनं वासो वा दक्षिणत उंपवीय दक्षिणं बाहुमुद्धंरतेऽवं धत्ते सव्यमितिं यज्ञोपवीतमेतदेव विपरीतं प्राचीनावीत १ संवीतं मानुषम्॥१॥

[8]

रक्षा रेसि ह वां पुरोऽनुवाके तपोग्रंमतिष्ठन्त तान् प्रजापंतिर्वरेणोपामंत्रयत तानि वरंमवृणीताऽऽदित्यो नो योद्धा इति तान् प्रजापंतिरब्रवीद्योधंयध्वमिति तस्मादुत्तिष्ठन्तु ह वा तानि रक्षा ईस्यादित्यं योधयन्ति यावदस्तमन्वगातानि ह वा एतानि रक्षा रेसि गायत्रिया ऽभिंमित्रितेनाम्भंसा शाम्यन्ति तदुं ह वा एते ब्रंह्मवादिनंः पूर्वाभिमुखाः सन्ध्यायां गायत्रियाऽभिमन्निता आपं ऊर्धं विक्षिपन्ति ता एता आपों वज्रीभूत्वा तानि रक्षा रेसि मन्देहारुणे द्वीपे प्रक्षिंपन्ति यत्प्रंदक्षिणं प्रक्रमन्ति तेनं पाप्मानुमवंधून्वन्त्युद्यन्तंमस्तं यन्तंम् आदित्यमंभिध्यायन् कुर्वन् ब्राँह्मणो विद्वान्थ्सकलं भद्रमंश्रुतेऽसावांदित्यो ब्रह्मेति ब्रह्मेव सन् ब्रह्माप्येति य एवं वेदं॥२॥

यद्देवा देवहेळेनं देवांसश्चकृमा वयम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्चतृर्तस्यर्तेन् मामित। देवां जीवनकाम्या यद्वाचाऽनृतमूदिम। तस्मांन्न इह मुश्चत् विश्वं देवाः स्जोषंसः। ऋतेनं द्यावापृथिवी ऋतेन् त्व॰ संरस्वति। कृतान्नः पाह्येनंसो यत्किं चार्नृतमूदिम। इन्द्राग्नी मित्रावर्रुणौ सोमो धाता बृह्स्पतिः। ते नो मुश्चन्त्वेनसो यदन्यकृतमारिम। सजातशर्सादुत जांमिशर्साञ्च्यायंसः शरसादुत वा कनीयसः। अनाधृष्टं देवकृतं यदेन्स्तस्मात् त्वम्स्माञ्जातवेदो मुमुग्धि॥३॥ यद्वाचा यन्मनंसा बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवद्धार् शिश्नेर्यदनृतं चकृमा वयम्।

अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु चकृम यानिं दुष्कृता। येनं त्रितो अंर्णवान्निर्बभूव येन सूर्यं तमंसो निर्मुमोर्च। येनेन्द्रो विश्वा अर्जहादरांतीस्तेनाहं ज्योतिषा ज्योतिरानशान आँक्षि। यत्कुसींदमप्रतीत्तं मयेह येनं यमस्यं निधिना चरांमि। एतत्तदंग्ने अनृणो भंवामि जीवंन्नेव प्रति तत्ते दधामि। यन्मयिं माता यदां पिपेष यदन्तरिक्षं यदाशसातिंक्रामामि त्रिते देवा दिवि जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नों अग्ने स त्वं नों अग्ने त्वमंग्ने अयासिं॥४॥

यददीं व्यत्रृणमृहं बुभूवादिंथ्सन्वा सञ्जगर् जनेंभ्यः। अग्निर्मा तस्मादिन्द्रेश्च संविदानौ प्रमुंश्चताम्। यद्धस्तांभ्यां चुकर् किल्बिंषाण्यक्षाणां वृग्नुमुंपुजिघ्नंमानः। विकुं सुको निर्ऋथो यश्चं निस्वनः। तेऽ(१)स्मद्यक्ष्ममनांगसो दूरादूरमंचीचतम्। निर्यक्ष्ममचीचते कृत्यां निर्ऋतिं च। तेन् योऽ(१)स्मथ्समृंच्छातै तमंस्मै प्रसुंवामसि। दुःशुरुसानुशुरुसाभ्यां घणनानुघणनं च। तेनान्योऽ(१)स्मथ्समृच्छातै तमंस्मै प्रसुंवामिस। सं वर्चसा पर्यसा सन्तनूभिरगंन्मिह मनंसा स॰ शिवेनं। त्वष्टां नो अत्र विदंधातु रायोऽनुंमाई तन्वो(१) यद्विलिष्टम्॥५॥ आयुंष्टे विश्वतों दधद्यमुग्निर्वरेंण्यः। पुनंस्ते प्राण आयांति परायक्ष्म र सुवामि ते। आयुर्दा अंग्ने हिवषों जुषाणो घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गर्व्यं पितेवं पुत्रमभिरंक्षतादिमम्। इममंग्न आयुंषे वर्चसे कृधि तिग्ममोजों वरुण

उग्रं पश्या चे राष्ट्रभृच तान्यंपसरसावनुंदत्तामृणानि। उग्रं पश्ये राष्ट्रंभृत्किल्बिंषाणि

यद्क्षवृत्तमनुंदत्तम्तत्। नेन्नं ऋणानृणव इथ्संमानो यमस्यं लोके अधिरञ्जरायं। अवं

ते हेळ उद्त्मिमीमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नों अग्ने स त्वं नो अग्ने। सङ्क्षंसुको

स्वपां अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दर्धद्रियं मिय पोषम्॥६॥
अग्निरऋषिः पर्वमानः पाश्चंजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महाग्यम्।
अग्ने जातान्प्रणुंदा नः सपत्नान्प्रत्यजांताञ्चातवेदो नुदस्व। अस्मे दीदिहि
सुमना अहेळञ्छर्मन्ते स्याम त्रिवरूथ उद्भौ। सहंसा जातान्प्रणुंदा नः
सपत्नान्प्रत्यजांताञ्चातवेदो नुदस्व। अधि नो ब्रूहि सुमन्स्यमांनो वयः स्याम्
प्रणुंदा नः सुपत्नान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा सित। ताः स्त्वं

सःशिंशाधि। मातेवाँस्मा अदिते शर्म यच्छ विश्वे देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्। अग्न

आयू ५ेषि पवस् आ सुवोर्जिमिषं च नः। आरे बांधस्व दुच्छुनांम्। अग्ने पर्वस्व

यो नः शपादशंपतो यश्चं नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्मैं निम्नुक्क सर्वं पापः समूहताम्। यो नः सपत्नो यो रणो मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतो

वृंत्रहं जिह वस्वस्मभ्यमाभर। अग्ने यो नोंऽभिदासंति समानो यश्च निष्ट्यः। तं

वय समिधं कृत्वा तुभ्यंमग्नेऽपिं दध्मसि॥७॥

मा तस्योच्छेषि किं चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदो यं चाहं द्वेष्मि यश्च माम्।

सर्वा इस्तानंग्ने सन्दंह या इश्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। यो अस्मभ्यंमरातीयाद्यश्चं नो द्वेषंते जनः। निन्दाद्यो अस्मान्दिएसाँच सर्वाङ्स्तान्मंष्मेषा कुरु। संश्रीतं मे ब्रह्म स॰िशंतं वीर्या(१)म्बलम्। स॰िशंतं क्षत्रं में जिष्णु यस्याहमस्मि पुरोहिंतः। उदेषां बाह् अंतिरमुद्वर्चो अथो बलम्ं। क्षिणोमि ब्रह्मणा ऽमित्रानुन्नयामि स्वा(१)म् अहम्। पुनर्मनः पुनरायुर्म आगात्पुनश्चक्षुः पुनः श्रोत्रं म आगात्पुनेः प्राणः पुनराकूतं

म आगात्पुनिश्चित्तं पुनराधीतं म आगात्। वैश्वानरो मेऽदेब्यस्तनूपा अवंबाधतां दुरितानि विश्वा॥८॥

वैश्वानराय प्रतिवेदयामो यदीनृण संङ्गरो देवतांसु। स एतान्पाशांन् प्रमुचन् प्रवेंद स नों मुश्चातु दुरितादवद्यात्। वैश्वानरः पर्वयात्रः पवित्रैर्यथ्मंङ्गरमभिधावाँम्याशा

अनांजानुन्मनंसा याचंमानो यदत्रैनो अव तथ्सुंवामि। अमी ये सुभगें दिवि विचृतौ नाम तारंके। प्रेहामृतंस्य यच्छतामेतद्वंद्धकमोचंनम्। विजिंहीर्ष्व

लोकान्कृंधि बन्धान्मुंश्चासि बद्धंकम्। योनेरिव प्रच्युंतो गर्भः सर्वांन् पृथो अनुष्व। स प्रजानन्प्रतिगृभ्णीत विद्वान्प्रजापंतिः प्रथमजा ऋतस्य। अस्माभिर्दत्तं जरसः परस्तादच्छिन्नं तन्तुंमनुसश्चरेम॥९॥

तृतं तन्तुमन्वेके अनु सश्चरिन्तु येषां दुत्तं पित्र्यमायनवत्। अबन्ध्वेके दर्दतः प्रयच्छादातुं चेच्छुक्रवार्सः स्वर्ग एषाम्। आरंभेथामनु सर्रभेथार समानं पन्थांमवथो घृतेनं। यद्वां पूर्तं परिविष्टं यदग्नौ तस्मै गोत्रांयेह जायांपती सर्रभेथाम्। यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वा जिहिश्सिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्य उन्नों नेषद्दुरिता यानिं चकुम। भूमिंर्माताऽदितिर्नो जिनत्रं भ्राताऽन्तरिक्षमभिशंस्त एनः। द्यौर्नः पिता पितृयाच्छं भवासि जामि मित्वा मा विविध्सि लोकात्। यत्रं सुहार्दः सुकृतो मदंन्ते विहाय रोगं त्वा(१) ह् स्वायाम्। अश्लोणाङ्गेरह्वंताः स्वर्गे तत्रं पश्येम पितरं च पुत्रम्। यदन्नमद्यमृतेन देवा दास्यन्नदास्यन्नुत वां करिष्यन्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति

यदेव किं चे प्रतिजग्राहम्गिर्मा तस्मांदनृणं कृणोत्। यदत्रमिद्री बहुधा विरूपं वासो हिरंण्यमुत गाम्जामिवम्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चे प्रतिजग्राहम्गिर्मा तस्मांदनृणं कृणोत्। यन्मयां मनंसा वाचा कृत्मेनः कदाचन। सर्वस्मांतस्मांन्मेळितो मोग्धि त्व १ हि वेत्थं यथात्थम्॥१०॥

वातंरशना ह वा ऋषंयः श्रम्णा ऊर्ध्वमंन्थिनो बंभूवुस्तानृषंयोऽर्थमांयुङ्स्ते निलायंमचर इस्ते ऽनुंप्रविशुः कूश्माण्डानि ता इस्तेष्वन्वंविन्दञ्छूद्धयां च तपंसा च तानृषंयोऽब्रुवन्कथा निलायं चरथेति त ऋषींनब्रुवन्नमों वोऽस्तु भगवन्तोऽस्मिन्धाँम्नि केनं वः सपर्यामिति तानृषंयोऽब्रुवन्पवित्रंं नो ब्रूत येनारेपसं स्यामेति त पुतानि सूक्तान्यंपश्यन् यद्देवा देवहेळेनं यददींव्यन्नृणमहं बभूवाऽऽयुंष्टे विश्वतों दध्दित्येतैराज्यं जुहुत वैश्वानराय प्रतिवेदयाम् इत्युपंतिष्ठत् यदंर्वाचीनमेनों भ्रूणहत्यायास्तस्मांन्मोक्ष्यध्व इति त एतैरंजुहवुस्तेऽरेपसों-

ऽभवन्कर्मादिष्वेतैर्जुंहुयात्पूतो देवलोकान्थ्समंश्रुते॥११॥

कूश्माण्डैर्जुह्याद्योऽपूत इव मन्येत यथाँ स्तेनो यथाँ भ्रूणहैवमेष भंवति योऽयोनौ रेतः सिश्चति यदंर्वाचीनमेनौ भ्रूणहत्यायास्तस्मौन्मुच्यते यावदेनों दीक्षामुपैति दीक्षित एतैः संतति जुंहोति संवथ्सरं दीक्षितो भंवति संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते मासं दीक्षितो भंवति यो मासः स संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते चतुर्वि १ शति १ रात्री दीक्षितो भंवति चतुर्वि शितरर्धमासाः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते द्वादंश रात्रींदीक्षितो भंवति द्वादंश मासाः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते षड्रात्रींदीक्षितो भंवति षड्वा ऋतवंः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते तिस्रो रात्रींदीक्षितो भंवति त्रिपदां गायत्री गांयत्रिया एवाऽऽत्मानं पुनीते न मा॰समंश्रीयात्र स्त्रियमुपेयात्रोपर्यासीत जुगुंफ्सेतानृंतात्पयों ब्राह्मणस्यं व्रतं यंवागू राजन्यंस्यामिक्षा वैश्यस्याथां सौम्येप्यंध्वर एतद्वृतं ब्रूंयाद्यदि मन्येतोपदस्यामीत्योदनं धानाः सक्तूंन् घृतमित्यनुंव्रतयेदात्मनोऽनुंपदासाय॥१२॥

तां देवतामुपितिष्ठन्त यज्ञकीमास्त एतं ब्रह्मयज्ञमेपश्यन्तमाहेर्न्तेनीयजन्त यहचोऽध्यगीषत् ताः पर्यआहृतयो देवानीमभवन् यद्यजूरेषि घृताहुतयो यथ्मामीनि सोमोहतयो यदर्थविङ्गिरसो मध्बीहृतयो यद्वौह्मणानीतिहासान् प्राणानि कल्पान्गार्था नाराश्र्सीर्मेदाहुतयो देवानीमभवन्ताभिः क्षुधं पाप्मान्म-पाँघन्नपहतपाप्मानो देवाः स्वर्गं लोकमायन् ब्रह्मणः सार्युज्यमृषयोऽगच्छन्॥१३॥

पश्च वा एते मंहायुज्ञाः संतुति प्रतायन्ते सतृति सन्तिष्ठन्ते देवयुज्ञः

अजान् ह वै पृश्री ईस्तपुस्यमानान् ब्रह्मं स्वयम्भवंभ्यानंर्षत ऋषंयोऽभवन्तदषींणाः

पितृयुज्ञो भूतयुज्ञो मनुष्ययुज्ञो ब्रह्मयुज्ञ इति यदुग्रौ जुहोत्यपि सुमिधं तद्देवयुज्ञः सन्तिष्ठते यत्पितृभ्यः स्वधा करोत्यप्यपस्तित्पंतृयज्ञः सन्तिष्ठते यद्भूतेभ्यो बुलि । हरंति तद्भृतयज्ञः सन्तिष्ठते यद्ग्राँह्मणेभ्योऽन्नं ददांति तन्मंनुष्ययज्ञः सन्तिष्ठते यथ्स्वौध्यायमधीयीतैकांमप्यृचं यजुः सामं वा तद्वंह्मयुज्ञः सन्तिष्ठते यदचोऽधीते पर्यसः कूल्यां अस्य पितृन्थ्स्वधा अभिवंहन्ति यद्यजू ५ेषि घृतस्यं कूल्या यथ्सामानि सोमं एभ्यः पवते यदर्थवाङ्गिरसो मधौः कूल्या यद्वाँह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गार्था नाराशिश्सीमेंदेसः कूल्यां अस्य पितृन्थस्वधा अभिवहिन्ति यदचोऽधीते पर्यआह्तिभिरेव तद्देवा इस्तंपयित यद्यजू ईषि घृताहुंतिभिर्यथ्सामानि सोमांहतिभिर्यदर्थवाङ्गिरसो मध्वांहतिभिर्यद्वांह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गार्था नाराशुर्सीर्मेदाहुतिभिरेव तद्देवा इस्तर्पयित त एनं तृप्ता आयुषा तेर्जमा वर्चमा श्रिया यशंमा ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन च तर्पयन्ति॥१४॥

ब्रह्मयज्ञेनं यक्ष्यमाणः प्राच्यां दिशि ग्रामादछंदिर्दर्श उदींच्यां प्रागुदीच्यां वोदितं आदित्ये दंक्षिणत उपवीयोपविश्य हस्तांववनिज्य त्रिराचांमेद्दिः पंरिमृज्यं सकृदुंपस्पृश्य शिरश्चक्षुंषी नासिंके श्रोत्रे हृदंयमालभ्य यत्रिराचामंति तेन ऋचंः प्रीणाति यद्दिः परिमृजंति तेन यजू ५ षि यथ्सकृदुंपस्पृशंति तेन सामानि यथ्सव्यं पाणिं पादौ प्रोक्षति यच्छिरश्चक्षुंषी नासिंक श्रोत्रे हृदंयमालभंते तेनार्थवाङ्गिरसौ ब्राह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गार्था नाराश्र्साः प्रीणाति दर्भाणां महद्रुपस्तीर्योपस्थं कृत्वा प्राङासीनः स्वाध्यायमधीयीतापां वा एष ओषंधीना १ रसो यद्दर्भाः सर्रसमेव ब्रह्मं कुरुते दक्षिणोत्तरौ पाणी पादौ कृत्वा सप्वित्रावोमिति प्रतिपद्यत एतद्वै यर्जुम्नयीं विद्यां प्रत्येषा वागेतत्पंरममक्षरं तदेतदचाऽभ्यंक्तमृचो अक्षरें परमें व्योमन् यस्मिन्देवा अधि विश्वें निषेदुर्यस्तन्न वेद किमृचा केरिष्यति य इत्तिद्विदुस्त इमे समासत् इति त्रीनेव प्रायंङ्क भूर्भुवः स्वंरित्यांहैतद्वै वाचः सत्यं यदेव वाचः सत्यं तत्प्रायुङ्कार्थं सावित्रीं गांयत्रीं त्रिरन्वांह पच्छौंऽर्धर्चशोऽनवान ॥

द्वितीयः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

संविता श्रियंः प्रसविता श्रियंमेवाऽऽप्रोत्यथों प्रज्ञातंयैव प्रंतिपदा छन्दा रेसि प्रतिपद्यते॥१५॥

ग्रामे मनंसा स्वाध्यायमधीयीत दिवा नक्तं वेति हं स्माऽऽह शौच आँह्रेय उतारंण्येऽबलं उत वाचोत तिष्ठंनुत व्रजंनुताऽऽसीन उत शयांनोऽधीयीतैव स्वाध्यायं तपंस्वी पुण्यो भवति य एवं विद्वान्थ्स्वाध्यायमधीते नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्नये नर्मः पृथिव्यै नम ओषंधीभ्यः। नर्मो वाचे नर्मो वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृहते करोमि॥१६॥

मध्यन्दिने प्रबल्मधीयीतासौ खलु वावैष आंदित्यो यद्गांह्यणस्तस्मात्तर्हि तेऽक्ष्णिष्ठं तपति तदेषाऽभ्यंक्ता। चित्रं देवानामुदंगादनीकं चक्षंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षः सूर्यं आत्मा जगंतस्तस्थुषश्चेति स वा एष युज्ञः सद्यः प्रतायते सद्यः सन्तिष्ठते तस्य प्राक् सायमंवभृथो नमो ब्रह्मण इति परिधानीयां त्रिरन्वाहाप उपस्पृश्यं गृहानेति ततो यत्किं च ददांति सा दक्षिणा॥१७॥

यदंवस्फूर्जिति सोऽनुंवषद्वारो वायुरात्माऽमांवास्याँ स्विष्टकृद्य एवं विद्वान्मेघे वर्षितं विद्योतंमाने स्तनयंत्यवस्फूर्जिति पर्वमाने वायावंमावास्यांयाः स्वाध्यायमधीते तपं एव तत्तंप्यते तपो हि स्वाध्याय इत्युत्तमं नाकरं रोहत्युत्तमः संमानानां भवित यावंन्तर ह वा इमां वित्तस्यं पूर्णां ददंथ्स्वर्गं लोकं जयिति तावंन्तं लोकं जयिति भूयारं सं चाक्ष्ययं चापं पुनर्मृत्युं जयिति ब्रह्मणः सायुंज्यं गच्छिति॥१८॥

१४]

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य द्वावंनध्यायौ यदात्माऽशुचियंद्देशः समृंद्धिर्देवतानि य एवं विद्वान्मंहारात्र उषस्युदिते व्रज्ञ इस्तिष्ठन्नासीनः शयानोऽरण्ये ग्रामे वा यावंत्तरसई स्वाध्यायमधीते सर्वौक्लोकाञ्जयित सर्वौक्लोकानंनृणोऽनु-सश्चरित तदेषाभ्यंक्ता। अनुणा अस्मिन्नंनुणाः परस्मिः स्तृतीयें लोके अनुणाः स्याम। ये देवयानां उत पितृयाणाः सर्वान्यथो अनृणा आक्षीयेमेत्यग्नि वै जातं पाप्मा जंग्राह तं देवा आहुंतीभिः पाप्मानमपौघ्नन्नाहुंतीनां यज्ञेनं यज्ञस्य दक्षिणाभिर्दक्षिणानां ब्राह्मणेनं ब्राह्मणस्य छन्दोभिश्छन्दंसाङ् स्वाध्यायेनापंहतपाप्मा स्वाध्यायों देवपंवित्रं वा एतत्तं योऽनूध्मृजत्यभांगो वाचि भंवत्यभागो नाके तदेषाऽभ्यंक्ता। यस्तित्याजं सखिविद् सखायं न तस्यं वाच्यपिं भागो अस्ति। यदी ५ शृणोत्यलक ५ शृणोति न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति तस्मां थ्स्वाध्यायोऽध्येतव्यो यं यं ऋतुमधीते तेनं तेनास्येष्टं भंवत्युग्नेर्वायोरांदित्यस्य सायुंज्यं गच्छति तदेषाऽभ्युंक्ता। ये अर्वाङ्गत वां पुराणे वेदं विद्वा र संमभितों वदन्त्यादित्यमेव ते परिवदन्ति सर्वे अग्निं द्वितीयं तृतीयं च ह्र समिति यावंतीर्वे देवतास्ताः सर्वा वेद्विदिं ब्राह्मणे वंसन्ति तस्माँ द्वाह्मणेभ्यों वेद्विद्यों दिवे दिवे नमंस्कुर्यान्नाश्चीलं कीर्तयेदेता एव देवताः प्रीणाति॥१९॥

रिच्यंत इव वा एष प्रेव रिच्यते यो याजयंति प्रतिं वा गृह्णातिं याजियंत्वा प्रतिगृह्य वाऽनंश्वन्तिः स्वाध्यायं वेदमधीयीत त्रिरात्रं वां सावित्रीं गायत्रीमन्वातिरेचयति वरो दक्षिणा वरेणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वरंः॥२०॥

दुहे हु वा एष छन्दा १सि यो याजयंति स येनं यज्ञकृतुनां याजयेथ्सोऽरंण्यं प्रेत्यं शुचौ देशे स्वाध्यायमेवैनमधीयन्नासीत तस्यानशंनं दीक्षा स्थानमुंप्सद आसंन स्पृत्या वाग्जुहूर्मनं उप्भृद्धृतिर्ध्रुवा प्राणो हुविः सामाध्वर्युः स वा एष यज्ञः प्राणदंक्षिणोऽनंन्तदक्षिणः समृद्धतरः॥२१॥

-[१७] कृतिधावंकीणी प्रविशतिं चतुर्धेत्यांहुर्ब्रह्मवादिनों मुरुतः प्राणैरिन्द्रं बलेन बृहस्पतिं ब्रह्मवर्चसेनाग्निमेवेतंरेण सर्वेण तस्यैतां प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार सुदेवः काँश्यपो यो ब्रह्मचार्यविकिरेदमावास्याया रात्र्यामिश्रें प्रणीयोपसमाधाय द्विराज्यंस्योपघातंं जुहोति कामावंकीर्णोऽस्म्यवंकीर्णोऽस्मि काम कामांय स्वाहा कामाभिद्रुग्धोऽस्म्यभिद्रुग्धोऽस्मि काम कामाय स्वाहेत्यमृतं वा आज्येम्मृतंमे्वाऽऽत्मन्धंत्ते हुत्वा प्रयंताञ्चलिः कवांतिर्यङ्काग्निम्भिनेत्रयेत् सं मांऽऽसिश्चन्तु मरुतः समिन्द्रः सं बृहस्पतिः। सं माऽयम्ग्निः सिश्चत्वायुषा च बलेन चाऽऽयुंष्मन्तं करोत मेति प्रतिं हास्मै मुरुतः प्राणान्दंधित प्रतीन्द्रो बलुं प्रति बृहस्पतिंर्ब्रह्मवर्चसं प्रत्यग्निरितरथ्सर्व सर्वतनुर्भूत्वा सर्वमायुंरेति त्रिरभिमंत्रयेत त्रिषंत्या हि देवा योऽपूंत इव मन्येंत स इत्थं जुंहुयादित्थम्भिमंत्रयेत पुनीत पुवाऽऽत्मानुमायुरेवाऽऽत्मन्धंते वरो दक्षिणा वरंणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि

वर्रः॥२२॥

भूः प्रपंदो भुवः प्रपंदो स्वंः प्रपंदो भूभुवः स्वंः प्रपंदो ब्रह्म प्रपंदो ब्रह्मकोशं प्रपंद्येऽमृतं प्रपंद्येऽमृतकोशं प्रपंद्ये चतुर्जालं ब्रह्मकोशं यं मृत्युर्नावपश्यंति तं प्रपंद्ये देवान् प्रपंद्ये देवपुरं प्रपंद्ये परीवृतो वरीवृतो ब्रह्मणा वर्मणाऽहं तेर्जसा कश्यंपस्य यस्मै नमस्तिच्छिरो धर्मो मूर्धानं ब्रह्मोत्तंरा हर्नुर्युज्ञोऽधंरा विष्णुर्हृदंय १ संवथ्सरः प्रजनंनमिश्वनौ पूर्वपादांवित्रिर्मध्यं मित्रावरुणावपरपादांविग्नः पुच्छंस्य प्रथमं काण्डं तत् इन्द्रस्ततः प्रजापित्रभेयं चतुर्थः स वा एष दिव्यः शांकुरः शिशुंमार्स्त १ ह य एवं वेदापं पुनर्मृत्युं जंयित जयंति स्वर्गं लोकं नाध्वनि प्रमीयते नाफ्सु प्रमीयते नाग्नौ प्रमीयते नानुपत्यः प्रमीयते लुघ्वान्नो भवति ध्रुवस्त्वमंसि ध्रवस्य क्षितमिस् त्वं भूतानामधिपतिरसि त्वं भूताना ॥ श्रेष्ठों उसि त्वां भूतान्युपं पर्यावंर्तन्ते नमंस्ते नमः सर्वं ते नमो नमः शिशुकुमाराय नमः॥२३॥

नमुः प्राच्यें दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो दक्षिणायै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमः प्रतींच्यै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नम उदींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमं ऊर्ध्वायै दिशे याश्च देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽधंरायै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोंऽवान्तरायै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मध्ये ये वसन्ति ते मे प्रसन्नात्मानश्चिरं जीवितं वर्धयन्ति नमो गङ्गायम्नयोर्म्निभ्यश्च नमो नमो गङ्गायम्नयोर्म्निभ्यश्च नमः॥२४॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृहते करोमि॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ ततीयः प्रश्नः॥

ॐ तच्छं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवींः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

चित्तिः स्रुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं बुर्हिः। केतो अग्निः। विज्ञांतम्ग्निः। वाक्पंतिर्होतां। मनं उपवृक्ता। प्राणो हृविः। सामाध्वर्युः। वाचस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। आऽस्मासुं नृम्णन्थाथ्स्वाहां॥१॥

पृथिवी होताँ। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवृक्ता। वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततमेनायंक्ष्यसे। यजमानाय वार्यम्। आसुव्स्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। ज्जन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥ पृथिवी होता दर्श॥______

अग्निर्होताँ। अश्विनाँऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उंपवृक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्तं इन्द्रं सोमाः। वातांपेर्हवनृश्रुतः

स्वाहाँ॥३॥

सूर्यं ते चक्षुंः। वातं प्राणः। द्यां पृष्ठम्। अन्तरिक्षमात्मा। अङ्गैर्यज्ञम्। पृथिवी १ शरीरेः। वार्चस्पतेऽच्छिंद्रया वाचा। अच्छिंद्रया जुह्वाँ। दिवि देवावृध १ होत्रा

मेर्यस्व स्वाहां॥४॥

मरपस्य स्पाहा॥०

महाहंविरहोतां। स्त्यहंविरध्वर्युः। अच्यंतपाजा अग्नीत्। अच्यंतमना उपवृक्ता। अनाधृष्यश्चाप्रतिधृष्यश्चं यज्ञस्यांभिग्रो। अयास्यं उद्गाता। वाचंस्पते हृद्विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमंमपात्। मा दैव्यस्तन्तुश्छेदि मा मनुष्यंः। नमों दिवे। नमः पृथिव्यै स्वाहां॥५॥

अपात्रीणि च॥_____

वाग्घोताँ। दीक्षा पत्नीं। वातौंऽध्वर्युः। आपोंऽभिग्रः। मनों ह्विः। तपंसि जुहोमि। भूर्भुवः सुवंः। ब्रह्मं स्वयम्भु। ब्रह्मंणे स्वयम्भुवे स्वाहाँ॥६॥

ब्राह्मण एकंहोता। स युज्ञः। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। युज्ञश्चं मे भूयात्। अग्निर्द्धिहोता। स भूता। स में ददातु प्रजां पशून्पृष्टिं यशः। भूता चे मे

भूयात्। पृथिवी त्रिहोता। स प्रतिष्ठा॥७॥

स में ददातु प्रजां प्शून्पृष्टिं यशंः। प्रतिष्ठा चं मे भूयात्। अन्तरिक्षं चतुर्होता। स विष्ठाः। स में ददातु प्रजां प्शून्पृष्टिं यशंः। विष्ठाश्चं मे भूयात्। वायुः पश्चंहोता। स प्राणः। स में ददातु प्रजां प्शून्पृष्टिं यशंः। प्राणश्चं मे भूयात्॥८॥

चन्द्रमाः षड्ढोता। स ऋतून्केल्पयाति। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशेः। ऋतवेश्च मे कल्पन्ताम्। अन्नर्रं सप्तहोता। स प्राणस्यं प्राणः। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशेः। प्राणस्यं च मे प्राणो भूयात्। द्यौर्ष्टहोता। सोऽनाधृष्यः॥९॥ स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशंः। अनाधृष्यश्चं भूयासम्। आदित्यो नवंहोता। स तेंज्स्वी। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशंः। तेज्स्वी चं भूयासम्। प्रजापंतिर्दशंहोता। स इद॰ सर्वम्ं। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशंः। सर्वं च मे भूयात्॥१०॥

अग्नियं प्राणश्च मे भूषादनापुष्यः सर्व च मे भूषात॥——[७] अग्नियं जुंभिः। स्विता स्तोमैः। इन्द्रं उक्थाम् दैः। मित्रावरुंणावाशिषाँ। अङ्गिरसो धिष्णियैरग्निभिः। मरुतः सदोहविर्धानाभ्याम्। आपः प्रोक्षंणीभिः।

ओषंधयो बुर्हिषां। अदितिर्वेद्यां। सोमो दीक्षयां॥११॥

त्वष्टेभ्मेनं। विष्णुंर्यज्ञेनं। वसंव आज्येंन। आदित्या दक्षिणाभिः। विश्वे देवा ऊर्जा। पूषा स्वंगाकारेणं। बृह्स्पितिः पुरोधयाः। प्रजापितिरुद्गीथेनं। अन्तिरिक्षं पवित्रेण। वायुः पात्रैः। अहङ् श्रद्धयाः॥१२॥

दीक्षया पात्रेरकं च॥————[८]

सेनेन्द्रंस्य। धेना बृह्स्पतेः। पृत्थ्यां पूष्णः। वाग्वायोः। दीक्षा सोमंस्य। पृथिव्यंग्नेः। वसूनां गायत्री। रुद्राणां त्रिष्टुक्। आदित्यानां जर्गती। विष्णोरनुष्टुक्॥१३॥

वर्रणस्य विराट्। यज्ञस्यं पङ्किः। प्रजापंतेरनुंमितः। मित्रस्यं श्रद्धा। स्वितुः प्रसूंतिः। सूर्यस्य मरींचिः। चन्द्रमंसो रोहिणी। ऋषींणामरुन्यती। पर्जन्यंस्य विद्युत्। चतंस्रो दिशः। चतंस्रोऽवान्तरिद्धाः। अहंश्च रात्रिश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विषिश्चा-पंचितिश्च। आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्च सूनृतां च देवानां पत्नयः॥१४॥

द्वस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यां प्रतिगृह्णामि। राजां त्वा वर्रुणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्रये हिर्ुण्यम्। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे। क इदं कस्मां अदात्। कामः कामाय। कामो दाता॥१५॥

कार्मः प्रतिग्रहीता। कामर्रं समुद्रमाविंश। कार्मेन त्वा प्रतिंगृह्णामि। कामैतत्तै। पृषा ते काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वौङ्गीर्सः प्रतिंगृह्णातु। सोमांय वासंः। रुद्राय गाम्। वरुणायाश्वम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१६॥

मनंवे तल्पम्। त्वष्ट्रेऽजाम्। पूष्णेऽविम्। निर्ऋत्या अश्वतरगर्दभौ। हिमवंतो हिस्तनम्। गुन्धर्वापसुराभ्यः स्नगलं कर्णे। विश्वेभ्यो देवेभ्यो धान्यम्। वाचेऽन्नम्। ब्रह्मण ओदनम्। समुद्रायाऽऽपः॥१७॥

उत्तानायाँङ्गीर्सायानंः। वैश्वान्राय रथम्ँ। वैश्वान्रः प्रत्नथा नाकमारुंहत्। दिवः पृष्ठं भन्दमानः सुमन्मंभिः। स पूर्ववज्ञनयंज्ञन्तवे धनम्ँ। समानमंज्मा परियाति जागृंविः। राजाँ त्वा वर्रणो नयतु देवि दक्षिणे वैश्वान्राय रथम्ँ। तेनांमृतत्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यमस्तु प्रतिग्रहीत्रे॥१८॥

क इदं कस्मां अदात्। कामः कामाय। कामो दाता। कामः प्रतिग्रहीता। काम र समुद्रमा विंश। कामेन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्ते। पुषा ते काम दक्षिणा। उत्तानस्त्वौङ्गीरसः प्रतिंगृह्णातु॥१९॥

द्युता पुर्रुषुमर्पः प्रतिग्रहीत्रे नवं च॥————[१०]

सुवर्णं घुमं परिवेद वेनम्। इन्द्रंस्याऽऽत्मानं दश्धा चरंन्तम्। अन्तः संमुद्रे मनस्मा चरंन्तम्। ब्रह्मान्वंविन्द्द्दशंहोतार्मर्णे। अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनानाम्। एकः सन्बंहुधा विचारः। शत्र शुक्राणि यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे वेदा यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे होतारो यत्रैकं भवंन्ति। समानसीन आत्मा जनानाम्॥२०॥

अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनांना सर्वांत्मा। सर्वाः प्रजा यत्रेकं भवंन्ति। चतुर्होतारो यत्रं सम्पदं गच्छंन्ति देवेः। समानंसीन आत्मा जनांनाम्। ब्रह्मेन्द्रं मुग्निं जगंतः प्रतिष्ठाम्। दिव आत्मान सिवतारं बृह्स्पितिम्। चतुर्होतारं प्रदिशोऽनं कृप्तम्। वाचो वीर्यं तपसाऽन्वंविन्दत्। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। त्वष्टांर र रूपाणिं विकुर्वन्तं विपश्चिम्॥२१॥

अमृतंस्य प्राणं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारमेतम्। देवानां बन्धु निर्हितं गुर्हासु। अमृतेन क्रुप्तं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। शृतं नियुतः परिवेद विश्वां विश्ववारः। विश्वमिदं वृंणाति। इन्द्रंस्याऽऽत्मा निर्हितः पश्चंहोता। अमृतं देवानामायुः प्रजानाम्॥२२॥

इन्द्रभ् राजांनभ् सिवतारंमेतम्। वायोग्ति। क्वयो निर्चिक्युः। रिश्मभ् रंश्मीनां मध्ये तपंन्तम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निर्पान्ति। य आण्डकोशे भुवंनं बिभर्ति। अनिर्मिण्णः सन्नर्थं लोकान् विचष्टें। यस्याँऽऽण्डकोशभ् शुष्मंमाहुः प्राणमुल्बम्। तेनं क्रुप्तोऽमृतेनाहमंस्मि। सुवर्णं कोश्भ् रजंसा परीवृतम्। देवानां वसुधानीं विराजम्॥२३॥

अमृतंस्य पूर्णान्ताम् कुलां विचंक्षते। पाद् षङ्कोतुर्न किलांविविथ्से। येनुर्तवंः पश्चधोत क्रुप्ताः। उत वां षुड्वा मनुसोत क्रुप्ताः। त॰ षङ्कोतारमृतुभिः कर्ल्पमानम्। ऋतस्यं पुदे क्वयो निपान्ति। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारंमेतम्। अन्तश्चन्द्रमंसि मनस्या चरन्तम्। सहैव सन्तुं न विजानन्ति देवाः। इन्द्रंस्याऽऽत्मान शत्या चर्रन्तम्॥२४॥

इन्द्रो राजा जगंतो य ईशैं। सप्तहोता सप्तधा विक्रृंप्तः। परेण तन्तुं परिष्टिय्यमानम्। अन्तरादित्ये मनसा चरन्तम्। देवाना ह हदेयं ब्रह्मान्वविन्दत्। ब्रह्मैतद्वह्मण उन्नभार। अर्क श्रीतंन्त सरिरस्य मध्यै। आ यस्मिन्थ्सप्त परेवः। महिन्ति बहुला श्रियम्। बहुश्वामिन्द्र गोमंतीम्॥२५॥

अच्युंतां बहुलाः श्रियम्। स हरिर्वसुवित्तंमः। पे्रिरन्द्रांय पिन्वते। बृह्धश्वामिन्द्रं गोमंतीम्। अच्युंतां बहुलाः श्रियम्। मह्यमिन्द्रो नियंच्छतु। शृतः शृता अस्य युक्ता हरीणाम्। अर्वाङा यांतु वसुंभी रृश्मिरिन्द्रेः। प्रमःहंमाणो बहुलाः श्रियम्। रृश्मिरिन्द्रेः सिवृता मे नियंच्छतु॥२६॥

घृतं तेजो मध्मदिन्द्रियम्। मय्ययम्ग्निर्दधातु। हरिः पतुङ्गः पंटुरी सुंपूर्णः।

दिविक्षयो नर्भसा य एति। स न इन्द्रेः कामव्रं देदातु। पश्चारं च्क्रं परिवर्तते पृथु। हिरंण्यज्योतिः सरि्रस्य मध्ये। अर्जस्रं ज्योतिर्नर्भसा सपेदेति। स न इन्द्रेः कामवरं देदातु। सप्त युंञ्जन्ति रथमेकंचक्रम्॥२७॥

एको अश्वो वहित सप्तनामा। त्रिनाभि चक्रम्जर्मनंवम्। येनेमा विश्वा भुवनानि तस्थः। भुद्रं पश्यन्त उपसेदुरग्रें। तपो दीक्षामृषयः सुवर्विदः। ततः क्षत्रं बल्मोजंश्च जातम्। तद्स्मै देवा अभि सन्नमन्तु। श्वेत र रिश्मं बोभुज्यमानम्। अपां नेतारं भुवनस्य गोपाम्। इन्द्रं निर्चिक्यः पर्मे व्योमन्॥२८॥

रोहिणीः पिङ्गला एकंरूपाः। क्षरंन्तीः पिङ्गला एकंरूपाः। श्वतः सहस्राणि प्रयुतानि नाव्यानाम्। अयं यः श्वेतो रिश्मः। पिर् सर्विमदं जर्गत्। प्रजां पश्न्थनानि। अस्माकं ददातु। श्वेतो रिश्मः पिर् सर्वं बभूव। सुवन्मह्यं पश्न् विश्वरूपान्। पृतङ्गमक्तमसुरस्य मायया॥२९॥

हृदा पंश्यन्ति मनंसा मनीषिणंः। समुद्रे अन्तः क्वयो विचंक्षते। मरीचीनां

पदिमेच्छन्ति वेधसंः। पतङ्गो वाचं मनसा बिभर्ति। तां गन्धर्वोऽवदद्गर्भे अन्तः। तां द्योतंमाना इस्वर्यं मनीषाम्। ऋतस्यं पदे कवयो निपान्ति। ये ग्राम्याः पशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। अग्निस्ता अग्ने प्रमुमोक्त देवः॥३०॥ प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। वीतः स्तुंकेस्तुके। युवमस्मासु नियंच्छतम्। प्र प्रं युज्ञपंतिन्तिर। ये ग्राम्याः पृशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। तेषा र सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय। य आर्ण्याः पुशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। वायुस्ता । अग्रे प्रमुमोक्त देवः। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। इडांये सृप्तं घृतवंचराचरम्। देवा अन्वंविन्दन्गुहां हितम्। य आरुण्याः पुश्वों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। तेषार् सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय॥३१॥

आत्मा जर्नानां विकुर्वन्तं विपृश्चिं प्रजानां वसुधानीं विराजं चरन्तं गोमंतीं मे नियंच्छुत्वेकंचकुं व्योमन्माययां देव एकंरूपा अष्टो चं॥————[११]

सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। स भूमिं विश्वतो वृत्वा। अत्यंतिष्ठद्दशाङ्गुलम्। पुरुष पुवेद सर्वम्। यद्भूतं यच्च भव्यम्। उतामृत्त्वस्येशांनः। यदन्नेनातिरोहंति। पुतावांनस्य महिमा। अतो ज्याया श्रेष्ठ पूरुषः॥३२॥ पादौंऽस्य विश्वां भूतानि। त्रिपादंस्यामृतंं दिवि। त्रिपाद्र्ष्व उदैत्पुरुषः।

पादौँ ऽस्येहाभंवात्पुनंः। ततो विष्वङ्कां क्रामत्। साशानान्शने अभि। तस्मौद्धिराडं जायता विराजो अधि पूर्णषः। स जातो अत्यंरिच्यत। पृश्चाद्भिमधो पुरः॥३३॥ यत्पुर्णषेण ह्विषाँ। देवा यज्ञमतंन्वत। वसन्तो अस्यासीदाज्यम्। ग्रीष्म इध्मः श्ररद्धविः। सप्तास्यांसन्पर्धियः। त्रिः सप्त स्मिधंः कृताः। देवा यद्यज्ञं तंन्वानाः। अबंधन्पुर्णषं पृश्म्। तं युज्ञं बर्हिष् प्रौक्षन्। पुरुषं जातमंग्रतः॥३४॥

तेनं देवा अयंजन्त। साध्या ऋषंयश्च ये। तस्माँद्यज्ञाध्संर्वहृतंः। सम्भृतं पृषदाज्यम्। पृशू इस्ता इश्चेत्रे वायव्यान्। आरुण्यान्ग्राम्याश्च ये। तस्माँद्यज्ञाध्संर्वहृतंः। ऋचः सामांनि जिज्ञरे। छन्दा ईसि जिज्ञरे तस्माँत्।

सचन्ते। यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥३८॥

यजुस्तस्मांदजायत॥३५॥

तस्मादश्वां अजायन्त। ये के चोंभ्यादंतः। गावों ह जिज्ञेरे तस्माँत्। तस्माँज्ञाता अंजावयः। यत्पुरुषं व्यंदधः। कृतिधा व्यंकल्पयन्। मुखं किमस्य कौ बाहू। कावूरू पादांवुच्येते। ब्राह्मणौंऽस्य मुखंमासीत्। बाहू राजन्यः कृतः॥३६॥

ऊरू तदंस्य यद्वैश्यः। पुद्धाः शूद्रो अंजायत। चुन्द्रमा मनंसो जातः। चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखादिन्द्रंश्चाग्निश्चं। प्राणाद्वायुरंजायत। नाभ्यां आसीदन्तरिक्षम्। शीष्णों द्यौः समंवर्तत। पुद्धां भूमिदिशः श्रोत्रांत्। तथां लोकाः अंकल्पयन्॥३७॥ वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंसुस्तु पारे। सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरः। नामानि कृत्वाऽभिवदन् यदास्तें। धाता पुरस्ताद्यमुंदाज्हारं। शुकः प्रविद्वान्प्रदिश्थतंस्रः। तमेवं विद्वान्मृतं इह भविति। नान्यः पन्था अयंनाय विद्यते। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। तानि धर्माणि प्रथमान्यांसन्। ते ह नाकं महिमानंः

पूर्रेषः पुरोँऽप्रतोंऽजायत कृतोंऽकल्पयन्नास्ं द्वे चं (ज्यायानिध् पूर्रुषः। अन्यत्र पुर्रुषः॥)॥••••••••••••ि २]

अद्धः सम्भूतः पृथिव्यै रसाँच। विश्वकंर्मणः समंवर्तताधिं। तस्य त्वष्टां विदर्धद्रूपमेति। तत्पुरुषस्य विश्वमाजानमग्रै। वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंर्णं तमंसः परंस्तात्। तमेवं विद्वानुमृतं इह भंवति। नान्यः पन्थां विद्युतेऽयंनाय। प्रजापंतिश्चरित् गर्भे अन्तः। अजायंमानो बहुधा विजायते॥३९॥ तस्य धीराः परिजानन्ति योनिम्। मरीचीनां पदिमच्छन्ति वेधसंः। यो देवेभ्य आतंपति। यो देवानां पुरोहिंतः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातः। नमो रुचाय ब्राह्मये। रुचं ब्राह्मं जनयंन्तः। देवा अग्रे तदंबुवन्। यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्। तस्यं देवा असन्वशैं। हीश्चं ते लक्ष्मीश्च पत्यौं। अहोरात्रे पार्श्वे। नक्षंत्राणि रूपम्। अश्विनौ व्यात्तम्। इष्टं मीनिषाण। अमुं मीनिषाण। सर्वं मिनिषाण॥४०॥

भूर्ता सन्भ्रियमाणो बिभर्ति। एको देवो बंहुधा निर्विष्टः। यदा भारं तुन्द्रयंते

तृतीयः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्) स भर्तुम्। निधायं भारं पुनरस्तंमेति। तमेव मृत्युम्मृतं तमांहुः। तं भूतारं तम्

गो्प्तारंमाहुः। स भृतो भ्रियमाणो बिभर्ति। य एनं वेदं सत्येन भर्तुम्। सद्यो जातम्त जहात्येषः। उतो जर्रन्तं न जहात्येकम्॥४१॥

उतो बहुनेकुमहर्जहार। अतन्द्रो देवः सदमेव प्रार्थः। यस्तद्वेद यतं आबुभूवं। सुन्धां च या र सन्द्धे ब्रह्मणेषः। रमंते तस्मिन्नुत जीर्णे शयाने। नैनं जहात्यहंः सु पूर्व्येषुं। त्वामापो अनु सर्वांश्चरन्ति जानृतीः। वृथ्सं पर्यसा पुनानाः। त्वमृग्निः हंव्यवाह र सिमैन्थ्से। त्वं भर्ता मांतरिश्वां प्रजानांम्॥४२॥

त्वं युज्ञस्त्वमुंवेवासि सोमंः। तवं देवा हवमायंन्ति सर्वें। त्वमेकोंऽसि बहूननुप्रविष्टः। नमस्ते अस्तु सुहवों म एधि। नमों वामस्तु शृण्तर हवंं मे। प्राणापानावजिर स्थरन्तौ। ह्रयांमि वां ब्रह्मणा तूर्तमेतम्। यो मां द्वेष्टि तं जहितं युवाना। प्राणांपानौ संविदानौ जंहितम्। अमुष्यासुनामा सङ्गंसाथाम्॥४३॥ तं में देवा ब्रह्मणा संविदानौ। वधायं दत्तं तमह १ हंनामि। असंज्ञजान सत

आर्बभूव। यं यं ज्जान् स उं गोपो अस्य। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। प्रास्यं भारं पुन्रस्तंमेति। तद्वै त्वं प्राणो अभवः। महान्भोगः प्रजापंतेः। भुजः करिष्यमाणः। यद्देवान्प्राणयो नवं॥४४॥

हरि हर्नत्मनुंयन्ति देवाः। विश्वस्येशांनं वृष्मं मंतीनाम्। ब्रह्म सर्रूपमनुमेदमागात्। अर्यनं मा विवंधीर्विक्रमस्व। मा छिंदो मृत्यो मा

सरूपमनुमुदमागात्। अयन् मा विवधाविक्रमस्व। मा छिदा मृत्या मा वंधीः। मा मे बलं विवृहो मा प्रमोषीः। प्रजां मा में रीरिष् आयुंरुग्र। नृचक्षंसं त्वा हविषां विधेम। सद्यश्चंकमानायं। प्रवेपानायं मृत्यवे॥४५॥

प्रास्मा आशां अशृण्वन्। कामेनाजनयन्पुनेः। कामेन मे काम् आगाँत्। हृदंयाद्धृदंयं मृत्योः। यद्मीषांमदः प्रियम्। तदैतूपमाम्भि। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थांम्। यस्ते स्व इतंरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नेः प्रजाः रीरिषो मोत वीरान्। प्र पूर्व्यं मनस्या वन्दंमानः। नाधंमानो वृष्मं चंर्षणीनाम्।

तृतीयः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

यः प्रजानमिक्राण्मानुषीणाम्। मृत्युं यंजे प्रथम्जामृतस्यं॥४६॥

त्रणिर्विश्वदंर्शतो ज्योतिष्कृदंसि सूर्य। विश्वमा भांसि रोचनम्। उपयामगृहीतोऽसि सूर्याय त्वा भ्राजंस्वत एष ते योनिः सूर्याय त्वा भ्राजंस्वते॥४७॥

आ प्यांयस्व मदिन्तम् सोम् विश्वांभिरूतिभिः। भवां नः सुप्रथंस्तमः॥४८॥

ईयुष्टे ये पूर्वतरामपंश्यन् व्युच्छन्तींमुषस्ं मर्त्यांसः। अस्माभिंरू नु प्रतिचक्ष्यांऽभूदो ते यंन्ति ये अंपुरीषु पश्यान्॥४९॥

तृतीयः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

सादयामि भार्स्वतीं त्वा सादयामि ज्वलंन्तीं त्वा सादयामि मल्मलाभवंन्तीं त्वा सादयामि दीप्यमानां त्वा सादयामि रोचमानां त्वा सादयाम्यजंस्रां त्वा सादयामि बृहक्योंतिषं त्वा सादयामि बोधयंन्तीं त्वा सादयामि जाग्रंतीं त्वा सादयामि॥५०॥

प्रयासाय स्वाहां ऽऽयासाय स्वाहां वियासाय स्वाहां संयासाय स्वाहां द्यासाय स्वाहां शुचे स्वाहा शोकाय स्वाहां तप्यत्वे स्वाहा तपंते स्वाहां

ब्रह्महत्यायै स्वाहा सर्वस्मै स्वाहाँ॥५१॥

चित्तर संन्तानेनं भवं युक्रा रुद्रन्तनिम्ना पशुपतिई स्थूलहृद्येनाग्निर हृदंयेन रुद्रं लोहितेन शुवं मतस्त्राभ्यां महादेवमुन्तः पार्श्वेनौषिष्ठहनई शिङ्गीनिकोश्याभ्याम्॥५२॥

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं युज्ञायं। गातुं युज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नों अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥चतुर्थः प्रश्नः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमों नमों वाचे नमों वाचस्पतंथे नम ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपतिभ्यो मा मामृषंयो मन्नकृतो मन्नपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मत्रुकृतों मत्रुपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापृती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं वंदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजाये पश्नां भूयादुपस्तरंणमहं प्रजाये पश्नां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातं प्राणापानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विद्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास । शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अंवन्तु शोभायें पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमों नमों वाचे नमों

वाचस्पतंये नम ऋषिंभ्यो मन्नकृत्यो मन्नंपतिभ्यो मा मामृषंयो मन्नकृतो मन्नपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मत्रुकृतों मत्रुपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास १ शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापुती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों विदिष्ये ब्रह्मं विदिष्ये सत्यं विदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजाये पश्नां भूयादुप्स्तरंणमृहं प्रजाये पश्नां भूयास् प्राणांपानौ मृत्योर्मा पात्ं प्राणापानौ मा मा हासिष्टुं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विद्यामि मध्मतीं देवेभ्यो वाचमुद्यास । शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अंवन्तु शोभायें पितरोऽनुंमदन्तु॥१॥

युअते मनं उत युंअते धियः। विप्रा विप्रंस्य बृह्तो विपश्चितः। वि होत्रां दधे वयुनाविदेक इत्। मही देवस्यं सिवतुः परिष्ठतिः। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंस्वे।

चतुर्थः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

अश्विनौंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामादंदे। अभ्रिरिस् नारिरिसः। अध्वर्कृद्देवेभ्यः। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते॥२॥

देवयन्तंस्त्वेमहे। उप प्रयंन्तु मुरुतंः सुदानंवः। इन्द्रं प्राशूर्भवा सर्चां। प्रैतु ब्रह्मंणस्पतिः। प्र देव्यंतु सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किराधसम्। देवा यज्ञं नयन्तु नः। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथाम्। ऋद्यासंमद्य। मखस्य शिरंः॥३॥

म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। इयत्यग्रं आसीः। ऋद्धासम्द्य। म्खस्य शिरंः। म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। देवीवमीर्स्य भूतस्यं प्रथमजा ऋतावरीः। ऋद्धासम्द्य। म्खस्य शिरंः॥४॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। इन्द्रस्यौजोंऽसि। ऋद्धासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। अग्निजा असि प्रजापंते रेतंः। ऋद्धासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥५॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। आयुंर्धेहि प्राणं धेहि। अपानं धेहि व्यानं

धेहि। चक्षुंधेहि श्रोत्रं धेहि। मनों धेहि वाचं धेहि। आत्मानं धेहि प्रतिष्ठां धेहि। मां धेहि मियं धेहि। मधुं त्वा मधुला करोतु। मृखस्य शिरोऽसि॥६॥

युज्ञस्यं पुदे स्थंः। गायुत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमि। त्रैष्टुंभेन त्वा छन्दंसा करोमि। जागंतेन त्वा छन्दंसा करोमि। मुखस्य रास्नांऽसि। अदितिस्ते बिलं गृह्णातु। पाङ्केन छन्दंसा। सूर्यस्य हरंसा श्राय। मखोंऽसि॥७॥

वृष्णो अश्वस्य निष्पदंसि। वर्रणस्त्वा धृतव्रंत आधूपयत्। मित्रावर्रणयोध्रुवेण

धर्मणा। अर्चिषे त्वा। शोचिषे त्वा। ज्योतिषे त्वा। तपंसे त्वा। अभीमं मंहिना दिवम्। मित्रो बंभूव सुप्रथाः। उत श्रवंसा पृथिवीम्॥८॥

मित्रस्यं चर्षणीधृतंः। श्रवों देवस्यं सान्सिम्। द्युम्नं चित्रश्रंवस्तमम्। सिध्यैं त्वा। देवस्त्वां सिवृतोद्वंपतु। सुपाणिः स्वंङ्गुरिः। सुबाहुरुत शक्त्याः। अपंद्यमानः पृथिव्याम्। आशा दिश् आ पृंण। उत्तिष्ठ बृहन्भंव॥९॥

अहंणीयमानो द्वे चं॥

ऊर्ध्वस्तिष्ठद्भुवस्त्वम्। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्षे। ऋजवे त्वा। साधवे त्वा। सुक्षित्ये त्वा भूत्ये त्वा। इदमहम्ममाम्प्रध्यायणं विशा पृश्वभिर्व्रह्मवर्चसेन् पर्यूहामि। गायत्रेणं त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणद्मि। त्रेष्टुंभेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणद्मि। जागंतेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणद्मि। छृणत्तं त्वा वाक्। छृणत्तु त्वोक्। छृणत्तं त्वा ह्विः। छृन्धि वाचम्। छृन्ध्यूर्जम्। छृन्धि ह्विः। देवं पुरश्चर सुग्ध्यासं त्वा॥१०॥

ब्रह्मंन् प्रवर्ग्येण प्रचेरिष्यामः। होतंर्घमम्भिष्टुंहि। अग्नीद्रौहिंणौ पुरोडाशावधिश्रय। प्रतिप्रस्थात्विहंर। प्रस्तोतः सामानि गाय। यजुंर्युक्त्रः सामिभ्राक्तंखन्त्वा। विश्वैदिवैरन्मतं मुरुद्धिः। दक्षिणाभिः प्रतंतं पारियष्णुम्। स्तुभो वहन्तु सुमन्स्यमानम्। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। भूर्भुवः सुवंः। ओमिन्द्रवन्तः प्रचंरत॥११॥

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामः। होतंर्घमम्भिष्टुंहि। यमायं त्वा मुखायं त्वा। सूर्यस्य हरेसे त्वा। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहाँ। मनसे स्वाहां वाचे सरंस्वत्ये स्वाहाँ। दक्षांय स्वाहा क्रतंवे स्वाहाँ। ओजंसे स्वाहा बलांय स्वाहाँ। देवस्त्वां सविता मध्वांऽनक्तु॥१२॥

पृथिवीं तपंसस्रायस्व। अर्चिरंसि शोचिरंसि ज्योतिंरसि तपोंऽसि। सश्सींदस्व महाश् असि। शोचंस्व देववीतंमः। विधूममंग्ने अरुषं मियेध्य। सृज प्रशस्तदर्शतम्। अञ्जन्ति यं प्रथयंन्तो न विप्राः। वृपावंन्तं नाग्निना तपंन्तः। पितुर्न पुत्र उपंसि प्रेष्ठः। आ घुर्मी अग्निमृतयंत्रसादीत्॥१३॥

अनाधृष्या पुरस्तांत्। अग्नेराधिपत्ये। आयुंर्मे दाः। पुत्रवंती दक्षिणृतः। इन्द्रस्याऽऽधिपत्ये। प्रजां में दाः। सुषदां पृश्चात्। देवस्यं सिवृतुराधिपत्ये। प्राणं में दाः। आश्रुंतिरुत्तरुतः॥१४॥

मित्रावरुणयोराधिपत्ये। श्रोत्रं मे दाः। विधृतिरुपरिष्टात्। बृह्स्पतेराधिपत्ये।

ब्रह्मं मे दाः क्षुत्रं में दाः। तेजों मे धा वर्चों मे धाः। यशों मे धास्तपों मे धाः। मनों मे धाः। मनोरश्वांऽसि भूरिंपुत्रा। विश्वांभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पाहि॥१५॥

सूपसदां मे भूया मा मां हिश्सीः। तपोष्वंग्ने अन्तराश अमित्रान्। तपाशश्संमर्रुषः परस्य। तपांवसो चिकितानो अचित्तान्। वि ते तिष्ठन्तामुजरां अयासः। चितः स्थ परिचितः। स्वाहां म्रुद्धिः परिश्रयस्व। मा असि। प्रमा असि। प्रतिमा असि॥१६॥

सम्मा असि। विमा असि। उन्मा असि। अन्तरिक्षस्यान्तर्धिरेसि। दिवं तपंसस्रायस्व। आभिर्गीर्भिर्यदतों न ऊनम्। आप्यायय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो मिहं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्टभाजो अधं ते स्याम। शुक्रं तें अन्यद्यंजतं तें अन्यत्॥१७॥

विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषन्निह रातिरंस्तु। अर्हंन्बिभर्षि सायंकानि धन्वं। अर्हं निष्कं यंज्ततं विश्वरूपम्। अर्हं निदन्दंयसे विश्वमञ्जंबम्। न वा ओजीयो रुद्र त्वदंस्ति। गायुत्रमंसि। त्रैष्टुंभमिस। जागंतमिस। मधु मधुं॥१८॥

दश् प्राचीर्दशं भासि दक्षिणा। दशं प्रतीचीर्दशं भास्युदीचीः। दशोर्ध्वा भांसि सुमन्स्यमानः। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। अग्निष्ट्वा वसंभिः पुरस्ताँद्रोचयतु गायत्रेण छन्दंसा। स मां रुचितो रांचय। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिणतो रांचयतु त्रैष्टंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रांचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्चाद्रोंचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रांचय॥१९॥

द्युतानस्त्वां मारुतो म्रुद्धिरुत्तर्तो रोचयत्वानुष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वैद्वैरुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसिं। रोचिषीयाहं मनुष्येषु। सम्राङ्घर्म रुचितस्त्वं देवेष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चस्यसि। रुचितोऽहं मनुष्येष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी

मिय रुक्। दशं पुरस्ताँद्रोचसे। दशं दिश्वणा। दशं प्रत्यङ्कः। दशोदङ्कः। दशोध्वीं भांसि सुमन्स्यमानः। स नः सम्राडिष्मूर्जं धेहि। वाजी वाजिने पवस्व। रोचितो धर्मो रुचीय॥२१॥

अपंश्यं गोपामनिपद्यमानम्। आ च परां च पृथिभिश्चरंन्तम्। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसानः। आ वंरीवर्ति भुवनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीः। मधु माध्वींभ्यां मधु माधूचीभ्याम्। अनुं वां देववीतये। समग्निरग्निनां गत। सं देवनं सवित्रा। स॰

सूर्येण रोचते॥२२॥

चतुर्थः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

स्वाह्य समृग्निस्तपंसा गत। सं देवेनं सिवता। स॰ सूर्येणारोचिष्ट। धूर्ता दिवो विभासि रजसः। पृथिव्या धूर्ता। उरोर्न्तिरक्षस्य धूर्ता। धूर्ता देवो देवानाम्। अमर्त्यस्तपोजाः। हृदे त्वा मनसे त्वा। दिवे त्वा सूर्याय त्वा॥२३॥ ऊर्ध्वमिममंध्वरं कृषि। दिवि देवेषु होत्रां यच्छ। विश्वांसां भुवां पते। विश्वंस्य भुवनस्पते। विश्वंस्य मनसस्पते। विश्वंस्य वचसस्पते। विश्वंस्य तपसस्पते। विश्वंस्य ब्रह्मणस्पते। देवश्रूस्त्वं देव धर्म देवान्पांहि। तुपोजां वाचंम्स्मे नियंच्छ देवायुवम्॥२४॥

गर्भो देवानांम्। पिता मंतीनाम्। पितः प्रजानांम्। मितः कवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवत्रा यंतिष्ट। स॰ सूर्येणारुक्त। आयुर्दास्त्वम्स्मभ्यं घर्म वर्चीदा असि। पिता नोऽसि पिता नो बोध। आयुर्धास्तंनूधाः पंयोधाः। वर्चीदा वंरिवोदा द्रंविणोदाः॥२५॥

अन्तिरिक्षप्र उरोर्वरीयान्। अशीमिहं त्वा मा मां हिश्सीः। त्वमंग्ने गृहपंतिर्विशामंसि। विश्वांसां मानुंषीणाम्। शृतं पूर्भिर्यविष्ठ पाद्यश्हंसः। समेद्धार्श्रं शृतश् हिमाः। तुन्द्राविणश्रं हार्दिवानम्। इहैव रातयः सन्तु। त्वष्टीमती ते सपेय। सुरेता रेतो दर्धाना। वीरं विदेय तवं सन्दिशी। माऽहश् रायस्पोषेण

वि योषम्॥२६॥

असावेहिं॥२७॥

इन्द्रांय पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व॥२९॥

वेवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादंदे। अदित्यै रास्नांसि। इड एहिं। अदित् एहिं। सरस्वत्येहिं। असावेहिं।

अदित्या उष्णीषंमिस। वायुरंस्यैडः। पूषा त्वोपावंसृजतु। अश्विभ्यां प्रदापय। यस्ते स्तनः शश्यो यो मंयोभूः। येन विश्वा पुष्यंसि वार्याणि। यो रंत्रधा वंसुविद्यः सुदर्तः। सरंस्वित तिमृह धातंवेकः। उस्रं धर्मः शिरंष। उस्रं धर्मं पांहि॥२८॥ धर्मायं शिर्ष। बृह्स्पित्स्त्वोपंसीदतु। दानंवः स्थ पेरंवः। विष्वग्वृतो लोहितेन। अश्विभ्यां पिन्वस्व। सरंस्वत्ये पिन्वस्व। पूष्णे पिन्वस्व। बृहस्पतंये पिन्वस्व।

गायत्रों ऽसि। त्रैष्टुंभो ऽसि। जागंतमसि। सहोर्जो भागेनोपमेहिं। इन्द्रांश्विना

मधुंनः सार्घस्यं। घुमं पांत वसवो यजंता वट्। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रुश्मयें वृष्टिवनंये जुहोमि। मधुं ह्विरंसि। सूर्यस्य तपंस्तप। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामि॥३०॥

अन्तिरिक्षेण त्वोपंयच्छामि। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तुर्र शकेयम्। तेजोऽसि। तेजोऽनु प्रेहिं। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। अन्तिरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। सुवंरिस् सुवंर्मे यच्छ। दिवं यच्छ दिवो मां पाहि॥३१॥

समुद्रायं त्वा वातांय स्वाहाँ। सिल्लायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अनाधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अप्रतिधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अवस्यवेँ त्वा वातांय स्वाहाँ। दुवंस्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। शिमिंद्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। अग्नयेँ त्वा वसुंमते स्वाहाँ। सोमांय त्वा रुद्रवंते स्वाहाँ। वरुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहाँ॥३२॥

बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहां। स्वित्रे त्वंर्भुमते विभुमते प्रभुमते वाजंवते स्वाहां। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहां। विश्वा आशां दक्षिणसत्। विश्वां देवानंयाडिह। स्वाहांकृतस्य घुर्मस्य। मधौः पिबतमश्विना। स्वाहाऽग्रये युज्ञियांय। शं यजुंभिः। अश्विना घुर्मं पांत १ हार्दिवानम्॥३३॥

अहंर्दिवाभिक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्स्साताम्। स्वाहेन्द्रांय। स्वाहेन्द्रावट्। घूर्ममंपातमिथना हार्दिवानम्। अहंर्दिवाभिक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमर्साताम्। तं प्रार्व्यं यथा वट्। नमों दिवे। नमः पृथिव्यै॥३४॥

दिवि धां इमं यज्ञम्। यज्ञमिमं दिवि धाः। दिवं गच्छ। अन्तरिक्षं गच्छ। पृथिवीं गच्छ। पश्चं प्रदिशों गच्छ। देवान्धंर्मपान्गंच्छ। पितृन्धंर्मपान्गंच्छ॥३५॥

ड्षे पींपिहि। ऊर्जे पींपिहि। ब्रह्मणे पीपिहि। क्षुत्रायं पीपिहि। अन्धः पींपिहि। ओषंधीभ्यः पीपिहि। वन्स्पितंभ्यः पीपिहि। द्यावांपृथिवीभ्यां पीपिहि। सुभूतायं

पीपिहि। ब्रह्मवर्चसायं पीपिहि॥३६॥

यजंमानाय पीपिहि। मह्यं ज्यैष्ठ्यांय पीपिहि। त्विष्यैं त्वा। द्युम्नायं त्वा। इन्द्रियायं त्वा भूत्यैं त्वा। धर्माऽसि सुधर्मा में न्यस्मे। ब्रह्मांणि धारय। क्षुत्राणिं धारय। विशं धारय। नेत्त्वा वार्तः स्कन्दयांत्॥३७॥

अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयामि। अमुनां सह निर्धं गंच्छ। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। पूष्णे शर्रसे स्वाहां। ग्रावंभ्यः स्वाहां। प्रतिरेभ्यः स्वाहां। द्वावांपृथिवीभ्याः स्वाहां। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहां। रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहां॥३८॥ अटान्योविः केवनां न्यावामः सन्योविन्योविष्यः स्वाहां। याविन्योविः केवनां

अह्ज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिर्ज्योतिषा्ड् स्वाहाँ। रात्रिर्ज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिर्ज्योतिषा्ड् स्वाहाँ। अपीपरो माऽह्रो रात्रियै मा पाहि। एषा ते अग्ने समित्। तया समिध्यस्व। आयुर्मे दाः। वर्चसा माऔः। अपीपरो मा रात्रिया अह्रों मा पाहि॥३९॥

एषा तें अग्ने सुमित्। तया सिमध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माऔः।

अग्निज्योतिं ज्योतिं पृग्निः स्वाहाँ। सूर्यो ज्योति ज्योतिः सूर्यः स्वाहाँ। भूः स्वाहाँ। हुत १ हिवः। मधुं हिवः। इन्द्रंतमे ऽग्नौ॥४०॥

पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीः। अश्यामं ते देवघर्म। मधुंमतो वाजंवतः पितुमतः। अङ्गिरस्वतः स्वधाविनः। अशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रिश्मिभ्यः। स्वाहाँ त्वा नक्षेत्रभ्यः॥४१॥

वृह्यवर्ष्यायं पीपिह स्कृत्यपंद्भूवयं कृद्रहाँके स्वाहाऽहां मा पाह्यको सम चं॥———[१०] धर्म या ते दिवि शुक्। या गायुत्रे छन्दंसि। या ब्राह्मणे। या हंविधाने। तान्त

एतेनावं यजे स्वाहाँ। घर्म या तेऽन्तरिक्षे शुक्। या त्रैष्टुंभे छन्दंसि। या रांजन्यें। याऽऽग्रींध्रे। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥४२॥

घर्म् या ते पृथिव्या शुक्। या जागंते छन्दंसि। या वैश्यैं। या सदंसि। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहाँ। अनुनोऽद्यानुंमितिः। अन्विदंनुमते त्वम्। दिवस्त्वां पर्स्पायाः। अन्तरिक्षस्य तुनुवंः पाहि। पृथिव्यास्त्वा धर्मणा॥४३॥ व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पायाः। क्षत्रस्यं तुनुवः पाहि। विशस्त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। प्राणस्यं त्वा पर्स्पायः। चक्षुंषस्तुनुवः पाहि। श्रोत्रंस्य त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। वल्गुरंसि शं युधांयाः॥४४॥

शिशुर्जनंधायाः। शं च विश्व पिरं च विश्वं। चतुः स्रिक्तिनिरिक्ट्रितस्यं। सदो विश्वायुः शर्म सप्रथाः। अप द्वेषो अप ह्वरंः। अन्यद्वंतस्य सिश्चम। धर्मैतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीषम्। तेन् वर्धस्व चाऽऽ चं प्यायस्व। विधिषीमिहं च वयम्। आ चं प्यासिषीमिहं॥४५॥

रित्तिर्गामिसि दिव्यो गेन्ध्रविः। तस्यं ते पृद्वद्वेविधीनम्। अग्निरध्यंक्षाः। कृद्रोऽधिपतिः। समृहमायुंषा। सं प्राणेनं। सं वर्चसा। सं पर्यसा। सं गौपत्येनं। स॰ रायस्पोषंण॥४६॥

व्यंसौ। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। अचिंऋदद्वृषा हरिः। महान्मित्रो

न दंर्शृतः। स॰ सूर्येण रोचते। चिदंसि समुद्रयोनिः। इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावाँ। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंर्ण्युः। महान्थ्स्थस्थैं ध्रुव आनिषंत्तः॥४७॥

नमंस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। विश्वावंसु॰ सोम गन्ध्वंम्। आपो दृहशुषीः। तद्तेनाव्यायन्। तद्नववैत्। इन्द्रों रारहाण आंसाम्। परि सूर्यंस्य परिधी॰ रंपश्यत्। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणातु। दिव्यो गन्ध्वों रजंसो विमानः। यद्वां घा सत्यमृत यन्न विद्या॥४८॥

धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यात्। सिम्नंमिवन्द्चरंणे नदीनाँम्। अपांवृणो्द्द्रो अश्मंत्रजानाम्। प्रासांन्गन्थवीं अमृतांनि वोचत्। इन्द्रो दक्ष्वं परिजानाद्हीनम्ं। एतत्त्वं देव घर्म देवो देवानुपांगाः। इदमहं मंनुष्यों मनुष्यान्। सोमंपीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषंण। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु॥४९॥

दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। उद्वयं तमंसुस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। इममूषुत्यमुस्मभ्य स्निम्। गायत्रं नवीया स्सम्। अग्ने देवेषु

प्रवोचः॥५०॥

याऽऽश्रींध्र तान्तं पुतेनावं यज्ञे स्वाहा धर्मणा श्रं युधायाः प्यासिषीमिह् पोषेण् निषंतो विद्य संन्त्वृष्टो॥———[११]
महीनां पयोऽसि विहितं देवत्रा। ज्योतिर्भा असि वनस्पतीनामोषधीना ५ रसः।

वाजिनं त्वा वाजिनोऽवं नयामः। ऊर्ध्वं मनः सुवर्गम्॥५१॥

अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कानुष्भो युवागाः। स्कन्नेमा विश्वा भुवंना। स्कन्नो युज्ञः प्रजनयतु। अस्कानजंनि प्राजंनि। आ स्कन्नाज्ञांयते वृषां। स्कन्नात् प्रजंनिषीमिह॥५२॥

प्रजानपानाह् ॥ ५५।

या पुरस्तांद्विद्युदापंतत्। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहां। या दक्षिणृतः। या पृश्चात्। योत्तंरुतः। योपरिष्टाद्विद्युदापंतत्। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहां॥५३॥

[88]

प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहाँ। मनंसे स्वाहां वाचे सरंस्वत्यै स्वाहाँ॥५४॥

पूष्णे स्वाहां पूष्णे शरंसे स्वाहां। पूष्णे प्रंपुत्थ्यांय स्वाहां पूष्णे न्रन्धिंषाय स्वाहां। पूष्णेऽङ्घंणये स्वाहां पूष्णे न्रुणाय स्वाहां। पूष्णे सांकेताय स्वाहां॥५५॥

उदंस्य शुष्माँद्भानुर्नात् बिर्मार्ति। भारं पृथिवी न भूमं। प्र शुक्रैतुं देवी मंनीषा। अस्मथ्सुतृष्टो रथो न वाजी। अर्चन्त एके मिह् साममन्वत। तेन सूर्यमधारयन्। तेन सूर्यमरोचयन्। धर्मः शिर्स्तद्यम्गिः। पुरीषमसि सं प्रियं प्रजयां पृश्भिभ्वत्। प्रजापतिंस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५६॥
[१७]

यास्ते अग्न आर्द्रा योनयो याः कुलायिनीः। ये ते अग्न इन्देवो या उ नार्भयः। यास्ते अग्ने तुनुव ऊर्जी नाम। ताभिस्त्वमुभयीभिः संविदानः। प्रजाभिरग्ने द्रविणेह सींद। प्रजापितिस्त्वा सादयतु। तया देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥५७॥

अग्निरंसि वैश्वानरोंऽसि। संवथ्सरोंऽसि परिवथ्सरोंऽसि। इदावथ्सरोंऽसीदुवथ्सरों

इद्वथ्सरोऽसि वथ्सरोऽसि। तस्यं ते वसन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पक्षः। वर्षाः पुच्छम्। शरदुत्तंरः पक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपक्षाश्चितंयः। अपरपक्षाः पुरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। तस्यं ते मासांश्चार्धमासाश्चं कल्पन्ताम्। ऋतवंस्ते कल्पन्ताम्। संवथ्सरस्तें कल्पताम्। अहोरात्राणिं ते कल्पन्ताम्। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवः सींद॥५८॥

भूर्भुवः सुवंः। ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतयें। ऊर्ध्वा नंः पाह्य १ हंसः। विधुन्दंद्राण १

समंने बहूनाम्। युवांन् सन्तं पितृतो जंगार। देवस्यं पश्य कार्व्यं मिहृत्वाद्या ममारं। सह्यः समान। यदृते चिंदिभिश्रिषंः। पुरा जुर्तृभ्यं आतृदंः। सन्धांता सन्धिं मघवां पुरोवसुंः॥५९॥

निष्कंर्ता विह्नंतं पुनंः। पुनंरूर्जा सह रय्या। मा नों घर्म व्यथितो विंव्यथो नः। मा नः पर्मधंरं मा रजोंऽनैः। मोष्वंस्माः स्तमंस्यन्त्रा धाः। मा रुद्रियांसो अभिगुंर्वृधानः। मा नः ऋतुंभिर्हीडितेभिर्स्मान्। द्विषांसुनीते मा परां दाः। मा नो रुद्रो निर्ऋतिर्मा नो अस्ताः। मा द्यावांपृथिवी हीडिषाताम्॥६०॥

उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिरहेतिः। उग्रा शतापांष्ठा घविषा परिं णो वृणक्तु। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वं नों अग्ने स त्वं नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं। उद्वयं तमंस्स्परिं। उद्दुत्यं चित्रम्। वयः सुपूर्णाः॥६१॥

पुरोवसुंरहीडिषातार सुपूर्णाः॥————[२०]

भूर्भवः सुवंः। मिय् त्यदिन्द्रियं महत्। मिय् दक्षो मिय् ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो विभातु मे। आकृत्या मनसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। ब्रह्मणा तेजंसा सह। क्षत्रेण यशंसा सह। सत्येन तपंसा सह। तस्य दोहंमशीमिह। तस्य सुम्नमंशीमिह। तस्य मुक्षमंशीमिह। तस्य प्रात्मे त इन्द्रेण पीतस्य मधुंमतः। उपहूत्स्योपहूतो भक्षयामि॥६२॥

यास्ते अग्ने घोरास्तुनुवंः। क्षुच् तृष्णां च। असुक्रानांहुतिश्च। अ्शन्या चं पिपासा

चं। सेदिश्चामंतिश्च। एतास्तें अग्ने घोरास्तुनुवंः। तार्भिर्मुं गंच्छ। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥६३॥

4 4 <u>4</u>4 1<u>0</u> 1111441

स्निक् स्नीहितिश्च स्निहितिश्च। उष्णा चं शीता चं। उग्रा चं भीमा चं। सदाम्नीं सेदिरनिरा। एतास्ते अग्ने घोरास्तुनुवंः। ताभिर्मुं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः॥६४॥

-[२३]

उग्रश्च धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनय ईश्च। सहसह्वा इश्च सहमानश्च सहस्वा इश्च सहीया इश्च। एत्य प्रेत्यं विक्षिपः॥६६॥ **—**[२५] अहोरात्रे त्वोदीरयताम्। अर्धमासास्त्वोदीं जयन्तु। मासास्त्वा श्रपयन्तु। ऋतवंस्त्वा पचन्तु। संवृथ्स्रस्त्वां हन्त्वसौ॥६७॥ ——[२६] खट फट जिहि। छिन्धी भिन्धी हुन्धी कट्। इति वार्चः क्रूराणि॥६८॥ विगा इंन्द्र विचरंन्थ्स्पाशयस्व। स्वपन्तंमिन्द्र पशुमन्तंमिच्छ। वज्रेणामुं बोधय

धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनय ईश्च। निलिम्पश्चं विलिम्पश्चं विक्षिपः॥६५॥

दुर्विदत्रम्। स्वपतौऽस्य प्रहंर भोजंनेभ्यः। अग्ने अग्निना संवंदस्व। मृत्यो मृत्युना संवेदस्व। नर्मस्ते अस्तु भगवः। सकृत्ते अग्ने नर्मः। द्विस्ते नर्मः। त्रिस्ते नर्मः। चतुस्ते नर्मः। पुश्चकृत्वंस्ते नर्मः। दुश्कृत्वंस्ते नर्मः। शृतकृत्वंस्ते नर्मः। आसहस्रकृत्वंस्ते नमंः। अपरिमितकृत्वंस्ते नमंः। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः॥६९॥

असृन्मुखो रुधिरेणाव्यंक्तः। यमस्यं दूतः श्वपाद्विधांवसि। गृध्रंः सुपूर्णः कुणपुं

निषेवसे। यमस्यं दूतः प्रहितो भवस्यं चोभयौः॥७०॥

यदेतहृंकुसो भूत्वा। वाग्दें व्यभिरायंसि। द्विषन्तं मेऽभिराय। तं मृत्यो मृत्यवे

नय। स आर्त्यार्तिमार्च्छंतु॥७१॥

यदींषितो यदि वा स्वकामी। भ्येडंको वदित वाचमेताम्। तामिन्द्राग्नी ब्रह्मणा

चतुर्थः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

इत्थादुलूंक आपंत्रत्। हिर्ण्याक्षो अयोमुखः। रक्षंसां दूत आगंतः। तिमृतो नांशयाग्रे॥ ५४॥

नांशयाग्ने॥७४॥
——[३३]

यदेतद्भूतान्यंन्वाविश्यं। दैवीं वाचं वदिसं। द्विषतों नः परांवद। तान्मृत्यो मृत्यवें नय। त आर्त्याऽऽर्तिमार्च्छंन्तु। अग्निनाऽग्निः संवंदताम्॥७५॥

————[38]

अत्रिणा त्वा क्रिमे हिन्म। कण्वेन जमदंग्निना। विश्वावंसोर्ब्रह्मणा हृतः। क्रिमीणा् राजां। अप्येषाः स्थपतिर्हृतः। अथो माताऽथो पिता। अथौ स्थूरा अथौ क्षुद्राः। अथो कृष्णा अथौ श्वेताः। अथो आशातिका हृताः। श्वेताभिः सह सर्वे हताः॥७७॥

प्रसार्यं सक्थ्यौ पतंसि। सव्यमिक्षं निपेपिं च। मेहकंस्य चनामंमत्॥७६॥

आदंधामि तथा हि तत्। खण्फण्म्रसिं॥७८॥
—————[३७]

ब्रह्मणा त्वा शपामि। ब्रह्मणस्त्वा शपथेन शपामि। घोरेणं त्वा भृगूंणां चक्षुंषा
प्रेक्षें। रौद्रेण त्वाङ्गिरसां मनसा ध्यायामि। अघस्यं त्वा धारंया विद्धामि। अधंरो

आहुरावंद्य। शृतस्यं हुविषो यथां। तथ्मत्यम्। यदमुं यमस्य जम्भंयोः।

मत्पंद्यस्वासौ॥७९॥

उत्तंद शिमिजावरि। तल्पेंजे तल्प उत्तंद। गिरी रन् प्रवेशय। मरींची्रुप सन्नंद। यावंदितः पुरस्तांदुदयांति सूर्यः। तावंदितों उमुं नांशय। यौं उस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥८०॥

भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवो भूर्भुवः सुवंः। भुवौँऽद्धायि भुवौँऽद्धायि भुवौँऽद्धायि। नृम्णायि नृम्णायि नृम्णायि नृम्णायि नृम्णायि नृम्णम्। निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि। ए असमे असमे। सुवर्न ज्योतीः॥८१॥

______[४०]
पृथिवी समित्। तामुग्निः समिन्धे। साऽग्नि॰ समिन्धे। तामुह॰ समिन्धे। सा
मा समिद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन्

समिन्ता ड्रं स्वाहाँ। अन्तरिक्ष र समित्॥८२॥

चतुर्थः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

तां वायुः सिनंन्धे। सा वायुः सिनंन्धे। तामृहः सिनंन्धे। सा मा सिनंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चंसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिनंन्ताः स्वाहाँ। द्यौः सिनत्। तामांदित्यः सिनंन्धे॥८३॥

साऽऽदित्य सिमंन्धे। तामह सिमंन्धे। सा मा सिमंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिमंन्ता स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिमदिस सपत्रक्षयंणी। भ्रातृव्यहा में ऽसि स्वाहाँ। अग्नै व्रतपते व्रतं चंरिष्यामि॥८४॥

तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायौं व्रतपत् आदित्य व्रतपते। व्रतानौं व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। द्यौः सुमित्। तामांदित्यः सिमन्धे। साऽऽदित्यः सिमन्धे। तामहर सिमन्धे। सा मा सिमद्धा। आयुंषा तेर्जसा॥८५॥

वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन समिन्ता इ स्वाहाँ। अन्तरिक्ष र

सिमध्सिमें-थे व्रतं चेरिष्याम्यायुषा् तेजसा वर्चसा श्रिया यशसा ब्रह्मवर्चसेनाष्टौ चं॥

स्मित्। तां वायुः सिनन्धे। सा वायुः सिनन्धे। तामृहः सिनन्धे। सा मा सिनद्धा। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया॥८६॥

यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन् सिनंन्ता स्वाहाँ। पृथिवी सिमित्। तामृग्निः सिनंन्थे। साऽग्निर सिनंन्थे। तामृहर सिनंन्थे। सा मा सिनंद्धा। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं॥८७॥

अन्नाद्यंन् सिमंन्ता इं स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिमदंसि सपत्नक्षयंणी। भ्रातृव्यहा में ऽसि स्वाहाँ। आदित्य व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकुं तन्में ऽराधि। वायौं व्रतपते ऽग्ने व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकुं तन्में ऽराधि॥८८॥

शं नो वार्तः पवतां मात्रिश्वा शं नंस्तपतु सूर्यः। अहांनिशं भवन्तु नः श॰ रात्रिः प्रतिधीयताम्। शमुषा नो व्युंच्छतु शमांदित्य उदेतु नः। शिवा नः शन्तंमा भव सुमृडीका सरंस्वित। मा ते व्योम सुन्दिशि। इडांयै वास्त्वंसि वास्तुमद्वाँस्तुमन्तो भूयास्म मा वास्तोँश्छिथ्समह्यवास्तुः स भूयाद्यौँऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। प्रतिष्ठासि प्रतिष्ठावंन्तो भूयास्म मा प्रतिष्ठायाँश्छिथ्समह्यप्रतिष्ठः स भूयाद्यौऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। आ वांत वाहि भेषजं वि वांत वाहि यद्रपः। त्व हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातौ वात् आ सिन्धोरा पंरावतः॥८९॥

दक्षं मे अन्य आवातु परान्यो वांतु यद्रपः। यद्दो वांतते गृहेंऽमृतंस्य निधिरिहृतः। ततों नो देहि जीवसे ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो महु आवंह वात आवांत भेषजम्। शम्भूमंयोभूनों हृदे प्र ण आयू धेष तारिषत्। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तं त्वा प्रपंद्ये सगुः सार्श्वः। सह यन्मे अस्ति तेनं। भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये सुवः प्रपंद्ये भूर्यं वायुं प्रपद्येऽनांतां देवतां प्रपद्येऽश्मांनमाखणं प्रपंद्ये प्रजापंतेर्ब्रह्मकोशं ब्रह्म प्रपंद्य ओं प्रपंद्ये। अन्तिरेक्षं म उर्वन्तरं बृहद्ग्रयः

चतुर्थः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

पर्वताश्च यया वार्तः स्वस्त्या स्वस्तिमान्तयां स्वस्त्या स्वस्तिमानंसानि। प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मियं मेधां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मिय सूर्यो भाजो दधातु॥९०॥

द्युभिरक्तुभिः परिपातमस्मानरिष्टेभिरश्विना सौभंगेभिः। तन्नों मित्रो वर्रुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः। कयां नश्चित्र आ भुंवदूती सुदावृधः सखाँ। कया शचिष्ठया वृता। कस्त्वां सत्यो मदानां म हिष्ठो मध्सदन्धंसः। दृढाचिंदारुजे वस्ं। अभी षु णः सखींनामविता जीरतृणाम्। शृतं भंवास्यूतिभिः। वयंः सुपर्णा उपंसेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयंव बद्धान्॥९१॥

शं नों देवीरभिष्टंय आपों भवन्तु पीतयें। शुं योर्भिस्नंवन्तु नः। ईशांना वार्याणां क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो यांचामि भेषजम्। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुर्योऽस्मान्द्वेष्टि यं चे वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयोभुवस्ता नं ऊर्जे देधातन। महे रणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उशतीरिव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ॥९२॥

आपों जनयंथा च नः। पृथिवी शान्ता साऽग्निनां शान्ता सा में शान्ता शुच ई शमयत्। अन्तरिक्षः शान्तं तद्वायुनां शान्तं तन्में शान्तः शुचः शमयत्। द्यौः शान्ता साऽऽदित्येनं शान्ता सा में शान्ता शुच र शमयत्। पृथिवी शान्तिंरन्तरिंक्षर शान्तिद्यौः शान्तिर्देशः शान्तिरवान्तरदिशाः शान्तिरग्निः शान्तिर्वायुः शान्तिरादित्यः शान्तिंश्चन्द्रमाः शान्तिर्नक्षंत्राणि शान्तिरापः शान्तिरोषंधयः शान्तिर्वनस्पतंयः शान्तिगौः शान्तिरजा शान्तिरश्वः शान्तिः पुरुषः शान्तिर्व्रह्म शान्तिर्व्राह्मणः शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः शान्तिर्मे अस्तु शान्तिः। तयाहर शान्त्या सर्वशान्त्या मह्यं द्विपदे चतुंष्पदे च शान्तिं करोमि शान्तिंमें अस्तु शान्तिः। एह श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपों मेधा प्रतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानि मोत्तिष्ठन्तमनूत्तिष्ठन्तु मा मा श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपों मेधा प्रंतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चैतानिं मा मा हांसिषुः। उदायुंषा स्वायुषोदोषंधीना रसेनोत्पर्जन्यंस्य शुष्मेणोदंस्थाममृता र अनुं। तचक्षुंर्देविहेतं पुरस्तांच्छुऋमुचरंत्। पश्येम शुरदः शृतं जीवेम शुरदः शतं नन्दांम शरदेः शतं मोदोम शरदेः शतं भवांम शरदेः शत १ शृणवांम शरदेः शतं प्रब्रंवाम शरदेः शतमजीताः स्याम शरदेः शतं ज्योक्र सूर्यं दशे। य उदंगान्महतोऽर्णवाँद्विभ्राजंमानः सरि्रस्य मध्याथ्स मां वृष्भो लोंहिताक्षः सूर्यों विपश्चिन्मनंसा पुनातु। ब्रह्मंणश्चोतंन्यसि ब्रह्मंण आणी स्थो ब्रह्मंण आवर्पनमसि धारितेयं पृथिवी ब्रह्मणा मही धारितमेनेन महदन्तरिक्षं दिवं दाधार पृथिवी सदेवां यदहं वेद तदहं धारयाणि मा मद्वेदोऽधिविस्नंसत्। मेधामनीषे माविंशता स्मीचीं भूतस्य भव्यस्यावंरुध्ये सर्वमायुंरयाणि सर्वमायुंरयाणि। आभिर्गीर्भिर्यदतों न ऊनमाप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। ब्रह्म प्रावांदिष्म तन्नो मा हांसीत्। ॐ

परावतों दधातु बद्धां जिन्वंथ दृशे सप्त चं॥

शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥९३॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमों नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम् ऋषिंभ्यो मञ्जकृद्धो मञ्जपतिभ्यो मा मामृषंयो मञ्जकृतों मञ्जपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मञ्जकृतों मञ्जपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचंमुद्धास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म में द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च

शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों विदिष्ये ब्रह्मं विदिष्ये सत्यं विदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजाये पशूनां भूयादुपुस्तरंणमृहं प्रजाये पशूनां भूयासुं प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातुं प्राणापानौ मा मां हासिष्टुं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विद्यामि मधुमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास । शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अंवन्तु शोभायें पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥पञ्चमः प्रश्नः॥

ॐ शं नुस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ देवा वै स्त्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषां नुस्तथ्सहास्दितिं। तेषां कुरुक्षेत्रं वेदिरासीत्। तस्यै खाण्डवो देक्षिणार्ध आंसीत्। तूर्प्रमृत्तरार्धः। परीणज्ञंघनार्धः। मरवं उत्करः॥१॥

तेषां मुखं वैष्णुवं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापाँकामत्। तं देवा अन्वायन्। यशोऽव्रुरुंध्समानाः। तस्यान्वागंतस्य। सृव्याद्धनुरजायत। दक्षिणादिषंवः। तस्मादिषुधन्वं पुण्यंजन्म। युज्ञजन्मा हि॥२॥

तमेक्र् सन्तम्। बहवो नाभ्यंधृष्णुवन्। तस्मादेकंमिषुधन्विनम्। बहवोऽनिषुधन्वा नाभिधृष्णुवन्ति। सौंऽस्मयत। एकं मा सन्तं बहवो नाभ्यंधर्षिषुरिति। तस्यं सिष्मियाणस्य तेजोऽपाँकामत्। तद्देवा ओषंधीषु न्यंमृजुः। ते श्यामाकां अभवन्। स्मयाका वै नामैते॥३॥

तथ्स्मयाकांना इस्मयाकृत्वम्। तस्मांद्दीक्षितेनांपिगृह्यं स्मेतव्यम्। तेजंसो धृत्यै। स धनुः प्रतिष्कभ्यांतिष्ठत्। ता उपदीकां अब्रुवन्वरं वृणामहै। अथं व इम इस्याम। यत्र कं च खनांम। तद्पोऽभितृंणदामेति। तस्मांदुपदीका यत्र कं च खनंन्ति। तदपोऽभितृंन्दन्ति॥४॥

वारेवृत् ह्यांसाम्। तस्य ज्यामप्यांदन्। तस्य धनुंर्विप्रवंमाण् शिर् उदंवर्तयत्। तद्यावांपृथिवी अनुप्रावंर्तत। यत्प्रावंर्तत। तत्प्रंवर्ग्यस्य प्रवर्ग्यत्वम्। यद्धाँ(४)इत्यपंतत्। तद्धर्मस्यं धर्मत्वम्। मृह्तो वीर्यमपप्तदितिं। तन्मंहावीरस्यं महावीरत्वम्॥५॥

यदस्याः समभेरन्। तथ्सम्राज्ञीः सम्राद्भम्। तः स्तृतं देवतास्त्रोधा व्यंगृह्णतः। अग्निः प्रांतः सवनम्। इन्द्रो माध्यं दिन् सर्वनम्। विश्वेदेवास्तृतीयसवनम्। तेनापंशीर्ष्णा यज्ञेन यज्ञमानाः। नाशिषोऽवार्रुन्धतः। न सुवर्गं लोकम्भ्यंजयन्। ते देवा अश्विनांवब्रुवन्॥६॥

उत्करो ह्यंते तृंन्दन्ति महावीरत्वमंब्रुवन्नजयन्थ्सप्त चं॥

भिषजौ वै स्थंः। इदं यज्ञस्य शिरः प्रतिधत्तमिति। तावंब्रूतां वरं वृणावहै। ग्रहं एव नावत्रापिं गृह्यतामिति। ताभ्यामेतमांश्विनमंगृह्णन्। तावेतद्यज्ञस्य शिरः प्रत्यंधत्ताम्। यत्प्रंवर्ग्यः। तेन सशींष्णां यज्ञेन यजंमानाः। अवाशिषोऽरुंन्धत। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। यत्प्रंवर्ग्यं प्रवृणिति। यज्ञस्यैव तिच्छरः प्रतिदधाति। तेन सशींष्णां यज्ञेन यजंमानः। अवाशिषों रुन्धे। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। तस्मादेष आंश्विनप्रंवया इव। यत्प्रंवर्ग्यः॥७॥

सावित्रं जुंहोति प्रसूँत्यै। चतुर्गृहीतेनं जुहोति। चतुंष्पादः पृशवंः। पृशूनेवावंरुन्थे। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतितिष्ठति। छन्दार्श्स देवेभ्योऽपाँकामन्। न वोऽभागानि

ह्वयं वेक्ष्याम् इति। तेभ्यं पृतचंतुर्गृहीतमंधारयन्। पुरोनुवाक्यांयै याज्यांयै॥८॥ देवतांयै वषद्वारायं। यचंतुर्गृहीतं जुहोतिं। छन्दा ईस्येव तत् प्रींणाति। तान्यंस्य प्रीतानिं देवेभ्यों ह्व्यं वंहन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंं दीक्षितस्यं गृहा(३)इ न

होत्व्या(३)मितिं। ह्विर्वे दींक्षितः। यज्ञंहुयात्। ह्विष्कृतं यजंमानमुग्नौ प्रदंध्यात्। यन्न जुंहुयात्॥९॥

यज्ञपुरुर्न्तरियात्। यजुरेव वंदेत्। न ह्विष्कृतं यजमानमुग्नौ प्रदर्धाति। न यज्ञपुरुर्न्तरेति। गायत्री छन्दाङ्स्यत्यमन्यत। तस्यै वषद्कारौऽभ्यय्य शिरौऽच्छिनत्। तस्यै द्वेधा रसः परापतत्। पृथिवीमुर्धः प्राविंशत्। पृशूनुर्धः। यः पृथिवीं प्राविंशत्॥१०॥

स खंदिरोऽभवत्। यः पृशून्। सोऽजाम्। यत्खांदिर्यभ्रिभंवंति। छन्दंसामेव रसेन युज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यदौदुंम्बरी। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। ऊर्जैव युज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यद्वैणवी। तेजो वै वेणुः॥११॥

तेजंसैव यज्ञस्य शिरः सम्भंरित। यद्वैकंङ्कती। भा एवावंरुन्थे। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इत्यभ्रिमादंत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्यै। वज्रं इव वा एषा। यदभ्रिः। अभ्रिरसि नारिरसीत्यांह शान्त्यै॥१२॥

अध्वरकृद्देवेभ्य इत्यांह। यज्ञो वा अध्वरः। यज्ञकृद्देवेभ्य इति वावैतदांह। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पत् इत्यांह। ब्रह्मणैव यज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्रैतु ब्रह्मणस्पतिरित्यांह। प्रेत्यैव यज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्र देव्येतु सूनृतेत्यांह। यज्ञो वे सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किराधसमित्यांह॥१३॥

पाङ्गो हि युज्ञः। देवा युज्ञं नंयन्तु न इत्याह। देवानेव यंज्ञनियः कुरुते। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथामित्यांह। आभ्यामेवानुंमतो युज्ञस्य शिरः सम्भंरित। ऋद्यासंमुद्य मुखस्य शिर् इत्याह। युज्ञो वै मुखः। ऋद्यासंमुद्य युज्ञस्य शिर् इति वावैतदाह। मुखायं त्वा मुखस्यं त्वा शीष्णं इत्याह। निर्दिश्यैवैनद्धरित॥१४॥

त्रिर्हरित। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य एव लोकेभ्यों यज्ञस्य शिरः सम्भरित। तूष्णीं चंतुर्थः हंरित। अपिरिमितादेव यज्ञस्य शिरः सम्भरित। मृत्खनादग्रे हरित। तस्मान्मृत्खनः कंरुण्यंतरः। इयत्यग्रं आसीरित्याह। अस्यामेवाछेम्बद्धारं यज्ञस्य शिरः सम्भेरति। ऊर्जुं वा एतः रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति॥१५॥

यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकवृपा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवंरुन्धे। अथो श्रोत्रमेव। श्रोत्र ह्यंतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकः। अबंधिरो भवति। य एवं वेदं। इन्द्रो वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। स यत्रं यत्र प्राक्रमत॥१६॥

तन्नार्द्धियत। स पूंतीकस्तम्बे परांत्रमत। सोंऽद्भियत। सोंऽब्रवीत्। ऊतिं वै में धा इतिं। तदूतीकांनामूतीकृत्वम्। यदूतीका भवंन्ति। यज्ञायैवोतिं दंधित। अग्निजा असि प्रजापंते रेत इत्यांह। य एव रसंः पशून्प्राविंशत्॥१७॥

तमेवावंरुन्थे। पश्चैते संम्भारा भंवन्ति। पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः सम्भंरति। यद्ग्राम्याणां पशूनां चर्मणा सम्भरेत्। ग्राम्यान्पशूञ्छुचाऽपंयेत्। कृष्णाजिनेन सम्भंरति। आर्ण्यानेव पशूञ्छुचार्पयति। तस्मांथ्समावंत्पशूनां प्रजायंमानानाम्॥१८॥

आरुण्याः पृशवः कर्नीया सः। शुचा ह्यृंताः। लोुमृतः सम्भेरति। अतो ह्यस्य

मेध्यम्। परिगृह्या यंन्ति। रक्षंसामपंहत्यै। बहवों हरन्ति। अपंचितिमेवास्मिन्दधित। उद्धंते सिकंतोपोप्ते परिश्रिते निदंधति शान्त्यै। मदंन्तीभिरुपं सृजित॥१९॥ तेजं पुवास्मिन्दधाति। मधुं त्वा मधुला कंरोत्वित्यांह। ब्रह्मणैवास्मिन्तेजों दधाति। यद्ग्राम्याणां पात्रांणां कपालैः स॰सृजेत्। ग्राम्याणि पात्रांणि शुचाऽपंयेत्। अर्मकपालैः सर्मृजिति। एतानि वा अनुपजीवनीयानि। तान्येव शुचार्पयिति। शर्कराभिः स॰सृंजति धृत्यै। अथों शन्त्वायं। अजलोमैः स॰सृंजति। एषा वा अग्नेः प्रिया तनूः। यदजा। प्रिययैवैनं तनुवा स॰सृंजति। अथो तेजंसा। कृष्णाजिनस्य लोमंभिः सरमृजति। यज्ञो वै कृष्णाजिनम्। यज्ञेनैव यज्ञर सरमृजति॥२०॥

याज्याये न जीहुयादविश्वेषः शान्त्यं पृद्धिराधस्मित्यांह हरति दिहन्ति प्राक्रंम्याविशत प्रजायंमानानाः स्वति श्न्तवायाशे चा-----[२] परिश्रिते करोति। ब्रह्मवर्चसस्य परिगृहीत्ये। न कुर्वन्नभि प्राण्यात्। यत्कुर्वन्नभि प्राण्यात्। प्राणाञ्छुचार्पयेत्। अपहाय प्राणिति। प्राणानां गोपीथायं। न प्रवृग्यं चादित्यं चान्तरेयात्। यदंन्तरेयात्। दुश्चर्मां स्यात्॥२१॥

तस्मान्नान्तराय्यम्। आत्मनो गोपीथायं। वेणुंना करोति। तेजो वै वेणुंः। तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्धयिति। मुखस्य शिरोऽसीत्यांह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्प्रंवर्ग्यः॥२२॥ तस्मादेवमांह। युज्ञस्यं पुदे स्थ इत्यांह। युज्ञस्य ह्यंते पुदे। अथो प्रतिष्ठित्यै।

गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमीत्याह। छन्दोभिरेवैनं करोति। त्र्युंद्धिं करोति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामाध्यै। छन्दोभिः करोति॥२३॥

वीर्यं वै छन्दा रसि। वीर्येणैवेनं करोति। यजुंषा बिलं करोति व्यावृंत्यै। इयं तं करोति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयं तं करोति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयं तं करोति। युज्जपुरुषा सम्मितम्। इयं तं करोति। एतावद्वै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥२४॥

अपिरिमितं करोति। अपिरिमित्स्यावंरुद्धै। परिग्रीवं करोति धृत्यैं। सूर्यस्य हरंसा श्रायेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अश्वशकनं धूपयति। प्राजापत्यो वा अर्श्वः सयोनित्वायं। वृष्णो अश्वस्य निष्पदसीत्यांह। असौ वा आंदित्यो वृषाऽर्श्वः। तस्य छन्दा ५ सि निष्पत्॥ २५॥

छन्दोभिरेवैनं धूपयित। अर्चिषं त्वा शोचिषे त्वेत्यांह। तेजं पुवास्मिन्दधाित। वारुणों ऽभीद्धः। मैत्रियोपैति शान्त्ये। सिद्धौ त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। देवस्त्वां सिवतोद्वंपत्वित्यांह। सिवतृप्रंसूत पुवेनं ब्रह्मणा देवतांभिरुद्वंपति। अपंद्यमानः पृथिव्यामाशा दिश आपृणेत्यांह॥२६॥

तस्मांद्गिः सर्वा दिशोऽनु विभाति। उत्तिष्ठ बृहन्भंवोर्ध्वस्तिष्ठ ध्रुवस्त्वमित्यांह् प्रतिष्ठित्यै। ईश्वरो वा एषौऽन्थो भवितोः। यः प्रवृग्यम्नवीक्षंते। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्ष इत्यांह। चक्षुषो गोपीथायं। ऋजवै त्वा साधवै त्वा सुक्षित्यै त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। इयं वा ऋजुः। अन्तरिक्षः साधु। असौ सुक्षितिः॥२७॥ दिशोभूतिः। इमानेवास्मै लोकान्कंल्पयति। अथो प्रतिष्ठित्यै। इदमृहमुमुमांमुष्यार्

विशा पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन् पर्यूह्मित्यांह। विशेवैनं पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन् पर्यूहित। विशेतिं राज्नन्यंस्य ब्रूयात्। विशेवैनं पर्यूहित। पृशुभिरिति वैश्यंस्य। पृशुभिरेवैनं

पर्यूहित। असुर्यं पात्रमनौच्छृण्णम्॥२८॥

आर्च्छृणित्ति। देवत्राकः। अज्ञक्षीरेणाऽऽच्छृणित्ति। प्रमं वा एतत्पयः। यदंजिक्षीरम्। प्रमेणैवेनं पयसाऽऽच्छृणित्ति। यजुंषा व्यावृत्त्यै। छन्दोभिराच्छृणित्ति। छन्दोभिर्वा एष क्रियते। छन्दोभिरेव छन्दाङ्स्याच्छृणित्ति। छृन्धि वाचमित्यांह। वाचंमेवावंरुन्धे। छृन्धे ह्विरित्यांह। ह्विरेवाकः। देवं पुरश्चर सुघ्यासन्त्वेत्यांह। यथायुजुरेवेतत्॥२९॥

स्याद्यत्र्यंश्कुन्दोभिः करोति वीर्यंसम्मितुं छन्दार्शस निष्पत्पृणेत्यांह सुक्षितिरनाँच्छुण्णुञ्छन्दा्र्स्याच्छूणत्यष्टौ चं॥———[३]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामो होतंर्घुर्मम्भिष्टुहीत्यांह। एष वा एतर्राहु बृहुस्पतिः। यद्भुह्मा। तस्मां एव प्रतिप्रोच्य प्रचरति। आत्मनोऽनाँत्यै। यमायं त्वा मुखाय त्वेत्यांह। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन् समंध्यति। मदंन्तीभिः प्रोक्षंति। तेजं एवास्मिन्दधाति॥३०॥

अभिपूर्वं प्रोक्षंति। अभिपूर्वमेवास्मिन्तेजों दधाति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः।

अथों मेध्यत्वायं। होताऽन्वांह। रक्षंसामपंहत्यै। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्यै। त्रिष्टभः सतीर्गायत्रीरिवान्वांह॥३१॥

गायत्रो हि प्राणः। प्राणमेव यर्जमाने दधाति। सन्तंतमन्वांह। प्राणानांमन्नाद्यंस्य सन्तंत्ये। अथो रक्षंसामपहत्ये। यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवंरुन्धीत। अपरिमिता अन्वांह। अपरिमित्स्यावंरुद्धै। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं॥३२॥

यत्प्रंवर्ग्यः। ऊर्ङ्मुश्चाः। यन्मौञ्चो वेदो भवंति। ऊर्जैव यज्ञस्य शिरः समर्धयति। प्राणाहुतीर्जुहोति। प्राणानेव यजमाने दधाति। सप्त जुहोति। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। देवस्त्वां सिवता मध्यांऽनिक्कित्यांह॥३३॥

प्राणाः। प्राणान्वास्मिन्दधात। द्वस्त्वा सावता मध्वाऽनाक्कत्याह॥३३॥ तेजंसैवैनंमनिक्ताः पृथिवीं तपंसस्त्रायस्वेति हिरंण्यमुपांस्यित। अस्या अनंतिदाहाय। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निः सर्वा देवताः। प्रल्वानादीप्योपांस्यिति। देवतांस्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति। अप्रंतिशीणांग्रं भवति। पृतद्वंरहिर्ह्यंषः॥३४॥ अर्चिरंसि शोचिर्सीत्यांह। तेजं पुवास्मिन्ब्रह्मवर्चसं दंधाति। स॰सींदस्व महा॰ असीत्यांह। महान् ह्यंषः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। पुते वाव त ऋत्विजंः। ये दंर्शपूर्णमासयौः। अथं कथा होता यजमानायाऽऽशिषो नाशांस्त इति। पुरस्तांदाशीः खलु वा अन्यो यज्ञः। उपरिष्टादाशीर्न्यः॥३५॥

अनाधृष्या पुरस्तादिति यदेतानि यजूङ्ष्याहै। शीर्षत एव यज्ञस्य यजंमान आशिषोऽवंरुन्थे। आयुंः पुरस्तादाह। प्रजां दक्षिणतः। प्राणं पृश्चात्। श्रोत्रंमृत्तर्तः। विधृतिमुपरिष्टात्। प्राणानेवास्मै समीचो दधाति। ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति॥३६॥

मनोरश्वांसि भूरिपुत्रेतीमाम्भिमृंशित। इयं वै मनोरश्वा भूरिपुत्रा। अस्यामेव प्रितिष्ठित्यनुंन्मादाय। सूप्सदां मे भूया मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। चितः स्थ परिचित् इत्यांह। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तस्यं मुरुतो रूश्मयः॥३७॥

स्वाहां मुरुद्भिः परिश्रयस्वेत्यांह। अमुमेवाऽऽदित्यः रिश्मिभिः पर्यूहित। तस्माद्मावादित्योऽमुिष्मं ह्लोके रिश्मिभिः पर्यूढः। तस्माद्राजां विशा पर्यूढः। तस्माद्रामणीः संजातैः पर्यूढः। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कत्ं भा आँच्छित्। यद्वैकंङ्कताः परिधयो भवन्ति। भा एवावंरुन्धे। द्वादंश भवन्ति॥३८॥

द्वार्दश् मार्साः संवथ्सरः। संवथ्सरमेवावंरुन्धे। अस्ति त्रयोद्शो मास् इत्यांहुः। यत्रयोद्शः पंरिधिर्भवंति। तेनैव त्रयोद्शं मास्मवंरुन्धे। अन्तरिक्षस्यान्तर्धिर्सीत्यांह् व्यावृत्त्यै। दिवं तपंसस्रायस्वेत्युपरिष्टाद्धिरेण्यमधि निदंधाति। अमुष्या अनंतिदाहाय। अथो आभ्यामेवनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। अर्हन् विभर्षि सार्यकानि धन्वेत्यांह॥३९॥

स्तौत्येवैनंमेतत्। गायत्रमंसि त्रैष्टुंभमसि जागंतम्सीतिं ध्वित्राण्यादंत्ते। छन्दोंभिरेवैनान्यादंत्ते। मधु मध्वितिं धूनोति। प्राणो वै मधुं। प्राणमेव यर्जमाने दधाति। त्रिः परियन्ति। त्रिवृद्धि प्राणः। त्रिः परियन्ति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः॥४०॥ अथो रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। यो वै घर्मस्यं प्रियां तनुवंमाक्रामंति। दुश्चर्मा वै स भवति। एष ह् वा अस्य प्रियां तनुव्माक्रांमति। यित्रिः प्रीत्यं चतुर्थं पर्येति। एता ह वा अस्योग्रदेवो रार्जनिराचंक्राम॥४१॥

ततो वै स दुश्चर्मां ऽभवत्। तस्मान्तिः प्रीत्यं न चंतुर्थं परीयात्। आत्मनों गोपीथायं। प्राणा वै धवित्राणि। अव्यंतिषङ्गं धून्वन्ति। प्राणानामव्यंतिषङ्गायं क्रुस्यैं। विनिषद्यं धून्वन्ति। दिक्ष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। ऊर्ध्वं धून्वन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्रौ। सुर्वतो धून्वन्ति। तस्माद्यः सुर्वतः पवते॥४२॥

दुधातीवान्वांह युज्ञस्यांहुष उपरिष्टादाशीर्न्यो व्यांस्थापयंन्ति रुश्मयों भवन्ति धन्वेत्यांह युज्ञश्चंकाम् सम्रध्ये द्वे चं॥—————[४]

अग्निष्ट्वा वसुंभिः पुरस्ताँद्रोचयतु गायत्रेण छन्द्सेत्यांह। अग्निरेवैनं वसुंभिः पुरस्ताँद्रोचयति गायत्रेण छन्दंसा। स मां रुचितो रोचयत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिणतो रोचयतु त्रैष्ट्रंभेन् छन्द्सेत्यांह। इन्द्रं एवैन र्

रुद्रैर्दक्षिणतो रोचयति त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचयेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। वर्रणस्त्वाऽऽदित्यैः पृश्चाद्रोचयतु जागतेन् छन्द्सेत्यांह। वर्रण एवैनंमादित्यैः पश्चाद्रोचयति जागतेन छन्दंसा॥४३॥

स मां रुचितो रोंचयत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिंरुत्तर्तो रोंचयत्वानुंष्टुभेन छन्दसेत्यांह। द्युतान एवैनं मारुतो मुरुद्धिंरुत्तर्तो रोंचयत्यानुंष्टुभेन छन्दंसा। स मां रुचितो रोंचयत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वैर्देवैरुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन छन्दसेत्यांह। बृह्स्पतिंरेवैनं विश्वैर्देवैरुपरिष्टाद्रोचयति पाङ्केन छन्दंसा। स मां रुचितो रोंचयत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते॥४४॥

रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसीत्यांह। रोचितो ह्येष देवेषुं। रोचिषीयाहं मंनुष्येष्वित्यांह। रोचंत एवेष मंनुष्येषु। सम्राह्वर्म रुचितस्त्वं देवेष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चस्यंसीत्यांह। रुचितो ह्येष देवेष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चसी। रुचितोऽहं मंनुष्येष्वायंष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्च्सी भूयास्मित्यांह। रुचित एवेष मंनुष्येष्वायंष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्च्सी भंवति। रुगंसि रुचं मियं धेहि मियं रुगित्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। तं यदेतैर्यजुंर्भिररोचियत्वा। रुचितो घर्म इति प्रब्रूयात्। अरोचुकोऽध्वर्युः स्यात्। अरोचुको यजंमानः। अथ यदेनमेतैर्यजुंर्भी रोचियत्वा। रुचितो घर्म इति प्राहं। रोचंकोऽध्वर्युर्भवंति। रोचंको यजंमानः॥४५॥

प्रभागा श्रावास्यव युजस्य शिरोऽवंरुन्थे। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥४६॥ पुभ्य एव लोकेभ्यो युजस्य शिरोऽवंरुन्थे। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥४६॥ ऋतुभ्यं एव युजस्य शिरोऽवंरुन्थे। द्वादंशकृत्वः प्रवृणिक्ति। द्वादंश् मासाः

संवथ्सरः। संवथ्सरादेव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। चतुंर्वि शितः सम्पंद्यन्ते।

चतुंर्वि श्वातिरर्धमासाः। अर्धमासेभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। अथो खलुं। सकृदेव प्रवृज्यः। एक १ हि शिरंः॥४७॥

अग्निष्टोमे प्रवृंणिक्ति। पुतावान् वै यज्ञः। यावानिग्निष्टोमः। यावानेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिद्धाति। नोक्थ्ये प्रवृंश्यात्। प्रजा वै प्शवं उक्थानि। यदुक्थ्ये प्रवृश्यात्। प्रजां प्शूनंस्य निर्देहेत्। विश्वजिति सर्वपृष्ठे प्रवृंणिक्ति॥४८॥

पृष्ठानि वा अर्च्युतं च्यावयन्ति। पृष्ठेरेवास्मा अर्च्युतं च्यावयित्वाऽवंरुन्थे। अपंश्यं गोपामित्याह। प्राणो वे गोपाः। प्राणमेव प्रजासु वियातयित। अपंश्यं गोपामित्याह। असौ वा आंदित्यो गोपाः। स हीमाः प्रजा गोपायिते। तमेव प्रजानां गोपारं कुरुते। अनिपद्यमान्मित्यांह॥४९॥

न ह्यंष निपद्यंते। आ च परां च पृथिभिश्चरंन्तमित्यांह। आ च ह्यंष परां च पृथिभिश्चरंति। स सुधीचीः स विषूचीर्वसांन इत्यांह। सुधीचीश्च ह्यंष विषूचीश्च वसांनः प्रजा अभि विपश्यंति। आवरीवर्ति भुवनेष्वन्तरित्यांह। आ ह्यंष वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीर्मधु माध्वीभ्यां मधु माधूचीभ्यामित्यांह। वासंन्तिकावेवास्मां ऋतू केल्पयति। समग्निरग्निनां गतेत्यांह॥५०॥

ऋतू कल्पयाता समाग्रराग्नना गृतत्याह॥५०॥ ग्रैष्मांवेवास्मां ऋतू कंल्पयति। सम्ग्रिर्ग्निनां गृतेत्यांह। अग्निर्ह्यवैषाँऽग्निनां सङ्गच्छंते। स्वाहा समग्निस्तपंसा गतेत्यांह। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति।

धूर्ता द्वो विभांसि रजसः पृथिव्या इत्यांह। शार्दावेवास्मां ऋतू कंल्पयति॥५१॥ दिवि देवेषु होत्रां यच्छेत्यांह। होत्रांभिरेवेमाँ होकान्थ्सन्दंधाति। विश्वांसां भवां पत इत्यांह। हैर्मन्तिकावेवास्मां ऋत कंल्पयति। देवश्रस्त्वं देव धर्म

भुवां पत् इत्याह। हैमंन्तिकावेवास्मां ऋतू केल्पयित। देवश्रूस्त्वं देव धर्म देवान्पाहीत्याह। शैशिरावेवास्मां ऋतू केल्पयित। तुपोजां वाचंमस्मे नियंच्छ देवायुवमित्याह। या वै मेध्या वाक्। सा तंपोजाः। तामेवावंरुन्धे॥५२॥

गर्भो देवानामित्यांह। गर्भो ह्येष देवानांम्। पिता मंतीनामित्यांह। प्रजा वै मृतयः। तासांमेष एव पिता। यत्प्रंवर्ग्यः। तस्मादेवमांह। पतिः प्रजानामित्यांह। पतिर्ह्येष प्रजानांम्। मितः कवीनामित्यांह॥५३॥ मितृहींष केवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवत्रा यंतिष्ट सं सूर्येणारुक्तेत्यांह। अमुं चैवाऽऽदित्यं प्रवृग्यं च संशास्ति। आयुर्दास्त्वमस्मभ्यं घर्म वर्चोदा असीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शास्ते। पिता नोऽसि पिता नो बोधेत्यांह। बोधयंत्येवैनम्। न वै तेऽवकाशा भवन्ति। पित्रिये दश्मः। नव वै पुरुषे प्राणाः॥५४॥

नाभिंद्शमी। प्राणानेव यर्जमाने दधाति। अथो दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्थे। यज्ञस्य शिरोंऽच्छिद्यतं। तद्देवा होत्रांभिः प्रत्यंदधुः। ऋत्विजोऽवेंक्षन्ते। एता वै होत्राः। होत्रांभिरेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥५५॥ रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजाना १ सृष्ट्रौं। रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वै पर्जन्यो वर्षति। वर्षुंकः पर्जन्यो भवति। सं प्रजा एंधन्ते। रुचितमवें क्षन्ते। रुचितं वै ब्रंह्मवर्चसम्। ब्रह्मवर्चसिनों भवन्ति॥५६॥ अधीयन्तोऽवेंक्षन्ते। सर्वमायुंर्यन्ति। न पत्यवेंक्षेत। यत्पत्यवेक्षेत। प्रजांयेत। प्रजां त्वंस्यै निर्दहेत्। यन्नावेक्षंत। न प्रजांयेत। नास्यैं प्रजां निर्दहेत्। तिरस्कृत्य यर्जुर्वाचयति। प्रजायते। नास्यै प्रजां निर्दहिति। त्वष्टीमती ते सप्येतयाह। सपाद्धि प्रजाः प्रजायन्ते॥५७॥

ऋतवों हि शिर्ः सर्वपृष्ठे प्रवृणक्त्विनंपद्यमानुमित्याह गुतेत्याह शारुदावेवास्मां ऋतू कंल्पयित रुन्धे कवीनामित्याह प्राणाः प्रतिंदधाति भवन्ति वाचयित चुत्वारिं

TI.

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इतिं रश्नामादंत्ते प्रसूत्ये। अश्विनौंबा्हुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्य आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। आददेऽदिंत्यै रास्राऽसीत्यांह यज्जंष्कृत्ये। इड एह्यदिंत एहि सरंस्वत्येहीत्यांह। एतानि वा अस्यै देवनामानिं। देवनामरेवेनामाह्वंयित। असावेह्यसावेह्यसावेहीत्यांह। एतानि वा अंस्यै मनुष्यनामानिं॥५८॥

मनुष्यनामेरेवेनामाह्वंयति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवेनामाह्वंयति। अदित्या उष्णीषंमसीत्यांह। यथायजुरेवेतत्। वायुरंस्यैड इत्यांह। वायुदेवत्यों वे वथ्सः। पूषा त्वोपावंसृज्तित्यांह। पौष्णा वे देवतंया पृशवंः॥५९॥ स्वयैवैनं देवतंयोपावंसृजित। अश्विभ्यां प्रदापयेत्यांह। अश्विनौ वै देवानां भिषजौ। ताभ्यांमेवास्मै भेषजं करोति। यस्ते स्तनः शश्य इत्यांह। स्तौत्येवैनौम्। उस्रं घर्मं शिर्षोस्रं घर्मं पाहि घर्मायं शिर्षेत्यांह। यथां ब्रूयादमुष्में देहीतिं। तादगेव तत्। बृहस्पितस्त्वोपं सीदित्वत्यांह॥६०॥

ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनामुपंसीदति। दानंवः स्थ् पेरंव इत्यांह। मेध्यांनेवैनांन्करोति। विष्वुग्वृतो लोहिंतेनेत्यांह व्यावृत्त्ये। अश्विभ्यां पिन्वस्व सरंस्वत्ये पिन्वस्व पूष्णे पिन्वस्व बृह्स्पतंये पिन्वस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्येषा देवतांभ्यः पिन्वंते। इन्द्रांय पिन्वस्वेन्द्रांय पिन्वस्वेत्यांह। इन्द्रमेव भागधेयेन समर्धयति। द्विरिन्द्रायेत्यांह॥६१॥

तस्मादिन्द्रों देवतांनां भूयिष्ठभाक्तंमः। गायत्रोंऽसि त्रेष्टुंभोऽसि जागंतमसीतिं शफोपयमानादंत्ते। छन्दोंभिरेवैनानादंत्ते। सहोर्जो भागेनोपमेहीत्यांह। ऊर्ज एवैनं भागमंकः। अश्विनौ वा एतद्यज्ञस्य शिरंः प्रतिदर्धतावब्रूताम्। आवाभ्यामेव पूर्वीभ्यां वर्षद्भियाता इति। इन्द्रौश्विना मधुनः सार्घस्येत्यांह। अश्विभ्यांमेव पूर्वीभ्यां वर्षद्भरोति। अथों अश्विनांवेव भांगुधेयेंन समर्धयति॥६२॥

घुमं पात वसवो यजंता विडित्यांह। वसूनेव भागधेयेन समर्धयित। यद्वेषद्भुर्यात्। यातयांमाऽस्य वषद्वारः स्यात्। यन्न वषद्भुर्यात्। रक्षार्रस यज्ञर हंन्युः। विडित्यांह। प्रोक्षंमेव वषद्वरोति। नास्यं यातयांमा वषद्वारो भवंति। न यज्ञर रक्षार्रसि घन्ति॥६३॥

स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य र्ष्मयं वृष्टिवनंये जुहोमीत्यांह। यो वा अस्य पुण्यों रिष्मः। स वृष्टिविनः। तस्मां एवैनं जुहोति। मधुं हिविर्सीत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। सूर्यस्य तपंस्तपेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामीत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं परिगृह्णाति॥६४॥

अन्तरिक्षेण त्वोपंयच्छामीत्यांह। अन्तरिक्षेणैवैनुमुपंयच्छति। न वा एतं

मंनुष्यों भर्तुमरहित। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु शकेयमित्यांह। देवैरेवैनं पितृभिरनुंमत् आदंत्ते। वि वा एंनमेतदंर्धयन्ति। यत्पश्चात्प्रवृज्यं पुरो जुह्वंति। तेजोऽसि तेजोऽनु प्रेहीत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरन्तिरक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीरत्याहाहिरंसायै॥६५॥

सुवंरिस सुवंर्मे यच्छ दिवं यच्छ दिवो मां पाहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। आत्मा वायः। उद्यत्यं वातनामान्यांह। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्यै। पञ्चांह॥६६॥

पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिदधाति। अग्नये त्वा वसुमते स्वाहेत्यांह। असौ वा आंदित्योंऽग्निर्वसुंमान्। तस्मां पुवैनं जुहोति। सोमांय त्वा रुद्रवंते स्वाहेत्यांह। चन्द्रमा वै सोमों रुद्रवान्। तस्मां पुवैनं जुहोति। वर्रुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहेत्यांह॥६७॥

विश्वदें व्यावते स्वाहेत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृहस्पतिः। ब्रह्मणैवैनं जुहोति। सवित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहेत्यांह। संवथ्सरो वै संवितर्भुमान् विभुमान्प्रभुमान् वाजंवान्। तस्मां एवैनं जुहोति। युमाय् त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहेत्यांह। प्राणो वै यमोऽङ्गिरस्वान्यितृमान्॥६८॥ तस्मां एवैनं जुहोति। एताभ्यं एवैनं देवताभ्यो जुहोति। दश सम्पंद्यन्ते। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजेवान्नाद्यमवंरुन्धे। रौहिणाभ्यां वै देवाः सुंवर्गं लोकमायन्। तद्रौहिणयो रौहिणुत्वम्। यद्रौहिणौ भवंतः। रौहिणाभ्यांमेव तद्यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अहुर्ज्योतिः केतुनां जुषता । सुज्योतिज्योतिषा्ड् स्वाहा रात्रिज्योतिः केतुनां जुषता सुज्योतिज्योतिषाड् स्वाहेत्यांह। आदित्यमेव तदमुष्मिं लोके उह्नां परस्तां द्वाधार। रात्रिया अवस्तांत्। तस्माद्सावादित्योऽमुष्मिँ होकेऽहोरात्राभ्यां भृतः॥६९॥

अफ्सु वै वरुण आदित्यवान्। तस्मां एवैनं जुहोति। बृहस्पतंये त्वा

मनुष्यन्मानं प्रश्नः सेवृत्वत्यहेन्त्र्येत्वाहार्थयते प्रति गृह्यत्यहिरंसाये पर्याद्वावित्यवेते स्वाहेत्यां प्रतृत्यां व्याच्याचित्र प्रति। विश्वां वेवान्प्रीणाति। अथो दुरिष्ट्रपा प्रवैनं पाति। विश्वां देवान्याडिहेत्यांह। विश्वांनेव देवान्प्रीणाति। अथो दुरिष्ट्रपा प्रवैनं पाति। विश्वां देवान्याडिहेत्यांह। विश्वांनेव देवान्माग्धेयेन समर्धयति। स्वाहांकृतस्य घूर्मस्य मधौः पिबतमिश्वनेत्यांह। अश्विनांवेव भाग्धेयेन समर्धयति। स्वाहाऽग्रये युज्ञियांय शं यर्जुर्भिरित्यांह। अभ्येवैनं घारयति। अथो हिवरेवाकः॥७०॥

हावर्वाकः॥७०॥
अश्विना घर्मं पांतः हार्दिवानमहर्दिवाभिकृतिभिरित्यांह। अश्विनांवेव
भाग्धेयेन समर्धयति। अनुं वां द्यावांपृथिवी मः सातामित्याहानुंमत्यै। स्वाहेन्द्रांय
स्वाहेन्द्राविडित्यांह। इन्द्रांय हि पुरो हूयतें। आश्राव्यांह घर्मस्यं यजेतिं। वषंद्वृते
जुहोति। रक्षंसामपंहत्यै। अनुंयजित स्वगाकृत्यै। घर्ममंपातमश्विनेत्यांह॥७१॥
पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमः सातामित्याहानुंमत

तं प्राच्यं यथावण्णमो दिवे नर्मः पृथिव्या इत्याह। यथायजुरेवैतत्। दिविधां

इमं युज्ञं युज्ञमिमं दिविधा इत्याह। सुवर्गमेवैनं लोकं गंमयति। दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गुच्छेत्याह। पृष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठापयति। पश्चं प्रदिशों गुच्छेत्याह॥७२॥

दिक्ष्वेंवैनं प्रतिष्ठापयति। देवान्धर्म्पान्गंच्छ पितॄन्धर्म्पान्गच्छेत्यांह। उभर्येंष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। यत्पन्वंते। वर्षुंकः पूर्जन्यों भवति। तस्मात्पन्वंमानः पुण्यः। यत्प्राङ्घिन्वंते। तद्देवानांम्। यद्देक्षिणा। तत्पितृणाम्॥७३॥

यत्प्रत्यक्। तन्मंनुष्यांणाम्। यदुदङ्कं। तद्रुद्राणांम्। प्राश्चमुदंश्चं पिन्वयति। देवत्राकः। अथो खलुं। सर्वा अनु दिशः पिन्वयति। सर्वा दिशः समेधन्ते। अन्तःपरिधि पिन्वयति॥७४॥

तेज्सोऽस्कंन्दाय। इषे पींपिह्यूर्जे पींपिहीत्यांह। इषेमेवोर्जं यजंमाने दधाति। यजंमानाय पीपिहीत्यांह। यजंमानायैवैतामाशिषमा शाँस्ते। मह्यं ज्यैष्ठ्यांय पीपिहीत्यांह। आत्मनं एवैतामाशिषमा शाँस्ते। त्विष्यैं त्वा द्युम्नायं त्वेन्द्रियायं त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। धर्मासि सुधर्मा में न्यस्मे ब्रह्मांणि धारयेत्यांह॥७५॥

ब्रह्मंत्रेवैनं प्रतिष्ठापयित। नेत्त्वा वातः स्कृन्दयादिति यद्यंभिचरैंत्। अमुष्यं त्वा प्राणे सादयाम्यमुनां सह निर्धं गुच्छेतिं ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तेनैन स् सह निर्धं गमयित। पूष्णे शर्रसे स्वाहेत्यांह। या एव देवतां हुतभांगाः। ताभ्यं एवैनं ज्होति। ग्रावंभ्यः स्वाहेत्यांह। या एवान्तरिक्षे वार्चः॥७६॥

ताभ्यं पुवैनं जुहोति। प्रतिरेभ्यः स्वाहेत्यांह। प्राणा वै देवाः प्रतिराः। तेभ्यं पुवैनं जुहोति। द्यावांपृथिवीभ्याङ् स्वाहेत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यामेवैनं जुहोति। पितृभ्यां धर्मपेभ्यः स्वाहेत्यांह। ये वै यज्वांनः। ते पितरों धर्मपाः। तेभ्यं पुवैनं जुहोति॥७७॥ रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहेत्यांह। रुद्रमेव भांगुधेयेन समर्धयति। सुर्वतः समनिक्ति।

स्वतं एव रुद्रं निरवंदयते। उदंश्चं निरस्यति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। अप उपंस्पृशति मेध्यत्वायं। नान्वीक्षेत। यद्नवीक्षेत॥७८॥ समित्तया समिध्यस्वाऽऽयुंर्मे दा वर्चसा माऽऽञ्जीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दंधाति। अग्निज्योतिज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होतव्यंमग्निहोत्रा(३)न्न होंतव्या(३)मितिं॥७९॥ यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः परांभवेत्। भूः स्वाहेत्येव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः पराभवति। हुत १ हविर्मधुं हविरित्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। इन्द्रंतमेऽग्नावित्यांह॥८०॥ प्राणो वा इन्द्रंतमोऽग्निः। प्राण एवैनमिन्द्रंतमेऽग्नौ जुंहोति। पिता नोंऽसि मा मां

हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। अश्यामं ते देव घर्म मधुंमतो वाजंवतः पितुमत् इत्यांह।

चक्षुंरस्य प्रमायुंक एस्यात्। तस्मान्नान्वीक्ष्यः। अपीपरो माऽह्लो रात्रियै

मा पाह्येषा तें अग्ने समित्तया समिंध्यस्वायुंमें दा वर्चसा माऽऽश्लीरित्यांह।

आयुरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अपीपरो मा रात्रिया अह्नो मा पाह्येषा ते अग्ने

आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। स्वधाविनों ऽशीमिहं त्वा मा मां हि श्सीरित्याहाहि शंसायै। तेजंसा वा एते व्यृध्यन्ते। ये प्रवर्ग्येण चर्रन्ति। प्राश्जन्ति। तेजं एवात्मन्दंधते॥८१॥

संवथ्सरं न मारसमंश्जीयात्। न रामामुपंयात्। न मृन्मयेन पिबेत्। नास्यं राम उच्छिष्टं पिबेत्। तेज एव तथ्सङ्श्यंति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुंपयन्तः। विभ्राजि सौर्ये ब्रह्मसन्त्र्यंदर्धतः यत्किं चं दिवाकीर्त्यम्। तदेतेनैव व्रतेनांगोपायत्। तस्मांदेतद्वतं चार्यम्। तेजंसो गोपीथायं। तस्मांदेतानि यजू ५ षि विभ्राजंः सौर्यस्येत्यांहुः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रश्मिभ्य इति प्रातः स॰सांदयति। स्वाहाँ त्वा नक्षेत्रभ्य इति सायम्। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरवैन समर्धयति॥८२॥

अकरश्विनेत्यांह प्रदिशों गच्छेत्यांह पितृणामंन्तःपरिधि पिन्वयति धारयेत्यांह बाचों घर्मपास्तेभ्यं एवैने जुहोत्यन्वीक्षेत होतव्या(३)मित्यग्रावित्यांह दधतेऽगोपायथ्सप्त

घर्म या तें दिवि शुगितिं तिस्र आहुंतीर्जुहोति। छन्दोंभिरेवास्यैभ्यो

लोकेभ्यः शुचमर्वं यजते। इयत्यग्रें जुहोति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। अनुं नोऽद्यानुंमितिरित्याहानुंमत्यै। दिवस्त्वां पर्स्पाया इत्यांह। दिव एवेमाँ श्लोकान्दांधार। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्यांह॥८३॥

पृष्वेव लोकेषुं प्रजा दांधार। प्राणस्यं त्वा पर्स्पाया इत्यांह। प्रजास्वेव प्राणान्दांधार। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तं यद्दंक्षिणा प्रत्यश्चमुदंश्चमुद्वासयंत। जिह्मं यज्ञस्य शिरो हरेत्। प्राश्चमुद्वांसयित। पुरस्तांदेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥८४॥

प्राश्चमुद्वांसयित। तस्मांद्सावांदित्यः पुरस्तादुदेति। शुफोप्यमान्धवित्रांणि धृष्टी इत्यन्ववंहरन्ति। सात्मानमेवैन् सतंनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं ह्रोके भविति। य एवं वेदं। औदुंम्बराणि भवन्ति। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जमेवावंरुन्धे। वर्त्मना वा अन्वित्यं॥८५॥

युज्ञ रक्षा रेसि जिघा रसन्ति। साम्ना प्रस्तोता उन्ववैति। साम् वै रेक्षोहा।

रक्षंसामपंहत्यै। त्रिर्निधन्मुपैति। त्रयं इमे लोकाः। पुभ्य पुव लोकेभ्यो रक्षाङ्स्यपंहन्ति। पुरुषः पुरुषो निधन्मुपैति। पुरुषः पुरुषो हि रक्षस्वी। रक्षंसामपंहत्यै॥८६॥

यत्पृंथिव्यामृंद्वासयेंत्। पृथिवी शृचाऽपंयेत्। यद्पसु। अपः शुचापयेत्। यदोषंधीषु। ओषंधीः शुचाऽपंयेत्। यद्वनस्पतिंषु। वनस्पतीं ञ्छुचापंयेत्। हिरंण्यं निधायोद्वांसयति। अमृतं वै हिरंण्यम्॥८७॥

अमृतं एवैनं प्रतिष्ठापयति। वृल्गुरंसि शं युधाया इति त्रिः परिषिश्चन्पर्येति। त्रिवृद्वा अग्निः। यावानेवाग्निः। तस्य शुचर्रं शमयति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवास्य शुचर्रं शमयति। चतुः स्रक्तिर्नाभिर्ऋतस्येत्यांह॥८८॥

ड्यं वा ऋतम्। तस्यां एष एव नाभिः। यत्प्रंवर्ग्यः। तस्मादेवमाह। सदों विश्वायुरित्याह। सदो हीयम्। अप द्वेषो अप ह्वर् इत्यांह् भ्रातृंव्यापनुत्त्यै। घर्मैतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीष्मितिं द्धा मंधुमिश्रेणं पूरयति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जैवैनंमन्नाद्येन समर्थयति॥८९॥

अनेशनायुको भवति। य एवं वेदे। रन्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्धर्व इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमान् रन्तिं बन्धतां व्याचेष्टे। समहमायुषा सं प्राणेनेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। व्यंसौ योँऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। अचिक्रदद्वृषा हरिरित्यांह। वृषा ह्येषः॥९०॥

वृषा हरिः। महान्मित्रो न देर्शत इत्यांह। स्तौत्येवैनंमेतत्। चिदंसि समुद्रयोनिरित्यांह। स्वामेवैनं योनिं गमयति। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। विश्वावंसुश् सोम गन्ध्वंमित्यांह। यदेवास्य क्रियमांण-स्यान्त्यंन्ति। तदेवास्यैतेना प्यांययति। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणात्वित्यांह॥९१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। धियो हिन्वानो धिय इन्नो अव्यादित्यांह। ऋतूनेवास्मै कल्पयति। प्राऽऽसां गन्धवी अमृतांनि वोचदित्यांह। प्राणा वा

अमृताः। प्राणानेवासमें कल्पयति। एतत्त्वं देव घर्म देवो देवानुपांगा इत्याह। देवो ह्येष सं देवानुपैति। इदमहं मनुष्यों मनुष्यांनित्याह॥९२॥

म्नुष्यों हि। एष सन्मंनुष्यांनुपैतिं। ईश्वरो वै प्रवर्ग्यमुद्वासयन्। प्रजां पशून्थ्सोमपीथमंनूद्वासः सोमं पीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेणेत्यांह। प्रजामेव पृशून्थ्सोमपीथमात्मन्धंत्ते। सुमित्रा न आपु ओषंधयः सन्त्वत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। दुर्मित्रास्तस्मैं भूयासुर्योऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्म इत्यांह। अभिचार पुवास्यैषः। प्र वा एषौं ऽस्माल्लोकाच्यंवते। यः प्रंवर्ग्यमुद्वासयितं। उदुत्यं चित्रमितिं सौरीभ्यांमृग्भ्यां पुनरेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। अयं वै लोको गार्हंपत्यः। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। असौ खलु वा आंदित्यः सुंवर्गो लोकः। यथ्सौरी भवंतः। तेनैव सुंवर्गाल्लोकान्नैतिं॥९३॥

प्रजापति वै देवाः शुक्रं पयोऽदुह्नन्। तदैभ्यो न व्यंभवत्। तद्ग्रिर्व्यकरोत्। प्रजापतिं वै देवाः शुक्रं पयोऽदुह्नन्। तदैभ्यो न व्यंभवत्। तद्ग्रिर्व्यकरोत्। तानि शुक्तियाणि सामान्यभवन्। तेषां यो रसोऽत्यक्षरत्। तानि शुक्रयुजू इष्यंभवन्। शुक्तियाणां वा पुतानि शुक्तियाणि। सामप्यसं वा पुतयोर्न्यत्। देवानांमन्यत्पर्यः। यद्गोः पर्यः॥९४॥

तथ्साम्नः पर्यः। यद्जायै पर्यः। तद्देवानां पर्यः। तस्माद्यत्रैतैर्यजुर्भिश्चरंन्ति। तत्पर्यसा चरन्ति। प्रजापंतिमेव तत्पर्यसाऽन्नाद्येन समर्धयन्ति। एष ह त्वै साक्षात्प्रंवर्ग्यं भक्षयति। यस्यैवं विदुषंः प्रवर्ग्यः प्रवृज्यते। उत्तर्वेद्यामुद्वांस-येत्तेजंस्कामस्य। तेजो वा उत्तरवेदिः॥९५॥

तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्धयित। उत्तर्वेद्यामुद्वांसयेदन्नंकामस्य। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। मुखंमुत्तरवेदिः। शीर्ष्णेव मुख्र सन्दंधात्यन्नाद्यांय। अन्नाद एव भंवति। यत्र खलु वा एतमुद्वांसितं वयार्श्स पूर्यासंते। परि वै तार समां प्रजा वयार्श्स्यासते॥९६॥

तस्मांदुत्तरवेद्यामेवोद्वांसयेत्। प्रजानां गोपीथायं। पुरो वां पृश्चाद्वोद्वांसयेत्।

पुरस्ताद्वा पृतञ्चोतिरुदेति। तत्पश्चान्निम्नोचित। स्वामेवैनं योनिमनूद्वांसयित। अपां मध्य उद्वांसयेत्। अपां वा पृतन्मध्याञ्चोतिरजायत। ज्योतिः प्रवृग्यः। स्वयैवैनं योनौ प्रतिष्ठापयित॥९७॥

यं द्विष्यात्। यत्र स स्यात्। तस्यां दिश्यद्वांसयेत्। एष वा अग्निर्वेश्वान्रः। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निनैवैनं वैश्वान्रेणाभि प्रवंतयिति। औदुंम्बर्याः शाखांयामुद्वांसयेत्। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। अन्नं प्राणः। शुग्धर्मः॥९८॥

ड्डदमहम्मुष्यांमुष्यायणस्यं शुचा प्राणमपि दहामीत्यांह। शुचैवास्यं प्राणमपि दहित। ताजगार्तिमार्च्छति। यत्रं दुर्भा उपदीकंसन्तताः स्युः। तदुद्वांसयेद्वृष्टिंकामस्य। पृता वा अपामंनूज्झावंर्यो नामं। यद्दर्भाः। असौ खलु वा आंदित्य इतो वृष्टिमुदीरयित। असावेवास्मां आदित्यो वृष्टिं नियंच्छिति। ता आपो नियंता धन्वंना यन्ति॥९९॥

गोः पर्य उत्तरवेदिरांसते स्थापयति घुर्मो यन्ति॥—————[१०]

प्रजापंतिः सम्भ्रियमाणः। सम्राट्थ्सम्भृतः। घृमः प्रवृंक्तः। मृह्वीर उद्वांसितः। असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रवर्ग्यः। स एतानि नामान्यकुरुत। य एवं वेदे।

विद्रेनं नाम्ना। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥१००॥

यो वै वसीया १ सं यथाना ममुंप्चरित। पुण्यां तिं वै स तस्मैं कामयते। पुण्यां तिं मस्मै कामयन्ते। य एवं वेदं। तस्मांदेवं विद्वान्। घर्म इति दिवाऽऽचंक्षीत। सम्माडिति नक्तम्। एते वा एतस्यं प्रिये तनुवौं। एते अस्य प्रिये नामंनी। प्रिययैवैनं तनुवां॥१०१॥

प्रियेण नाम्ना समर्धयति। कीर्तिरंस्य पूर्वागंच्छति जनतांमायतः। गायत्री देवेभ्योऽपांकामत्। तां देवाः प्रंवग्येणैवानु व्यंभवन्। प्रवग्येंणाऽऽप्रुवन्। यचंतुर्विरशित्कृत्वंः प्रवग्यें प्रवृणिक्तं। गायत्रीमेव तदनु विभवति। गायत्रीमाप्रोति। पूर्वांऽस्य जनं यतः कीर्तिर्गच्छति। वैश्वदेवः सर्संन्नः॥१०२॥

वसंवः प्रवृंक्तः। सोमोऽभिकीयमाणः। आश्विनः पर्यस्यानीयमाने। मारुतः

क्वथन्। पौष्ण उदंन्तः। सार्स्वतो विष्यन्दंमानः। मैत्रः शरों गृहीतः। तेज उद्यंतः। वायुर्ह्वियमाणः। प्रजापंतिर्हूयमानो वाग्धुतः॥१०३॥

असौ खलु वावेष आंदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स एतानि नामाँन्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरेनं नाम्नाँ। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यन्मृन्मयमाहृतिं नाश्जुतेऽथं। कस्मादेषौंऽश्जुत इतिं। वागेष इतिं ब्र्यात्। वाच्येव वाचं दधाति॥१०४॥

तस्मांदश्जुते। प्रजापंतिर्वा एष द्वांदश्धा विहितः। यत्प्रंवर्ग्यः। यत्प्रागंवकाशेभ्यः। तेनं प्रजा अंसृजत। अवकाशैर्देवासुरानंसृजत। यदूर्ध्वमंवकाशेभ्यः। तेनान्नंम-

सृजत। अन्नं प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥१०५॥

स्विता भूत्वा प्रथमेऽहुन्प्रवृज्यते। तेन कामा १ एति। यद्वितीयेऽह्नम्प्रवृज्यते।

अग्निर्भूत्वा देवानेति। यत्तृतीयेऽहंन्प्रवृज्यतें। वायुर्भूत्वा प्राणानेति। यचंतुर्थेऽहंन्प्रवृज्यते

आदित्यो भूत्वा र्श्मीनेति। यत्पश्चमेऽहंन्प्रवृज्यतें। चन्द्रमां भूत्वा नक्षंत्राण्येति॥१०६॥

यत्षष्ठेऽहंन्प्रवृज्यतें। ऋतुर्भूत्वा संवथ्स्रमेति। यथ्संप्तमेऽहंन्प्रवृज्यतें। धाता भूत्वा शक्वंरीमेति। यदंष्टमेऽहंन्प्रवृज्यतें। बृहस्पतिंभूत्वा गांयत्रीमेति।

यन्नवमेऽह्नेन्प्रवृज्यतें। मित्रो भूत्वा त्रिवृतं इमाँ श्लोकानेति। यद्देशमेऽह्नेन्प्रवृज्यतें। वर्रुणो भूत्वा विराजमिति॥१०७॥

यदेकाद्रशेऽहंन्प्रवृज्यतें। इन्द्रों भूत्वा त्रिष्टुभंमेति। यद्वांद्रशेऽहंन्प्रवृज्यतें। सोमों भूत्वा सुत्यामेति। यत्पुरस्तांदुप्सदां प्रवृज्यतें। तस्मांदितः परांङ्मूँ ह्लोका इ-स्तपंत्रेति। यदुपरिष्टादुप्सदां प्रवृज्यतें। तस्मांद्रमुतोऽर्वाङ्गिमाँ ह्लोका इस्तपंत्रेति। य पृवं वेदे। ऐव तंपति॥१०८॥

विकारित विका

ॐ शं नुस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥

॥षष्ठः प्रश्नः॥

ॐ सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥ परेयुवा १ सं प्रवतो महीरनुं बहुभ्यः पन्थांमनपस्पशानम्। वैवस्वत १ सङ्गमंनं जनानां यम र राजान र हविषां दुवस्यत। इदं त्वा वस्त्रं प्रथमन्वागन्नपैतदूह यदिहाबिभः पुरा। इष्टापूर्तमन् सम्पंश्य दक्षिणां यथां ते दत्तं बहुधा विबन्धुषु। इमौ युनज्मि ते वही असुनीथाय वोढवैं। याभ्यां यमस्य सादंन सकुतां चापिं गच्छतात्। पूषा त्वेतश्च्यांवयतु प्रविद्वाननंष्टपशुर्भुवंनस्य गोपाः। स त्वैतेभ्यः परिंददात्पितृभ्योऽग्निर्देवेभ्यः सुविदत्रेभ्यः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः सो अस्मा । अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अर्घृणिः सर्ववीरोऽप्रयुच्छन्पुर एतु प्रविद्वान्॥१॥ आयुंर्विश्वायुः परिपासित त्वा पूषा त्वां पातु प्रपंथे पुरस्तात्। यत्राऽऽसंते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। भुवंनस्य पत इद॰ हविः।

अग्नयें रियमते स्वाहां। पुरुषस्य सयावर्यपेदघानिं मृज्महे। यथां नो अत्र

नापंरः पुरा जरम् आयंति। पुरुषस्य सयाविर् वि ते प्राणमंसि स्नसम्। शरीरेण महीमिहिं स्वधयेहिं पितृनुपं प्रजयाऽस्मानिहावंह। मैवं माङ् स्ता प्रियेऽहं देवी सती पितृलोकं यदैषि। विश्ववारा नर्भसा संव्ययन्त्युभौ नो लोकौ पर्यसाऽभ्यावंवृथ्स्व॥२॥

इयं नारी पतिलोकं वृंणाना निपंद्यत उपं त्वा मर्त्य प्रेतम्। विश्वं पुराणमन् पालयंन्ती तस्यै प्रजां द्रविणं चेह धेहि। उदीर्ष्व नार्यभि जीवलोकमितासुमेतमुपंशेष एहिं। हुस्तुग्राभस्यं दिधिषोस्त्वमेतत्पत्युंर्जनित्वम्भि सम्बंभूव। सुवर्ण् हस्तांदाददांना मृतस्य श्रिये ब्रह्मंणे तेजसे बलाया अत्रैव त्वमिह वय सुशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमातीर्जयेम। धनुरहस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये क्षत्रायोजंसे बलाय। अत्रैव त्विमृह वय सुशेवा विश्वाः स्पृधीं अभिमांतीर्जयेम। मणि १ हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये विशे पृष्ट्ये बलाय। अत्रैव त्वमिह वय र सुशेवा विश्वाः स्पृधीं अभिमातीर्जयेम॥३॥

इममंग्ने चमुसं मा विजीहरः प्रियो देवानांमुत सोम्यानांम्। एष यश्चमसो देवपानुस्तस्मिन्देवा अमृतां मादयन्ताम्। अग्नेर्वर्म परि गोभिर्व्ययस्व सं प्रोण्डि मेदंसा पीवंसा च। नेत्त्वां धृष्णुर्हरंसा जर्हंषाणो दधंद्विधृक्ष्यन्पर्युङ्खयांतै। मैनंमग्ने विदंहो माऽभिशोंचो माऽस्य त्वचंं चिक्षिपो मा शरीरम्। यदा शृतं करवों जातवेदोऽथेमेनं प्रहिणुतात्पितृभ्यः। शृतं यदा क्रसिं जातवेदोऽथेमेनं परिंदत्तात्पतृभ्यंः। यदा गच्छात्यसुंनीतिमेतामथां देवानां वशनीर्भवाति। सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छतु वार्तमात्मा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। अजो भागस्तपंसा तं तंपस्व तं ते शोचिस्तंपतु तं तें अर्चिः। यास्तें शिवास्तुनवों जातवेदस्ताभिविहेम सुकृतां यत्रे लोकाः। अयं वै त्वमस्मादिध त्वमेतदयं वै तदस्य योनिरसि। वैश्वानरः पुत्रः पित्रे लोककुञ्जातवेदो वहेंम सुकृतां यत्रं लोकाः॥४॥

विद्वानुभ्यावंवृथ्स्वाभिमातीर्जयेम् शरीरेश्चत्वारिं च॥=

य एतस्यं पृथो गोप्तार्स्तभ्यः स्वाहा य एतस्यं पृथो रक्षितार्स्तभ्यः स्वाहा य एतस्यं पृथोभिऽरिक्षितार्स्तभ्यः स्वाहाँऽऽख्यात्रे स्वाहांऽपाख्यात्रे स्वाहांऽभिलालंपते स्वाहांऽपुलालंपते स्वाहाऽग्नयं कर्मकृते स्वाहा यमत्र नाधीमस्तस्मै स्वाहां। यस्तं इध्मं जुभरिष्मिष्वदानो मूर्धानं वात तपंते त्वाया। दिवो विश्वंस्माथ्सीमघायत उरुष्यः। अस्मात्त्वमिधं जातोऽसि त्वद्यं जायतां पृनः। अग्नये वैश्वान्रायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहां॥५॥

प्र केतुनां बृह्ता भाँत्यग्निराविर्विश्वांनि वृष्भो रोरवीति। दिवश्चिदन्तादुप् मामुदानंडपामुपस्थे महिषो वंवर्ध। इदं त एकं प्र ऊंत एकं तृतीयेंन ज्योतिषा संविधास्त्र। संविधास्त्रा संविधास्त्रात्वे सार्करेशि पियो देवानां प्रस्मे स्थास्थे। नाके स्पर्णामप

संविशस्व। संवेशनस्तुनुवै चारुरिधि प्रियो देवानां पर्मे स्थर्भे। नार्के सुपूर्णमुप् यत्पतन्ति हृदा वेनन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिर्णयपक्षं वर्रणस्य दूतं यमस्य योनी शकुनं भुरुण्युम्। अतिद्रव सारमेयौ श्वानौ चतुरक्षौ शबलौ साधुनां पथा। अथां पितृन्थ्संविदत्रा अपींहि यमेन् ये संधुमादं मदन्ति। यौ ते श्वानौं यमरिक्षतारौं चतुरक्षौ पंथिरक्षीं नृचक्षंसा। ताभ्या रं राज्नन्परिं देह्येन इं स्वस्ति चाँस्मा अनमीवं चं धेहि॥६॥

उरुणसावंसुतृपांवुलुम्बलौ यमस्यं दूतौ चंरतो वशा अनं। तावस्मभ्यं दृशये सूर्याय पुनर्दत्ता वसुंमद्येह भद्रम्। सोम् एकेंभ्यः पवते घृतमेक उपांसते। येभ्यो मधुं प्रधावंति ता श्क्षिदेवापि गच्छतात्। ये युध्यंन्ते प्रधनेषु शूरांसो ये तंनुत्यजः। ये वां सहस्रंदक्षिणास्ता श्क्षिदेवापि गच्छतात्। तपंसा ये अनाधृष्यास्तपंसा ये सुवंर्गताः। तपो ये चंकिरे महत्ता श्क्षिदेवापि गच्छतात्। अश्मंन्वती रेवतीः सश्रंपध्मुत्तिष्ठत् प्रतंरता सखायः। अत्रां जहाम् ये अस्त्रशंवाः शिवान् वयम्भि वाजानुत्तंरम॥७॥

यद्वै देवस्यं सिवृतुः प्वित्र र सहस्रंधारं वितंतम्न्तिरिक्षे। येनापुंनादिन्द्रमनाँर्तमार्त्यै तेनाहं मार सुर्वतंनुं पुनामि। या राष्ट्रात्पन्नादप् यन्ति शाखां अभिमृता नृपितिमिच्छमानाः। धातुस्ताः सर्वाः पर्वनेन पूताः प्रजयास्मात्रय्या वर्चसा संस्मिजाथ। उद्वयं तमसस्पिर् पश्यन्तो ज्योतिरुत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्। धाता पुनातु सिवता पुनातु। अग्नेस्तेजसा सूर्यस्य वर्चसा॥८॥

यन्ते अग्निममंन्थाम वृष्भायेव पक्तेवे। इमन्तः शंमयामसि क्षीरेणं चोद्केनं च। यन्त्वमंग्ने समदंह्स्त्वमु निर्वापया पुनः। क्याम्बूरत्रं जायतां पाकदूर्वा व्येत्कशा। शीतिंके शीतिंकावित ह्रादंके ह्रादंकावित। मृण्डूक्यां सुसङ्गमयेमः स्वंग्निः शमयं।

शं ते धन्वन्या आपः शर्मु ते सन्त्वनूक्याः। शं ते समुद्रिया आपः शर्मु ते सन्तु वर्ष्याः। शं ते स्रवन्तीस्त्नुवे शर्मु ते सन्तु कूप्याः। शन्ते नीहारो वर्षतु शमु पृष्वाऽवंशीयताम्॥९॥
अवं सज पनरग्रे पितभ्यो यस्त आहंतश्चरंति स्वधाभिः। आयर्वसान उपं यात

अवं सृज् पुनंरग्ने पितृभ्यो यस्त आहंत्श्चरंति स्वधाभिः। आयुर्वसांन् उपं यातु शेषु सङ्गंच्छतां तुनुवां जातवेदः। सङ्गंच्छस्व पितृभिः सङ् स्वधाभिः समिष्टापूर्तेन

अवंशीयता सधस्थे पश्चं च

परमे व्योमन्। यत्र भूम्यै वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। यत्तं कृष्णः शंकुन आंतुतोदं पिपीतः सूर्प उत वा श्वापंदः। अग्निष्टद्विश्वांदनृणं कृणोतु सोमश्च यो ब्राह्मणमाविवेशा उत्तिष्ठातस्तनुव सम्भेरस्व मेह गात्रमवहा मा शरीरम्। यत्र भूम्यै वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। इदं त् एकं पर ऊंत एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरेधि प्रियो देवानां परमे सधस्थें। उत्तिष्ठ प्रेहि प्रद्रवौकः कृणुष्व पर्मे व्योमन्। युमेन त्वं यम्यां संविदानोत्तमं नाकमधिं रोहेमम्। अश्मंन्वती रेवतीर्यद्वै देवस्यं सवितुः पवित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंसस्परि धाता पुनातु। अस्मात्त्वमधि जातौऽस्ययं त्वदिधं जायताम्। अग्नयं वैश्वानरायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहाँ॥१०॥

आयांतु देवः सुमनांभिरूतिभिंर्यमो हंवेह प्रयंताभिर्क्ता। आसींदता र सुप्रयतेह बर्हिष्यूर्जाय जात्यै ममं शत्रुहत्यैं। युमे इंव यतंमाने यदैतं प्रवाम्भर्न्मानुंषा देवयन्तः। आसीदत् स्वम् लोकं विदाने स्वास्स्थे भेवत्मिन्देवे नः। यमाय सोमर् सुनुत यमायं जुहुता ह्विः। यमर हं यज्ञो गंच्छत्यग्निदूंतो अर्रङ्कृतः। यमायं घृतवंद्धविर्जुहोत् प्र चं तिष्ठत। स नो देवेष्वायंमद्दीर्घमायुः प्र जीवसें। यमाय मध्नमत्तम् राज्ञे ह्व्यं जुंहोतन। इदं नम् ऋषिंभ्यः पूर्वजभ्यः पूर्वेभ्यः पथिकृज्द्यः॥११॥

योऽस्य कौष्ठ्य जगंतः पार्थिवस्यैकं इद्वशी। यमं भंज्ञाश्रवो गांय यो राजांनपरोध्यः। यमङ्गायं भङ्गाश्रवो यो राजांनपरोध्यः। येनापो नद्यों धन्वांनि येन द्यौः पृथिवी दृढा। हिरण्यकक्ष्यान् सुधुरान् हिरण्याक्षानयः शुफान्। अश्वांननश्यंतो दानं यमो राजाभि तिष्ठंति। यमो दांधार पृथिवीं यमो विश्वंमिदं जगंत्। यमाय सर्वमित्रंस्थे यत्प्राणद्वायुरंक्षितम्। यथा पश्च यथा षड्यथा पश्चं दृशर्षयः। यमं यो विद्याथ्स ब्रूंयाद्यथैक ऋषिंविजान्ते॥१२॥

त्रिकंद्रुकेभिः पतंति षडुर्वीरेक्मिद्धृहत्। गायत्री त्रिष्टुप्छन्दा ईसि सर्वा ता

यम आहिता। अहेरहुर्नयंमानो गामश्वं पुरुषं जगंत्। वैवंस्वतो न तृंप्यति पश्चंभिर्मानंवैर्यमः। वैवंस्वते विविच्यन्ते यमे राजनि ते जनाः। ये चेह सत्येनेच्छंन्ते य उ चानृंतवादिनः। ते राजित्रिह विविच्यन्तेऽथा यंन्ति त्वामुपं। देवाङ्श्च ये नंमस्यन्ति ब्राह्मणाङ्श्चापचित्यंति। यस्मिन्वृक्षे सुपलाशे देवैः सम्पिबंते यमः। अत्रां नो विश्पतिः पिता पुराणा अनुवेनति॥१३॥

प्रकृषों विजान्तेऽतं वेनति॥

[५]

वैश्वानरे ह्विरिदं जुंहोमि साह्स्रमुथ्स श्वतधारमेतम्। तस्मिन्नेष पितरं पितामहं प्रिपेतामहं बिभर्त्यिन्वमाने। द्रप्सश्चंस्कन्द पृथिवीमनु द्यामिमं च्योनिमनु यश्च पूर्वः। तृतीयं योनिमनुं स्थरंन्तं द्रप्सं जुंहोम्यनुं सप्त होत्राः। इम श्मेमुद्र श्वतधारमुथ्संव्यच्यमानं भुवनस्य मध्ये। घृतं दुहानामिदितिं जनायाग्ने मा हि श्सीः पर्मे व्योमन्। अपेत् वीत् वि चं सर्पतातो येऽत्र स्थ पुराणा ये च्नितंनाः। अहोभिरद्भिरक्तिर्भिर्वां यमो दंदात्ववसानमस्मै। स्वितेतानि शरीराणि

पृथिव्यै मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिंयुंज्यन्तामघ्नियाः॥१४॥

शुनं वाहाः शुनं नाराः शुनं कृषतु लाङ्गंलम्। शुनं वेर्त्रा बेध्यन्ताः शुनमष्ट्रामृदिङ्गय शुनांसीरा शुनम्स्मासुं धत्तम्। शुनांसीराविमां वाचं यद्दिवि चक्रथः पयः। तेनेमामुपं सिश्चतम्। सीते वन्दांमहे त्वाऽर्वाची सुभगे भव। यथां नः सुभगा संसि यथां नः सुफला संसि। सवितैतानि शरीराणि पृथिव्यै मातुरुपस्थ आदेधे। तेभिरदिते शं भव। विमुच्यध्वमिष्ट्रिया देवयाना अतांरिष्म् तमंसस्पारमस्य। ज्योतिरापाम सुवंरगन्म॥१५॥

प्र वाता वान्ति प्तयंन्ति विद्युत् उदोषंधीर्जिहते पिन्वंते सुवंः। इरा विश्वंस्मै भुवंनाय जायते यत्पर्जन्यः पृथिवी रत्तसाऽवंति। यथा यमायं हार्म्यमवंपन्पश्चं मान्वाः। एवं वंपामि हार्म्यं यथासाम जीवलोके भूर्रयः। चितः स्थ परिचितं ऊर्ध्वचितः श्रयध्वं पितरो देवता। प्रजापंतिर्वः सादयतु तयां देवत्या। आप्यायस्व सन्ते॥१६॥

अ्घ्रिया अंगन्म सप्त चं॥∎

[ξ]

उत्तें तभ्नोमि पृथिवीं त्वत्परीमं लोकं निदधन्मो अह॰ रिषम्। एताङ् स्थूणां पितरो धारयन्तु तेऽत्रां युमः सादेनात्ते मिनोतु। उपंसर्प मातर् भूमिमेतामुंरुव्यचंसं पृथिवी सशोवांम्। ऊर्णम्रदा युव्तिर्दक्षिणावत्येषा त्वां पातु निर्ऋंत्या उपस्थैं। उष्ट्रंश्चस्व पृथिवि मा विबांधियाः सूपायनास्मैं भव सूपवश्चना। माता पुत्रं यथांसिचाभ्येंनं भूमि वृणु। उङ्गर्श्वमाना पृथिवी हि तिष्ठंसि सहस्रं मित् उप हि श्रयंन्ताम्। ते गृहासों मधुश्रुतो विश्वाहाँस्मै शर्णाः सन्त्वत्रं। एणींर्धाना हरिणीरर्जुनीः सन्तु धेनवंः। तिलंबथ्सा ऊर्जमस्मै दुहांना विश्वाहां सन्त्वनपंस्फुरन्तीः॥१७॥

पुषा तें यम्सादंने स्वधा निधीयते गृहे। अक्षितिर्नामं ते असौ। इदं पितृभ्यः प्रभेरेम ब्रहिर्देवेभ्यो जीवंन्त उत्तरं भरेम। तत्त्वंमारोहासो मेघ्यो भवं यमेन त्वं यम्यां संविदानः। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिष्टां मा माता पृथिवि त्वम्। पितृन् हि यत्र गच्छास्येधांसं यम्राज्यें। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिथां मा माता पृथिवी

मही। वैवस्वत १ हि गच्छांसि यम्राज्ये विराजिसि। नळं प्रवमारोहैतं नळेनं

पथोऽन्विहि। स त्वं नुळप्नंवो भूत्वा सन्तर् प्रतरोत्तर॥१८॥ सवितैतानि शरींराणि पृथिव्यै मातुरुपस्थ आदंधे। तेभ्यंः पृथिवि शं भंव। षड्ढोता सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छत् वार्तमात्मा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरींरैः। परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां यस्ते स्व इतंरो देवयानात्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नेः प्रजार रीरिषो मोत वीरान्। शं वातः श र हि ते घृणिः शमुं ते सन्त्वोषधीः। कल्पन्तां मे दिशः शग्माः। पृथिव्यास्त्वां लोके सांदयाम्यमुष्य शर्मासि पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अन्तरिक्षस्य त्वा दिवस्त्वां दिशां त्वा नाकंस्य त्वा पृष्ठे ब्रुध्नस्यं त्वा विष्टपं सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरां देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥१९॥

-अपूपवाँन्घृतवा ईश्चरुरेह सींदतूत्तभुवन् पृंथिवीं द्यामुतोपरिं। योनिकृतः

अनंपस्फुरन्ती्रुरुत्तंर देवतंया द्वे चं॥

पथिकृतंः सपर्यत ये देवानां घृतभागा इह स्थ। एषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहेंऽसौ। दशाँक्षरा ता रंक्षस्व तां गोंपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्पितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अपूपवाँञ्छृतवाँन् क्षीरवान्दिधवान्मधुंमा इश्वरुरेह सींदतूत्तभुवन् पृथिवीं द्यामुतोपरिं। योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत ये देवाना श्रे शृतभांगाः क्षीरभांगा दिधिभागा मधुंभागा इह स्थ। एषा तें यमसादंने स्वधा निधीयते गृहेंऽसौ। शताक्षंरा सहस्राक्षराऽयुताक्षराऽच्युंताक्षरा ता रंक्षस्व तां गोंपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्यितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥२०॥

पुतास्ते स्वधा अमृताः करोमि यास्ते धानाः परिकिराम्यत्रं। तास्ते यमः पितृभिः

संविदानोऽत्रं धेनूः कांमदुघाः करोतु। त्वामर्जुनौषंधीनां पयो ब्रह्माण इद्विंदुः। तासां

त्वा मध्यादादंदे चुरुभ्यो अपिधातवे। दूर्वाणाई स्तम्बमाहंरैतां प्रियतमां ममं। इमां दिशं मनुष्याणां भूयिष्ठानु वि रोहतु। काशानाः स्तम्बमाहंर रक्षंसामपंहत्यै। य एतस्यै दिशः प्राभंवन्नघायवो यथा तेनाभंवान्पुनः। दर्भाणाई स्तम्बमाहर पितृणामोषंधीं प्रियाम्। अन्वस्यै मूलं जीवादनु काण्डमथो फलम्॥२१॥ लोकं पृण ता अस्य सूदंदोहसः। शं वातः श १ हि ते घृणिः शमुं ते सन्त्वोषंधीः। कल्पन्तां ते दिशः सर्वाः। इदमेव मेतोऽपंरामार्तिमाराम काश्चन। तथा तदिश्वभ्याः कृतं मित्रेण वर्रणेन च। वरणो वारयादिदं देवो वनस्पतिः। आर्त्ये निर्ऋत्ये द्वेषांच

वनस्पतिंः। विधृतिरसि विधारयास्मद्घा द्वेषा १सि शुमि शुमयास्मद्घा द्वेषा १सि यव यवयास्मदघा द्वेषा ५सि। पृथिवीं गंच्छान्तरिक्षं गच्छ दिवं गच्छ दिशों गच्छ स्वंगच्छ स्वंगच्छ दिशों गच्छ दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गंच्छाऽऽपो वां गच्छु यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। अश्मंन्वती रेवतीर्यद्वे देवस्यं सवितुः पवित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंसस्परिं धाता पुंनातु॥२२॥

फर्ल पुनातु॥

क्रुप्ताः। यथा न पूर्वमपंरो जहाँत्येवा धांतरायू ५षि कल्पयैषाम्। न हिं ते अग्ने तनुवैं क्रूरं चकार मर्त्यः। कृपिर्बभस्ति तेर्जनं पुनर्जरायु गौरिव। अपं नः शोश्चंद्यमग्ने शुशुध्या रियम्। अपं नः शोश्चंद्यं मृत्यवे स्वाहाँ। अनङ्गाहंमन्वारंभामहे स्वस्तयैं।

स न इन्द्रं इव देवेभ्यो वहिंः सम्पारणो भव॥२३॥

सुरत्नों दीर्घमायुंः करतु जीवसें वः। यथाऽहाँन्यनुपूर्वं भवंन्ति यथर्तवं ऋतुभिर्यन्तिं

आ रोहताऽऽयुंर्ज्रसं गृणाना अनुपूर्वं यतमाना यतिष्ट। इह त्वष्टां सुजिनमा

ड्मे जीवा विं मृतैरावंवर्तिन्नभूँद्भद्रा देवहूंतिं नो अद्या प्राञ्जोगामानृतये हसाय द्राधीय आयुंः प्रत्रां दर्धानाः। मृत्योः पदं योपयन्तो यदैम् द्राधीय आयुंः प्रत्रां दर्धानाः। आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवथ यज्ञियासः। इमं जीवेभ्यः परिधिं दंधामि मा नोऽनुंगादपंरो अर्धमेतम्। शृतं जीवन्तु श्रदंः पुरूचीस्तिरो मृत्युं दंद्महे पर्वतेन। इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सूर्पिषा

त्रैककुदं जातः हिमवंतस्परि। तेनामृतंस्य मूलेनारातीर्जम्भयामसि। यथा

त्वमुंद्भिनथ्स्योषधे पृथिव्या अधि। एविमम उद्भिन्दन्तु कीर्त्या यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अजों ऽस्यजास्मद्घा द्वेषा ५ सि युवों ऽसि युवयास्मद्घा द्वेषा ५ सि॥ २४॥ अपं नः शोशुंचद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशुंचद्घम्। सुक्षेत्रिया

सुंगातुया वस्या च यजामहे। अप नः शोशुंचद्घम्। प्रयद्भन्दिष्ठ एषां प्रास्माकांसश्च सूरयः। अपं नः शोश्चद्घम्। प्रयद्ग्नेः सहस्वतो विश्वतो यन्ति सूरयः। अपं नः शोशुंचद्घम्। प्रयत्ते अग्ने सूरयो जायेमहि प्र ते व्यम्। अपं नः शोशुंचद्घम्॥२५॥ त्व ह विश्वतोमुख विश्वतंः परिभूरसिं। अपं नः शोशुंचदघम्।

द्विषों नो विश्वतोमुखाऽतिं नावेवं पारय। अपं नः शोशुंचद्घम्। स नः सिन्धुंमिव नावयाति पर्षा स्वस्तयै। अपं नः शोशुंचद्घम्। आपंः प्रवृणादिव

यतीरपास्मथ्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशुंचद्घम्। उद्वनादुंदकानीवापास्मथ्स्यंन्दताम्

अपं नः शोशंचद्घम्। आन्न्दायं प्रमोदाय पुन्रागाः स्वान्गृहान्। अपं नः शोशंचद्घम्। न वै तत्र प्रमीयते गौरश्वः पुरुषः पृशुः। यत्रेदं ब्रह्मं क्रियते परिधिर्जीवंनायकमपं नः शोशंचदघम्॥२६॥

अपंश्याम युवृतिमाचरंन्तीं मृतायं जीवां परिणीयमानाम्। अन्धेन् या तमसा प्रावृंताऽसि प्राचीमवांचीमवयन्नरिष्टो। मयैतां माङ्स्तां भ्रियमांणा देवी सती पितृलोकं यदैषि। विश्ववांरा नभसा संव्ययन्त्युभौ नों लोकौ पयसाऽऽवृंणीहि।

ापतृलाक यदाष। विश्ववारा नभसा सव्ययन्त्युभा ना लाका पयसाऽऽवृणाह। रियेष्ठामृिश्ने मधुमन्तमूर्मिणमूर्जः सन्तं त्वा पयसोप सश्सेदेम। सश्र्य्या समु वर्चसा सचंस्वा नः स्वस्तये। ये जीवा ये चं मृता ये जाता ये च जन्त्याः। तेभ्यो घृतस्यं धारियतुं मधुंधारा व्यन्दती। माता रुद्राणां दृहिता वसूंनाः स्वसांऽऽदित्यानांममृतंस्य नाभिः। प्रणुवोचं चिकितुषे जनांय मागामनांगामिदितिं विधिष्ट। पिबंतूदकं तृणांन्यत्त्। ओमुथ्मृजत॥२७॥

षष्ठः प्रश्नः (तैत्तिरीय आरण्यकम्)

المراجعة عالم المراجعة المراجع

सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥ सुमङ्गलीरियं वधूरिमा संमेत पश्यंत। सौभाँग्यमस्यै दत्त्वायाथास्तं वि परेतन।

इमां त्विमिन्द्र मीद्वः सुपुत्रा स्पुभगां कुरु। दशांस्यां पुत्राना धेहि पतिमेकाद्शं कृषि॥ आवहंन्ती वितन्वाना। कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासा शस् मम् गावंश्च। अन्तरपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥ सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली॥

शं नो मित्रः शं वर्रणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मां विद्यामि। ऋतं विद्यामि। सत्यं विद्यामि। तन्मामेवतु। तद्वक्तारमवतु। अवंतु माम्। अवंतु वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः॥१॥

शिक्षां व्याख्यास्यामः। वर्णः स्वरः। मात्रा बलम्। सामं सन्तानः। इत्युक्तः

शीक्षाध्यायः॥२॥

सह नौ यशः। सह नौ ब्रंह्मवर्चसम्। अथातः स॰हिताया उपनिषदं व्यांख्यास्यामः। पश्चस्वधिकंरणेषु। अधिलोकमधिज्यौतिषमधिविद्यमधि-प्रजंमध्यात्मम्। ता महास॰हिता इंत्याचक्षते। अथांधिलोकम्। पृथिवी पूर्वरूपम्। द्यौरुत्तंररूपम्। आकांशः सन्धिः॥३॥ वार्यः सन्धानम्। इत्यंधिलोकम्। अथांधिज्यौतिषम्। अग्निः पूर्विरूपम्। आदित्य उत्तररूपम्। आपः सन्धिः। वैद्युतः सन्धानम्। इत्यंधिज्यौतिषम्। अथांधिविद्यम्। आचार्यः पूर्विरूपम्॥४॥

अन्तेवास्युत्तंररूपम्। विद्या सुन्धिः। प्रवचन १ सन्धानम्। इत्यंधिविद्यम्। अथाधिप्रजम्। माता पूर्वरूपम्। पितोत्तंररूपम्। प्रंजा सुन्धिः। प्रजनन १ सन्धानम्। इत्यधिप्रजम्॥५॥

अथाध्यात्मम्। अधराहनुः पूँर्वरूपम्। उत्तराहनुरुत्तंररूपम्। वाख्यन्धिः। जिह्वां सन्धानम्। इत्यध्यात्मम्। इतीमा महास्रहिताः। य एवमेता महास्रहिता व्याख्यांता वेद। सन्धीयते प्रजंया पृश्भिः। ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन सुवर्ग्यणं लोकेन॥६॥

यश्छन्दंसामृष्मो विश्वरूपः। छन्दोभ्योऽध्यमृतांध्सम्बभूवं। स मेन्द्रों मेधयां स्पृणोतु। अमृतंस्य देव धारंणो भूयासम्। शरीरं मे विचर्षणम्। जिह्वा मे मधुंमत्तमा। कर्णांभ्यां भूरि विश्वंवम्। ब्रह्मणः कोशोंऽसि मेधयाऽपिंहितः। श्रुतं में गोपाय। आवहंन्ती वितन्वाना॥७॥

कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासारंसि मम् गावंश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह। लोम्शां पृश्भिः सह स्वाहाँ। आ मां यन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। वि मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। प्र मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। दमांयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। शमांयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ॥८॥

यशो जर्नेऽसानि स्वाहाँ। श्रेयान् वस्यंसोऽसानि स्वाहाँ। तं त्वां भग् प्रविंशानि स्वाहाँ। स मां भग् प्रविंश स्वाहाँ। तिस्मिन्थ्सहस्रंशाखे। निभंगाहं त्वियं मृजे स्वाहाँ। यथाऽऽपः प्रवंता यन्ति। यथा मासां अहर्जुरम्। एवं मां ब्रह्मचारिणः। धात्रायन्तु सर्वतः स्वाहाँ। प्रतिवेशोऽसि प्र मां भाहि प्र मां पद्यस्व॥९॥

भूर्भुवः सुवृरिति वा एतास्तिस्रो व्याह्नंतयः। तासांमुहस्मै तां चंतुर्थीम्।

असौ लोको यजूर्ंषि वेद द्वे चं॥∎

माहांचमस्यः प्रवेदयते। मह् इतिं। तद्वह्मं। स आत्मा। अङ्गांन्यन्या देवताः। भूरिति वा अयं लोकः। भुव इत्यन्तरिक्षम्। सुवरित्यसौ लोकः॥१०॥

मह् इत्यांदित्यः। आदित्येन् वाव सर्वे लोका महीयन्ते। भूरिति वा अग्निः। भुव इति वायुः। सुव्रित्यांदित्यः। मह् इति चन्द्रमाः। चन्द्रमंसा वाव सर्वाणि ज्योती १षि महीयन्ते। भूरिति वा ऋचः। भुव इति सामांनि। सुव्रिति यज्र १षि॥११॥

मह् इति ब्रह्मं। ब्रह्मंणा वाव सर्वे वेदा महीयन्ते। भूरिति वै प्राणः। भुव इत्यंपानः। सुवरितिं व्यानः। मह् इत्यन्नम्। अन्नेन् वाव सर्वे प्राणा महीयन्ते। ता वा पृताश्चतंस्रश्चतुर्धा। चतंस्रश्चतस्रो व्याहृंतयः। ता यो वेदं। स वेद् ब्रह्मं। सर्वेऽस्मै देवा बुलिमावंहन्ति॥१२॥

स य एषौंऽन्तर्हृंदय आकाशः। तस्मिन्नयं पुरुषो मनोमर्यः। अमृतो हिर्ण्मर्यः।

स्पृणोतीतिं॥१५॥

अन्तरेण तालुंके। य एष स्तनं इवावलम्बंते। सैंन्द्रयोनिः। यत्रासौ केंशान्तो विवर्तते। व्यपोह्यं शीर्षकपाले। भूरित्युग्नौ प्रतितिष्ठति। भुव इतिं वायौ॥१३॥ सुवरित्यांदित्ये। मह् इति ब्रह्मंणि। आप्नोति स्वारांज्यम्। आप्नोति मनंस्स्पतिम्। वाक्पंतिश्वक्षंष्पतिः। श्रोत्रंपतिर्विज्ञानंपतिः। एतत्ततो भवति। आकाशशंरीरं ब्रह्मं। सत्यात्मंप्राणारांमं मनं आनन्दम्। शान्तिंसमृद्धम्मृतम्ं। इतिं प्राचीनयोग्योपांस्व॥१४॥

पृथिव्यंन्तिरेक्षं द्यौर्दिशोंऽवान्तरिद्धाः। अग्निर्वायुरादित्यश्चन्द्रमा नक्षंत्राणि। आप ओषंधयो वनस्पतंय आकाश आत्मा। इत्यंधिभूतम्। अथाध्यात्मम्। प्राणो व्यानोंऽपान उंदानः संमानः। चक्षुः श्रोत्रं मनो वाक्तक्। चर्मं मार्स स्नावास्थि

मज्ञा। एतदंधि विधायर्षिरवोचत्। पाङ्कं वा इद॰ सर्वम्ं। पाङ्केनेव पाङ्कः ई

ओमिति ब्रह्मं। ओमितीद सर्वम्। ओमित्येतदंनुकृति ह स्म वा अप्योश्रांवयेत्याश्रांवयन्ति। ओमिति सामांनि गायन्ति। ओश्शोमितिं श्रस्नाणिं शश्सन्ति। ओमित्यंध्वर्युः प्रंतिग्रं प्रतिंगृणाति। ओमिति ब्रह्मा प्रसौति। ओमित्यंग्निहोत्रमनुंजानाति। ओमितिं ब्राह्मणः प्रंवृक्ष्यन्नांह् ब्रह्मोपांप्रवानीतिं। ब्रह्मैवोपांप्रोति॥१६॥

ऋतं च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवंचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। उप्रयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निरक्ष स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निरक्ष स्वाध्यायप्रवंचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजनश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यिमिति सत्यवचां राथीतरः। तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टिः। स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाकों मौद्गल्यः। तिद्ध

तपंस्तिद्धि तपः॥१७॥

द्रविण् सर्वर्चसम्। सुमेधा अमृतोक्षितः। इति त्रिशङ्कोर्वेदानुव्चनम्॥१८॥

वेदमनूच्याऽऽचार्योऽन्तेवासिनमंनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायौन्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेथ्सीः। सत्यान्न

प्रमंदित्व्यम्। धर्मान्न प्रमंदित्व्यम्। कुशलान्न प्रमंदित्व्यम्। भूत्यै न प्रमंदितव्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमंदितव्यम्॥१९॥

देविपतृकार्याभ्यां न प्रमंदित्व्यम्। मातृंदेवो भव। पितृंदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिंदेवो भव। यान्यनवद्यानिं कर्माणि। तानि सेविंतव्यानि। नो इंतराणि। यान्यस्माक सुचेरितानि। तानि त्वयोपास्यानि॥२०॥ नो इंतराणि। ये के चास्मच्छ्रेया स्सो ब्राह्मणाः। तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वंसित्व्यम्। श्रद्धंया देयम्। अश्रद्धंयाऽदेयम्। श्रिंया देयम्। हिंया देयम्। भिया देयम्। संविंदा देयम्। अथ यदि ते कर्मविचिकिथ्सा वा वृत्तविचिकिथ्सा वा स्यात्॥२१॥

ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तत्रं वर्तेरन्। तथा तत्रं वर्तेथाः। अथाभ्यांख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तेषुं वर्तेरन्। तथा तेषुं वर्तेथाः। एषं आदेशः। एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदंनुशासनम्। एवमुपांसित्व्यम्। एवमु चैतंदुपास्यम्॥२२॥

शं नो मित्रः शं वर्रणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मावांदिषम्। ऋतमंवादिषम्। सृत्यमंवादिषम्। तन्मामांवीत्। तद्वक्तारंमावीत्। आवीन्माम्। आवीद्वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः॥२३॥

॥ अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वी॒र्यं करवावहै। ते॒ज्ञस्वि ना॒वधीतमस्तु मा विंद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

ब्रह्मविदाँप्रोति परम्ँ। तदेषाभ्यंक्ता। सत्यं ज्ञानमंनन्तं ब्रह्मं। यो वेद निहिंतं गुहांयां परमे व्योमन्। सोंऽश्जृते सर्वान्कामांन्थ्सह। ब्रह्मंणा विपश्चितेतिं। तस्माद्वा एतस्मादात्मनं आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोर्ग्निः। अग्नेरापः। अन्न्रः पृथिवी। पृथिव्या ओषंधयः। ओषंधीभ्योऽन्नम्। अन्नात्पुरुषः। स वा एष पुरुषो-ऽन्नरस्मयः। तस्येदंमेव शिरः। अयं दक्षिणः पृक्षः। अयमुत्तंरः पृक्षः। अयमात्मां। इदं पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥१॥

अन्नाद्वै प्रजाः प्रजायंन्ते। याः काश्चं पृथिवी इश्रिताः। अथो अन्नेनैव जीवन्ति। अथैनदपि यन्त्यन्तुतः। अन्नु हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्माध्सर्वीष्धमुंच्यते। सर्वं वै तेऽन्नमाप्नुवन्ति। येऽन्नं ब्रह्मोपासंते। अनु हे हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्माध्सर्वीष्धमुंच्यते। अन्नाद्भूतानि जायंन्ते। जातान्यन्नेन वर्धन्ते। अद्यतेऽत्ति चं भूतानि। तस्मादन्नं तदुच्यंत इति। तस्माद्वा एतस्मादन्नंरसमयात्। अन्योऽन्तर आत्मौ प्राणुमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्राणं एव शिरः। व्यानो दक्षिणः पक्षः। अपान उत्तरः पक्षः। आकांश आत्मा। पृथिवी पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥२॥ प्राणं देवा अनु प्राणंन्ति। मुनुष्याः पृशवंश्च ये। प्राणो हि भूतानामार्यः। तस्माध्सर्वायुषमुंच्यते। सर्वमेव त आयुंर्यन्ति। ये प्राणं ब्रह्मोपासंते। प्राणो हि भूतांनामायुः। तस्माथ्सर्वायुषमुच्यंत इति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यंः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मांत् प्राणमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां मनोमयः। तेनैष पूर्णः। स

वा एष पुरुषिवध एव। तस्य पुरुषिवधिताम्। अन्वयं पुरुषिवधः। तस्य यजुरिव शिरः। ऋग्दिक्षणः पृक्षः। सामोत्तरः पृक्षः। आदेश आत्मा। अथविङ्गिरसः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥३॥

यतो वाचो निवर्तन्ते। अप्राप्य मनसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कदांचनेति। तस्यैष एव शारींर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मान्मनोमयात्। अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञानुमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य श्रंद्धैव शिरः। ऋतं दक्षिणः पक्षः। सत्यमुत्तंरः पक्षः। योग आत्मा। महः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥४॥ विज्ञानं युज्ञं तंनुते। कर्माणि तनुतेऽपिं च। विज्ञानं देवाः सर्वे। ब्रह्म ज्येष्ठमुपांसते। विज्ञानं ब्रह्म चेद्वेदं। तस्माचेन्न प्रमाद्यंति। शरीरे पाप्मंनो हित्वा। सर्वान्कामान्थ्समञ्जुत इति। तस्यैष एवं शारीर आत्मा। येः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्माद्विज्ञानमयात्। अन्योऽन्तर आत्मांऽऽनन्दमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष

पुरुषिवध पुव। तस्य पुरुषिवधिताम्। अन्वयं पुरुषिवधः। तस्य प्रियंमेव शिरः। मोदो दक्षिणः पृक्षः। प्रमोद उत्तरः पृक्षः। आनंन्द आत्मा। ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥५॥

असंन्नेव सं भवति। असद्बह्मेति वेद चेत्। अस्ति ब्रह्मेतिं चेद्वेद। सन्तमेनं ततो विंदुरिति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। अथातों ऽनुप्रश्वाः। उता विद्वानमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चन गंच्छती(३)॥ आहों विद्वानमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चिथ्समंश्जुता(३) उ। सोंऽकामयत। बृहु स्यां प्रजायेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तस्वा। इद॰ सर्वमसृजत। यदिदं किं चं। तथ्सृष्ट्वा। तदेवानु प्राविंशत्। तदेनुप्रविश्यं। सच् त्यचीभवत्। निरुक्तं चानिरुक्तं च। निलयनं चानिलयनं च। विज्ञानं चाविज्ञानं च। सत्यं चानृतं च सत्यमभवत्। यदिंदं किं च। तथ्सत्यमिंत्याचक्षते। तदप्येष श्लोंको भवति॥६॥

असुद्वा इदमग्रं आसीत्। ततो वै सदंजायत। तदात्मानः स्वयंमकुरुत।

स्यात्। एष ह्येवानंन्दयाति। यदा ह्यंवैष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते। अथं सोऽभयं गंतो भवति। यदा ह्यंवैष एतस्मिन्नुदरमन्तरं कुरुते। अथ तस्य भंयं भवति। तत्त्वेव भयं विदुषोऽमंन्वानस्य। तदप्येष श्लोको भवति॥७॥ भीषाऽस्माद्वातंः पवते। भीषोदेति सूर्यः। भीषाऽस्मादग्निश्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावति

लब्ध्वाऽऽनंन्दी भवति। को ह्येवान्याँत्कः प्राण्यात्। यदेष आकाश आनंन्दो न

पश्चम इति। सैषाऽऽनन्दस्य मीमा ईसा भवति। युवा स्याथ्साधु युवाऽध्यायकः। आशिष्ठों दिढेष्ठों बलिष्ठः। तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्यं पूर्णा स्यात्। स एको मानुषं आनन्दः। ते ये शतं मानुषां आनन्दाः। स एको मनुष्यगन्धर्वाणांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य। ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणांमानन्दाः। स एको देवगन्धर्वाणांमानन्दः। श्रोत्रियस्य

चाकामंहतस्य।

ते ये शतं देवगन्धर्वाणांमानन्दाः। स एकः पितृणां चिरलोकलोकानांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतं पितृणां चिरलोकलोकानांमानन्दाः। स एक आजानजानां देवानां-मानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य।

ते ये शतमाजानजानां देवानांमानन्दाः। स एकः कर्मदेवानां देवानांमानन्दः। ये कर्मणा देवानंपियन्ति। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतं कर्मदेवानां देवानांमानन्दाः। स एको देवानांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतं देवानांमानन्दाः। स एक इन्द्रंस्याऽऽनन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतमिन्द्रंस्याऽऽनन्दाः। स एको बृहस्पतेंरानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतं बृहस्पतेरानन्दाः। स एकः प्रजापतेरानन्दः। श्रोत्रियस्य

चाकामंहतस्य।

ते ये शतं प्रजापतेरानुन्दाः। स एको ब्रह्मणं आनुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहत्स्य।

स यश्चांयं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकंः। स यं एवंवित्। अस्माल्लांकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतं मनोमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतमानन्द-मयमात्मानमुपंसङ्कामित। तदप्येष श्लोंको भ्वति॥८॥

यतो वाचो निवंतिन्ते। अप्राप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मंणो विद्वान्। न बिभेति कुतंश्चनेति। एतः ह वावं न तपति। किमहः साधं नाक्रवम्। किमहं पापमकर्रविमिति। स य एवं विद्वानेते आत्मांनः स्पृणुते। उभे ह्यंवैष एते आत्मांनः स्पृणुते। य एवं वेदं। इत्यंपनिषंत्॥९॥

सह नांववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृगुर्वे वांरुणिः। वर्रणं पितंर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। तस्मां पृतत्प्रोवाच। अन्नं प्राणं चक्षुः श्रोत्रं मनो वाच्मितिं। तर् होवाच। यतो वा इमानि भूतांनि जायन्ते। येन जातांनि जीवन्ति। यत्प्रयंन्त्यभि संविंशन्ति। तिद्विजिज्ञासस्व। तद्वह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥१॥

अत्रं ब्रह्मेति व्यंजानात्। अन्नाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। अन्नेन जातांनि जीवंन्ति। अन्नं प्रयंन्त्यभि संविंशन्तीतिं। तिद्वज्ञायं। पुनिरेव वर्रुणं पितर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तुम्वा॥२॥

प्राणो ब्रह्मेति व्यंजानात्। प्राणास्यंव खल्विमानि भूतांनि जायंन्ते। प्राणेन्

पितंरमुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ हींवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तवा॥३॥

मनो ब्रह्मेति व्यंजानात्। मनंसो ह्यंव खल्विमानि भूतांनि जायंन्ते। मनंसा जातांनि जीवंन्ति। मनः प्रयंन्त्यभि संविंशन्तीतिं। तद्विज्ञायं। पुनरेव वर्रणं पितंरुमुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तम्वा॥४॥

विज्ञानं ब्रह्मेति व्यंजानात्। विज्ञानाब्धेव खल्विमानि भूतांनि जायंन्ते। विज्ञानेन जातांनि जीवंन्ति। विज्ञानं प्रयन्त्यभि संविंशन्तीति। तद्विज्ञायं। पुनरेव वर्रुणं पितंरुमुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तवा॥५॥

आनन्दो ब्रह्मेति व्यंजानात्। आनन्दास्येव खल्विमानि भूतांनि जायंन्ते। आनुन्देन जातांनि जीवंन्ति। आनुन्दं प्रयंन्त्यभि संविंशन्तीति। सेषा भागवी वांरुणी विद्या। परमे व्योमन् प्रतिष्ठिता। य एवं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भंवति। महान्भंवति प्रजयां पशुभिंब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥६॥

अन्नं न निन्द्यात्। तद्वतम्। प्राणो वा अन्नम्। शरीरमन्नादम्। प्राणे शरीरं प्रति-ष्ठितम्। शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां पशुभिन्नह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥७॥

अत्रुं न परिचक्षीत। तद्वृतम्। आपो वा अन्नम्। ज्योतिरन्नादम्। अफ्सु ज्योतिः प्रतिष्ठितम्। ज्योतिष्यापः प्रतिष्ठिताः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥८॥

अर्न्न बहु कुर्वीत। तद्वतम्। पृथिवी वा अन्नम्। आकाशौँऽन्नादः। पृथिव्यामांकाशः प्रतिष्ठितः। आकाशे पृथिवी प्रतिष्ठिता। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भविति प्रजयां पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥९॥

न कश्चन वसतौ प्रत्यांचक्षीत। तद्भतम्। तस्माद्यया कया च विधया बह्वंत्रं प्राप्नुयात्। अराध्यस्मा अन्नमित्याचक्षते। एतद्वै मुखतौँऽन्न॰ राद्धम्। मुखतोऽस्मा अंन्नर राध्यते। एतद्वै मध्यतौँ उन्नर राद्धम्। मध्यतो उस्मा अंन्नर राध्यते। एतद्वा अन्तर्तो ऽन्नर राद्धम्। अन्तर्तो ऽस्मा अन्नर राध्यते। य एवं वेद। क्षेम इति वाचि। योगक्षेम इति प्राणापानयोः। कर्मेति हस्तयोः। गतिरिति पादयोः। विमुक्तिरिति पायौ। इति मानुषीः समाज्ञाः। अथ दैवीः। तृप्तिरिति वृष्टौ। बलमिति विद्युति। यश इंति पशुषु। ज्योतिरिति नंक्षत्रेषु। प्रजातिरमृतमानन्द इंत्युपस्थे। सर्विमंत्याकाशे। तत्प्रतिष्ठेत्युंपासीत। प्रतिष्ठांवान्भवति। तन्मह इत्युंपासीत। मंहान्भवति। तन्मन इत्युंपासीत। मानंवान्भवति। तन्नम इत्युंपासीत। नम्यन्तें ऽस्मै कामाः। तद्बह्मेत्युंपासीत। ब्रह्मंवा-भवति। तद्बह्मणः परिमर इत्युंपासीत। पर्येणं म्रियन्ते द्विषन्तंः सपुताः। परि येँऽप्रियाँ भ्रातृव्याः। स यश्चायं पुरुषे। यश्चासांवादि्त्ये। स एकंः। स ये एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कम्य।

एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं मनोमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतमानन्दमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। इमाँ ह्रोकान्कामान्नी

कामरूप्यंनुस्श्चरन्। एतंथ्साम गांयन्नास्ते। हा(३) वु हा(३) वु हा(३) वुं। अहमन्नमहमन्नमहमन्नम्। अहमन्नादो(२)ऽहमन्नादो(२)ऽहमन्नादः। अहङ्

अहमन्नादा(२) ऽहमन्नादा(२) ऽहमन्नादा(२) ऽहमन्नादः। अह इ श्लोक कृ दह इश्लोक कृ दह इश्लोक कृत्। अहमस्मि प्रथम जा ऋता(३) स्य। पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य ना(३) भाइ। यो मा ददाति स इदेव मा(३) वाः।

अहमन्नमन्नम्दन्तमा(३) द्यि। अहं विश्वं भुवंनमभ्यंभ्वाम्। सुवृर्न ज्योतीः। य एवं वेदं। इत्युंपनिषंत्॥१०॥

सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधींतमस्तु मा

विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत्॥

ॐ सह नांववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्जस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥अम्भस्य पारे॥

अम्भस्य पारे भुवनस्य मध्ये नाकस्य पृष्ठे महितो महीयान्। शुक्रेण ज्योती ५िष समनुप्रविष्टः प्रजापंतिश्चरति गर्भे अन्तः॥ यस्मिन्निद॰ सं च विचैति सर्वं यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। तदेव भूतं तदु भव्यंमा इदं तदक्षरे परमे व्योमन्॥ येनांऽऽवृतं खं च दिवं महीं च येनांऽऽदित्यस्तपंति तेजंसा भ्राजंसा च। यमन्तः संमुद्रे कवयो वयन्ति यदक्षरे पर्मे प्रजाः॥ यतः प्रसूता जगतः प्रसूती तोयेंन जीवान् व्यसंसर्ज भूम्यांम्। यदोषंधीभिः पुरुषांन्पशूङ्श्च विवेंश भूतानि चराचराणि॥ अतः परं नान्यदणीयस १ हि परौत्परं यन्महंतो मुहान्तम्। यदेकमव्यक्तमनेन्तरूपं विश्वं पुराणं तमेसः परंस्तात्॥१॥

तदेवर्तं तदं सत्यमांहुस्तदेव ब्रह्मं पर्मं केवीनाम्। इष्टापूर्तं बंहुधा जातं जायमानं विश्वं बिंभर्ति भुवंनस्य नाभिः॥ तदेवाग्निस्तद्वायुस्तथ्सूर्युस्तदुं चुन्द्रमाः। तदेव शुक्रममृतं तद्भह्म तदापः स प्रजापंतिः॥ सर्वे निमेषा जिज्ञरे विद्युतः पुरुषादिषे। कुला मुंहूर्ताः काष्ठांश्वाहोरात्राश्चं सर्वशः॥ अर्धमासा मासां ऋतवेः संवथ्सरश्चं कल्पन्ताम्। स आपंः प्रदुघे उभे इमे अन्तरिंक्षमथो सुवंः॥ नैनंमूर्धं न तिर्यश्चं न मध्ये परिजग्रभत्। न तस्येशे कश्चन तस्यं नाम मृहद्यशंः॥२॥ न सन्दर्शे तिष्ठति रूपंमस्य न चक्षुंषा पश्यति कश्चनैनम्। हृदा मंनीषा मनसाऽभिकृषो य एनं विदुरमृतास्ते भवन्ति॥ अद्भः सम्भूतो हिरण्यगुर्भ इत्यष्टौ॥ पुष हि देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अन्तः। स विजायमानः स जिन्घमाणः प्रत्यङ्गखाँस्तिष्ठति विश्वतांमुखः॥ विश्वतंश्वक्षुरुत विश्वतांमुखो विश्वतीहस्त उत विश्वतंस्पात्। सं बाहुभ्यां नर्मति सं पतंत्रैर्द्यावापृथिवी जनयन्देव एकंः॥ वेनस्तत्पश्यन्विश्वा भुवंनानि विद्वान् यत्र विश्वं भवत्येकंनीळम्। यस्मिन्निदः

सं च विचैक्र स ओतः प्रोतंश्च विभुः प्रजास्ं। प्र तद्वोंचे अमृतं नु विद्वान्गंन्ध्वों नाम निहितं गुहांस्॥३॥

त्रीणि पदा निहिता गृहांसु यस्तद्वेदं सिवतः पिताऽसंत्। स नो बन्धंर्जिनिता स विधाता धामानि वेद भवनानि विश्वां। यत्रं देवा अमृतंमानशानास्तृतीये धामान्यभ्यैरंयन्त। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः परि लोकान् परि दिशः परि सुवंः। ऋतस्य तन्तुं विततं विचृत्य तदंपश्यत्तदंभवत् प्रजासं। प्रीत्यं लोकान्परीत्यं भूतानि प्रीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्याऽऽत्मनाऽऽत्मानमभिसम्बंभूव। सदंसस्पित्मद्भंतं प्रियमिन्द्रंस्य काम्यम्। सनिं मेधामंयासिषम्। उद्दींप्यस्व जातवेदोऽप्रवित्रं र्त्तेतं ममं॥४॥

पुशू श्रृश्च मह्यमावंह जीवंनं च दिशों दिश। मा नों हि सीज्ञातवेदो गामश्वं पुरुषं जगत्। अबिंभ्रदग्न आगंहि श्रिया मा परिंपातय।

॥ गायत्रीमन्त्राः ॥

पुरुषस्य विद्य सहस्राक्षस्यं महादेवस्यं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वऋतुण्डायं धीमहि। तन्नों दिन्तिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें चऋतुण्डायं धीमहि॥५॥

तन्नों नन्दिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्महें महासेनायं धीमहि। तन्नेः षण्मुखः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्महें सुवर्णपृक्षायं धीमहि। तन्नों गरुडः प्रचोदयाँत्। वेदात्मनायं विद्महें हिरण्यगर्भायं धीमहि। तन्नों ब्रह्मं प्रचोदयाँत्। नारायणायं विद्महें वासुदेवायं धीमहि। तन्नों विष्णुः प्रचोदयाँत्। वृज्जन्खायं विद्महें तीक्ष्णदृङ्ष्ट्रायं धीमहि॥६॥

तन्नों नारसि॰हः प्रचोदयाँत्। भास्करायं विद्यहें महद्युतिकरायं धीमहि। तन्नों आदित्यः प्रचोदयाँत्। वैश्वानरायं विद्यहें लालीलायं धीमहि। तन्नों अग्निः प्रचोदयाँत्। कात्यायनायं विद्यहें कन्यकुमारिं धीमहि। तन्नों दुर्गिः प्रचोदयाँत्।

॥ दूर्वासूक्तम्॥

सहस्रपरंमा देवी शतमूला शताङ्करा। सर्वर् हरत् मे पापं दूर्वा दुःस्वप्ननार्शनी। काण्डांत्काण्डात् प्ररोहंन्ती परुषः परुषः परि॥७॥

पुवानों दूर्वे प्रतंनु सहस्रेण श्तेनं च। या श्तेनं प्रत्नोषिं सहस्रेण विरोहंसि। तस्यांस्ते देवीष्टके विधेमं ह्विषां व्यम्। अश्वंक्रान्ते रंथक्रान्ते विष्णुक्रांन्ते वसुन्धंरा। शिरसां धारियष्यामि रक्षस्व मां पदे पदे।

॥ मृत्तिकासूक्तम्॥

भूमिर्धेनुर्धरणी लोकधारिणी। उद्धृतांऽसि वंराहेण कृष्णेन शंतबाहुना। मृत्तिकें हनं मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम्। मृत्तिकें ब्रह्मदत्ताऽसि काश्यपेनाभिमित्रिता। मृत्तिकें देहिं मे पुष्टिं त्वियि संवं प्रतिष्ठितम्॥८॥

मृत्तिके प्रतिष्ठिते सर्वं तन्मे निंर्णुद् मृत्तिके। तयां ह्तेनं पापेन् गच्छामि पंरमां गितम्।

॥ शत्रुजयमन्त्राः॥

यतं इन्द्र भयांमहे ततों नो अभयं कृिध। मधंवन्छिग्धि तव तन्नं ऊतये विद्विषो विमधों जिह। स्वस्तिदा विशस्पतिवृत्रहा विमधों वशी। वृषेन्द्रः पुर एत नः स्वस्तिदा अभयङ्करः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः स्वस्ति नंः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृह्स्पतिद्धातु। आपानतमन्युस्तृपलप्रभर्मा धुनिः शिमीवाञ्छरुंमा स्वाधि। सोमो विश्वान्यत्सावनानि नार्वागिन्द्रं प्रतिमानानिदेभुः॥९॥

ब्रह्मंजज्ञानं प्रंथमं पुरस्ताद्विसीमृतः सुरुचो वेन आवः। सबुध्नियां उपमा अस्य विष्ठाः सृतश्च योनिमस्तश्च विवः। स्योना पृथिवि भवांऽनृश्चरा निवेशनी। यच्छांनः शर्म सृप्रथाः। गृन्धद्वारां दुराधरुषां नित्यपृष्टां करीषिणीम्। ईश्वरी सर्वभूतानां तामिहोपंह्वये श्रियम्। श्रीमें भूजत्। अलक्ष्मीमें नृश्यतु। विष्णुंमुखा वे देवाश्छन्दोभिरिमाँ ह्योकानंनपज्य्यम्भ्यंजयन्। मृहा स् इन्द्रो वज्रबाहः षोड्शी

शर्म यच्छतु॥१०॥

स्वस्ति नो मघवां करोतु हन्तुं पाप्मानं यों उस्मान् द्वेष्टिं। सोमान् इं स्वरंणं कृणुहि ब्रंह्मणस्पते। कृक्षीवंन्तं य औंशिजम्। शरीरं यज्ञशम्लं कुसीदं तिस्मिन्थ्सीदतु यों उस्मान् द्वेष्टिं। चरणं पवित्रं वितंतं पुराणं येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं पवित्रंण शुद्धेनं पूता अति पाप्मान्मरांतिं तरेम। स्जोषां इन्द्र सर्गणो म्रुद्धिः सोमं पिब वृत्रहञ्छूर विद्वान्। जहि शत्रूर् रप् मृधो नुद्स्वाथाभयं कृणुहि विश्वतो

वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयो भुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन॥११॥
महेरणाय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उश्तीरिव

नः। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुर्योऽस्मान् द्वेष्टि यं चे

मृहरणाय चक्षसा या वः शिवतमा रसस्तस्य भाजयतृह नः। उश्वतारि मातरिः। तस्मा अरे गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वंथ। आपो जनयंथा च नः।

॥ अघमर्षणसूक्तम्॥

हिरंण्यशृङ्गं वरुणं प्रपंद्ये तीर्थं में देहि याचितः। युन्मयां भुक्तम्साधूनां पापेभ्यश्च

प्रतिग्रहः। यन्मे मनसा वाचा कर्मणा वा दुष्कृतं कृतम्। तन्न इन्द्रो वर्रणो बृह्स्पतिः सिवता च पुनन्तु पुनः पुनः। नमोऽग्नये उपसुमते नम् इन्द्रांय नमो वर्रणाय नमो वारुण्ये नमोऽन्धः॥१२॥

यद्पां ऋूरं यदमेध्यं यदंशान्तं तदपंगच्छतात्। अत्याशनादंतीपानाद्यच उग्रात् प्रतिग्रहाँत्। तन्नो वरुणो राजा पाणिनाँ ह्यवमर्शंतु। सोंऽहमंपापो विरजो निर्मुक्तो मुंक्तिकिल्बषः। नाकस्य पृष्ठमारुह्य गच्छेद्वह्यंसलोकताम्। यश्चापस् वरुणः स पुनात्वंघमर्षणः। इमं में गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुंद्रि स्तोम सचता परुष्णिया। असिक्रिया मंरुद्वधे वितस्त्याऽऽर्जीकीये शृणुह्या सुषोमया। ऋतं चे सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यंजायत। ततो रात्रिंरजायत् ततः समुद्रो अण्वः॥१३॥

समुद्रादंर्ण्वादिधं संवथ्सरो अंजायत। अहोरात्राणि विदधिक्षेत्र्य मिष्तो वृशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यंथापूर्वमंकल्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो सुवंः। यत्पृथिव्या र रजः स्वमान्तरिक्षे विरोदंसी। इमाङ्स्तदापो वंरुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रणः पुनात्वंघमर्षणः। एष भूतस्यं मध्ये भुवंनस्य गोप्ता। एष पुण्यकृतां लोकानेष मृत्योर्हिर्ण्मयम्। द्यावांपृथिव्योर्हिर्ण्मय् सङ्श्रित्र स्वंः॥१४॥

स नः सुवः स॰शिशाधि। आर्द्रं ज्वलंति ज्योतिरहमंस्मि। ज्योतिर्ज्वलंति ब्रह्माहमंस्मि। योऽहमंस्मि ब्रह्माहमंस्मि। अहमंस्मि ब्रह्महमंस्मि। अहमेवाहं मां जुंहोमि स्वाहाँ। अकार्यकार्यवकीर्णी स्तेनो भ्रूणहा गुंरुतत्पगः। वर्रुणोऽपामंघ-मर्षणस्तस्मात्पापात् प्रमुंच्यते। रजो भूमिस्त्वमा॰ रोदयस्व प्रवंदन्ति धीराः। आक्रान्थ्समुद्रः प्रथमे विधमा जनयंन्य्रजा भुवनस्य राजाः। वृषां प्वित्रे अधि सानो अव्ये बृहथ्सोमो वावृधे सुवान इन्दुः॥१५॥

॥दुर्गासूक्तम्॥

जातवेदसे सुनवाम् सोमंमरातीयतो निजंहाति वेदः। स नः पर्षदितं दुर्गाणि

विश्वां नावेव सिन्धुं दुरिताऽत्यग्निः। तामग्निवंर्णां तपंसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं केर्मफुलेषु जुष्टाम्। दुर्गां देवी र शरणमहं प्रपेद्ये सुतरिस तरसे नर्मः। अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्थस्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वा। पूर्श्च पृथ्वी बंहुला नं उर्वी भवां तोकाय तनयाय शं योः। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः सिन्धुं न नावा दुंरिताति पर्षि। अग्ने अत्रिवन्मनंसा गृणानौंऽस्माकं बोध्यविता तनूनौम्। पृतनाजित र सहंमानमग्निमुग्रर हंवेम परमाध्सधस्थांत्। स नंः पर्षदितं दुर्गाणि विश्वा क्षामंद्रेवो अति दुरिताऽत्यग्निः। प्रत्नोषि कमीड्यो अध्वरेषु सनाच होता नव्यंश्च सर्थ्मि। स्वाश्चाँग्ने तनुवं पिप्रयंस्वास्मभ्यं च सौभंगमायंजस्व। गोभिर्जुष्टमयुजो निषिक्तं तवैन्द्र विष्णोरनुसर्श्वरेम। नाकस्य पृष्ठमभि संवसानो वैष्णंवीं लोक इह मांदयन्ताम्॥१६॥

॥ व्याहृतिहोमन्त्राः॥

भूरन्नम् ग्रये पृथिव्ये स्वाह्य भुवोऽन्नं वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाह्य सुवरन्नमादित्यायं दिवे स्वाह्य भूर्भवः सुवरन्नं चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाह्य नमो देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भवः सुवरन्नमोम्॥१७॥

भूरग्नये पृथिव्यै स्वाहा भुवो वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवंरादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमो देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुव्रग्न ओम्॥१८॥

भूरग्नयें च पृथिव्ये चं मह्ते च स्वाहा भुवों वायवें चान्तरिक्षाय च मह्ते च स्वाहा सुवंरादित्यायं च दिवे चं मह्ते च स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे च नक्षंत्रेभ्यश्च दिग्भ्यश्चं मह्ते च स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवृर्मह्रोम्॥१९॥

• [**५**]

-[り]

॥ ज्ञानप्राप्त्यर्थहोममन्त्राः॥

पाहि नो अग्न एनंसे स्वाहा। पाहि नो विश्ववेदंसे स्वाहा। यज्ञं पाहि विभावंसो स्वाहा। सर्वं पाहि शतर्ऋतो स्वाहा॥२०॥

पाहि नो अग्न एकंया। पाह्युंत द्वितीयंया। पाह्यूर्जं तृतीयंया। पाहि गीर्भिश्चं तुसृभिवसो स्वाहाँ॥२१॥

॥वेद्विस्मरणाय जपमन्त्राः॥

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपृश्छन्दौभ्यश्छन्दा इंस्याविवेशं। सता शिक्यः पुरोवाचोपनिषदिन्द्रौ ज्येष्ठ इंन्द्रियाय ऋषिंभ्यो नमो देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवृश्छन्द ओम्॥२२॥

-[2]

823

नमो ब्रह्मणे धारणं मे अस्त्वनिराकरणं धारियता भूयासुं कर्णयोः श्रुतं मा च्यों बुं ममामुष्य ओम्॥२३॥

॥ तपः प्रशंसा॥

ऋतं तर्पः सत्यं तर्पः श्रुतं तर्पः शान्तं तर्पा दमस्तपः शमस्तर्पा दानं तर्पा यज्ञं तपो भूर्भुवः सुवर्ब्रह्मैतदुपाँस्यैतत्तपंः॥२४॥

-[१०]

॥ विहिताचरणप्रशंसा निषिद्धाचरणनिन्दा च॥

यथां वृक्षस्यं सुम्पुष्पितस्य दूराद्गुन्धो वांत्येवं पुण्यंस्य कुर्मणों दूराद्गुन्धो वांति यथांऽसिधारां कुर्तेऽवंहितामवुक्रामे यद्युवे युवे ह वां विह्नयिष्यामि कुर्तं पंतिष्यामीत्येवम्नृतांदात्मानं जुगुफ्सेंत्॥२५॥

[88]

॥ दहरविद्या॥

अणोरणीयान्महतो महीयानात्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः। तमंऋतुं पश्यति

वीतशोको धातुः प्रसादौन्मिह्मानंभीशम्। सप्त प्राणाः प्रभवन्ति तस्मौथ्सप्तार्चिषः स्मिधः सप्त जिह्नाः। सप्त इमे लोका येषु चरन्ति प्राणा गुहाशंयां निहिताः सप्त सप्त। अतः समुद्रा गिरयंश्च सर्वेऽस्माथ्स्यन्दंन्ते सिन्धंवः सर्वेरूपाः। अतंश्च विश्वा ओषंधयो रसौच् येनैष भूतस्तिष्ठत्यन्तरात्मा। ब्रह्मा देवानां पद्वीः केवीनामृषिर्विप्राणां मिह्षो मृगाणांम्। श्येनो गृप्राणाः स्विधितिर्वनानाः सोमः प्वित्रमत्येति रेभन्। अजामेकां लोहितशुक्ककृष्णां बह्नीं प्रजां जनयंन्तीः सर्रूपाम्। अजो ह्येको जुषमांणोऽनुशेते जहाँत्येनां भृक्तभोगामजोंऽन्यः॥२६॥

हु सः शुंचिषद्वसुंरन्तिरक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्दुरोणसत्। नृषद्वंरसदंत्सद्योमसद् गोजा ऋत्जा अद्विजा ऋतं बृहत्। घृतं मिमिक्षिरे घृतमंस्य योनिर्धृते श्रितो समुद्रादूर्मिर्मधुंमा उदारदुपा श्युना सममृतत्वमान । घृतस्य नाम गुह्यं यदस्ति जिह्ना देवानांमुमृतंस्य नाभिः। वयं नाम् प्रब्नंवामा घृतेनास्मिन् यज्ञे धारयामा नमोभिः। उपं ब्रह्मा शृंणवच्छस्यमानं चतुः शृङ्गोऽवमीद्गौर एतत्। चत्वारि शृङ्गा त्रयों अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तांसो अस्य। त्रिधां बद्धो वृंषभो रोरवीति महो देवो मर्त्या ५ आविवेश॥२७॥ त्रिधां हितं पणिभिंगृह्यमानं गविं देवासों घृतमन्वंविन्दन्। इन्द्र एक् रूप् एकं जजान वेनादेक ई स्वधया निष्टंतक्षुः। यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधियों रुद्रो महर्षिः। हिर्ण्यगर्भं पंश्यत जायंमान् स नो देवः शुभया स्मृत्या

घृतमुंवस्य धामं। अनुष्वधमावंह मादयंस्व स्वाहांकृतं वृषभ वक्षि हव्यम्।

रुद्रो महर्गिः। हिर्ण्यग्भे पश्यत् जायमान् स् स नो देवः शुभया स्मृत्या संयुनत्तु। यस्मात्परं नापर्मस्ति किश्चिद्यस्मान्नाणीयो न ज्यायौऽस्ति कश्चित्। वृक्ष इंव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येक्सतेनेदं पूर्णं पुरुषेण् सर्वम्। न कर्मणा न प्रजया धनेन त्यागेनैके अमृत्त्वमान्शः। परेण् नाकं निहितं गृहायां विभ्राजंते यद्यतंयो

विशन्तिं। वेदान्तिविज्ञान्सिनिश्चितार्थाः सन्त्र्यांसयोगाद्यतेयः शुद्धसत्त्वाः। ते ब्रेह्मलोके तु परान्तकाले परामृतात्पिरिमुच्यन्ति सर्वें। दृहुं विपापं प्रमेश्मभूतं यत्पुण्डरीकं पुरमध्यस् इस्थम्। तृत्रापि दृहुं गृगनं विशोकस्तिस्मिन् यदन्तस्तदुपांसित्व्यम्। यो वेदादौ स्वरः प्रोक्तो वेदान्ते च प्रतिष्ठितः। तस्य प्रकृतिलीनस्य यः परः समहेश्वरः॥२८॥

॥ नारायणसूक्तम्॥

सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंम्भुवम्। विश्वं नारायंणं देवमक्षरं पर्मं पदम्। विश्वतः परमान्नित्यं विश्वं नारायणः हिरम्। विश्वमेवदं पुरुष्टस्तिद्वश्वमुपंजीवति। पतिं विश्वंस्याऽऽत्मेश्वर्रः शाश्वंतः शिवमंच्युतम्। नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मांनं परायंणम्। नारायणपंरो ज्योतिरात्मा नारायणः परः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः। नारायणपरो ध्याता ध्यानं नारायणः परः। यचं किश्चित्रंगथ्सर्वं

नारायणः स्थितो व्यवस्थितश्चत्वारिं च॥=

दश्यतें श्रूयतेऽपिं वा॥ अन्तंबीहिश्चं तथ्सर्वं व्याप्य नांरायणः स्थितः॥२९॥

अनेन्तमव्यंयं कवि र संमुद्रेऽन्तं विश्वशंम्भुवम्। पद्मकोश प्रंतीकाश र हृदयं चाप्यधोम् खम्। अधो निष्ट्या वितस्त्यान्ते नाभ्यामुपरि तिष्ठति। ज्वालुमालाकुलं भाती विश्वस्यांऽऽयतनं महत्। सन्तंतर् शिलाभिस्तुलम्बंत्याकोशुसन्निभम्। तस्यान्ते सुषिर सूक्ष्मं तस्मिन्थ्सर्वं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानं-मिर्विश्वार्चिर्विश्वतोमुखः। सोऽग्रंभुग्विभंजन्तिष्ठन्नाहारमजुरः कविः। तिर्यगूर्ध्वमंधः शायी रश्मयंस्तस्य सन्तंता। सन्तापयंति स्वं देहमापांदतलमस्तंकः। तस्य मध्ये विह्नंशिखा अणीयौर्ध्वा व्यवस्थितः। नीलतीयदेमध्यस्थाद्विद्यूह्णेखेव भास्वरा। नीवारशूकंवत्तन्वी पीता भाँस्वत्यणूपंमा। तस्याः शिखाया मध्ये परमातमा व्यवस्थितः। स ब्रह्म स शिवः स हरिः सेन्द्रः सोऽक्षरः परमः स्वराट्॥३०॥

·[88]

॥ आदित्यमण्डले परब्रह्मोपासनम्॥

आदित्यो वा एष एतन्मण्डलं तपंति तत्र ता ऋचस्तद्दचा मण्डल् स ऋचां लोकोऽथ् य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिर्दीप्यते तानि सामानि स साम्रां मण्डल् स साम्रां लोकोऽथ् य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिषि पुरुषस्तानि यजूर्षेषि स यज्ञंषा मण्डल् स यज्ञंषां लोकः सैषा त्रय्येवं विद्या तपिति य एषो ऽन्तरांदित्ये हिर्ण्मयः पुरुषः॥३१॥

॥ आदित्यपुरुषस्य सर्वात्मकत्वप्रदर्शनम्॥

आदित्यो वै तेज् ओजो बलं यश्श्रक्षः श्रोत्रमात्मा मनो मन्युर्मनुंर्मृत्युः सत्यो मित्रो वायुरांकाशः प्राणो लोकपालः कः किं कं तथ्सत्यमन्नममृतो जीवो विश्वेः कत्मः स्वयम्भु ब्रह्मैतदमृत एष पुरुष एष भूतानामधिपतिर्ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतांमाप्रोत्येतासांमेव देवतांनाश् सायुंज्यश् सार्षिताश्रं समानलोकतांमाप्रोति य एवं वेदैंत्युपनिषत्॥३२॥

[१५]

-[१६]

॥ शिवोपासनमन्त्राः॥

निधंनपतये नमः। निधंनपतान्तिकाय नमः। ऊर्ध्वाय नमः। ऊर्ध्वलिङ्गाय नमः। हिरण्याय नमः। हिरण्यालङ्गाय नमः। सुवर्णाय नमः। सुवर्णालङ्गाय नमः। दिव्यात्रङ्गाय नमः। भवाय नमः। भवलिङ्गाय नमः। शर्वाय नमः। शर्वाय नमः। शर्वात्रङ्गाय नमः। शर्वालङ्गाय नमः। ज्वललङ्गाय नमः। ज्वललङ्गाय नमः। आत्माय नमः। आत्मालङ्गाय नमः। परमाय नमः। परमिङ्गाय नमः। एतथ्सोमस्यं सूर्यस्य सर्वलिङ्गः स्थाप्यति पाणिमन्नं पिवृत्रम्॥३३॥

॥ पश्चिमवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

सुद्योजातं प्रपद्यामि सुद्योजाताय वै नमो नमं। भवे भवे नातिं भवे भवस्व

-[१७]

-[१८]

-[१९]

माम्। भुवोद्भवाय नर्मः॥३४॥

॥ उत्तरवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

वामदेवाय नमों ज्येष्ठाय नमें श्रेष्ठाय नमों रुद्राय नमः कालाय नमः कलेविकरणाय नमो बलेविकरणाय नमो बलेप्य नमो बलेप्य नमः सर्वभूतदमनाय नमों मनोन्मनाय नमः॥३५॥

॥दक्षिणवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

अघोरैभ्योऽथ घोरैभ्यो घोरघोरंतरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमंस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥३६॥

[२०]

[२१]

॥ प्राग्वऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

तत्पुरुषाय विद्महें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्॥३७॥

॥ ऊर्ध्ववऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मां शिवो में अस्तु सदाशिवोम्॥३८॥

॥ नमस्कारमन्त्राः ॥

नमो हिरण्यबाहवे हिरण्यवर्णाय हिरण्यरूपाय हिरण्यपतयेऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये नमो नमः॥३९॥

ऋत र सत्यं पेरं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिङ्गलम्। ऊर्ध्वरेतं विरूपाक्षं विश्वरूपाय

-[२३]

वै नमो नर्मः॥४०॥

सर्वो वै रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु। पुरुषो वै रुद्रः सन्महो नमो नमेः। विश्वं भूतं भुवनं चित्रं बंहुधा जातं जायंमानं च यत्। सर्वो ह्येष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥४१॥

कद्रुद्राय प्रचेतसे मीढुष्टंमाय तव्यंसे। वो चेम शन्तंम हृदे। सर्वो होष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥४२॥

॥ अग्निहोत्रहवण्याः उपयुक्तस्य वृक्षविशेषस्याभिधानम्॥

यस्य वैकंङ्कत्यग्निहोत्रहवंणी भवति प्रत्येवास्याहुंतयस्तिष्ठन्त्यथो प्रतिष्ठित्यै॥४३॥

833

कृणुष्व पाज् इति पश्चं॥४४॥

॥ भूदेवताकमन्त्रः॥

अदितिर्देवा गंन्धर्वा मंनुष्याः पितरोऽसुंरास्तेषा ५ सर्वभूतानां माता मेदिनीं मह्ता मही सांवित्री गांयत्री जगंत्युवीं पृथ्वी बंहुला विश्वां भूता कंतुमा का या सा स्त्येत्युमृतेतिं वसिष्ठः॥४५॥

-[२८]

----[२७]

॥ सर्वदेवता आपः॥

आपो वा इद॰ सर्वं विश्वां भूतान्यापंः प्राणा वा आपंः पुशव् आपोऽन्नमापोऽमृंतमापंः सुम्राडापों विराडापंः स्वराडापुश्छन्दाु स्यापो ज्योती्र्थापो यज्र्र्थापं सत्यमापः सर्वा देवता आपो भूर्भुवः सुवराप ओम्॥४६॥

-[२९]

-[३१]

॥ सन्ध्यावन्द्नमन्त्राः ॥

आपंः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मंण्स्पतिर्ब्रह्मंपूता पुनातु माम्। यदुच्छिष्ट्मभौज्यं यद्वां दुश्चिरितं ममं। सर्वं पुनन्तु मामापोऽस्तां चे प्रतिग्रह इस्वाहाँ॥४७॥

अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षुन्ताम्। यदह्रा पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शि्ष्ञा। अह्स्तदंवलुम्पत्। यत्किं चं दुरि्तं मियं। इदमहं माममृंतयो्नौ। सत्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा॥४८॥

——[३२]

सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यद्रात्रिया पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शिश्ञा। रात्रिस्तदंवलुम्पत्। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृतयोनौ। सूर्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४९॥

॥प्रणवस्य ऋष्यादिविवरणम्॥

ओमित्येकाक्षेरं ब्रह्म। अग्निर्देवता ब्रह्मं इत्यार्षम्। गायत्रं छन्दं परमात्मं सरूपम्। सायुज्यं विनियोगम्॥५०॥

॥ गायत्र्यावाहनमन्त्राः ॥

आयांतु वरंदा देवी अक्षरं ब्रह्मसम्मितम्। गायत्रीं छन्दंसां मातेदं ब्रह्म जुषस्वं मे। यदहाँत्कुरुते पापुं तदहाँतप्रतिमुच्यते। यद्रात्रियाँत्कुरुते पापुं तद्रात्रियाँत्प्रतिमुच्यंते। सर्वं वर्णे मंहादेवि सन्ध्याविंद्ये सरस्वंति॥५१॥

ओजोंऽसि सहोंऽसि बलंमिस भ्राजोंऽसि देवानां धाम नामांसि विश्वंमिस विश्वायुः सर्वमिस सर्वायुरभिभूरों गायत्रीमावाहयामि सावित्रीमावाहयामि सरस्वतीमावाहयामि छन्दऋषीनावाहयामि श्रियमावाहयामि गायत्रिया गायत्रीच्छन्दो विश्वामित्र ऋषिः सविता देवताऽग्निर्मुखं ब्रह्मा शिरो विष्णुर्हृदय । रुद्रः शिखा पृथिवी योनिः प्राणापानव्यानोदानसमाना सप्राणा श्वेतवर्णा साङ्ख्यायनसगोत्रा गायत्री चतुर्वि शत्यक्षरा त्रिपदां षद्गुक्षिः पश्चशीर्षोपनयने विनियोग ओं भूः। ओं भुवः। ओ॰ सुवः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओ॰ सत्यम्। ओं तथ्संवितुर्वरेणयं भर्गो देवस्यं धीमहि। धियो यो नंः प्रचोदयाँत्। ओमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५२॥

-[३६]

-[३७]

॥गायत्री उपस्थानमन्त्राः॥

उत्तमें शिखंरे जाते भूम्यां पर्वतमूर्धनि। ब्राह्मणैभ्योऽभ्यंनुज्ञाता गच्छ देवि यथासुंखम्। स्तुतो मया वरदा वेंदमाता प्रचोदयन्ती पवनें द्विजाता। आयुः पृथिव्यां द्रविणं ब्रह्मवर्चस्ं मह्यं दत्वा प्रजातुं ब्रह्मलोकम्॥५३॥

॥ आदित्यदेवतामन्त्रः॥

घृणिः सूर्यं आदित्यो न प्रभां वात्यक्षंरम्। मधुं क्षरन्ति तद्रंसम्। सत्यं वै तद्रसमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५४॥

॥ त्रिसुपर्णमन्त्राः॥

ब्रह्मंमेतु माम्। मधुंमेतु माम्। ब्रह्मंमेव मधुंमेतु माम्। यास्ते सोम प्रजाव्थ्सोभि सो अहम्। दुःस्वप्रहन्दुंरुष्यह। यास्तें सोम प्राणाः स्तां जुंहोमि। त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। ब्रह्महृत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपण्ंं पठेन्ति। ते सोम्ं प्राप्नुंवन्ति। आसहस्रात्पङ्किं पुनंन्ति। ओम्॥५५॥

ब्रह्मं मेधयां। मधुं मेधयां। ब्रह्मंमेव मधुं मेधयां। अद्या नों देव सिवतः प्रजावंथ्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्विप्तंय स्त्रवा विश्वांनि देव सिवतर्दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुव। मधु वातां ऋतायते मधुं क्षरन्ति सिन्धंवः। मध्वींर्नः सन्त्वोषंधीः। मधु नक्तंमुतोषिस मधुंमत्पार्थिव रजः। मधु द्यौरंस्तु नः पिता। मधुंमान्नो वनस्पतिर्मधुंमा अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावो भवन्तु नः। य इमं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। भ्रूणहृत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुवन्ति। आसहस्रात्पिङ्कः पुनन्ति। ओम्॥५६॥

ब्रह्मं मे्धवां। मधुं मे्धवां। ब्रह्मंमे्व मधुं मे्धवां। ब्रह्मा देवानां पद्वीः

४०

कंवीनामृषिर्विप्राणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृध्रांणा ए स्वधितिर्वनांना ए सोर्मः पवित्रमत्येति रेभन्। ह एसः शुंचिषद्वसुंरन्तरिक्षसद्धोतां वेदिषदितिंथिर्दुरोणसत्। नृषद्वंरसदंतसद्योमसद्जा गोजा ऋतजा अंद्रिजा ऋतं बृहत्। ऋचे त्वां रुचे त्वा समिथ्स्रवन्ति स्रितो न धेनाः। अन्तर्हदा मनसा पूयमानाः। घृतस्य धारां अभिचांकशीमि। हिरण्ययों वेतसो मध्यं आसाम्। तस्मिन्ध्सुपर्णो मंधुकृत्कुंलायी भर्जन्नास्ते मधुदेवताभ्यः। तस्यांसते हर्रयः सप्ततीरै स्वधां दुहांना अमृतंस्य धारांम्। य इदं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। वीर्हत्यां वा पुते घ्रंन्ति। ये ब्राँह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठंन्ति। ते सोमं प्राप्नुंवन्ति। आस्हस्रात्पृङ्किः पुनंन्ति। ओम्॥५७॥

॥ मेधासूक्तम्॥

मेथा देवी जुषमांणा न आगाँद्विश्वाची भुद्रा सुंमन्स्यमांना। त्वया जुष्टां

जुषमाणा दुरुक्तांन्बृहद्वंदेम विदथे सुवीरांः॥ त्वया जुष्टं ऋषिर्भविति देवि त्वया ब्रह्मांऽऽगृतश्रीरुत त्वयां। त्वया जुष्टंश्चित्रं विन्दते वसु सा नो जुषस्व द्रविणो न मेधे॥५८॥

मेधां म् इन्द्रों ददातु मेधां देवी सरंस्वती। मेधां में अश्विनांबुभावार्धतां पुष्कंरस्रजा। अपस्रासुं च या मेधा गन्धवेषुं च यन्मनः। देवीं मेधा सरंस्वती सा मांं मेधा सुरभिर्जुषता स्वाहां॥५९॥

आ मां मेधा सुरभिर्विश्वरूपा हिरंण्यवर्णा जगंती जगम्या। ऊर्जस्वती पर्यसा पिन्वंमाना सा मां मेधा सुप्रतीका जुषन्ताम्॥६०॥

मियं मेथां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेथां मियं प्रजां मयीन्द्रं

·[88]

इन्द्रियं देधातु मियं मेधां मियं प्रजां मिय सूर्यो भ्राजों दधातु॥६१॥

॥ मृत्युनिवारणमन्त्राः॥

अपैतु मृत्युरमृतंं न आगंन्वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु। पर्णं वनस्पतेंरिवाभिनंः शीयता रियः स च तान्नः शचीपतिः॥६२॥

परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते

ब्रवीमि मा नंः प्रजा रीरिषो मोत वीरान्॥६३॥ -[४६]

वार्तं प्राणं मनसाऽन्वा रंभामहे प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नौं मृत्योस्नायतां पात्वश्हंसो ज्योग्जीवा जुरामंशीमहि॥६४॥

-[88]-

| अमुत्र भूयाद | ध् यद्यमस्य | बृहंस्पते | अभिशंस्तेरमुं श्चः। | प्रत्यौहतामृश्विनां |
|------------------------|--------------|-----------|---------------------|---------------------|
| मृत्युमंस्माद्देवानांम | ग्गे भिषजा श | चीभिः॥६५ | II | |

हरि हर्रन्तमनुंयन्ति देवा विश्वस्येशांनं वृषभं मंतीनाम्।

सरूपमनुमेदमागादयंनं मा विवधीर्विक्रमस्व॥६६॥

शल्कैर्ग्निमिन्धान उभौ लोकौ संनेम्हम्। उभयौर्लोकयोर्-ऋध्वाऽतिं मृत्युं तंराम्यहम्॥६७॥

मा छिंदो मृत्यो मा वंधीर्मा मे बलं विवृंहो मा प्रमोंषीः। प्रजां मा में रीरिष

आयुंरुग्र नृचक्षंसं त्वा हविषां विधेम॥६८॥

[५१]

-[५३]

-[५૪]

नोंऽवधीः पितरं मोत मातरं प्रिया मा नंस्तुन्वों रुद्र रीरिषः॥६९॥

मा नो महान्तंमुत मा नो अर्भकं मा न उक्षंन्तमुत मा नं उक्षितम्। मा

मा नंस्तोके तनेये मा न आर्युषि मा नो गोषु मा नो अश्वेष रीरिषः। वीरान्मा नो रुद्र भामितोऽवंधीर्ह्विष्मंन्तो नमंसा विधेम ते॥७०॥

॥ प्रजापतिप्रार्थनामन्त्रः॥

प्रजांपते न त्वदेतान्यन्यो विश्वां जातानि परिता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तन्नों अस्तु वयः स्यांम् पतंयो रयीणाम्॥७१॥

॥ इन्द्रप्रार्थनामन्त्रः॥

स्वस्तिदा विशस्पतिवृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रः पुर एंतु नः स्वस्तिदा

—[५५]

अंभयङ्करः॥७२॥

॥ मृत्युञ्जयमन्त्राः ॥

त्र्यंम्बकं यजामहे सुगुन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकिमव बन्धंनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतांत्॥७३॥

ये ते सहस्रम्युतं पाशा मृत्यो मर्त्याय हन्तंवे। तान् युज्ञस्यं मायया सर्वानवं यजामहे॥७४॥

मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहां॥७५॥

-[५८]

—[५७]

॥ पापनिवारक-मन्त्राः॥

देवकृंतस्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। मनुष्यंकृतस्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। पितृकृंतस्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। आत्मकृंतस्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। अन्यकृंतस्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। अस्मत्कृंतस्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। यद्दिवा च नक्तं चैनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यथ्स्वपन्तंश्च जाग्रंतश्चेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यथ्सुषुप्तंश्च जाग्रंतश्चेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यद्दिद्वा स्यावयजनमिस् स्वाहाँ। यद्दिद्वा स्यावयजनमिस् स्वाहाँ। एनस एनसोऽवयजनमिस् स्वाहा॥७६॥

॥ वसुप्रार्थनामन्त्रः॥

यद्वो देवाश्चकुम जिह्नयां गुरुमनंसो वा प्रयंती देव हेर्डनम्। अरांवा यो नों अभि दुंच्छुनायते तस्मिन्तदेनो वसवो निधेतन स्वाहाँ॥७७॥

[६०]

॥कामोऽकार्षीत्-मन्युरकार्षीत् मन्त्रः॥

कामोऽकार्षीं त्रमो नमः। कामोऽकार्षीत्कामः करोति नाहं करोमि कामः कर्ता नाहं कर्ता कामः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते काम कामाय स्वाहा॥७८॥

मन्युरकार्षीं न्नमो नमः। मन्युरकार्षीन्मन्युः करोति नाहं करोमि मन्युः कर्ता नाहं कर्ता मन्युंः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते मन्यो मन्यंवे स्वाहा॥७९॥

॥विराजहोममन्त्राः॥

तिलाञ्जहोमि सरसा सिपष्टान् गन्धार मम चित्ते रमंन्तु स्वाहा। गावो हिरण्यं धनमन्नपान सर्वेषा श्रिये स्वाहा। श्रियं च लक्ष्मीं च पुष्टिं च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रजाः सन्ददांतु स्वाहा॥८०॥

C 3 1

तिलाः कृष्णास्तिलाः श्वेतास्तिलाः सौम्या वंशानुगाः। तिलाः पुनन्तुं मे पापं यित्किश्चिद्दुरितं मीय स्वाहा। चोर्स्यान्नं नेवश्राद्धं ब्रह्महा गुंरुतृल्पगः। गोस्तेयः सुरापानं भ्रूणहत्या तिला शान्तिः शमयन्तु स्वाहा। श्रीश्च लक्ष्मीश्च पृष्टीश्च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रज्ञा तु जातवेदः सन्ददांतु स्वाहा॥८१॥

प्राणापानव्यानोदानसमाना में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास्ड् स्वाहाँ। वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणरेतोबुद्धाकूतिःसङ्कल्पा में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास्ड् स्वाहाँ। त्वक्रममारसरुधिरमेदोमञ्जास्रायवो-ऽस्थीनि में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ।

शिरःपाणिपादपार्श्वपृष्ठोरूदरजङ्खशिश्ञोपस्थपायवो में शुद्ध्यन्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् इ स्वाहाँ। उत्तिष्ठ पुरुष हरित पिङ्गल लोहिताक्षि देहि देहि ददापयिता में शुद्ध्यन्तां ज्योतिंर्हं विरज्ञां विपाप्मा भूयास् इ स्वाहाँ॥८२॥

पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशा में शुद्धन्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। मनोवाक्कायकर्माणि में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहां। अव्यक्तभावेरहङ्कारैज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहां। आत्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। अन्तरात्मा में शुद्ध्यन्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहां। परमात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् इ स्वाहाँ। क्षुधे स्वाहाँ। क्षुत्पिपासाय स्वाहाँ। विविंट्ये स्वाहाँ। ऋग्विंधानाय स्वाहाँ। कर्षोंत्काय स्वाहाँ। क्षुत्पिपासामेलं ज्येष्ठामलक्ष्मीर्नाशयाम्यहम्। अभूतिमसंमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे पाप्मान इ स्वाहा। अन्नमय-प्राणमय-मनोमय-विज्ञानमय-मानन्दमय-मात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहां॥८३॥

[६६]

॥ वैश्वदेवमन्त्राः ॥

अग्नये स्वाहाँ। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। ध्रुवायं भूमाय स्वाहाँ। ध्रुवक्षितंये स्वाहाँ। अच्युतक्षितंये स्वाहाँ। अग्नयें स्विष्टकृते स्वाहाँ॥ धर्माय स्वाहाँ। अधर्माय स्वाहाँ। अग्नयः स्वाहाँ। ओषधिवनस्पतिभ्यः स्वाहाँ॥८४॥

रक्षोदेवजनेभ्यः स्वाहाँ। गृह्याँभ्यः स्वाहाँ। अवसानेँभ्यः स्वाहाँ। अवसानंपतिभ्यः स्वाहाँ। सुर्वभूतेभ्यः स्वाहाँ। कामाय स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ। यदेजंति जगंति यच चेष्टंति नाम्नो भागोऽयं नाम्ने स्वाहाँ। पृथिव्ये स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ॥८५॥

दिवे स्वाहाँ। सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहाँ। नक्षंत्रेभ्यः स्वाहाँ। इन्द्रांय स्वाहाँ। बृह्स्पतंये स्वाहाँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। ब्रह्मंणे स्वाहाँ। स्वधा पितृभ्यः स्वाहाँ। नमों रुद्रायं पशुपतंये स्वाहाँ॥८६॥

देवेभ्यः स्वाहाँ। पितृभ्यंः स्वधाऽस्तुं। भूतेभ्यो नर्मः। मनुष्येभ्यो हन्तां। प्रजापंतये

-[६८]

स्वाहाँ। प्रमेष्ठिने स्वाहाँ। यथा कूंपः श्ताधांरः सहस्रंधारो अक्षिंतः। एवा में अस्तु धान्य सहस्रंधार्मिक्षंतम्। धनंधान्यै स्वाहाँ। ये भूताः प्रचरंन्ति दिवानक्तं बिलिंमिच्छन्तो वितुदंस्य प्रेष्याः। तेभ्यो बिलिं पुष्टिकामो हरामि मिय पुष्टिं पुष्टिंपतिर्दधातु स्वाहाँ॥८७॥

औं तद्र्ह्म। ओं तद्र्रायुः। ओं तदात्मा। ओं तथ्मत्यम्। ओं तथ्मर्वम्। ओं तथ्मर्वम्। ओं तत्पर्वम्। ओं तत्पर्येनमः॥ अन्तश्चरितं भूतेषु गुहायां विश्वमूर्तिषु। त्वं यज्ञस्त्वं वषद्वारस्त्वमिन्द्रस्त्व रुद्रस्त्वं विष्णुस्त्वं ब्रह्म त्वं प्रजापितः। त्वं तंदाप् आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भ्वस्सुवरोम्॥८८॥

॥ प्राणाहुतिमन्त्राः॥

श्रद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायांमपाने निविष्टोऽमृतं जुहोमि।

-[६९]

श्रद्धार्यां व्याने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धार्यामुदाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायार् समाने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। ब्रह्मणि म आत्माऽमृंतत्वायं॥ अमृतोपुस्तरंणमसि॥ श्रद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। प्राणाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायांमपाने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। अपानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायाँ व्याने निर्विष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। व्यानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायांमुदाने निविंष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। उदानाय स्वाहां॥ श्रद्धाया ५ समाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। समानाय स्वाहां॥ ब्रह्मणि म आत्माऽमृंतत्वायं। अमृतापिधानमंसि॥८९॥

॥भुक्तान्नाभिमन्त्रणमन्त्राः॥

श्रद्धायां प्राणे निविंश्यामृत हुतम्। प्राणमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायांमपाने

-[७१]

विश्वभुक्॥॥९१॥

व्यानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धायांमुदाने निर्विश्यामृत है हुतम। उदानमन्नेनाप्यायस्व। श्रृद्धाया समाने निर्विश्यामृत है हुतम्। समानमन्नेनाप्यायस्व॥९०॥

[७०]

॥भोजनान्ते आत्मानुसन्धानमन्त्राः॥

अङ्गृष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गृष्ठं चं समाश्रितः। ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातिं

निविंश्यामृत ५ हुतम्। अपानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायां व्याने निविंश्यामृत ५ हुतम्।

॥ अवयवस्वस्थता-प्रार्थनामन्त्रः ॥

वाङ्कं आसन्। नृसोः प्राणः। अक्ष्योश्वक्षुंः। कर्णयोः श्रोत्रम्ं। बाहुवोर्बलम्ं। ऊरुवोरोर्जः। अरिष्टा विश्वान्यङ्गानि तुनूः। तुनुवां मे सह नर्मस्ते अस्तु मा मां हिस्सीः॥९२॥

[७२]

[80]

७५

॥ इन्द्रसप्तर्षि-संवादमन्त्रः॥

वयः सुपूर्णा उपं सेदुरिन्द्रं प्रियमेथा ऋषयो नार्थमानाः। अपं ध्वान्तमूँर्णुहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बृद्धान्।
———[७३]

॥ हृदयालम्भनमन्त्रः॥

प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मां विशान्तकः। तेनान्नेनांप्यायस्व॥९३॥

॥ देवताप्राणनिरूपणमन्त्रः ॥

नमो रुद्राय विष्णवे मृत्युंर्मे पाहि॥९४॥

॥ अग्निस्तुतिमन्त्रः॥

त्वमंग्ने द्युभिस्त्वमांशुशुक्षणिस्त्वमुद्धस्त्वमश्मंनस्परि। त्वं वनेभ्यस्त्वमोषंधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः॥९५॥

॥ अभीष्टयाचनामन्त्राः॥

शिवनें मे सन्तिष्ठस्व स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व ब्रह्मवर्च्सेनं मे सन्तिष्ठस्व यज्ञस्यर्धिमनु सन्तिष्ठस्वोपं ते यज्ञ नम् उपं ते नम् उपं ते नमः॥९६॥

॥ परतत्त्व-निरूपणम्॥

सृत्यं परं परं सृत्यः सृत्येन न सुंवर्गाश्चोकाच्यंवन्ते कृदाचन सृताः हि सृत्यं तस्मांथ्यत्ये रमन्ते । तप इति तपो नानशंनात्परं यद्धि परं तपस्तद्दुर्थर्षं तद्दराधर्षं तस्मात्तपंसि रमन्ते । दम इति नियंतं ब्रह्मचारिणस्तस्माद्दमे रमन्ते ।

—[७८]

शम् इत्यरंण्ये मुनयस्तस्माच्छमं रमन्ते ॰ दानमिति सर्वाणि भूतानि प्रशर्सन्ति दानान्नाति दुष्करं तस्मौद्दाने रमन्ते ० धर्म इति धर्मेण सर्वमिदं परिगृहीतं धर्मान्नाति दुष्करं तस्मौद्धर्मे रंमन्ते ॰ प्रजन इति भूया रंसुस्तस्माद्भूयिष्ठाः प्रजायन्ते तस्माद्भ्यिष्ठाः प्रजनंने रमन्तेऽग्रय 🏻 इत्याह तस्मादग्रय आधातव्या अग्निहोत्रमित्यांह तस्मांदग्निहोत्रे रंमन्ते ॰ युज्ञ इति युज्ञो हि देवास्तस्मां द्युज्ञे रंमन्ते ॰ मानसमितिं विद्वा रसस्तस्मांद्विद्वा रसं एव मानसे रंमन्ते ॰ न्यास इतिं ब्रह्मा ब्रह्मा हि परः परों हि ब्रह्मा तानि वा एतान्यवराणि परार्श्स न्यास एवात्यंरेचयद्य एवं वेदेंत्युपनिषत्॥९७॥

॥ ज्ञानसाधन-निरूपणम्॥

प्राजापत्यो हारुंणिः सुपूर्णेयेः प्रजापंतिं पितर्मुपंससार् किं भंगवन्तः पर्मं वंदन्तीति तस्मै प्रोवाच ॰ सत्येनं वायुरावांति सत्येनांऽऽदित्यो रोचते दिवि

सत्यं वाचः प्रतिष्ठा सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मां ध्यत्यं पेरमं वदेन्ति . तपंसा देवा देवतामग्रं आयुन्तपुसर्षयः सुवरन्वंविन्दन् तपंसा सपत्नान् प्रणुंदामारांतीस्तपंसि सुवं प्रतिष्ठितं तस्मात्तपंः पर्मं वदंन्ति । दमेन दान्ताः किल्बिषंमवधून्वन्ति दमेन ब्रह्मचारिणः सुवेरगच्छन्दमो भूतानां दुराधर्षं दमे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माद्दमेः परमं वदंन्ति ॰ शमेन शान्ताः शिवमाचरंन्ति शमेन नाकं मुनयोऽन्वविन्दञ्छमो भूतानां दुराधर्षञ्छमे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माच्छमः परमं वर्दन्ति 🏻 दानं यज्ञानां वरूथं दक्षिणा लोके दातार रे सर्वभूतान्युंपजीवन्तिं दानेनारांतीरपांनुदन्त दानेनं द्विषन्तो मित्रा भंवन्ति दाने सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्दानं पंरमं वर्दन्ति ॰ धर्मो विश्वंस्य जर्गतः प्रतिष्ठा लोके धर्मिष्ठं प्रजा उपसर्पन्तिं धर्मेणं पापमंपनुदंति धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्धर्मं पर्मं वदन्ति । प्रजनेनं वै प्रतिष्ठा लोके साधु प्रजायाँस्तन्तुं तन्वानः पितृणामनृणो भवंति तदेव तस्यानृणं तस्मात् प्रजननं परमं वर्दन्त्यग्नयो वै त्रयीं विद्या ॰ देवयानः पन्थां गार्हपत्य ऋक्पृंथिवी रंथन्तरमंन्वाहार्यपचेनं यजुंरन्तरिक्षं वामदेव्यमाहवनीयः सामं सुवर्गो लोको बृहत्तस्मादुग्नीन्पर्मं वर्दन्त्यग्निहोत्र सायं प्रातर्गृहाणां निष्कृतिः स्विष्ट सुहुतं यंज्ञऋतूनां प्रायंण र सुवृर्गस्यं लोकस्य ज्योतिस्तस्मादिग्निहोत्रं पंरमं वदिन्ति ॰ यज्ञ इति यज्ञेन हि देवा दिवं गता यज्ञेनासुंरानपांनुदन्त यज्ञेनं द्विषन्तो मित्रा भंवन्ति यज्ञे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माँद्यज्ञं पेरमं वदेन्ति ॰ मानसं वै प्रांजापत्यं पवित्रं मानसेन मनंसा साधु पंश्यति मानसा ऋषंयः प्रजा अंसृजन्त मानसे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौन्मानसं पेरमं वदेन्ति ॰ न्यास इत्याहुंर्मनीषिणौ ब्रह्माणं ब्रह्मा विश्वः कतमः स्वयम्भुः प्रजापंतिः संवथ्सर इति संवथ्सरोऽसावांदित्यो य एषे आंदित्ये पुरुषः स पंरमेष्ठी ब्रह्मात्मा ॰ याभिरादित्यस्तपंति रश्मिभस्ताभिः पर्जन्यो वर्षति पर्जन्येनौषधिवनस्पतयः प्रजांयन्त ओषधिवनस्पतिभिरन्नं भवत्यन्नेन प्राणाः प्राणैर्बलं बलेन तपस्तपंसा श्रद्धा श्रद्धयां मेधा मेधयां मनीषा मनीषया मनो मनसमा शान्तिः शान्त्यां चित्तं चित्तेन स्मृति समृत्या स्मार् स्मार्ण विज्ञानं विज्ञानंनाऽऽत्मानं वेदयति तस्मादन्नं ददन्थ्सर्वाण्येतानि ददात्यन्नौत्

[७९]

प्राणा भवन्ति ॰ भूतानां प्राणैर्मनो मनसश्च विज्ञानं विज्ञानांदानुन्दो ब्रंह्मयोनिः स वा एष पुरुषः पञ्चधा पंञ्चात्मा येन सर्वमिदं प्रोतं पृथिवी चान्तरिक्षं च द्यौश्च दिशंश्वावान्तरदिशाश्च स वै सर्विमिदं जगथ्स च भूत ५ स भव्यं जिज्ञासक्रुप्त ऋंतजा रियंष्ठा ॰ श्रद्धा सत्यो महंस्वान्तपसो वरिष्ठाद्वात्वां तमेवं मनंसा हृदा च भूयों न मृत्युमुपंयाहि विद्वान्तस्मौन्यासमेषां तपंसामतिरिक्तमाहुंर्वसुरण्वों विभूरंसि प्राणे त्वमिसं सन्धाता । ब्रह्मंन् त्वमिसं विश्वधृत्तंजोदास्त्वमंस्यग्निरंसि वर्चोदास्त्वमंसि सूर्यस्य द्युम्नोदास्त्वमंसि चन्द्रमंस उपयामगृंहीतोऽसि ब्रह्मणे त्वा 。 महस ओमित्यात्मानं युञ्जीतैतद्वे मंहोपनिषंदं देवानां गुह्यं य एवं वेदं ब्रह्मणों महिमानंमाप्नोति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमित्युपनिषत्॥९८॥

॥ ज्ञानयज्ञः ॥

तस्यैवं विदुषों युज्ञस्याऽऽत्मा यजंमानः श्रुद्धा पत्नी शरीरमिध्ममुरो वेदिलीमानि

बर्हिर्वेदः शिखा हृदंयं यूपः काम आज्यं मन्युः पशुस्तपोऽग्निर्दमः शमयिता दक्षिणा वाग्घोता प्राण उद्गाता चक्षुरध्वर्युर्मनो ब्रह्मा ॰ श्रोत्रंमग्रीद्यावद्भियंते सा दीक्षा यदश्र्ञाति तद्धविर्यत्पिबंति तदंस्य सोमपानं यद्रमंते तदुंपसदो यथ्मुश्चरंत्युप्विशंत्युत्तिष्ठंते च स प्रवर्ग्यों यन्मुखं तदांहवनीयो व्याह्रंतिराहुतिर्यदंस्य विज्ञानं तज्जहोति यथ्सायं प्रातरंति तथ्समिधं यत्प्रातर्मध्यं दिन स् सायं च तानि सर्वनानि ये अहोरात्रे ते देर्शपूर्णमासौ येंऽर्धमासाश्च मासाँश्च ते चांतुर्मास्यानि य ऋतवस्ते पंशुबन्धा ये संवथ्सराश्च परिवथ्सराश्च तेऽहंर्गणाः सर्ववेदसं वा ॰ एतथ्सत्रं यन्मरंणं तदंवभृथं एतद्वे जंरामर्यमग्निहोत्र । स्त्रं य एवं विद्वानुंद्गयंने प्रमीयंते देवानांमेव मंहिमानं गुत्वाऽऽदित्यस्य सायुंज्यं गच्छत्यथ ॰ यो दंक्षिणे प्रमीयंते पितृणामेव मंहिमानं गुत्वा चुन्द्रमंसुः सायुंज्य । सलोकतांमाप्रोत्येतौ वै सूर्याचन्द्रमसौर्मिहिमानौ ब्राह्मणो विद्वानभिजंयति तस्माँद्रह्मणों महिमानंमाप्नोति तस्माँद्रह्मणों महिमानंमित्युपनिषत्॥९९॥

·[८०] नमस्त

ॐ सह नांववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥ कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

स्ंज्ञानं विज्ञानं प्रज्ञानं जानदंभिजानत्। सङ्कल्पंमानं प्रकल्पंमानमुप्कल्पंमान्मुपंक्कप्तं क्रुप्तम्। श्रेयो वसीय आयथसम्भूतं भूतम्। चित्रः केतुः
प्रभानाभान्थ्यम्भान्। ज्योतिष्माङ्स्तेजंस्वानातपृङ्स्तपंत्रभितपन्। रोचनो
रोचमानः शोभनः शोभमानः कल्याणंः। दर्शां दृष्टा देर्श्वता विश्वरूपा
सुदर्शना। आप्यायमाना प्यायमाना प्यायां सूनृतेरां। आपूर्यमाणा पूर्यमाणा
पूर्यन्ती पूर्णा पौर्णमासी। दाता प्रदाताऽऽन्नदो मोदंः प्रमोदः॥१॥

आवेशयंत्रिवेशयंन्थ्संवेशंनः स॰शांन्तः शान्तः। आभवंन्प्रभवंन्थ्सम्भवन्थ्सम्भूतो भूतः। प्रस्तुंतं विष्टुंत् स७ स७ सत्तुंतं कल्याणं विश्वरूपम्। शुक्रम्मृतं तेज्ञस्वि तेजः सिमंद्धम्। अरुणं भानुमन्मरीचिमदिभृतपत्तपंस्वत्। सविता प्रसविता दीप्तो दीपयन्दीप्यमानः। ज्वलंञ्चित्ता तपंन्वितपंन्थ्यन्तपन्। रोचनो रोचमानः शुम्भूः

शुम्भंमानो वामः। सुता सुंन्वती प्रसुंता सूयमांनाऽभिषूयमांणा। पीतीं प्रपा सम्पा तृप्तिंस्तर्पयंन्ती॥२॥

कान्ता काम्या कामजाताऽऽयुंष्मती कामदुघां। अभिशास्ताऽनुंमन्ताऽऽनन्दो मोदंः प्रमोदः। आसादयंत्रिषादयंन्थ्स १ सादंनः स १ संत्रः सुत्रः। आभूर्विभूः

प्रभः शम्भूर्भ्वंः। पवित्रं पवियष्यन्पूतो मेध्यः। यशो यशंस्वानायुर्मृतंः। जीवो जीविष्यन्थ्स्वर्गो लोकः। सहस्वान्थ्यहीयानोजस्वान्थ्यहंमानः। जयंत्रभिजयंन्थ्सु-

द्रविणो द्रविणोदाः। आर्द्रपंवित्रो हरिकेशो मोर्दः प्रमोदः॥३॥

अरुणों ऽरुणरंजाः पुण्डरींको विश्वजिदंभिजित्। आर्द्रः पिन्वंमानो ऽन्नंवात्रसंवानिरां सर्वौषधः संम्भुरो महंस्वान्। एजुत्का जोंवुत्काः। क्षुष्ठुकाः शिंपिविष्टुकाः। स्रिसराः सुशेरवः। अजिरासो गिम्षणवंः। इदानीं तदानीमेतर्हि क्षिप्रमंजिरम्।

आशुर्निमेषः फुणो द्रवन्नितिद्रवन्। त्वर्ड्स्त्वरंमाण आशुराशीयाञ्चवः। अग्निष्टोम उक्थ्योऽतिरात्रो द्विरात्रस्त्रिरात्रश्चेतूरात्रः। अग्निर्ऋतुः सूर्य ऋतुश्चन्द्रमा ऋतुः।

प्रजापंतिः संवथ्सरो महान्कः॥४॥

भूरिग्नें चे पृथिवीं च मां चे। त्रीइश्चे लोकान्थ्संवथ्सरं चे। प्रजापितिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद। भुवीं वायुं चान्तरिक्षं च मां ची। त्री इश्चे लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। स्वरादित्यं च दिवं च मां चं। त्री इश्चं लोकान्थ्यं वथ्यरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तया देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद। भूर्भुवः स्वश्चन्द्रमंसं च दिशश्च मां चं। त्री इश्चे लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥५॥

त्वमेव त्वां वैतथ् योऽसि सोऽसिं। त्वमेव त्वामंचैषीः। चितश्चासि सश्चितश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। यत्ते अग्ने न्यूनं यदु तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरसिश्चन्तु। विश्वं ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चितश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। मा ते अग्ने च येन माऽतिं च येनाऽऽयुरावृक्षि। सर्वेषां ज्योतिषां ज्योतिर्यद्वावुदेतिं। तपंसो जातमिनेभृष्टमोर्जः। तत्ते ज्योतिरिष्टके। तेनं मे तप। तेनं मे ज्वल। तेनं मे दीदिहि। यावद्देवाः। यावदसांति सूर्यः। यावदुतापि ब्रह्मं॥६॥

संवथ्मरोऽसि परिवथ्मरोऽसि। इदावथ्मरोऽसीद्वथ्मरोऽसि। इद्वथ्मरोऽसि वथ्मरोऽसि। तस्यं ते वस्नन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। शरदुत्तरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चित्यः। अपुरुपृक्षाः पुरीषम्॥७॥

अहोरात्राणीष्टंकाः। ऋषुभोऽसि स्वर्गो लोकः। यस्याँ दिशि महीयंसे। ततो नो मह आवंह। वायुर्भूत्वा सर्वा दिश आवाहि। सर्वा दिशोऽनुविवाहि। सर्वा दिशोऽनुसंवाहि। चित्त्या चितिमापृंण। अचित्त्या चितिमापृंण। चिदंसि समुद्रयोनिः॥८॥

आनिषंतः। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। दिवं मे यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। अह्य प्रसारय। रात्र्या समंच। रात्र्या प्रसारय। अह्य समंच। काम् प्रसारय। काम् समंच॥९॥

——[४]

इन्दुर्दक्षंः श्येन ऋतावां। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंरण्युः। महान्थ्सधस्थें ध्रुव

भूर्भुवः स्वः। ओजो बलम्। ब्रह्मं क्षुत्रम्। यशो महत्। सृत्यं तपो नाम। रूपममृतम्। चक्षुः श्रोत्रम्। मन् आयुः। विश्वं यशो महः। समं तपो हरो भाः। जातवेदा यदि वा पावकोऽसि। वैश्वानरो यदि वा वैद्युतोऽसि। शं प्रजाभ्यो यजमानाय लोकम्। ऊर्जं पृष्टिं दददभ्यावेवृथ्स्व॥१०॥

राज्ञीं विराज्ञीं। सम्राज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निरिन्द्रो बृह्स्पतिः। विश्वे देवा भुवंनस्य गोपाः। ते मा सर्वे यशंसा स॰सृंजन्तु॥११॥

असंवे स्वाहा वसंवे स्वाहाँ। विभुवे स्वाहा विवस्वते स्वाहाँ। अभिभुवे स्वाहाऽधिपतये स्वाहाँ। दिवां पत्ये स्वाहाऽ इंहस्पत्याय स्वाहाँ। चाक्षुष्मत्याय स्वाहाँ ज्योतिष्मत्याय स्वाहाँ। राज्ञे स्वाहां विराज्ञे स्वाहाँ। सम्माज्ञे स्वाहाँ स्वराज्ञे स्वाहाँ। शूषांय स्वाहा सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहा ज्योतिषे स्वाहाँ। स्रसर्पय स्वाहां कुल्याणांय स्वाहाँ। अर्जुनाय स्वाहाँ॥१२॥

विपश्चिते पर्वमानाय गायत। मही न धाराऽत्यन्थों अर्षित। अहिंर्ह जीर्णामितंसर्पति त्वचम्। अत्यो न क्रीडंन्नसरद्वृषा हिरः। उपयामगृंहीतोऽसि मृत्यवे त्वा जुष्टं गृह्णामि। एष ते योनिर्मृत्यवे त्वा। अपंमृत्युमपृक्षुधम्। अपेतः शुपर्थं जिह। अधां नो अग्नु आवंह। रायस्पोष र सहस्रिणम्॥१३॥

ये तें सहस्रम्युतं पाशाः। मृत्यो मर्त्यांय हन्तंवे। तान् यज्ञस्यं माययाः। सर्वानवंयजामहे। भृक्षोंऽस्यमृतभृक्षः। तस्यं ते मृत्युपीतस्यामृतंवतः। स्वगाकृतस्य मध्मतः। उपहूतस्योपहूतो भक्षयामि। मृन्द्राऽभिभूतिः केतुर्यज्ञानां वाक्। असावेहिं॥१४॥

अन्थो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधिर आंक्रन्दयितरपान। असावेहिं। अह्स्तोस्त्वा चक्षुंः। असावेहिं। अपादाशो मनः। असावेहिं। कवे विप्रंचित्ते श्रोत्रं। असावेहिं॥१५॥

सुह्स्तः सुवासाः। शूषो नामाँस्यमृतो मर्त्येषु। तं त्वाऽहं तथा वेदं। असावेहिं। अग्निमें वाचि श्रितः। वाग्यदेये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। वायुर्में प्राणे श्रितः॥१६॥

प्राणो हृदये। हृदयं मियं। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मणि। सूर्यो मे चक्षुंषि श्रितः।

चक्षुर्ह्रदेये। हृदेयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। चन्द्रमां मे मनंसि श्रितः॥१७॥

मनो हदंये। हदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। दिशों मे श्रोत्रें श्रिताः। श्रोत्र्र् हदंये। हदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। आपों मे रेतंसि श्रिताः॥१८॥ रेतो हदंये। हदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पृथिवी मे शरींरे श्रिता।

रता हृदया हृदय माया अहम्मृता अमृत् ब्रह्माणा पृाथवा म् शरार श्रिता। शरीर्॰ हृदया हृदयं मिया अहम्मृता अमृतं ब्रह्मणा ओष्धिवनस्पृतयो मे लोमस श्रिताः॥१९॥

लोमंसु श्रिताः॥१९॥ लोमांनि हृदंये। हृदंयं मिया अहमुमृतें। अमृतुं ब्रह्मणि। इन्द्रों मे बलें श्रितः।

बल् ह् ह्रंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। पूर्जन्यों मे मूर्धि श्रितः॥२०॥ मूर्धा हृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। ईशांनो मे मृन्यौ

मूधा हदया हदय माया अहम्मृता अमृत् ब्रह्माणा इशाना म मृन्या श्रितः। मृन्युर्हदेये। हदेयं मिये। अहम्मृते। अमृतं ब्रह्मणि। आत्मा मे आत्मिनि श्रितः॥२१॥

आत्मा हृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। पुनेर्म आत्मा

पुन्रायुरागाँत्। पुनंः प्राणः पुनराकूंतमागाँत्। वैश्वान्रो रृश्मिभिवविधानः। अन्तस्तिष्ठत्वमृतस्य गोपाः॥२२॥

प्रजापंतिर्देवानंसृजत। ते पाप्मना सन्दिता अजायन्त। तान्व्यंद्यत्। यद्यद्यत्। तस्माद्विद्यत्। तमंवृश्चत्। यदवृश्चत्। तस्माद्वृष्टिः। तस्माद्यत्रेते देवते अभिप्राप्नुंतः। वि चं हैवास्य तत्रं पाप्मानं द्यतः॥२३॥

वृश्चतंश्च। सैषा मीमा साऽग्निहोत्र एव संम्पन्ना। अथों आहुः। सर्वेषु यज्ञकृतुष्वितिं। होष्यंत्रप उपंस्पृशेत्। विद्यंदिस् विद्यं मे पाप्मान्मितिं। अथं हुत्वोपंस्पृशेत्। वृष्टिंरिस् वृश्चं मे पाप्मान्मितिं। यक्ष्यमांणो वृष्टा वां। वि चं हैवास्यैते देवते पाप्मान् द्यतः॥२४॥

वृश्चतंश्च। अत्यु १ हो हाऽऽर्रुणः। ब्रह्मचारिणे प्रश्नान्प्रोच्य प्रजिघाय। परेहि। प्रुक्षं दय्यौम्पातिं पृच्छ। वेत्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। तमागत्यं पप्रच्छ। आचार्यो मा प्राहैषीत्। वेर्त्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। स होवाच वेदेतिं॥२५॥

स कस्मिन्प्रतिष्ठित् इति। प्रोरंज्सीति। कस्तद्यत्प्रोरंजा इति। एष वाव स प्रोरंजा इति होवाच। य एष तपंति। एषौंऽर्वाग्रंजा इति। स कस्मिन्त्वेष इति। सत्य इति। किं तथ्सत्यमिति। तप इति॥२६॥

कस्मिन्नु तप् इतिं। बल् इतिं। किं तद्वलमितिं। प्राण इतिं। मा स्मं प्राणमितिंपृच्छ् इतिं माऽऽचार्यों ऽब्रवीदितिं होवाच ब्रह्मचारी। स होवाच प्रुक्षो दय्यांम्पातिः। यद्वे ब्रह्मचारिन्प्राणमत्यंप्रक्ष्यः। मूर्धा ते व्यपंतिष्यत्। अहम्तंत आचार्याच्छ्रेयां-भविष्यामि। यो मां सावित्रे समवादिष्टेतिं॥२७॥

तस्माँथ्सावित्रे न संबंदेत। स यो हु वै सांवित्रं विदुषां सावित्रे संवदंते। सहाँस्मिञ्छियं दधाति। अनुं हु वा अस्मा असौ तप्ञ्छियं मन्यते। अन्वंस्मै श्रीस्तपों मन्यते। अन्वंस्मै तपो बलं मन्यते। अन्वंस्मै बलं प्राणं मन्यते। स यदाहं। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। एष एव तत्॥२८॥

अथ यदाहं। प्रस्तुंतं विष्टुंत सुता सुन्वतीतिं। एष एव तत्। एष ह्यंव तान्यहानि। एष रात्रंयः। अथ यदाहं। चित्रः केतुर्दाता प्रंदाता संविता प्रंसिवताऽभिंशास्ताऽनुंमन्तेतिं। एष एव तत्। एष ह्यंव तेऽह्नां मुहूर्ताः। एष रात्रैं:॥२९॥

अथ यदाहं। प्वित्रं पवियष्यन्थ्सहंस्वान्थ्सहीयानरुणोऽरुणरंजा इतिं। एष एव तत्। एष ह्यंव तेंऽर्धमासाः। एष मासाः। अथ यदाहं। अग्निष्टोम उक्थ्योंऽग्निर्ऋतुः प्रजापितः संवथ्सर इतिं। एष एव तत्। एष ह्यंव ते यंज्ञऋतवंः। एष ऋतवंः॥३०॥

पुष संवथ्सरः। अथ् यदाहं। इदानीं तदानीमितिं। एष एव तत्। एष ह्यंव ते मुंहूर्तानां मुहूर्ताः। जनको हु वैदेहः। अहोरात्रेः समाजगाम। त॰ होचुः। यो वा अस्मान् वेदं। विजहंत्पाप्मानमिति॥३१॥

सर्वमायुंरेति। अभि स्वर्गं लोकं जंयति। नास्यामुष्मिं श्लोके ऽन्नं क्षीयत् इतिं। विजहंद्ध वै पाप्मानंमेति। सर्वमायुंरेति। अभि स्वर्गं लोकं जंयति। नास्यामुष्मिं लोके ऽन्नं क्षीयते। य एवं वेदं। अहींना हाऽऽश्वंथ्यः। सावित्रं विदां चंकार॥३२॥

स हं हुर्सो हिंर्ण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकिर्मियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। हुर्सो हु वै हिंर्ण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकमेंति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदे। देवभागो हं श्रौतर्षः। सावित्रं विदां चंकार। तर ह वागदृश्यमानाऽभ्युंवाच॥३३॥

सर्वं बत गौतमो वेदं। यः सांवित्रं वेदेतिं। स होवाच। कैषा वागुसीतिं। अयम्ह॰ सांवित्रः। देवानांमुत्तमो लोकः। गुह्यं महो बिभ्रदितिं। एतावंति ह गौतमः। युज्ञोपवीतं कृत्वाऽधो निपंपात। नमो नम् इतिं॥३४॥

स होवाच। मा भैषीर्गीतम। जितो वै ते लोक इति। तस्माद्ये के चे सावित्रं विदुः। सर्वे ते जितलोकाः। स यो ह वै सावित्रस्याष्टाक्षरं पद श्रियाऽभिषिक्तं वेदं। श्रिया हैवाभिषिच्यते। घृणिरिति द्वे अक्षरें। सूर्य इति त्रीणिं। आदित्य इति त्रीणिं॥३५॥

पृतद्वै सांवित्रस्याष्टाक्षेरं पृदङ् श्रियाऽभिषिक्तम्। य पृवं वेदं। श्रिया हैवाभिषिंच्यते। तदेतदृचाऽभ्यंक्तम्। ऋचो अक्षरें पर्मे व्योमन्। यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। यस्तं न वेद किमृचा कंरिष्यति। य इत्तद्विद्स्त इमे समांसत् इतिं। न ह वा पृतस्यूर्चा न यजुंषा न साम्राऽर्थोंऽस्ति। यः सांवित्रं वेदं॥३६॥

तदेतत्पंरि यद्देवच्क्रम्। आर्द्रं पिन्वंमानः स्वर्गे लोक एति। विजहिद्धां भूतानि सम्पश्यंत्। आर्द्रो हु वै पिन्वंमानः। स्वर्गे लोक एति। विजहिन्वश्वां भूतानि सम्पश्यन्। य एवं वेद। शूषो हु वै वाँष्ण्यः। आदित्येनं समाजंगाम। तः होवाच। एहिं सावित्रं विद्धि। अयं वै स्वर्ग्योऽग्निः पारियष्णुर्मृताथ्सम्भूत इति। एष वाव स सांवित्रः। य एष तपंति। एहि मां विद्धि। इति हैवेनं तद्वाच॥३७॥

इयं वाव सुरघाँ। तस्यां अग्निरेव सार्घं मधुं। या पृताः पूर्वपक्षापरपृक्षयो

रात्रंयः। ता मंधुकृतंः। यान्यहांनि। ते मंधुवृषाः। स यो ह् वा एता मंधुकृतंश्च मधुवृषा ॥ वेदं। कुर्वन्तिं हास्यैता अग्नौ मधुं। नास्येष्टापूर्तं धंयन्ति। अथ् यो न वेदं॥ ३८॥

न हाँस्यैता अग्नौ मध्रं कुर्वन्ति। धर्यन्त्यस्येष्टापूर्तम्। यो ह् वा अंहोरात्राणाँ नाम्धेयांनि वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेति। पृतावंनुवाकौ पूर्वपक्षस्यांहोरात्राणां नाम्धेयांनि। प्रस्तुंतं विष्टंत स्मृता सुन्वतीति। पृतावंनुवाकावंपरपक्षस्यांहोरात्राणां नाम्धेयांनि। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं॥३९॥

यो हु वै मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि वेदं। न मुंहूर्तेष्वार्तिमार्च्छति। चित्रः केतुर्दाता प्रदाता संविता प्रसिवताऽभिशास्ताऽनुमन्तेति। पृतेऽनुवाका मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि। न मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छति। य पृवं वेदं। यो हु वा अर्धमासानां च मासानां च

नाम्धेयांनि वेदं। नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छंति। प्वित्रं पवियुष्यन्थ्सहं-स्वान्थ्सहीयानरुणोऽरुणरंजा इति। एतेऽनुवाका अर्धमासानां च मासानां च नामधेयांनि॥४०॥

नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो हु वै यंज्ञकतूनां चंर्तूनां चं संवथ्सरस्यं च नाम्धेयांनि वेदं। न यंज्ञकृतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छंति। अग्निष्टोम उक्थ्यौंऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवथ्सर इतिं। एतेऽनुवाका यंज्ञकतूनां चंर्तूनां चं संवथ्सरस्यं च नाम्धेयांनि॥४१॥

न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छिति। य एवं वेदं। यो ह वै मुंहूर्तानां मुहूर्तान् वेदं। न मुंहूर्तानां मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छिति। इदानीं तदानीमिति। एते वै मुंहूर्तानां मुहूर्ताः। न मुंहूर्तानां मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छिति। य एवं वेदं। अथो यथां क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यात्रमित्ते। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यात्रमित्ति। स पुतेषांमेव संलोकता ५ सार्युज्यमश्रुते। अपं पुनर्मृत्युं जंयति। य पुवं वेदं॥४२॥

कश्चिंद्ध वा अस्माल्लोकात्प्रेत्ये। आत्मानं वेद। अयमहमस्मीतिं। कश्चिथ्स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अग्निमुंग्धो हैव धूमतान्तः। स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति।

अथु यो है्वैतमृग्नि सांवित्रं वेदं। स एवास्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमहमस्मीतिं॥४३॥

स स्वं लोकं प्रतिप्रजानाति। एष उं वेवैनं तथ्सांवित्रः। स्वर्गं लोकम्भिवंहति। अहोरात्रेर्वा इद स्युग्भिः क्रियते। इतिरात्रायांदीक्षिषत। इतिरात्रायं व्रतम्पांगुरिति। तानिहानेवं विदुषः। अमुष्मिं ह्लोके शेव्धिं धंयन्ति। धीत १ हैव स शेविधमन् परैति। अथ यो हैवैतमग्नि १ सांवित्रं वेदं॥४४॥

तस्यं हैवाहों रात्राणिं। अमुर्ष्मिं लोके शेंविधं न धंयन्ति। अधीं त हैव स

कुर्या इति। ब्रह्मचर्यमेवैनेन चरेयमिति होवाच॥४५॥

स होवाच। भर्रद्वाजेत्यामन्त्र्यं। वेदा वा एते। अनुन्ता वै वेदाः। एतद्वा एतेस्त्रिभिरायुंर्भिरन्वंवोचथाः। अर्थ त इत्रंदननूक्तमेव। एहीमं विद्धि। अयं वै संविवद्यति॥४६॥

तस्मैं हैतमृग्नि॰ सांवित्रमुंवाच। त॰ स विदित्वा। अमृतों भूत्वा। स्वृगं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। अमृतों हैव भूत्वा। स्वृगं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदं। एषो एव त्रयीं विद्या॥४७॥

यार्वन्त १ ह वै त्रय्या विद्ययां लोकं जयिति। तार्वन्तं लोकं जयिति। य एवं

वेदं। अग्नेर्वा एतानिं नामधेयांनि। अग्नेरेव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं

त १ ह त्रीन्गिरिरूपानविज्ञातानिव दर्शयां चंकार। तेषा १ हैकैंकस्मान्मुष्टिनाऽऽदं

शेंवधिमनु परैति। भुरद्वांजो ह त्रिभिरायुंर्भिर्ब्रह्मचर्यमुवास। त॰ ह जीर्णिङ्

स्थविर र शयानम्। इन्द्रं उपव्रज्योवाच। भरंद्वाज। यत्तें चतुर्थमायुर्दद्याम्। किमेनेन

वेदं। वायोर्वा एतानिं नामधेयांनि। वायोरेव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वा एतानिं नामधेयांनि॥४८॥

इन्द्रंस्यैव सायुंज्य र सलोकर्तामाप्नोति। य एवं वेदं। बृहस्पतेर्वा एतानिं नाम-धेर्यानि। बृहस्पतेरेव सार्युज्य सलोकर्तामाप्रोति। य एवं वेदे। प्रजापतेर्वा एतानि नामधेयांनि। प्रजापंतेरेव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदे। ब्रह्मणो वा एतानि नामधेयानि। ब्रह्मण एव सायुंज्य सलोकर्तामाप्नोति। य एवं वेद्। स वा पृषों ऽग्निरंपक्षपुच्छो वायुरेव। तस्याग्निर्मुखम्। असावांदित्यः शिरंः। स यदेते देवते अन्तरेण। तथ्सर्वर् सीव्यति। तस्माध्सावित्रः॥४९॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके प्रथमः प्रश्नः समाप्तः॥१॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

लोकोंऽसि स्वर्गोंऽसि। अनुन्तौंऽस्यपारोंऽसि। अक्षितोऽस्यक्ष्य्योंऽसि। तपंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतीं विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामदुघमिक्षेतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥१॥

तपोंऽसि लोके श्रितम्। तेजंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वस्य भूर्तृ विश्वंस्य जनयितृ। तत्त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२॥

तेजोऽसि तपंसि श्रितम्। समुद्रस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनियतः। तत्त्वोपंदधे काम्दुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥३॥

समुद्रोऽसि तेर्जिस श्रितः। अपां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं

विश्व र सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियुता। तं त्वोपंदधे कामुदुघुमिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥४॥

आपंः स्थ समुद्रे श्रिताः। पृथिव्याः प्रंतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वर् सुभूतम्। विश्वस्य भूर्त्यो विश्वस्य जनयित्र्यः। ता व उपंदधे कामदुघा अक्षिताः। प्रजापितिस्त्वा सादयत्। तया देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥५॥

पृथिव्यंस्यपस् श्रिता। अग्नेः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनियत्री। तां त्वोपंदधे कामदुघामक्षिताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥६॥

अग्निरंसि पृथिव्याः श्रितः। अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामुदुघमक्षितम्। प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥७॥

अन्तरिक्षमस्यग्नौ श्रितम्। वायोः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भृतृं विश्वंस्य जनियृतृ। तत्त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥८॥

वायुरंस्यन्तिरक्षे श्रितः। दिवः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्ननः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूत्त्वा विश्वं स्मूत्त्वा विश्वं स्य भूतं विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥९॥

द्यौरंसि वायौ श्रिता। आदित्यस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनियत्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१०॥

आदित्योऽसि दिवि श्रितः। चन्द्रमंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिक्षेतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥११॥

चुन्द्रमां अस्यादित्ये श्रितः। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामुदुघमक्षितम्। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्वद्भुवा सींद॥१२॥

नक्षंत्राणि स्थ चन्द्रमंसि श्रितानिं। संवथ्सरस्यं प्रतिष्ठा युष्मास्ं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतॄंणि विश्वंस्य जनयितॄणिं। तानिं व उपंदधे काम्दुधान्यक्षितानि। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१३॥

संवथ्सरोऽसि नक्षेत्रेषु श्रितः। ऋतूनां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१४॥

सींद॥१७॥

ऋतवंः स्थ संवथ्सरे श्रिताः। मासांनां प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारंः। तान् व उपंदधे कामृदुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१५॥

मासौः स्थर्तषुं श्रिताः। अर्धमासानां प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदमन्तः। विश्वं यक्षं

विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारंः। तान् व उपंदधे काम्दुघानिक्षंतान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१६॥ अर्धमासाः स्थं मासु श्रिताः। अहोरात्रयौः प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्न्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारंः। तान् व

उपदधे कामदुघानिक्षेतान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा

अहोरात्रे स्थौंऽर्धमासेषुं श्रिते। भूतस्यं प्रतिष्ठे भव्यंस्य प्रतिष्ठे। युवयोरिदम्नतः।

विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्र्यौं विश्वंस्य जनियत्र्यौं। ते वामुपंदधे कामृद्धे अक्षिते। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१८॥

पौर्णमास्यष्टंकाऽमावास्यां। अन्नादाः स्थान्नद्घो युष्मासं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्त्यो विश्वंस्य जनिय्र्यः। ता व उपंदधे कामदुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१९॥

राडंसि बृह्ती श्रीर्सीन्द्रंपत्नी धर्मपत्नी। विश्वं भूतमनुप्रभूता। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुधामिक्षंताम्। प्रजापतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥२०॥

ओजोंऽसि सहोंऽसि। बलंमिस भ्राजोंऽसि। देवानां धामामृतम्।

अमंर्त्यस्तपोजाः। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥२१॥

त्वमंग्ने रुद्रो असुरो महो दिवः। त्व शर्धो मारुतं पृक्ष ईशिषे। त्वं वातैररुणैर्यास शङ्गयः। त्वं पूषा विधृतः पांसि न तमनां। देवां देवेषुं श्रयध्वम्। प्रथमा द्वितीयेषु श्रयध्वम्। द्वितीयास्तृतीयेषु श्रयध्वम्। तृतीयाश्चतुर्थेषुं श्रयध्वम्। चतुर्थाः पश्चमेषुं श्रयध्वम्। पश्चमाः षष्ठेषुं श्रयध्वम्॥२२॥

षृष्ठाः संप्तमेषुं श्रयध्वम्। स्प्तमा अष्टमेषुं श्रयध्वम्। अष्टमा नंवमेषुं श्रयध्वम्। नृवमा दंशमेषुं श्रयध्वम्। दृशमा एंकादृशेषुं श्रयध्वम्। एकादृशोषुं श्रयध्वम्। दृशमा एंकादृशेषुं श्रयध्वम्। दृश्वेषुं श्रयध्वम्। दृश्वेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्दृशाः पंश्रदृशेषुं श्रयध्वम्। पृश्रदृशाः पंश्रदृशेषुं श्रयध्वम्। पृश्रदृशाः षोंडुशेषुं श्रयध्वम्॥२३॥

षोड्शाः संप्तद्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तद्शा अष्टाद्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाद्शा एंकान्नविद्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नविद्शोषुं श्रयध्वम्। विद्शा एंकविद्शेषुं श्रयध्वम्। पुक्विद्शोषुं श्रयध्वम्। द्वाविद्शोषुं श्रयध्वम्। द्वाविद्शोषुं श्रयध्वम्। न्र्योविद्शोषुं श्रयध्वम्। न्र्योविद्शोषुं श्रयध्वम्। न्र्यविद्शोषुं श्रयध्वम्। प्रश्रविद्शोषुं श्रयध्वम्। प्रश्रविद्शोषुं श्रयध्वम्। प्रश्रविद्शोषुं श्रयध्वम्। प्रश्रविद्शोषुं श्रयध्वम्। २४॥

षृड्विष्शाः संप्तिविष्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तिविष्शा अष्टाविष्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाविष्शा एंकान्नित्र्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नित्र्शेषुं श्रयध्वम्। त्रिष्शा एंकित्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। एकित्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। एकित्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। द्वान्तिष्शास्त्रेयस्त्रिष्णेषुं श्रयध्वम्। देवास्त्रिरेकादशास्त्रिस्त्रंयस्त्रिष्शाः। उत्तरे भवत। उत्तरवर्त्मान् उत्तरसत्त्वानः। यत्कांम इदं जुहोमिं। तन्मे समृध्यताम्। वयक् स्यांम् पत्यो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहा॥२५॥

अग्नांविष्णू सुजोषंसा। इमा वंर्धन्तु वां गिरंः। द्युम्नैर्वाजेंभि्रागंतम्। राज्ञीं

विराज्ञीं। सम्राज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निः सोमो बृह्स्पितिः। विश्वें देवा भुवंनस्य गोपाः। ते सर्वे सङ्गत्यं। इदं मे प्रावंता वर्चः। वयङ् स्यांम् पत्यो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहां॥२६॥

अन्नप्तेऽन्नस्य नो देहि। अनुमीवस्यं शुष्मिणंः। प्र प्रदातारं तारिषः। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अग्ने पृथिवीपते। सोमं वीरुधां पते। त्वष्टंः समिधां पते।

विष्णेवाशानां पते। मित्रं सत्यानां पते। वर्रुण धर्मणां पते॥२७॥ मुरुतों गणानां पतयः। रुद्रं पशूनां पते। इन्द्रौंजसां पते। बृहंस्पते ब्रह्मणस्पते।

आ रुचा रोचेऽह इ स्वयम्। रुचा रुरुचे रोचंमानः। अतीत्यादः स्वंराभंरेह। तस्मिन् योनौ प्रजनौ प्रजांयेय। वय इस्यांम् पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहाँ॥२८॥

सप्त ते अग्ने समिर्धः सप्त जिह्वाः। सप्तर्षयः सप्त धार्म प्रियाणि। सप्त होत्रां

अनुविद्वान्। सप्त योनीरापृणस्वा घृतेनं। प्राची दिक्। अग्निर्देवतां। अग्निर स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यैं दिशोंऽभिदासंति। दक्षिणा दिक्। इन्द्रों देवतां॥२९॥

इन्द्रभ् स दिशां देवं देवतानामृच्छत्। यो मैतस्ये दिशोंऽभिदासंति। प्रतीची दिक्। सोमों देवतां। सोम्भ स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्ये दिशोंऽभिदासंति। उदींची दिक्। मित्रावरुंणौ देवतां। मित्रावरुंणौ स दिशां देवौ देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्ये दिशोंऽभिदासंति॥३०॥

ऊर्ध्वा दिक्। बृह्स्पतिंर्देवतां। बृह्स्पति सादिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्ये दिशोऽभिदासंति। इयं दिक्। अदितिर्देवतां। अदिति सादिशां देवीं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्ये दिशोऽभिदासंति। पुरुषो दिक्। पुरुषो मे कामान्थ्समंध्यतु॥३१॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बृधिर आंक्रन्दयितरपान। असावेहिं। उषसंमुषसमशीय। अहमसो ज्योतिंरशीय। अहमसोऽपोंऽशीय। वय स्यांम्

पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहाँ॥३२॥

अगन्म महा मनेसा यविष्ठम्॥३४॥

यत्तेऽचितं यदं चितं ते अग्ने। यत्तं ऊनं यद् तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरसिश्चन्विर्धे ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चितश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि

भूयां इश्चास्यग्ने। लोकं पृण च्छिद्रं पृण। अथो सीद शिवा त्वम्। इन्द्राग्नी त्वा बृहस्पतिः। अस्मिन् योनांवसीषदन्॥३३॥

तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींदा ता अंस्य सूदंदोहसः। सोमई श्रीणन्ति पृश्नंयः। जन्मं देवानां विशः। त्रिष्वा रोचने दिवः। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींदा अग्ने देवार इहाऽऽवंह। जुज्ञानो वृक्तबंर्हिषे। असि होतां न ईड्यः।

यो दीदाय सिर्मेद्ध स्वे दुंरोणे। चित्रभांनू रोदंसी अन्तरुवीं। स्वांहुतं विश्वतः प्रत्यश्रम्। मेधाकारं विदर्थस्य प्रसाधनम्। अग्नि॰ होतारं परिभूतंमं मृतिम्। त्वामर्भस्य ह्विषंः समानमित्। त्वां महो वृंणते नरो नान्यं त्वत्। मृनुष्वत्त्वा निधीमहि। मृनुष्वथ्सिमधीमहि। अग्ने मनुष्वदिङ्गिरः॥३५॥

देवान्देवायते यंज। अग्निर्हि वाजिनं विशे। ददांति विश्वचंर्षणिः। अग्नी राये स्वाभुवम्। स प्रीतो यांति वार्यम्। इष स्तोतृभ्य आभंर। पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृंथिव्याम्। पृष्टो विश्वा ओषंधीराविवेश। वैश्वानरः सहंसा पृष्टो अग्निः। स नो दिवा स रिषः पांतु नक्तम्॥३६॥

अयं वाव यः पवंते। सौंऽग्निर्नाचिकेतः। स यत्प्राङ् पवंते। तदंस्य शिरंः। अथ् यदंक्षिणा। स दक्षिणः पक्षः। अथ यत्प्रत्यक्। तत्पुच्छम्। यदुदङ्ङ्। स उत्तरः

पक्षः॥३७॥

अथ यथ्संवाति। तदंस्य समर्श्वनं च प्रसारंणं च। अथो सम्पदेवास्य सा। स॰ हु वा अंस्मै स कार्मः पद्यते। यत्कामो यजते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं द्वितीयः प्रश्नः (कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्)

चैनमेवं वेदं। यो ह वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठां वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्॥३८॥

हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठा। य एवं वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्। यो ह वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरं वेदं। सशंरीर एव स्वर्गं लोकमेंति। हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरम्। य एवं वेदं। सशरीर एव स्वर्गं लोकमेति। अथो यथां रुका उत्तिप्तो भाय्यात्॥३९॥

एवमेव स तेर्जसा यशंसा। अस्मिङ्श्चं लोकेंऽमुष्मिंङ्श्च भाति। उरवों ह वै नामैते लोकाः। येऽवंरेणाऽऽदित्यम्। अर्थं हैते वरीया १सो लोकाः। ये परेणाऽऽदित्यम्। अन्तंवन्तः ह वा एष क्षय्यं लोकं जयति। योऽवंरेणाऽऽदित्यम्। अर्थ हैषोऽनुन्तर्मपारमेक्षय्यं लोकं जयति। यः परेणाऽऽदित्यम्॥४०॥ अनन्त १ ह वा अंपारमंक्षय्यं लोकं जंयति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं

चैनमेवं वेदं। अथो यथा रथे तिष्ठन्पक्षंसी पर्यावर्तमाने प्रत्यपेंक्षते। एवमंहोरात्रे

प्रत्यपेंक्षते। नास्याहोरात्रे लोकमांप्रुतः। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं॥४१॥

उशन् हु वै वांजश्रव्सः संविवद्सं दंदौ। तस्यं हु निवंकेता नामं पुत्र आंस। तर् हं कुमार सन्तम्। दक्षिणासु नीयमांनासु श्रृद्धाऽऽविवेश। स होवाच। तत् कस्मै मां दांस्यसीति। द्वितीयं तृतीयम्। तर हु परीत उवाच। मृत्यवे त्वा ददामीति। तर ह स्मोत्थितं वाग्भिवदित॥४२॥

गौतंम कुमारमितिं। स होवाच। परेहि मृत्योर्गृहान्। मृत्यवे वै त्वांऽदामितिं। तं वै प्रवसंन्तं गुन्तासीतिं होवाच। तस्यं स्म तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृहे वंसतात्। स यदि त्वा पृच्छेत्। कुमांर कित् रात्रीरवाथ्सीरितिं। तिस्र इति प्रतिंब्रूतात्। किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इतिं॥४३॥

प्रजां तु इतिं। किं द्वितीयामितिं। पुशू इस्तु इतिं। किं तृतीयामितिं। साधुकृत्यां

त् इतिं। तं वै प्रवसंन्तं जगाम। तस्यं ह तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृह उंवास। तमागत्यं पप्रच्छ। कुमार् कित रात्रीरवाथ्सीरितिं। तिस्र इति प्रत्युंवाच॥४४॥

किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इति। प्रजां त इति। किं द्वितीयामिति। प्रशू स्त इति। किं तृतीयामिति। साधुकृत्यां त इति। नमस्ते अस्तु भगव इति होवाच। वरं वृणीष्वेति। पितरमेव जीवंत्रयानीति। द्वितीयं वृणीष्वेति॥४५॥

ड्डापूर्तयोर्मेऽक्षितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतम्भिं नांचिकेतम्ंवाच। ततो वै तस्येष्टापूर्ते ना क्षीयेते। नास्येष्टापूर्ते क्षीयेते। योऽभिं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। तृतीयं वृणीष्वेतिं। पुनुर्मृत्योर्मेऽपंचितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतम्भिं नांचिकेतम्ंवाच। ततो वै सोऽपं पुनर्मृत्युमंजयत्॥४६॥

अपं पुनर्मृत्युं जंयित। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। प्रजापंतिर्वे प्रजाकांमस्तपोंऽतप्यत। स हिरण्यमुदांस्यत्। तद्ग्नौ प्रास्यंत्। तदंस्मै नाच्छंदयत्। तिद्वितीयं प्रास्यंत्। तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तत्तृतीयं प्रास्यंत्॥४७॥ तदंस्मे नैवाच्छंदयत्। तदात्मन्नेव हृंद्य्येंऽग्नौ वैश्वान्रे प्रास्यंत्। तदंस्मा अच्छदयत्। तस्माद्धिरंण्यं किनेष्ठं धनानाम्। भुञ्जत्प्रियतंमम्। हृद्यज्ञ हि। स व तमेव नाविन्दत्। यस्मै तां दक्षिणामनेष्यत्। ताः स्वायैव हस्तांय दक्षिणायानयत्। तां प्रत्यंगृह्णात्॥४८॥

दक्षांय त्वा दक्षिणां प्रतिगृह्णां प्रतिगृह्णां प्रतिगृह्णां। दक्षेते हु वै दक्षिणां प्रतिगृह्णां। य एवं वेदं। एतर्छं स्मृ वै तिद्वह्वा स्मों वाजश्रवसा गोतंमाः। अप्यंनूदेश्यां दक्षिणां प्रतिगृह्णांनता। उभयेन वयं दिक्षण्यामह एव दक्षिणां प्रतिगृह्णां। दक्षेते हु वै दक्षिणां प्रतिगृह्णां। य एवं वेदं। प्र हान्यं ब्रीनाति॥४९॥

तः हैतमेके पशुबन्ध एवोत्तंरवेद्यां चिंन्वते। उत्तर्वेदिसंम्मित एषौंऽग्निरिति वदंन्तः। तन्न तथां कुर्यात्। एतमृग्निं कामेन् व्यर्धयेत्। स एनं कामेन् व्यृद्धः।

कामेंन व्यंधियत्। सौम्ये वावैनंमध्वरे चिन्वीत। यत्रं वा भूयिष्ठा आहुंतयो हूयेरन्। पुतमुग्निं कामेंन समर्धयति। स एनं कामेंन समृद्धः॥५०॥

कामेन समर्धयित। अथं हैनं पुरर्षयः। उत्तर्वेद्यामेव सिश्चियंमचिन्वत। ततो वै तेऽविन्दन्त प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकमंजयन्। विन्दतं एव प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनं वायुर्ऋद्विकामः॥५१॥

यथान्युप्तमेवोपंदधे। ततो वै स एतामृद्धिंमार्भोत्। यामिदं वायुर्ऋद्धः। एतामृद्धिंमृश्नोति। यामिदं वायुर्ऋद्धः। यो ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं गोब्लो वार्षाः पृशुकांमः। पाङ्कंमेव चिक्ये। पर्श्वं पुरस्तांत्॥५२॥

पश्चं दक्षिणतः। पश्चं पृश्चात्। पश्चौत्तर्तः। एकां मध्यै। ततो वै स सहस्रं पृश्न्याप्नौत्। प्र सहस्रं पृश्न्नौप्नोति। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं प्रजापंति ज्येष्ठिमकामो यशंस्कामः प्रजननकामः। त्रिवृतंमेव चिक्ये॥५३॥

सप्त पुरस्तांत्। तिस्रो देक्षिणतः। सप्त पश्चात्। तिस्र उत्तरतः। एकां मध्यें। ततो वै स प्र यशो ज्यैष्ठांमाप्नोत्। एतां प्रजातिं प्राजांयत। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। त्रिवृद्वे ज्यैष्ठ्यम्। माता पिता पुत्रः॥५४॥

त्रिवृत्यजनंनम्। उपस्थो योनिर्मध्यमा। प्र यशो ज्यैष्ठांमाप्नोति। एतां प्रजांतिं प्रजांयते। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनमिन्द्रो ज्यैष्ठांकामः। ऊर्ध्वा एवोपंदधे। ततो वै स ज्यैष्ठांमगच्छत्॥५५॥

ज्यैष्ठ्यं गच्छति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थं हैनम्सावांदित्यः स्वर्गकांमः। प्राचींरेवोपंदधे। ततो वै सोंऽभि स्वर्गं लोकमंजयत्। अभि स्वर्गं लोकं जयति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। स यदीच्छेत्॥५६॥

तेज्स्वी यंश्स्वी ब्रंह्मवर्च्सी स्यामितिं। प्राङाहोतुर्धिष्णयादुथ्संपेत्। येयं प्रागाद्यशंस्वती। सा मा प्रोर्णोतु। तेजंसा यशंसा ब्रह्मवर्च्सेनेतिं। तेज्स्येव दक्षिणा नयेयुरितिं। दक्षिणासु नीयमानासु प्राच्येहि प्राच्येहीति प्राची जुषाणा वेत्वाऽऽज्यंस्य स्वाहेतिं स्रुवेणोपहत्यांऽऽहवनीयें जुहुयात्॥५७॥
भूयिष्ठमेवास्मै श्रद्दंधते। भूयिष्ठा दक्षिणा नयन्ति। पुरीषमुप्धायं। चितिक्कृप्तिभिरिभेनृष्यं। अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। चतंस्र एता आहुंतीर्जुहोति। त्वमंग्ने रुद्र इतिं शतरुद्रीयंस्य रूपम्। अग्नांविष्णू इतिं वसोर्धारांयाः। अन्नपत् इत्यंन्नहोमः। सप्त तें अग्ने स्मिधंः सप्त जिह्ना इतिं विश्वप्रीः॥५८॥

यंशस्वी ब्रह्मवर्चसी भंवति। अथ यदीच्छेत्। भूयिष्ठं मे श्रद्दंधीरन्। भूयिष्ठा

यां प्रंथमामिष्टंकामुप्दधांति। इमं तयां लोकम्भिजंयति। अथो या अस्मिँ होके देवताः। तासा सायुंज्य सलोकतांमाप्रोति। यां द्वितीयांमुप्दधांति। अन्तिरक्षलोकं तयाऽभिजंयति। अथो या अन्तिरक्षलोके देवताः। तासा सायुंज्य सलोकतांमाप्रोति। यां तृतीयांमुप्दधांति। अमुं तयां लोकम्भिजंयति॥५९॥

अथो या अमुष्मिँ होके देवताँः। तासा सायुंज्य सहोकतां माप्नोति। अथो या अमूरितंरा अष्टादंश। य एवामी उरवंश्च वरीं या स्मश्च होकाः। ताने व ताभिर्भि जंयित॥ कामचारों हु वा अस्योरुषुं च वरीं यः सु च होकेषुं भवित। यौं ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। संवृथ्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वसन्तः शिरंः॥६०॥

ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षा उत्तरः। श्रत्युच्छम्ँ। मासाः कर्मकाराः। अहोरात्रे शंतरुद्रीयम्ँ। पूर्जन्यो वसोर्धारां। यथा वै पूर्जन्यः सुवृष्टं वृष्ट्वा। प्रजाभ्यः सर्वान्कामान्थ्सम्पूरयंति। एवमेव स तस्य सर्वान्कामान्थ्सम्पूरयंति। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते॥६१॥

य उं चैनमेवं वेदं। संवथ्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वस्नन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। श्ररदुत्तरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितयः। अपुरुपृक्षाः पुरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। एष वाव सौंऽग्निरंग्निमयः पुनर्णवः।

अग्निमयों हु वै पुंनर्णवो भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तितरीय काठके द्वितीयः प्रश्नः समाप्तः॥२॥

॥ ततीयः प्रश्नः॥

तुभ्यं ता अंङ्गिरस्तमाऽश्याम् तं कार्ममग्ने। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिरिन्वदंनुमते त्वम्। कामों भूतस्य कामस्तदग्रें। ब्रह्मं जज्ञानं पिता विराजांम्। युज्ञो रायोऽयं युज्ञः। आपों भुद्रा आदित्पंश्यामि। तुभ्यंं भरन्ति यो देह्यः। पूर्वं देवा अपरेण प्राणापानो। हृव्यवाह् स्वष्टम्॥१॥

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापितमब्रुवन्। प्रजापिते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेति। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिंभिरन्वैंच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव् हि देवाः॥२॥

तमाशाँ ऽब्रवीत्। प्रजांपत आशया वै श्राँम्यसि। अहमु वा आशाँ ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सत्याऽऽशां भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमग्नये कार्माय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। आशायें चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्याऽऽशांऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या ह वा अस्याऽऽशां भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हिवषा यज्ञते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहाऽऽशाये स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥३॥ तं कामों ऽब्रवीत्। प्रजापते कामेन वै श्राम्यसि। अहमु वै कामों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यः कामों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं।

स एतमग्रये कार्माय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। कार्माय चरुम्। अनुंमत्यै

चरुम्। ततो वै तस्यं सत्यः कामों ऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्यो ह वा अस्य कामों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहा कामाय स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥४॥ तं ब्रह्मां ऽब्रवीत्। प्रजापते ब्रह्मणा वै श्राम्यसि। अहम् वै ब्रह्मां ऽस्मि। मां नु यर्जस्व। अर्थ ते ब्रह्मण्वान् यज्ञो भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथस्यसीति। स एतमग्रये कामांय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। ब्रह्मंणे चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं ब्रह्मण्वान् यज्ञोऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। ब्रह्मण्वान् ह वा अस्य युज्ञो भविति। अनुं स्वुर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हिवषा यजते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहा ब्रह्मणे स्वाहाँ। अनुमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥५॥

तं युज्ञों ऽब्रवीत्। प्रजापते युज्ञेन् वै श्राम्यसि। अहमु वै युज्ञों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यो युज्ञो भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स पृतम् अये कामाय पुरोडाशं मृष्टाकं पालं निरंवपत्। यज्ञायं चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यो यज्ञों उभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमं विन्दत्। सत्यो हु वा अस्य यज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य पुतेनं हु विषा यज्ञते। य उं चैनदेवं वेदं। सो उत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहां यज्ञाय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति॥६॥

तमापौऽब्रुवन्। प्रजांपतेऽफ्सु वै सर्वे कामौः श्रिताः। वयमु वा आपंः स्मः। अस्मान्नु यंजस्व। अथु त्वियु सर्वे कामौः श्रियष्यन्ते। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामाय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। अद्यश्चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्मिन्थ्सर्वे कामां अश्रयन्त। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सर्वे हु वा अस्मिन्कामौः श्रयन्ते। अनुं स्वृगं लोकं विन्दितः। य एतेनं हिवषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामाय स्वाहाऽग्र्यः स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्रयः स्विष्टकृते स्वाहेति॥७॥

तमुग्निर्बिलिमानंब्रवीत्। प्रजांपतेऽग्नये वै बंलिमते सर्वाणि भूतानि बलि॰ हंरन्ति। अहमु वा अग्निर्बलिमानंस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सर्वाणि भूतानि बिल हिरिष्यन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमग्रये कामाय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। अग्नयं बलिमतं चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्मै सर्वाणि भूतानि बिलमहरन्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वाणि ह वा अस्मै भूतानि बुलि॰ हर्रन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेन हविषा यर्जते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽग्नयें बलिमते स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥८॥

तमनुंवित्तिरब्रवीत्। प्रजांपते स्वृगं वै लोकमनुंविविथ्ससि। अहमु वा अनुंवित्तिरस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्याऽनुंवित्तिर्भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामाय पुरोडाशंमृष्टाकंपालुं निरंवपत्। अनुंवित्त्ये चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्याऽनुंवित्तिरभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्यानुंवित्तिर्भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहाऽनुंवित्त्ये स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति॥९॥

ता वा प्ताः सप्त स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। दिवःश्येन्योऽनुंवित्तयो नामं। आशाँ प्रथमा र रक्षिति। कामो द्वितीयाँम्। ब्रह्मं तृतीयाँम्। यज्ञश्चंतुर्थीम्। आपंः पश्चमीम्। अग्निर्बलिमान्थ्वष्ठीम्। अनुंवित्तिः सप्तमीम्। अनुं हु वै स्वर्गं लोकं विन्दित। कामचारौऽस्य स्वर्गे लोकं भवित। य पृताभिरिष्टिभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदं। तास्वन्विष्टि। पृष्ठौहीव्रां दंद्यात्कुर्सं च। स्त्रियै चाऽऽभार समृद्धौ॥१०॥

तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्। तपुसर्षयः स्वंरन्वंविन्दन्। तपंसा

स्पत्नान्प्रण्दामारांतीः। येनेदं विश्वं परिभूतं यदस्तिं। प्रथमजं देव॰ ह्विषां विधेम। स्वयम्भु ब्रह्मं पर्मं तपो यत्। स एव पुत्रः स पिता स माता। तपो ह यक्षं प्रथम॰ सम्बभूव। श्रद्धया देवो देवत्वमश्रुते। श्रद्धा प्रतिष्ठा लोकस्यं देवी॥११॥

सा नो जुषाणोपं यज्ञमार्गात्। कामंवथ्साऽमृतं दुहांना। श्रद्धा देवी प्रथमजा

ऋतस्यं। विश्वंस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। ता श्रुद्धा हिवेषां यजामहे। सा नों लोकमुमृतंं दधातु। ईशांना देवी भुवंनस्याधिपत्नी। आगाँथ्यत्य १ हविरिदं जुंषाणम्। यस्माँद्देवा जंज्ञिरे भुवनं च विश्वें। तस्मैं विधेम हविषां घृतेनं॥१२॥ यथां देवैः संधमादं मदेम। यस्यं प्रतिष्ठोर्वन्तिरक्षिम्। यस्माँद्देवा जंज्ञिरे भुवनं च सर्वै। तथ्सत्यमर्चदुपं यज्ञं न आगाँत्। ब्रह्माऽऽहुंती्रुपमोदंमानम्। मनंसो वशे सर्वमिदं बंभूव। नान्यस्य मनो वशमन्वियाय। भीष्मो हि देवः सहंसुः सहीयान्। स नो जुषाण उपं यज्ञमागाँत्। आकूतीनामधिपतिं चेतंसां च॥१३॥

सङ्कल्पर्जूतिं देवं विपश्चिम्। मनो राजानिम्ह वर्धयेन्तः। उपहुवेंऽस्य सुमृतौ स्याम। चरणं पवित्रं वितंतं पुराणम्। येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानि। तेनं पवित्रंण शुद्धेनं पूताः। अति पाप्मानमरातिं तरेम। लोकस्य द्वारंमर्चिमत्पवित्रम्। ज्योतिष्मद्भाजंमानं महंस्वत्। अमृतंस्य धारां बहुधा दोहंमानम्। चर्णं नो लोके सुधितां दधातु। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुं नोऽद्यानुंमतिरन्विदंनुमते त्वम्। हृव्यवाह्र्इं स्विष्टम्॥१४॥

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैंच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिभिरन्वैंच्छत्। तमिष्टिभिरन्वंविन्दत्। तिदिष्टीनामिष्टित्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥१५॥
तं तपौऽब्रवीत्। प्रजापते तपंसा वै श्रौम्यसि। अहमु वै तपौऽस्मि। मां नु

पुतमाँग्नेयमुष्टाकपालं निरंवपत्। तपंसे चरुम्। अनुमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं तपोऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्य १ ह वा अस्य तपो भवति। अर्नु स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हविषा यजेते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा तपंसे स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१६॥ तङ् श्रद्धाऽब्रंवीत्। प्रजापते श्रद्धया वै श्राम्यसि। अहमु वै श्रद्धाऽस्मिं। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्या श्रद्धा भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमष्टाकंपालं निरंवपत्। श्रद्धार्यं चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्यं सत्या श्रुद्धाऽभंवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्य श्रुद्धा भंवति।

यंजस्व। अर्थ ते सत्यं तपों भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स

अनुं स्वर्गं लोकं विन्दित। य एतेनं हिविषा यजिते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहाँ श्रृद्धायै स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति॥१७॥

त १ सृत्यमंब्रवीत्। प्रजापते सृत्येन् वै श्रांम्यसि। अहमु वै सृत्यमंस्मि। मां नृ यंजस्व। अर्थं ते सृत्य १ सृत्यं भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स पृतमांग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। सृत्यायं चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्य सृत्य सृत्यमंभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्य १ हृ वा अस्य सृत्यं भविति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दिति। य पृतेनं हृविषा यज्ञंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहां सृत्याय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति॥१८॥

तं मनों ऽब्रवीत्। प्रजांपते मनंसा वै श्रांम्यसि। अहमु वै मनों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सृत्यं मनों भिवष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमां ग्रेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। मनंसे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं मनों ऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सृत्य ह वा अस्य मनों भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य पृतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा मनंसे स्वाहा। अनुंमत्ये स्वाहा प्रजापंतये स्वाहा। स्वृगीयं

लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१९॥

नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यं चरणं भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमष्टाकंपालं निरंवपत्। चरंणाय चरुम्। अनुमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं चरणमभवत्। अर्नु स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्य १ ह वा अस्य चरणं भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विनदित। य एतेनं हिवषा यजति। य उ चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा चरंणाय स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥२०॥ ता वा एताः पश्चं स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। अपांघा अनुंवित्तयो नामं। तपंः प्रथमा र रेक्षति। श्रद्धा द्वितीयाँम्। सत्यं तृतीयाँम्। मनश्चतुर्थीम्। चरणं

पश्चमीम्। अनुं ह वै स्वर्गं लोकं विन्दित। कामचारों ऽस्य स्वर्गे लोके भंवति। य

एताभिरिष्टिंभिर्यजेते। य उं चैना एवं वेदं। तास्वन्विष्टि। पृष्ठौहीवरां दंद्यात्कु रूसं

तं चरंणमब्रवीत्। प्रजापते चरंणेन वै श्राम्यसि। अहम् वै चरंणमस्मि। मां

र्च। स्त्रिये चाऽऽभार समृद्धै॥२१॥

अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वां हास्मै दिशंः कल्पन्ते। वाचस्पतिर्होता दशंहोतॄणाम्। पृथिवी होता चतुंर्होतॄणाम्॥२२॥

अग्निर्होता पश्चेहोतॄणाम्। वाग्घोता षङ्कोतॄणाम्। महाहंविर्होतां सप्तहोतॄणाम्। पृतद्वे चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वम्। अथो पश्चेहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशंः कल्पन्ते। य एवं वेदं। एषा वै संविवद्या। एतद्वेषुजम्। एषा पङ्किः स्वर्गस्यं लोकस्यांश्वसाऽयंनिः स्रुतिः॥२३॥

पुतान् योऽध्यैत्यछंदिर्द्र्शे यावंत्तरसम्। स्वंरेति। अनुपृब्रवः सर्वमायुंरेति। विन्दते प्रजाम्। रायस्पोषं गौपत्यम्। ब्रह्मवर्चसी भंवति। पुतान् योऽध्यैतिं। स्पृणोत्यात्मानम्। प्रजां पितृन्। पुतान् वा अंरुण औपवेशिर्विदां चंकार॥२४॥ पुतैरंधिवादमपांजयत्। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंययौ। पुतान्योऽध्यैतिं। अधिवादं जंयति। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंरेति। पुतैर्ग्निं चिन्वीत स्वर्गकांमः। प्रतेरायुष्कामः। प्रजापशुकांमो वा॥२५॥

पुरस्ताद्दशंहोतार्म् देश्चमुपंदधाति यावत्पदम्। हृदंयं यजुंषी पत्न्यौ च। दक्षिणतः प्राश्चं चतुंर्होतारम्। पश्चादुदंश्चं पश्चंहोतारम्। उत्तर्तः प्राश्चः पङ्कोतारम्। उपरिष्टात्प्राश्चः सप्तहोतारम्। हृदंयं यजूः षि पत्न्यंश्च। यथावकाशं ग्रहान्। यथावकाशं प्रतिग्रहाँ ह्लोकं पृणाश्चं। सर्वा हास्यैता देवताः प्रीता अभीष्टां भवन्ति॥२६॥

सदेवम्भिं चिन्ते। र्थसंम्मितश्चेत्रव्यः। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यः स्तृणुते। पक्षः संम्मितश्चेत्व्यः। एतावान् वै रथः। यावंत्पक्षः। रथसंम्मितमेव चिन्ते। इममेव लोकं पंशुबन्धेनाभिजंयति। अथो अग्निष्टोमेन॥२७॥

अन्तरिक्षमुक्थ्येन। स्वरितरात्रेणं। सर्वां ह्योकानंहीनेनं। अथों स्त्रेणं। वरो

तृतीयः प्रश्नः (कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्) दक्षिणा। वरेणैव वर ई स्पृणोति। आत्मा हि वरंः। एकंवि शातिर्दक्षिणा ददाति।

एकविश्शो वा इतः स्वर्गो लोकः। प्र स्वर्गं लोकमाप्रोति॥२८॥ असार्वादित्य एंकवि १ शः। अमुमेवा ऽऽदित्यमाँ प्रोति। शतं दर्वाति। शतायुः

पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। सहस्रं ददाति। सहस्रंसिम्मतः स्वर्गो लोकः। स्वर्गस्यं लोकस्याभिजिंत्यै। अन्विष्टकं दक्षिणा ददाति। सर्वाणि वया ५स॥ २९॥

सर्वस्याऽऽध्यै। सर्वस्यावंरुद्धै। यदि न विन्देतं। मन्थानंतावतो दंद्यादोदनान् वाँ। अश्रुते तं कामम्। यस्मै कामायाग्निश्चीयतें। पष्टौहीं त्वन्तर्वतीं दद्यात्। सा हि सर्वाणि वया रसि। सर्वस्याऽऽध्यै। सर्वस्यावंरुख्ये॥३०॥

हिरंण्यं ददाति। हिरंण्यज्योतिरेव स्वर्गं लोकमेति। वासों ददाति। तेनाऽऽयुः प्रतिरते। वेदितृतीये यंजेत। त्रिषंत्या हि देवाः। स संत्यमिश्नं चिनुते। तदेतत्पंशुबन्धे ब्राह्मणं ब्रूयात्। नेतंरेषु यज्ञेषुं। यो ह वै चतुंर्होतृननुसवनं तंर्पयितव्यान् वेदं॥३१॥

तृप्यंति प्रजयां पृश्निः। उपैन सोमपीथो नमिति। एते वै चतुरहोतारोऽनुसवनं तंपियत्व्याः। ये ब्राह्मणा बंहुविदः। तेभ्यो यद्दक्षिणा न नयेत्। दुरिष्ट स्यात्। अग्निमंस्य वृक्षीरन्। तेभ्यो यथाश्रद्धं दंद्यात्। स्विष्टमेवैतित्क्रियते। नास्याग्निं वृक्षते॥३२॥

हिर्ण्येष्टको भंवति। यावंदुत्तममंङ्गुलिकाण्डं यंज्ञपुरुषा सम्मितम्। तेजो हिर्ण्यम्। यदि हिर्गण्यं न विन्देत्। शर्करा अक्ता उपंदध्यात्। तेजो घृतम्। सर्तेजसमेवाग्निं चिनुते। अग्निं चित्वा सौत्रामण्या यंजेत मैत्रावरुण्या वाँ। वीर्येण् वा एष व्यृध्यते। योऽग्निं चिनुते॥३३॥

यावंदेव वीर्यम्। तदंस्मिन्दधाति। ब्रह्मणः सायुंज्यः सलोकतांमाप्नोति। पुतासांमेव देवतांनाः सायुंज्यम्। सार्षिताः समानलोकतांमाप्नोति। य पुतमृग्निं चिनुते। य उ चैनमेवं वेदं। पृतदेव सांवित्रे ब्राह्मणम्। अथो नाचिकेते॥३४॥ तृतीयः प्रश्नः (कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्)

विष्ठिताः पृथिवीमनुं। सर्वास्ताः॥३७॥

भूमें:॥३५॥

सङ्ख्यांता देवमाययां। सर्वास्ताः। यावंन्त ऊषाः पशूनाम्। पृथिव्यां पृष्टिरिह्ताः। सर्वास्ताः। यावंतीः सिकंताः सर्वाः। अपस्वंन्तश्च याः श्रिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः शर्करा धृत्ये। अस्यां पृथिव्यामिधे॥३६॥ सर्वास्ताः। यावन्तोऽश्मांनोऽस्यां पृथिव्याम्। प्रतिष्ठासु प्रतिष्ठिताः। सर्वास्ताः।

यावंतीवींरुधः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः। यावंतीरोषंधीः सर्वाः।

यावंन्तो वनस्पतंयः। अस्यां पृथिव्यामधि। सर्वास्ताः। यावंन्तो ग्राम्याः पशवः

सर्वे। आरण्याश्च ये। सर्वास्ताः। ये द्विपादश्चतुंष्पादः। अपादं उदरसर्पिणंः।

यचामृतं यच मर्त्यम्। यच प्राणिति यच न। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं

कामुदुर्घा दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तया देवतंयाऽङ्गिरस्बद्धवा सींद। सर्वाः

स्त्रियः सर्वांन्पु १ सः। सर्वं न स्त्रीपुमं च यत्। सर्वास्ताः। यावंन्तः पा १ सवी

सर्वास्ताः। यावदाञ्जनमुच्यते॥३८॥

देवत्रा यचं मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंत्कृष्णायंस् स् सर्वम्ं। देवत्रा यचं मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंश्लोहायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यचं मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वर् सीस् सर्वं त्रपुं। देवत्रा यचं मानुषम्॥३९॥

सर्वास्ताः। सर्वर् हिरंण्यर रज्तम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वर् सुर्वर्ण्र् हरितम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुर्घा दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तया देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥४०॥

सर्वा दिशो दिक्षा यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। अन्तरिक्षं च केवलम्। यचास्मिन्नन्तराहितम्। सर्वास्ताः। आन्तरिक्ष्यंश्च याः प्रजाः॥४१॥ गन्धर्वाफ्सरसंश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्सलिलान्। अन्तरिक्षे प्रतिष्ठितान्। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्संलिलान्। स्थावराः प्रोष्याःश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वां धुनिः सर्वान्ध्वश्सान्। हिमो यर्चं शीयते॥४२॥

सर्वास्ताः। सर्वान्मरीचीन् वितंतान्। नीहारो यद्यं शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वा विद्युतः सर्वान्थस्तनियुत्न्। हादुनीर्यचं शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वाः स्रवंन्तीः स्रितंः। सर्वमप्सुचरं च यत्। सर्वास्ताः॥४३॥

याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैश्-तीरुत प्रांस्चीर्याः। सर्वास्ताः। ये चोत्तिष्ठंन्ति जीमूताः। याश्च वर्षंन्ति वृष्टयः। सर्वास्ताः। तपस्तेजं आकाशम्।

यचांऽऽकाशे प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। वायुं वया रेसि सर्वाणि॥४४॥

अन्तिरिक्षचरं च यत्। सर्वास्ताः। अग्निः सूर्यं चन्द्रम्। मित्रं वर्रणं भगम्। सर्वास्ताः। सत्यः श्रुद्धां तपो दमम्। नामं रूपं चं भूतानाम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं काम्दुर्घां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा

सींद॥४५॥

सर्वान्दिव सर्वान्देवान्दिव। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवत्याऽङ्गिरस्बद्धुवा सींद। यावंतीस्तारंकाः सर्वाः। वितंता रोचने दिवि। सर्वास्ताः। ऋचो यजूर्षेषि सामानि॥४६॥

अथर्वाङ्गिरसंश्च ये। सर्वास्ताः। इतिहासपुराणं चं। सर्पदेवजनाश्च ये। सर्वास्ताः। ये चं लोका ये चालोकाः। अन्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। यच् ब्रह्म यचौब्रह्म। अन्तर्ब्रह्मन्प्रतिष्ठितम्॥४७॥

सर्वास्ताः। अहोरात्राणि सर्वाणि। अर्धमासाः श्च केवंलान्। सर्वास्ताः। सर्वानृतून्थ्सर्वान्मासान्। स्वथ्यरं च केवंलम्। सर्वास्ताः। सर्वं भूत्र सर्वं भव्यम्। यचातोऽधिभविष्यति। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघा दधे।

तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥४८॥

ऋचां प्राचीं मह्ती दिगुंच्यते। दक्षिंणामाहुर्यजुंषामपाराम्। अर्थर्वणामङ्गिरसां प्रतीचीं। साम्रामुदींची मह्ती दिगुंच्यते। ऋग्भिः पूँर्वाह्रे दिवि देव ईयते। युजुर्वेदे तिष्ठति मध्ये अहंः। साम्बेदेनांऽस्तम्ये महींयते। वेदैरशूँन्यस्त्रिभिरेति सूर्यः। ऋग्भ्यो जाताः संवंशो मूर्तिमाहुः। सर्वा गतिंयांजुषी हैव शर्श्वत्॥४९॥ सर्वं तेजः सामरूप्यः हं शश्वत्। सर्वः हेदं ब्रह्मंणा हैव सृष्टम्। ऋग्भ्यो जातं

पूर्वे पूर्वेभ्यो वर्च एतदूंचुः। आदर्शमृग्निं चिन्वानाः। पूर्वे विश्वसृजोऽमृताः। शृतं वंर्षसहुस्राणि। दीक्षिताः स्त्रमासत॥५०॥
तपं आसीद्गृहपंतिः। ब्रह्मं ब्रह्माऽभंवथ्स्वयम्। सृत्य ह होतैषामासीत्।

वैश्यं वर्णमाहुः। युजुर्वेदं क्षंत्रियस्यांऽऽहुर्योनिम्। साम्वेदो ब्राँह्मणानां प्रसूतिः।

यिद्वेश्वसृज् आसंत। अमृतंमेभ्य उदंगायत्। सहस्रं परिवथ्सरान्। भूतः हं प्रस्तोतैषामासीत्। भविष्यत्प्रतिं चाहरत्। प्राणो अध्वर्युरंभवत्। इदः सर्वः सिषांसताम्॥५१॥

अपानो विद्वानावृतंः। प्रतिप्रातिष्ठदध्वरे। आर्तवा उपगातारंः। सदस्यां ऋतवोऽभवन्। अर्धमासाश्च मासांश्च। चमसाध्वर्यवोऽभवन्। अश्रेसद्वह्मणस्तेजंः। अच्छावाकोऽभवद्यशंः। ऋतमेषां प्रशास्ताऽऽसीत्। यद्विश्वसृज् आसंत॥५२॥

ऊर्ग्राजानम्दंवहत्। ध्रुवगोपः सहोऽभवत्। ओजोऽभ्यंष्टौद्भावणाः। यिद्वेश्वसृज् आसंत्। अपंचितिः पोत्रीयांमयजत्। नेष्ट्रीयांमयज्तिषिः। आग्नींद्धाद्विदुषीं स्त्यम्। श्रद्धा हैवायंजथ्स्वयम्। इरा पत्नीं विश्वसृजांम्। आकूंतिरिपनड्डृविः॥५३॥

इध्म १ हु क्षुचैंभ्य उग्ने। तृष्णा चाऽऽवंहतामुभे। वार्गेषा १ सृब्रह्मण्याऽऽसींत्। छुन्दोयोगान् विजानती। कुल्पतुत्राणि तन्वानाऽहः। सुङ्स्थाश्चं सर्वशः। अहोरात्रे पंशुपाल्यौ। मुहूर्ताः प्रेष्यां अभवन्। मृत्युस्तदंभवद्धाता। शृमितोग्रो विशां

पतिः॥५४॥

विश्वसृजंः प्रथमाः स्त्रमांसत। सहस्रंसम् प्रस्तेन यन्तंः। ततो ह जज्ञे भुवंनस्य गोपाः। हिर्ण्मयः शुकुनिर्ब्रह्म नामं। येन सूर्यस्तपंति तेजंसेद्धः। पिता पुत्रणं पितृमान् योनियोनौ। नावंदिवन्मनुते तं बृहन्तम्। सूर्वानुभुमात्मान सम्पराये। पृष नित्यो मंहिमा ब्राह्मणस्यं। न कर्मणा वर्धते नो कनीयान्॥५५॥

तस्यैवाऽऽत्मा पंद्वित्तं विंदित्वा। न कर्मणा लिप्यते पापंकेन। पश्चंपश्चाशतिस्त्रिवृतः संवथ्सराः। पश्चंपश्चाशतः पश्चंपश्चाशतः पश्चंपश्चाशतः सप्तद्शाः। पश्चंपश्चाशतं एकविश्वाः। विश्वसृजां सहस्रं संवथ्सरम्। एतेन् वै विश्वसृजं इदं विश्वंमसृजन्त। यद्विश्वमसृजन्त। तस्माद्विश्वसृजंः। विश्वंमेनानन् प्रजायते। ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतां यन्ति। एतासांमेव देवतांनाश् सायुंज्यम्। सार्षिताश्चिमानलोकतां यन्ति। य एतदुंपयन्ति। ये चैन्त्प्राहुंः। येभ्यंश्चेन्त्प्राहुंः॥५६॥ ॐ॥

[8]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके तृतीयः प्रश्नः समाप्तः॥३॥ ॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठकं समाप्तम्॥ हरिः ॐ॥